जोधपुर राज्य के संरक्षक

परम राजनीतिज्ञ

अदम्य साहसी

निरभिमानी तथा निस्स्वार्थी

प्रसिद्ध वीर राठोड़ दुर्गादास

की

पवित्र स्मृति को

सादर समर्पित

भूमिका

प्रस्तुत पुस्तक मेरे राजपूताने के इतिहास के अन्तर्गत प्रकाशित जोधपुर राज्य के इतिहास का द्वितीय खंड है। पहले मेरा इरादा इस राज्य के इतिहास को केवल दो खंडों में समाप्त करने का था और ऐसा ही मैंने प्रथम खंड की भूमिका में लिखा भी था, परन्तु जोधपुर राज्य के इतिहास की सामग्री इतनी अधिक है कि यदि शेषांश को सिर्फ़ एक खंड में दिया जाता तो जिल्द बहुत बड़ी हो जाती; अतएव मैंने यही उचित समझा कि इसे तीन खंडों में निकाला जाय।

द्वितीय खंड में महाराजा अजीतसिंह से लगाकर महाराजा मानसिंह तक का विस्तृत इतिहास है। महाराजा तख़्तसिंह से लगाकर वर्तमान महाराजा सर उम्मेदसिंहजी तक का विस्तृत इतिहास, राजपूताना से बाहर के राठोड़ राज्यों का संक्षिप्त परिचय, जोधपुर राज्य के इतिहास का काल-क्रम, परिशिष्टों के अन्तर्गत अन्य ज्ञातव्य बातों का उल्लेख एवं वैयक्तिक तथा भौगोलिक अनुक्रमणिकाएं रहेंगी।

राजपूताना के इतिहास में राठोड़ों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है और उनमें अनेक वीर, विद्वान् एवं गुणग्राहक नरेश हो गये हैं। इस दृष्टि से उनके प्रधान और प्राचीन राज्य जोधपुर के इतिहास [illegible] भी पाठकों को अवश्य मनोरंजक प्रतीत ह[illegible]

मैं उन ग्रंथकर्त्ताओं का, जिनके ग्रंथों से [illegible] मुझे सहायता मिली है, अत्यंत अनुगृहीत हूं। उन[illegible] टिप्पणों में दे दिये गये हैं। विस्तृत पुस्तक-सूची तृतीय [illegible] दी जायगी।

अजमेर,
कार्तिकी पूर्णिमा,
वि० सं० १९९८

गौरीशङ्कर हीरा[illegible]

विषय-सूची

दसवां अध्याय

महाराजा अजीतसिंह

विषय ... पृष्ठाङ्क

विषय		पृष्ठाङ्क

ग्यारहवां अध्याय

महाराजा अभयसिंह से महाराजा बख़्तसिंह तक

विषय | पृष्ठांक

बारहवां अध्याय

महाराजा विजयसिंह से महाराजा मानसिंह तक

विषय | पृष्ठाङ्क

विषय — पृष्ठाङ्क

विषय | पृष्ठाङ्क

विषय पृष्ठाङ्क

		मूल्य
(१३) राजपूताने का इतिहास—दूसरा खंड	...	अप्राप्य
(१४) राजपूताने का इतिहास—तीसरा खंड	...	रु० ६)
(१५) राजपूताने का इतिहास—चौथा खंड	...	रु० ६)
(१६) भारतवर्ष के प्राचीन इतिहास की सामग्री	...	॥)
(१७) ‡ कर्नल जेम्स टॉड का जीवनचरित्र	...	।)
(१८) ‡ राजस्थान-ऐतिहासिक-दन्तकथा—प्रथम भाग ('एक राजस्थान निवासी' नाम से प्रकाशित)	...	अप्राप्य
(१९) × नागरी अंक और अक्षर	...	अप्राप्य

सम्पादित

(२०) * अशोक की धर्मलिपियां—पहला खंड (प्रधान शिलाभिलेख)	...	रु० ३)
(२१) * सुलेमान सौदागर	...	रु० १।)
(२२) * प्राचीन मुद्रा	...	रु० ३)
(२३) * नागरीप्रचारिणी पत्रिका (त्रैमासिक) नवीन संस्करण, भाग १ से १२ तक—प्रत्येक भाग	...	रु० १०)
(२४) * कोशोत्सव स्मारक संग्रह	...	रु० ३)
(२५-२६) ‡ हिन्दी टॉड राजस्थान—पहला और दूसरा खंड (इनमें विस्तृत सम्पादकीय टिप्पणियों-द्वारा टॉड-कृत 'राजस्थान' की अनेक ऐतिहासिक त्रुटियां शुद्ध की गई हैं)	...	रु० ४॥)
(२७) जयानक-प्रणीत 'पृथ्वीराज-विजय-महाकाव्य सटीक	...	रु० ५)
(२८) जयसोम-रचित 'कर्मचंद्रवंशोत्कीर्तनकं काव्यम्'	...	यंत्रस्थ
(२९) मुंहणोत नैणसी की ख्यात—दूसरा भाग	...	रु० ४)
(३०) गद्य-रत्न-माला—संकलन	...	रु० १।)
(३१) पद्य-रत्न-माला—संकलन	...	रु० ।।।)

---

‡ खड्गविलास प्रेस, बांकीपुर-द्वारा प्रकाशित ।

× हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग-द्वारा प्रकाशित ।

* काशी नागरीप्रचारिणी सभा-द्वारा प्रकाशित ।
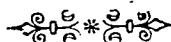
महाराजा अजीतसिंह

राजपूताने का इतिहास
चौथी जिल्द, दूसरा भाग

जोधपुर राज्य का इतिहास
द्वितीय खंड

दसवां अध्याय

महाराजा अजीतसिंह

महाराजा जसवंतसिंह और बादशाह औरंगज़ेब के बीच प्रायः विरोध ही बना रहता था और बादशाह उससे सख़्त नाराज़ रहता था। इसीसे उसने उसको बहुत दूर जमरूद के थाने पर नियुक्त किया था। महाराजा की मृत्यु[1] का समाचार मिलते ही, उसे उपयुक्त अवसर जानकर बादशाह ने जोधपुर राज्य को ख़ालसा कर ताहिरख़ां को जोधपुर का फ़ौजदार, ख़िदमतगुज़ारख़ां को क़िलेदार, शेर अनवर को अमीन और अब्दुर्रहीम को कोतवाल बनाकर वहां का प्रबन्ध करने के

जोधपुर ख़ालसा करने के लिए बादशाह का सेना भेजना

(१) एक स्थान पर टॉड ने लिखा है कि बादशाह ने जसवन्तसिंह को विष देकर मरवाया था (राजस्थान; जि० १, पृ० ४४१)।

लिए भेजा[1]। इसपर महाराजा के साथ के सरदारों ने बादशाह से सुलह बनाये रखने के लिए वहां का सारा हिसाब-किताब मुसलमान अफ़सरों को समझा दिया और जोधपुर-स्थित सरदारों को लिखा कि बादशाही अफ़सरों के पहुंचने पर वे विना किसी प्रकार का बिगाड़ किये वहां का अधिकार उन्हें सौंप दें। उन्हीं दिनों बादशाह ने मुलतान से शाहज़ादे अकबर, आगरे से शाइस्ताख़ां, गुजरात से मुहम्मद अमीनख़ां और उज्जैन से असदख़ां को भी जाने के लिए लिखा। साथ ही उसने दक्षिण से राव अमरसिंह के पौत्र इन्द्रसिंह को भी जोधपुर का राज्य देने के लिए बुलाया[2]।

लाहोर में कुंवरों का जन्म

अनन्तर जोधपुर के सरदारों ने दोनों राणियों के साथ जमुर्रद (जमरूद) से प्रस्थान किया। अटक नदी पर पहुंचने पर उनके पास शाही परवाना न होने के कारण अफ़सरों ने उन्हें रोका। तब उनसे लड़ाई कर राठोड़ दल अटक को पार कर लाहोर पहुंचा[3]। वहां दोनों राणियों के कुछ घड़ियों के अन्तर से वि० सं० १७३५ चैत्र वदि ४ (ई० स० १६७९ ता० १९ फ़रवरी) बुधवार को क्रमशः अजीतसिंह और दलथंभन नाम के दो पुत्र हुए[4]।

---

(१) मुंशी देवीप्रसाद; औरंगज़ेबनामा; भाग २, पृ० ८०। वीरविनोद (भाग २, पृ० ८२८) में इन अफ़सरों के भेजे जाने का समय वि० सं० १७३५ फाल्गुन सुदि १३ (ई० स० १६७९ ता० २६ जनवरी) दिया है।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जिल्द २, पृ० १-२।

(३) जोधपुर-राज्य की ख्यात में लिखा है कि जसवन्तसिंह के मरने पर सोजत और जैतारण बहाल रहने का फ़रमान तथा अटक पार उतरने की सनद सरदारों के पास भेजी गई थी, पर बीच में ही जब बादशाह से यह अर्ज़ की गई कि पठान मीरख़ां पहाड़ों में है और जोधपुर के लोगों के वापस आते ही पठान फिर उधर उपद्रव करने लगेंगे तो गुरज़बरदार जाकर अटक पार उतरने की सनद वापस ले आया। बाद में राजपूतों के निवेदन करने पर मीरख़ां ने वह सनद उन्हें दे दी। तब उन्होंने वहां से प्रस्थान किया (जि० २, पृ० ६-७)।

(४) वीरविनोद; भाग २, पृ० ८२८। ख़फ़ीख़ां-कृत 'मुंतख़बुल्लुबाब' में लिखा है—"राजा की मृत्यु के बाद उसके मूर्ख सेवक उसके छोटी उम्र के दोनों पुत्रों—

हि० स० १०८९ ता० २० ज़िलहिज्ज (वि० सं० १७३५ फाल्गुन वदि ७=ई० स० १६७९ ता० २३ जनवरी) को बादशाह ने अजमेर की ओर प्रस्थान किया। मार्ग में से ता० ६ मुहर्रम (फाल्गुन सुदि ८=ता० ८ फ़रवरी) को उसने खानजहां बहादुर[1] और हुसेनअलीखां आदि को भी सेना-सहित जोधपुर राज्य पर अधिकार करने के लिए भेजा। ता० १८ मुहर्रम (चैत्र वदि ५=

बादशाह को कुंवरों के जन्म की ख़बर मिलना

अजीतसिंह और दलथंभन—को राणियों-सहित ले चले। औरंगज़ेब की आज्ञा तथा उस प्रांत के सूबेदार से परवाना प्राप्त किये बिना ही उन्होंने राजधानी की ओर प्रस्थान किया। अटक पहुंचने पर, जब उनके पास परवाना न निकला तो उन्हें वहां के अफ़सर ने आगे बढ़ने से रोका। इसपर उसे मार तथा उसके कुछ साथियों को घायल कर वे जबरन नदी पारकर दिल्ली की ओर अग्रसर हुए (इलियट्; हिस्ट्री ऑव् इण्डिया; जि० ७, पृ० २९७)।"

(१) संभवतः यह जोधपुर राज्य की ख्यात में दिया हुआ बहादुरख़ां हो, जिसके विषय में उक्त ख्यात में लिखा है कि अजमेर पहुंचने पर बादशाह ने बहादुरख़ां को दस हज़ार फौज देकर जोधपुर पर भेजा। यह ख़बर पाते ही जोधपुर से राठोड़ रूपसिंह, भाटी राम (कुंभावत), राठोड़ नरसिंहदास आदि थोड़े आदमियों के साथ सुलह करने के लिए उसके पास पहुंचे। बहादुरख़ां ने उनसे कहा कि सुलह करने की इच्छा थी तो सेना एकत्र कर बादशाह को चढ़ाई करने पर क्यों बाध्य किया। सरदारों ने कहा कि जो हो गया उसे जाने दें, अब तो हम बादशाह के सेवक हैं। तब नवाब-(बहादुरख़ां) सबको साथ ले मेड़ते गया, जहां एक दिन सबसे क़ौल-क़रार लेकर उसने महाराजा के पुत्र होने पर उसे ही जोधपुर का राज्य दिलाने का वचन दिया और सरदारों को सिरोपाव दिये। पालासणी में चैत्र वदि १२ (ई० स० १६७९ ता० २७ फ़रवरी) को उसका डेरा होने पर उसे कुंवरों के जन्म की सूचना मिली। अनन्तर चैत्र सुदि ६ (ता० ८ मार्च) को उसने जोधपुर राज्य पर बादशाही अधिकार स्थापित किया। फिर विभिन्न स्थानों में शाही अफ़सरों की नियुक्ति कर वह जोधपुर के सरदारों के साथ अजमेर पहुंचा, पर उसके पहुंचने के पूर्व ही बादशाह का वहां से प्रस्थान हो चुका था। बहादुरख़ां को अजमेर में ही ठहरने का हुक्म था, अतएव उसने अपने पुत्र नौशेरख़ां के साथ सरदारों को दिल्ली भिजवाया और आप वहीं ठहर गया। उक्त ख्यात से यह भी पाया जाता है कि जोधपुर के सरदारों ने बहादुरख़ां को २०००० रुपये देने का वचन दिया था, जिससे वह उनकी इतनी सहायता कर रहा था (जिल्द २, पृ० २-४)।

ता० २० फ़रवरी) को अजमेर पहुंचकर ख़्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती की ज़ियारत करने के अनन्तर बादशाह दौलतख़ाने में ठहरा। इसके एक सप्ताह बाद भूतपूर्व महाराजा के वकील ने लाहोर में राजकुमारों के जन्म होने की सूचना बादशाह के पास पहुंचवाई[1]।

बादशाह का कुंवरों को दिल्ली बुलाना

लाहोर से चलकर राजपूत सरदार नवजात शिशुओं एवं राणियों के साथ तूतीबाग़, राजा का तालाब, फ़तियाबाद आदि स्थानों में ठहरते हुए श्रावणादि १७३५ (चैत्रादि १७३६) चैत्र सुदि ११ (ई० स० १६७६ ता० १३ मार्च) को सतलज पार कर गांव लेधाणा में ठहरे। वहां रहते समय बादशाह का इस आशय का पत्र उनके पास पहुंचा कि मैं महाराजा के पुत्रों के जन्म से अत्यन्त खुश हूं। मैं अब अजमेर से दिल्ली जारहा हूं। तुम लोग भी उन्हें लेकर वहां आओ ताकि मनसब आदि प्रदान कर उनका उचित सम्मान किया जावे[2]।

बादशाह का दिल्ली पहुंचना

ता० ७ सफ़र (चैत्र सुदि ८ = ता० १० मार्च) को बादशाह ने अजमेर से प्रस्थान किया और ता० १ रबीउल्अव्वल (वैशाख सुदि ३=ता० ३ अप्रेल) को वह दिल्ली पहुंचा[3]।

जोधपुर के सरदारों का दिल्ली पहुंचना

इसके दो दिन बाद ही राजपरिवार और कुंवरों के साथ राजपूत सरदार भी दिल्ली पहुंचे। वैशाख सुदि ७ (ता० ७ अप्रेल) को नौशेरखां के साथ भाटी रघुनाथसिंह और पंचोली केसरीसिंह आदि भी अजमेर से दिल्ली पहुंच गये।[4]

---

(१) मुंशी देवीप्रसाद; औरंगज़ेबनामा; भाग २, पृ० ८०-१।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि कुंवरों के जन्म का समाचार मिलने पर बादशाह ने हंसकर कहा कि बंदा क्या चाहता है और खुदा क्या करता है (जि० २ पृ० ३)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १४।

(३) मुंशी देवीप्रसाद; औरंगज़ेबनामा; भाग २, पृ० ८२।

(४) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १५।

अनन्तर नौशेरखां वैशाख सुदि १४ (ता० १४ अप्रेल) को कतिपय सरदारों के साथ बादशाह की सेवा में उपस्थित हुआ। जोधा रणछोड़दास गोयंददासोत (खरवा) तथा राठोड़ सूरजमल नाहरखानोत (आसोप), दीवान असदखां और बख़्शी सरबुलन्दखां के पास जाया करते थे। उन्होंने एक दिन उन (राठोड़ सरदारों) से कहा कि बादशाह महाराजा के पुत्रों को ५०० सवारों से चाकरी करने के एवज़ में सोजत और जैतारण देने को प्रस्तुत है। अन्य राजपूत सरदारों को अलग मनसब दिया जायगा; पर उक्त सरदारों ने यह शर्तें स्वीकार न कीं। बादशाह की तरफ़ से कोई आशा न देखकर राजपूत सरदारों ने बहादुरखां को लिखा। इसपर उसने बादशाह के पास अर्ज़ कराई कि यदि जोधपुर का राज्य वापस न किया गया तो मैं अपना मनसब त्याग दूंगा। बादशाह ने अपने अफ़सर काबुलीखां से कहा कि वह उस(बहादुरखां)को वहीं रहने के लिए लिखे, पर पीछे से काबुलीखां की सलाह के अनुसार उसने बहादुरखां को पीछा बुला लिया, जो द्वितीय ज्येष्ठ वदि ११ (ता० २५ मई) को दिल्ली पहुंचा[1]।

राठोड़ सरदारों का बादशाह से मिलना

ता० २५ रबीउस्सानी (द्वितीय ज्येष्ठ वदि १२ = ता० २६ मई) को बादशाह ने जसवंतसिंह के बड़े भाई नागोर के स्वामी अमरसिंह के पौत्र, रायसिंह के पुत्र इन्द्रसिंह को जोधपुर का राज्य, राजा का ख़िताब, ख़िलअत, जड़ाउ साज की तलवार, सोने के साज-सहित घोड़ा, हाथी, झंडा और नक़ारा दिया। उसने भी बादशाह को छत्तीस लाख रुपये पेशकशी देना

इन्द्रसिंह को जोधपुर का राज्य दिया जाना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १५-१६। मुंशी देवीप्रसाद-कृत "औरंगज़ेबनामे" में द्वितीय ज्येष्ठ वदि ११ (ता० २५ मई) को खानजहां बहादुर का जोधपुर से कई गाड़ियां मूर्तियों से भर ले जाना लिखा है। बादशाह ने इसकी बड़ी प्रशंसा की और मूर्तियां दरबार के जलूखाने (आंगन) तथा जुमा मस्जिद की सीढ़ियों के नीचे डाली जाने की आज्ञा दी। मूर्तियां जड़ाऊ, सोने, चांदी, तांबे, पीतल, पत्थर आदि की बनी थीं (भाग २, पृ० ८२)।

मालूम किया[1]।

इसी बीच जब बादशाह ने राठोड़ों को राज़ी होते न देखा तो उसने उनसे हिसाब देने को कहा। हिसाब किताब ठीक तो था ही नहीं, ऐसी दशा में जोधपुर के कर्मचारी पंचोली केसरीसिंह ने अपने ऊपर इसका सारा भार ले लिया। जब वह भी हिसाब न दे सका तो बादशाह ने उसे क़ैद में डाल दिया, जहां वह २५ दिन बाद ज़हर खाकर मर गया[2]।

केसरीसिंह का ज़हर खाकर मरना

जोधपुर के सारे राठोड़ सरदार रानियों और दोनों कुंवरोंसहित दिल्ली में किशनगढ़ के राजा रूपसिंह की हवेली[3] में ठहरे हुए थे। बादशाह की नीयत अपनी तरफ़ साफ़ न देखकर राठोड़ रणछोड़दास, भाटी रघुनाथ (सुरताणोत), राठोड़ रूपसिंह (पत्ताणदासोत), राठोड़ दुर्गादास[4] (आसकरणोत) आदि ने सलाह कर सबसे कहा कि यहां रहकर मरने से कोई

राजकुमारों को दुश्मन से बाहर करना

(१) मुंशी देवीप्रसाद; औरंगज़ेबनामा; भाग २, पृ० ८३। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८२८-६। जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १७।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १६।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि पहले सब राठोड़ सरदार जोधपुर की हवेली में ठहरे थे। इन्द्रसिंह को राज्य मिलने के बाद बादशाह की आज्ञा से वे वह हवेली ख़ाली कर कृष्णगढ़ की हवेली में चले गये (जि० २, पृ० १७)।

(४) वीर दुर्गादास का नाम राठोड़ वंश के इतिहास में अमर रहेगा। उसने असामान्य वीरता और रण चातुरी के अतिरिक्त आदर्श स्वामिभक्ति और देश-प्रेम का परिचय दिया। उसके पिता आसकरण ने, जो जसवन्तसिंह की चाकरी करता था, उसकी माता के साथ प्रेम न होने के कारण दोनों (पत्नी और पुत्र) को अलग कर दिया था। इसके बाद माता के साथ लूणावे गांव में ही रहकर छुटपन ही से वह होनहार बालक खेती-बारी करके उदर-पोषण करने लगा। एक बार उसने कहा-सुनी हो जाने के कारण अपने खेत में से सांडनियां ले जाने पर सरकारी राइके को मार डाला। जब इसकी पुकार महाराजा के पास हुई तो इसके बारे में आसकरण से पूछा गया। उसने साफ़ कह दिया कि मेरे तो सब पुत्र राज की सेवा में उपस्थित हैं, गांव में मेरा कोई बेटा नहीं

लाभ नहीं, यदि जीते रहेंगे तो झगड़ा कर भूमि ले सकेंगे । ऐसे तो यहां पहरा बैठ जायगा और फिर हम निकल न सकेंगे । इस तरह बहुत समझा-बुझाकर उन्होंने राठोड़ सूरजमल, महेशदास के पौत्र राठोड़ संग्रामसिंह (आऊवा), चांपावत उदयसिंह (लखधीरोत, लाम्बूजा), जैतावत प्रतापसिंह (देवकर्णोत, बगड़ी), राठोड़ राजसिंह (बलरामोत) आदि बड़े-बड़े सरदारों और ख़ोजा फ़रासत को जोधपुर को रवाना कर दिया[1] । अनन्तर दुर्गादास तथा चांपावत सोनिंग (विट्ठलदासोत) आदि अजीतसिंह को लेकर मारवाड़ की तरफ़ चले गये[2] ।

है । तब महाराजा ने दुर्गादास को बुलाकर पूछा । उसने अपराध स्वीकार करते हुए कहा कि राइके ने श्रीमानों के क़िले को धोला ढूंढ़ा कहा और यह भी कहा कि उसपर छज्जा (छप्पर) नहीं है । उसकी इस ढिठाई के कारण मैंने उसकी हत्या कर दी । फिर यह जानकर कि वह आसकरण का ही पुत्र है महाराजा ने आसकरण से पूछा कि तुम तो कहते थे कि मेरा कोई बेटा नहीं है? आसकरण ने उत्तर दिया—"कपूत को बेटों में नहीं गिनते ।" महाराजा ने कहा—"यह भ्रम है। यही कभी डगमगाते हुए मारवाड़ को कंधा देगा ।" इसके बाद उसने दुर्गादास को अपनी सेवा में रख लिया। पीछे से महाराजा के विश्वास को उसने सच्चा ही प्रामाणित किया । मारवाड़ का राज्य ख़ालसा किये जाने पर उसने राठोड़ों की तरफ़ से औरंगज़ेब से कई युद्ध कर मारवाड़ का राज्य सुरक्षित रखने में बड़ी मदद पहुंचाई । उसकी प्रशंसा में मारवाड़ के कवियों आदि ने अनेक कवितायें भी की हैं । इस सम्बन्ध में राम नाम के एक जाट का निम्नांकित दोहा बड़ा प्रसिद्ध है—

> ढंबक ढंबक ढोल बाजे, दे दे ठोर नगारां की ।
> आसे घर दुर्गा नहीं होतो, सुन्नत होती सारां की ॥

मुंशी देवीप्रसाद; होनहार बालक; प्रथम भाग, पृ० २७-३२ ।

वीर दुर्गादास का वृत्तान्त आगे यथास्थान आता रहेगा ।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ३२ । "वीरविनोद" से भी पाया जाता है कि बहुतसे राठोड़ पहले ही मारवाड़ को चल दिये थे, जिनको आलमगीर ने न रोका (भाग २; पृ० ८२८) ।

(२) वीरविनोद; भाग २, पृ० ८२९ ।

अजीतसिंह के दिल्ली से बाहर निकाले जाने के सम्बन्ध में भिन्न-भिन्न ख्यातों और तवारीख़ों में भिन्न-भिन्न वृत्तान्त मिलते हैं । टॉड लिखता —"... सिं की

वि० सं० १७३६ श्रावण वदि २ (ई० स० १६७६ ता० १५ जुलाई) को

राणी के एक लड़का हुआ, जिसका नाम अजीत रक्खा गया। राठोड़ उसको तथा राज-परिवार के अन्य लोगों को साथ लेकर स्वदेश की ओर चले, परन्तु उनके दिल्ली पहुंचने पर बादशाह ने जसवन्त का बदला उसके पुत्र से लेने के इरादे से यह आज्ञा दी कि अजीत को मेरे आश्रय में दे दिया जाय। उसने इसके बदले में राठोड़ सरदारों में मारू-(मारवाड़) का विभाजन करने का भी वचन दिया, पर राठोड़ों ने इसे स्वीकार न किया। उनके इस आचरण से अप्रसन्न होकर औरंगज़ेब ने सेना भेजकर उन्हें घेर लिया। ऐसी परिस्थिति देखकर राठोड़ों ने मिठाई के टोकरे में कुमार को रखकर वहां से निकाल दिया (राजस्थान; जि० २, पृ० ६६३)।

मुहम्मद हाशिम (खफ़ीख़ां) कृत "मुन्तख़बुल्लुबाब" नामक ग्रन्थ से पाया जाता है—"बादशाह की नाराज़गी जसवन्तसिंह पर पहले से ही थी। राजपूतों के (अटक पर के) आचरण से उसकी नाराज़गी बहुत बढ़ गई। उसने कोतवाल को राजपूतों का डेरा घेर लेने और उनपर नज़र रखने की आज्ञा दी। इसके कुछ दिनों बाद कुछ राजपूतों ने स्वदेश जाने की आज्ञा चाही, जिसकी औरंगज़ेब ने तुरन्त स्वीकृति दे दी। इसी बीच राजपूत उन कुमारों की अवस्था के दो बालक ले आये और उन्हें वास्तविक राजकुमारों के वस्त्रों से विभूषित कर उन्होंने कुछ दासियों को राणियों की पोशाक पहना कर उनके पास रख दिया। फिर वास्तविक राणियां मर्दों के बाने में दो विश्वासपात्र सेवकों और कई स्वामिभक्त राजपूतों के साथ रात्रि के समय वहां से बाहर भेज दी गई (इलियट्; हिस्ट्री ऑव् इंडिया; जि० ७, पृ० २६७)।"

मुन्शी देवीप्रसाद-कृत "औरंगज़ेबनामे" में लिखा है कि एक लड़का (दल-थंभन) तो पहले ही मर गया, दूसरा (अजीतसिंह) शाही सेना-द्वारा राजपूतों के घेरे जाने पर एक घोसी के पास छिपा दिया गया (भाग २, पृ० ८४-५)।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में विस्तृत वर्णन नहीं दिया है, पर उसमें लिखा है कि खींची मुकुन्ददास कलावत दोनों राजकुमारों (अजीतसिंह तथा दलथंभन) को गुप्त रूप से दिल्ली से निकाल ले गया। उनमें से दलथंभन मार्ग में ही मर गया (जि० २, पृ० ३२)।

ये सब कथन विश्वसनीय नहीं कहे जा सकते। इस सम्बन्ध में मूल में दिया हुआ "वीरविनोद" का ही वर्णन अधिक माननीय है। "वंशभास्कर" से भी पाया जाता है कि दुर्गादास अजीतसिंह को निकाल ले जानेवाले सरदारों के साथ था और भाटी गोइंददास कालबेलिये का रूप धर दोनों राजकुमारों को पिटारों में रखकर घेरे से बाहर निकाल ले गया था (भाग ३, पृ० २८९६, छन्द १६)।

बादशाह ने सख़्त हुक्म दिया कि कोतवाल फ़ौलादख़ां और सैयद हामिदख़ां ख़ास चौकी के आदमियों तथा हमीदख़ां, कमालुद्दीनख़ां, ख़्वाजा मीर आदि शाहज़ादे सुलतान मुहम्मद के रिसाले-सहित जाकर राणियों व जसवन्तसिंह के बेटे को कृष्णगढ़ के राजा रूपसिंह की हवेली से हटाकर नूरगढ़ में पहुंचा देवें। यदि वे सामना करें तो उन्हें सज़ा दी जावे। जैसा कि ऊपर लिखा गया है, दुर्गादास तथा सोनिंग आदि राठोड़ पहले दिन ही अजीतसिंह को लेकर मारवाड़ की तरफ़ रवाना हो गये थे। शेष रहे हुए राजपूतों ने बादशाही अफ़सरों का मुक़ाबला किया और वीरतापूर्वक लड़कर राणियों[1]-

राठोड़ों का शाही सेना से लड़कर मारा जाना

(१) राणियों के सम्बन्ध में भिन्न-भिन्न पुस्तकों में भिन्न-भिन्न बातें लिखी हैं। टॉड के अनुसार युद्धारम्भ के पूर्व ही दोनों राणियों को स्वर्ग भेज दिया गया (राजस्थान जि० २, पृ० ६६३)। "मुंतख़बुल्लुबाब" के अनुसार दोनों राणियां मर्दों की पोशाक में बाहर निकल गईं और उनके स्थान में दो दासियां राणियों के रूप में रह गईं, जो शाही सेना के पहुंचने पर अन्य राजपूतों के समान ही लड़ने के लिए आमादा हुईं। आगे चल कर उक्त पुस्तक में यह भी लिखा है कि राणियों का भागना ठीक-ठीक प्रमाणित नहीं हुआ (इलियट्; हिस्ट्री ऑव् इंडिया; जि० ७, पृ० २६७-८)। मुन्शी देवीप्रसाद-लिखित "औरंगज़ेबनामे" से पाया जाता है कि लड़ाई में मैदान अपने हाथ से जाता देखकर राजपूतों ने, दोनों राणियों को, जो पुरुषों के वेष में उनके साथ थीं, क़त्ल किया और फिर दूसरे लड़के को दूध बेचनेवाले के घर में ही छोड़कर वे भाग गये (भाग २, पृ० ८६)। जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि शाही अफ़सरों के बीस हज़ार सवार और तोपख़ाने के साथ हवेली पर पहुंचने और राणियों एवं कुंवरों के मांगने पर राठोड़ मरने-मारने को कटिबद्ध हो गये। झगड़ा प्रारम्भ होने पर जादमजी और नरूकीजी (राणियों) पर चन्द्रभाण के हाथ से लोहा कराने को कहकर राठोड़ दुर्गादास आदि बचे हुए ढाई-तीन सौ राजपूतों ने शाही तोपख़ाने पर आक्रमण कर उसे क़ाबू में किया और फिर वे शाही सेना से जूझ पड़े। मुट्ठी भर राजपूतों ने इस लड़ाई में असाधारण वीरता का परिचय दिया। शाही सेना के लगभग ५०० सैनिक काम आये और ८०० घायल हुए। राठोड़ों में से अधिकांश ने वीर गति पाई। केवल दुर्गादास कुछ साथियों के साथ मुसलमानों का संहार करता हुआ घायल होकर निकल गया (जि० २, पृ० ३२-६)। कहीं-कहीं राणियों का पुरुष वेष धारणकर वीरतापूर्वक लड़ना भी लिखा मिलता है, पर ये सब कथन अधिकांश अतिशयोक्तिपूर्ण और काल्पनिक ही हैं। जोधपुर

सहित काम आये[1]।

बादशाह को जब युद्ध में महाराजा जसवन्तसिंह के परिवार के मारे जाने और राजकुमारों के भगाये जाने का समाचार मिला तो उसने राज-कुमारों को, जहां से भी हो, खोजकर दरबार में उपस्थित करने की आज्ञा निकाली। बहुतेर तलाश करने पर भी जब कुमारों का पता न लगा तो कोत-वाल ने एक फ़र्ज़ी लड़का पकड़ लेजाकर बादशाह को सौंप दिया[2], जिसने उसका नाम मोहम्मदीराज रखकर अपनी पुत्री ज़ेबुन्निसा बेगम को परव-रिश करने के लिए दे दिया[3]।

राजकुमारों की खोज में शाही अफ़सरों की असफलता

दूसरे दिन फ़ौलादख़ां ने उस लड़के के कुछ ज़ेवर भी ढूंढ निकाले. परन्तु राजा और दोनों रानियों तथा अन्य राजपूतों का माल-असबाब इस बीच लुटेरों ने लूट लिया और जो सरकार में आया वह बादशाह के हुक्म से "बैतुलमाल"[4] के कोठे में जमा किया गया[5]। जोधपुर के फ़ौजदार ताहिर-ख़ां ने भागे हुए राजपूतों को रोकने में पैर नहीं जमाया था, जिससे वह

राज्य का यह कथन कि बीस हज़ार सवारों ने किशनगढ़ की हवेली पर तोपख़ाने के साथ धावा किया और दुर्गादास दिल्ली में ही रहकर शाही सेना के साथ लड़ा माना नहीं जा सकता, क्योंकि जैसा ऊपर लिखा गया है वह तो अजीतसिंह को लेकर पहले ही चला गया था।

(१) वीरविनोद; भाग २, पृ० ८२३-४।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ३६-७। मुन्शी देवीप्रसाद-लिखित "औरंगज़ेबनामे" से पाया जाता है कि कोतवाल फ़ौलादख़ां राठोड़ों-द्वारा छिपाये हुए राजकुमार का हाल जान गया था, जिससे वह उसे वोली के यहां से ले आया। राजा की लौंडियों को दिखाये जाने पर उन्होंने भी यही कहा कि यह महाराजा का बेटा है (भाग २, पृ० ८९)।

(३) मुन्शी देवीप्रसाद; औरंगज़ेबनामा; भाग २, पृ० ८६।

(४) खज़ाना।

(५) मुन्शी देवीप्रसाद; औरंगज़ेबनामा; भाग २, पृ० ८६।

नौकरी से अलग कर दिया गया और साथ ही उसका ख़िताब भी छीन लिया गया[1]।

ता० २० रज्जब (भाद्रपद वदि ८ = ता० १८ अगस्त) को बादशाह ने ख़िज़राबाद के बाग़ में मुक़ाम होने पर वहां से सरबलंदख़ां की अध्यक्षता में एक अच्छी फ़ौज जोधपुर पर रवानां की[2]।

बादशाह का जोधपुर पर और सेना भेजना

ता० २६ रज्जब (भाद्रपद वदि १४ = ता० २४ अगस्त) को बादशाह से अर्ज़ हुई कि राजा के नौकरों में से राजसिंह[3] ने बहुतसी सेनासहित अजमेर के फ़ौजदार तहव्वरख़ां से लड़ाई की। तीन दिन तक दोनों में खूब लड़ाई होती रही, तीर और बंदूक से लड़ते-लड़ते तलवार, बर्छी, छुरी और कटारी की नौबत पहुंची। बहुत देर तक मार-काट जारी रही और दोनों तरफ़ लाशों के ढेर लग गये। आख़िर तहव्वरख़ां जीता और राजसिंह वीरतापूर्वक लड़कर मारा गया[4]।

अजमेर के फ़ौजदार तहव्वरख़ां के साथ राठोड़ों की लड़ाई

(१) मुंशी देवीप्रसाद; औरंगज़ेबनामा; भाग २, पृ० ८६। जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि दिल्ली की लड़ाई की ख़बर श्रावण मास के अंतिम दिनों में जोधपुर पहुंची। इसपर राठोड़ों ने ताहिरख़ां आदि को घेर लिया, जिसने माल-असबाब राठोड़ों के सिपुर्द कर अपनी जान बचाई। इसके बाद राठोड़ों ने मेड़ते में मार-काट मचाई और फिर सिवाने का गढ़ छीन लिया (जि० २, पृ० ३७)।

(२) मुंशी देवीप्रसाद; औरंगज़ेबनामा; भाग २, पृ० ८६।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात में मेड़तिया राजसिंह प्रतापसिंहोत और ऊदावत राजसिंह बलरामोत ये दो नाम दिये हैं; पर इनमें से इस लड़ाई में काम आनेवाला प्रथम राजसिंह ही था, अतएव वही फ़ारसी तवारीख़ का राजसिंह होना चाहिये। वह आलणियावासवालों का पूर्वज था।

(४) मुंशी देवीप्रसाद; औरंगज़ेबनामा; भाग २, पृ० ८६-७।

जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार यह लड़ाई भाद्रपद वदि ११ को हुई। उस समय तहव्वरख़ां का डेरा पुष्कर में था। उक्त ख्यात के अनुसार मेड़तिये इस लड़ाई में बड़ी वीरता से लड़े और तहव्वरख़ां भाग गया (जिल्द २, पृ० ३७)।

यह ऊपर लिखा जा चुका है कि बादशाह ने इन्द्रसिंह को जोधपुर का स्वामी मानकर उधर का प्रबन्ध करने के लिए भेजा था, परन्तु उससे न तो वहां का प्रबन्ध ही हुआ और न वह उधर होनेवाले उपद्रव को ही शान्त कर सका, जिससे बादशाह ने उसे वापस बुला लिया[1]।

इन्द्रसिंह का वापस बुलाया जाना

यह ऊपर लिखा जा चुका है कि दुर्गादास, सोनिंग आदि राजकुमारों को लेकर गुप्त रूप से दिल्ली से बाहर चले गये थे। छोटे राजकुमार दलथंभण का तो मार्ग में देहांत हो गया। अजीतसिंह को साथ लेकर राठोड़ सरदार मारवाड़ की तरफ़ चले, परन्तु सम्पूर्ण जोधपुर राज्य पर बादशाह का अधिकार हो गया था। इससे दुर्गादास, सोनिंग आदि बड़े चिन्तित हुए और उन्होंने अर्ज़ी लिखकर महाराणा राजसिंह से अजीतसिंह को शरण में लेने की प्रार्थना की। महाराणा के स्वीकार करने पर वे अजीतसिंह को साथ लेकर उसके पास गये और ज़ेवर-सहित एक हाथी, ११ घोड़े, एक तलवार, रत्नजटित कटार, दस हज़ार दीनार (चांदी का

राठोड़ों का अजीतसिंह को लेकर महाराणा के पास जाना

(१) मुंशी देवीप्रसाद; औरंगज़ेबनामा; भाग २, पृ० ८६। सरकार ने भी लिखा है कि केवल दो मास बाद ही उसकी अयोग्यता के कारण बादशाह ने इन्द्रसिंह को राज्यच्युत कर दिया (शार्ट हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब; पृ० १७२)।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में लिखा है कि इन्द्रसिंह के जोधपुर पहुंचने पर उसकी तरफ़ से कूंपावत सुदर्शन भावसिंहोत, जोधा रतन हरीसिंहोत आदि गढ़ में गये। उन्होंने वहां के सरदारों से कहा कि अभी महाराजा (स्वर्गीय) के पुत्र की पक्की ख़बर नहीं है और इन्द्रसिंह भी महाराजा गजसिंह का पौत्र ही है, ऐसी दशा में उसको जोधपुर का शासक मान लेना असंगत नहीं है। इसपर जैतावत प्रतापसिंह देवकर्णोत, राठोड़ हरनाथ गिरधरदासोत आदि ने रातानाड़ा जाकर, जहां इन्द्रसिंह ठहरा हुआ था, उसकी अधीनता स्वीकार करली। तब वि० सं० १७३६ भाद्रपद सुदि ७ (ई० स० १६७९ ता० २ सितम्बर) मंगलवार को इन्द्रसिंह ने बड़े जलूस के साथ जोधपुर के गढ़ में प्रवेश किया। पीछे से वि० सं० १७३७ में ग़ैरचाकरी के कारण बादशाह ने उसे जोधपुर से अलग कर दिया (जि० २, पृ० ३८ और ४३)।

सिक्का, रुपये) उसकी नज़र किये। महाराणा ने अजीतसिंह को बारह गांवों सहित केलवे का पट्टा देकर वहां रक्खा[1] और दुर्गादास आदि राठोड़ों से कहा कि बादशाह सीसोदियों और राठोड़ों के सम्मिलित सैन्य का आसानी से मुक़ाबिला नहीं कर सकता, आप निश्चिन्त रहिये[2]।

बादशाह ने जब अजीतसिंह के, जिसे वह कृत्रिम समझता था[3], महाराणा के पास पहुंचने की खबर सुनी तब उसने महाराणा के पास फ़रमान

---

(१) मान कवि; राजविलास; विलास ६, पद्य १७१-२०६ (नागरी प्रचारिणी सभा, काशी का संस्करण)। इस पुस्तक की रचना का प्रारम्भ महाराणा राजसिंह की विद्यमानता में वि० सं० १७३५ (ई० स० १६७८) में हुआ और यह वि० सं० १७३७ में समाप्त हुई। टॉड; राजस्थान; जि० १, पृ० ४४२ (दुर्गादास की देख रेख में अजीत का केलवे में, जो उसे महाराणा की तरफ़ से जागीर में मिला था, रहना लिखा है)। रूपाहेली के ठाकुर राठोड़ चतुरसिंह-कृत "चतुरकुल-चरित्र" (प्रथम भाग; पृ० १००, ई० स० १६०२ का संस्करण) में भी इसका उल्लेख है।

(२) वीरविनोद; भाग २, पृ० ४६३।

जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि महाराजा जसवन्तसिंह के उमराव उसकी कुछ राणियों को उनके पीहर पहुंचा आये थे। हाड़ी और चौहान राणियां बूंदी गईं, शेखावत खंडेला गई, देवड़ी सिरोही गई, भटियाणी जैसलमेर गई और जादम उदयपुर राणा के पास गई, जहां उसे उसने एक गांव दिया था। वाघेली राणी मुंहणोत नैणसी की हवेली में जा रही थी, जिसकी परवरिश का इन्द्रसिंह ने जोधपुर पहुंचने पर समुचित प्रबन्ध किया (जि० २, पृ० ३८-३९)।

(३) मुंशी देवीप्रसाद-कृत "औरंगज़ेबनामे" में लिखा है कि जो राजपूत मारे जाने से बचे वे जोधपुर पहुंचकर दुर्गा और अन्य दुश्मनों के बहकाने से दो जाली लड़कों—दलथंभन (जो मर गया) और अजीतसिंह—को महाराजा जसवंतसिंह का पुत्र प्रकाशित कर फ़साद करने लगे (भाग २, पृ० ८६)। इससे स्पष्ट है कि औरंगज़ेब उक्त दोनों लड़कों को फ़र्ज़ी ही मानता था। सर जदुनाथ सरकार ने भी लिखा है कि औरंगज़ेब तब तक अजीतसिंह को फ़र्ज़ी समझता रहा, जब तक कि मेवाड़ के राजवंश में उसका विवाह नहीं हुआ (हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब; जि० ३, पृ० ३५२—तृतीय संस्करण)। History of Aurangzeb

बादशाह का महाराणा से अजीतसिंह को मांगना

भेजकर अजीतसिंह को मांगा, परन्तु महाराणा ने उसपर ध्यान न दिया। फिर दो बार फ़रमान भेजकर अपनी आज्ञा पालन करने के लिए बादशाह ने महाराणा को लिखा, परन्तु उसने अजीतसिंह को सौंपना स्वीकार न किया। इसपर बादशाह ने तुरंत उसपर चढ़ाई कर दी[1]।

महाराणा के कृष्णगढ़ की कुंवरी चारुमती से, जिससे बादशाह का संबंध स्थिर हो चुका था, विवाह करने, श्रीनाथजी आदि की मूर्तियों को

महाराणा पर बादशाह की चढ़ाई

अपने राज्य में रखने और जज़िया के विरोध में पत्र लिखने से औरंगज़ेब उसपर पहले ही नाराज़ था, ऐसे में उसकी इच्छा के विरुद्ध अजीतसिंह को आश्रय देने से बादशाह की उसपर नाराज़गी बढ़ गई और उसने हि० स० १०६० ता० ७ शाबान (वि० सं० १७३६ भाद्रपद सुदि ८ = ई० स० १६७६ ता० ३ सितम्बर) को मेवाड़ पर चढ़ाई करने के लिए एक बड़ी सेना के साथ दिल्ली से प्रस्थान किया। उसी दिन उसने शाहज़ादे अकबर को अजमेर में पहले पहुंचने के लिए पालम क़सबे से रवाना किया। बादशाह १३ दिन में अजमेर पहुंचा और आनासागर पर के महलों में ठहरा[2]।

महाराणा ने बादशाह के दिल्ली से मेवाड़ पर चढ़ने की ख़बर पाकर अपने कुंवरों, सरदारों आदि को एकान्त में बुलाकर उनसे सलाह की कि बादशाह से कहां और किस प्रकार लड़ना चाहिये। उस समय कुंवरों और अन्य सरदारों आदि के अतिरिक्त राठोड़ दुर्गादास और राठोड़ सोनिंग भी

(१) राजविलास; विलास १०, पद्य २२-४।

(२) वीरविनोद; भाग २, पृ० ४६३। मुंशी देवीप्रसाद-कृत "औरंगज़ेबनामे" में ता० २६ शाबान (आश्विन सुदि १ = ता० २५ सितम्बर) को बादशाह का अजमेर पहुंचना लिखा है (भाग २, पृ० ८८)। जोधपुर राज्य की ख्यात में वि० सं० १७३६ के मार्गशीर्ष मास में बादशाह का अजमेर पहुंचना और वहां से महाराणा राजसिंह पर चढ़ाई करना लिखा है (जि० २, पृ० ३६), जो ठीक नहीं है।

दरबार में उपस्थित थे[1]। बादशाह के पास सेना अधिक थी, अतएव पहाड़ियों में रहकर युद्ध करने का निश्चय हुआ, जिसके अनुसार महाराणा राजसिंह अपने सामन्तों आदि को साथ लेकर पहाड़ों की तरफ़ चला गया[2]। मुग़लों ने उदयपुर में प्रवेशकर उसे खाली पाया और वहां के मन्दिर आदि तोड़े। इसके बाद उन्होंने राजपूत सेना की तलाश में पहाड़ियों में प्रवेश करना प्रारम्भ किया। चित्तोड़ पर मुग़ल सेना का अधिकार होने के पश्चात् उदयपुर के निकट देबारी में कुछ दिनों रहने के बाद फ़रवरी मास के अन्त में बादशाह स्वयं वहां (चित्तोड़) लौटा। वहां से वह अजमेर लौटा और मेवाड़ में शाहज़ादा अकबर सैन्य-परिचालन के लिए रह गया। मुग़ल थाने दूर-दूर स्थापित होने और मेवाड़ एवं मारवाड़ के बीच अरावली की पहाड़ियां होने के कारण, जिसमें महाराणा अपनी सेना-सहित था, मुग़ल सेना को राजपूतों के साथ लड़ने में बड़ी असुविधा का सामना करना पड़ता था। जब कई बार मेवाड़ में रक्खी हुई मुग़ल-सेना का राजपूतों ने बहुत नुक़सान किया तो बादशाह ने नाराज़ होकर अकबर को मारवाड़ की तरफ़ भेज दिया और उसके स्थान में शाहज़ादे आज़म की नियुक्ति की[3]।

शाहज़ादे अकबर का मारवाड़ में पहुंचना।

चित्तोड़ से बदले जाने पर वि० सं० १७३७ श्रावण सुदि ३ (ई० स० १६८० ता० १८ जुलाई) को शाहज़ादा अकबर सैन्य-सहित सोजत (मारवाड़) पहुंचा। मार्ग में राजपूतों ने उसे मौक़े-मौक़े पर हैरान किया, पर वे हटा दिये गये और तहव्वरख़ां ने, जो मुग़ल सेना के हरावल में था, ब्यावर और मेड़ता में जमकर सामना करनेवाले कितने ही राठोड़ों को गिरफ़्तार भी

(१) मान कवि; राजविलास; विलास १०, पद्य ५४-६७।

(२) मेरा उदयपुर राज्य का इतिहास; जि० २, पृ० ५५८।

(३) सर जदुनाथ सरकार; शार्ट हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब; पृ० १७२-५। इस चढ़ाई के विस्तृत विवरण के लिए देखो मेरा उदयपुर राज्य का इतिहास; जि० २, पृ० ५५४-६३।

किया। राठोड़ों की टुकड़ियां देश में इधर-उधर फैलकर, जहां मुग़लों का थाना कमज़ोर देखतीं, वहां अचानक आक्रमण कर देतीं; पर जमकर कहीं भी लड़ाई नहीं हुई। मारवाड़ के प्रत्येक भाग में, दक्षिण में जालोर एवं सिवाना में, पूर्व में गोड़वाड़ में, उत्तर में नागोर में और उत्तर-पूर्व में डीडवाणा तथा सांभर में अजीतसिंह के अनुयायी हर जगह अचानक आक्रमण करते रहे।

अकबर को यह आज्ञा मिली कि वह सोजत को सुरक्षित कर नाडोल (जो उस समय मेवाड़ के अधिकार में था) पर अधिकार करे और वहां से तहव्वरख़ां की अध्यक्षता में अपने हरावल सैन्य को नारलाई के पासवाले देसूरी के घाटे से होकर मेवाड़ में भेजे तथा कमलमेर (कुंभलमेरु, कुंभलगढ़) के ज़िले पर आक्रमण करे, जहां महाराणा और हारे हुए राठोड़ ठहरे हुए थे और जहां से वे इधर-उधर आक्रमण किया करते थे; परन्तु इस आज्ञा की पूर्ति में कई महीने लग गये। मृत्यु का आलिंगन करनेवाले राजपूतों का आतङ्क शत्रुदल पर ऐसा छा गया था कि तहव्वरख़ां नाडोल जाने के लिए आगे बढ़ने से इन्कार कर अपने सैन्य-सहित खरवे (? खैरवा) में ठहर गया और एक मास पीछे नाडोल पहुंचा, पर राजपूतों का भय उसे पूर्ववत् ही बना रहा। रसद आदि की समुचित व्यवस्था कर शाहज़ादा अकबर मार्ग में थाने बैठाता हुआ सोजत से चलकर सितम्बर के अंत में नाडोल पहुंचा; परंतु तहव्वरख़ां ने पहाड़ों में जाना स्वीकार न किया, जिससे अकबर को अपने उस डरपोक अफ़सर पर दबाव डालना पड़ा। ता० २७ सितम्बर (आश्विन सुदि १४) को तहव्वरख़ां देखभाल करने के लिए घाटे के द्वार की ओर चला। महाराणा के दूसरे पुत्र भीमसिंह ने पहाड़ों से निकलकर उससे लड़ाई की, जिसमें दोनों पक्षों की बहुत हानि हुई[1]। इसी बीच महाराणा का वि० सं० १७३७ कार्तिक सुदि १० (ई० स० १६८० ता० २२ अक्टोबर) को ओड़ा गांव में विष देने से देहांत हो गया

(१) सर जदुनाथ सरकार; हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब; जि० ३, पृ० ३४६-४० (तृतीय संस्करण)। इस लड़ाई का वृत्तान्त गुज़रात के नागर ब्राह्मण ईश्वरदास ने "फ़तूहात-इ-आलमगीरी" (पत्र ७७ पृ० २–पत्र ७८ पृ० २) में लिखा है।

और उसका पुत्र जयसिंह उसका उत्तराधिकारी हुआ[1]। उसने भी बादशाह के साथ की लड़ाई जारी रक्खी।

शाहज़ादे अकबर का राजपूतों से मिल जाना

यह सब होते हुए भी शाही सेना का सामना करना राजपूतों के लिए कठिन कार्य था, अतएव उन्होंने युक्ति से काम लेकर पहले शाहज़ादे मुअज़्ज़म को (जो देबारी के पास उदयसागर पर ठहरा हुआ था) बादशाह के विरुद्ध करने का प्रयत्न किया। इसके लिए राव केसरीसिंह चौहान, रावत रत्नसिंह (चूंडावत), राठोड़ दुर्गादास और सोनिंग आदि सरदारों ने उससे बात-चीत शुरू की, परन्तु अजमेर से मुअज़्ज़म की माता नवाबबाई ने उसे राजपूतों से मेल-मिलाप न रखने की सलाह दी, जिससे वह राजपूतों के बहकाने में न आया[2]। तब राजपूतों ने शाहज़ादे अकबर को अपनी तरफ़ मिलाने का प्रयत्न किया। उन्होंने उससे कहा कि राजपूतों को नाराज़ कर औरंगज़ेब अपने सारे राज्य को नष्ट कर रहा है। इस समय तुम्हें चाहिये कि स्वयं बादशाह बनकर अपने पूर्वजों की नीति का अवलम्बन करो और राज्य को फिर समृद्ध बनाओ। तहव्वरखां के ओलवाड़े में रहते समय महाराणा जयसिंह ने राठोड़ दुर्गादास तथा अन्य कई सरदारों को गुप्त रूप से अकबर के पास भेजा। अकबर ने महाराणा को कुछ परगने और अजीतसिंह को जोधपुर का राज्य देने का वचन दिया, जिसके बदले में उन्होंने उसे सहायता देना स्वीकार किया। फिर सब बातें तय होने पर ई० स० १६८१ ता० २ जनवरी (वि० सं० १७३७ माघ वदि ८) को अजमेर में बादशाह पर आक्रमण करने के लिए प्रस्थान करने का निश्चय हुआ[3]।

---

(१) मेरा उदयपुर राज्य का इतिहास; जि० २, पृ० ५७७-८ तथा ५८१।

(२) मुंतख़बुल्लुबाब—इलियट्; हिस्ट्री ऑव् इंडिया; जि० ७, पृ० ३००।

(३) सरकार; हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब, जि० ३, पृ० ३५५-५६। मुंतख़बुल्लुबाब—इलियट्; हिस्ट्री ऑव् इंडिया; जि० ७, पृ० ३००-१। मुंशी देवीप्रसाद;

ई० स० १६८१ ता० १ जनवरी (वि० सं० १७३७ माघ वदि ७) को अकबर ने अपने को बादशाह घोषित किया। इस अवसर पर उसने अपने सरदारों और अमीरों को खिताब दिये तथा तहव्वरख़ां को अपना मुख्य मंत्री बनाकर उसे सात हज़ारी मनसब दिया। अकबर के साथ के सरदारों में से कुछ तो स्वयमेव उसके साथी बन गये और कुछ को बाध्य होकर उसका साथ स्वीकार करना पड़ा। जिन्होंने उसका विरोध किया वे क़ैद में डाल दिये गये। केवल शहाबुद्दीनख़ां ने, जो कुछ पीछे रह गया था, शीघ्रता से औरंगज़ेब को शाहज़ादे के विद्रोह की सूचना दे दी। औरंगज़ेब की दशा उस समय बड़ी शोचनीय थी, क्योंकि अधिकांश सेना चित्तोड़ आदि में रहने के कारण उसके पास बहुत कम सेना रह गई थी, जब कि सीसोदियों और राठोड़ों की सेना-सहित अकबर का सैन्य ७००७० के क़रीब था। बादशाह ने सब मनसबदारों और अपने शाहज़ादों को शीघ्र अजमेर पहुंचने के लिए लिखा। उधर युवा अकबर, जो स्वभावतः सुस्त और विलासी था, अपने बादशाह बनने की ख़ुशी में नाचरंग में मस्त रहने लगा।

शाहज़ादे अकबर की औरंगज़ेब पर चढ़ाई

औरंगज़ेबनामा; भाग २, पृ० १०० तथा टि० १।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में भिन्न वर्णन मिलता है। उसमें लिखा है—"वि० सं० १७३७ कार्तिक सुदि १० को महाराणा राजसिंह का देहांत होगया और जयसिंह गद्दी पर बैठा। इसके बाद दुर्गादास गोरम के पहाड़ों से होकर मार्गशीर्ष मास में मेड़ते गया, जहां उसने व्यापारियों आदि से बहुतसा धन वसूल किया। फिर उसने डीडवाणा से भी रुपये लिये। बादशाह ने उसके पीछे फ़ौज भेजी, जिसने उसका बहुत पीछा किया। नागोर से बादशाही सेना लौट गई। गांव जीलवाड़े से शाहज़ादे अकबर के सेवकों—ताजमुहम्मद और चौहान भावसिंह—ने राठोड़ों के पास जाकर कहा—'तुम हमारे शामिल हो जाओ। जोधपुर राजा (जसवन्तसिंह) के लड़के को मुबारक कर दिया जायगा।' गांव चांचोड़ी में तहव्वरख़ां का पुत्र मिर्ज़ा मानी राठोड़ रामसिंह (रत्नोत) के पास जाकर राठोड़ों को साथ ले गया। खोड़ में शाहज़ादे ने तख़्त पर बैठकर दरबार किया और माघ वदि ६ को राठोड़ों को सिरोपाव, घोड़े, हाथी, तलवार और हज़ार मोहरें दीं (जि० २, पृ० ४२-३)।"

उसने १२० मील का सफ़र करने में १५ दिन लगा दिये; जबकि प्रत्येक घंटे की देरी के कारण औरंगज़ेब की स्थिति दृढ़ होती जा रही थी। क्रमशः शहाबुद्दीनखां और हमीदखां सैन्य-सहित बादशाह के पास पहुंच गये। साथ ही शाहज़ादे मुअज़्ज़म के भी प्रस्थान करने की ख़बर पहुंची। स्थिति सुधरते ही बादशाह ने अजमेर को चारों ओर से सुरक्षित कर लिया। ता० १४ जनवरी (माघ सुदि ५) को वह अजमेर से ६ मील दूर दोराई में जाकर ठहरा। अकबर की सेना का अग्रभाग कुड़की नामक स्थान में था, पर अकबर के डेरों में उस समय निराशा और विद्रोह का साम्राज्य था। ज्यों-ज्यों वह आगे बढ़ने लगा, उसकी तरफ़ के मुग़ल सैनिक अधिकाधिक संख्या में उसका साथ छोड़कर बादशाह से मिलने लगे। हां, ३०००० राजपूत उसके साथ अवश्य बने रहे। ता० १५ जनवरी (माघ सुदि ६) को बादशाह आगे बढ़कर चार मील दक्षिण में दोराहा (? डुमाड़ा) नामक स्थान में ठहरा। अकबर भी उससे तीन मील दूर जा डटा। इसी बीच शाहज़ादा मुअज़्ज़म सेना-सहित जाकर अपने पिता के शामिल हो गया[1]।

अकबर के बहुत से अफ़सर उस समय तक बादशाह से जा मिले थे। अब बादशाह ने उसके मुख्य सेनापति तहव्वरखां को उसके ससुर इनायतखां (बादशाह का सेनापति) के द्वारा इस आशय का ख़त लिखाकर अपने पास बुलाया कि यदि वह चला आयगा तो उसका अपराध क्षमा किया जायगा नहीं तो उसकी स्त्रियां सब के सामने अपमानित की जावेंगी और उसके बच्चे कुत्तों के मूल्य पर ग़ुलामों के तौर बेचे जावेंगे। इस धमकी से डरकर तहव्वरखां सोते हुए अकबर तथा दुर्गादास को सूचना दिये बिना ही औरंगज़ेब के पास चला गया, जहां शाही नौकरों ने उसको मार डाला[2]।

(१) सरकार; हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब; जि० ३, पृ० ३५६-६१।

(२) वही; जि० ३, पृ० ३६१-६३। जोधपुर राज्य की ख्यात में इस घटना का उल्लेख भिन्न प्रकार से दिया है। उसमें लिखा है—"बादशाह ने इनायतख़ां से तहव्वरख़ां की स्त्री और पुत्रों को मारने के लिए फ़रमाया। इसकी ख़बर इनायतख़ां ने

इसके बाद अकबर और उसके सहायक राजपूतों में विरोध पैदा करने के लिए औरंगज़ेब ने एक चाल चली। उसने एक जाली पत्र अकबर के नाम इस आशय का लिखा कि तुमने राजपूतों को खूब धोखा दिया है और उन्हें मेरे सामने लाकर बहुत अच्छा काम किया है। अब तुम्हें चाहिये कि उन्हें हरावल में रक्खो, जिससे कल प्रातःकाल के युद्ध में उनपर दोनों तरफ़ से हमला किया जा सके। यह पत्र किसी प्रकार राजपूतों के डेरे में दुर्गादास के पास पहुंचा दिया गया, जिसको पढ़ते ही उसके मन में खटका हो गया। वह अकबर के डेरे पर गया, पर अर्द्धरात्रि का समय होने से वह सो रहा था और उसे किसी भी दशा में जगाने की आज्ञा सेवकों को न थी। तब दुर्गादास ने अपने डेरे पर लौटकर तहव्वरखां को बुलाने के लिए अपने आदमी भेजे पर वह तो पहले ही बादशाह के पास जा चुका था। यह ख़बर मिलते ही राजपूतों का सन्देह विश्वास में परिणत हो गया और उन्हें उस पत्र पर अविश्वास करने का कोई कारण न रहा। प्रातःकाल होने के पूर्व ही वे अकबर का बहुतसा सामान आदि लूटकर मारवाड़ की तरफ़ चल दिये। ऐसी अव्यवस्थित दशा से लाभ उठाकर औरंगज़ेब के पक्षपाती, जो शाहज़ादे के पास क़ैदी थे तथा अन्य मुसलमान भी भागकर बादशाह के पास चले गये[1]।

औरंगज़ेब का छल और दुर्गादास का शाहज़ादे का साथ छोड़ना

अपने जंवाई (तहव्वरख़ां) को भेज दी। इसपर तहव्वरख़ां ने राठोड़ों से कहलाया कि अब हमारा आपका मेल नहीं रहा और वह बादशाह के पास चला गया, जहां वह मार डाला गया (जि० २, पृ० ४३)।" टॉड के कथनानुसार तहव्वरख़ां ने इस आशय का पत्र लिखकर दूत के हाथ राठोड़ों के पास भिजवाया—"मेरे ही द्वारा आपका अकबर से मेल हुआ था, पर अब पिता पुत्र एक हो गये हैं, अतएव अब वचन आदि का ध्यान त्यागकर आप अपने-अपने देश जांय।" इसके बाद वह औरंगज़ेब के पास गया, जहां बादशाह की आज्ञा से वह मारा गया (राजस्थान; जि० २, पृ० ६६८)।

मनूकी लिखता है कि तहव्वरख़ां बादशाह को मारने की नीयत से गया था (स्टोरिया डो मोगोर; जि० २, पृ० २४७), पर यह कथन कल्पनामात्र है।

(१) सरकार; हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब; जि० ३, पृ० ३६३-४।

सवेरा होने पर अकबर ने अपने आपको विचित्र परिस्थिति में पाया। विशाल वाहिनी के स्थान में उसके पास केवल ३५० सवार शेष रह गये। ऐसी हालत में उसकी बादशाह बनने की सारी अभिलाषा मिट्टी में मिल गई। शीघ्राति-शीघ्र भागने के अतिरिक्त उसके लिए जीवन-रक्षा का दूसरा उपाय नहीं रह गया। स्त्रियों को घोड़ों पर बैठा और जो कुछ धन आदि जल्दी में एकत्र किया जा सका वह ऊंटों पर लादकर अकबर राजपूतों के पीछे रवाना हुआ। बादशाह ने यह खबर पाते ही शाहज़ादे मुअज़्ज़म को अकबर को गिरफ़्तार करने के लिए मारवाड़ में भेजा। अकबर दो दिन तक निराश्रित भागता रहा, पर इस बीच राठोड़ों को औरंगज़ेब के छल का सारा हाल ज्ञात हो गया और दुर्गादास ने राजपूतों के साथ पीछे लौटकर अकबर को अपनी शरण में ले लिया[1]। शाहज़ादे की रक्षा करना राठोड़ों ने अपना प्रमुख कर्तव्य समझा। राठोड़ उसे साथ लिए कई दिन तक मारवाड़ में फिरते रहे, पर वे किसी जगह भी एक दिन तक नहीं ठहरते थे। इसपर शाहज़ादे मुअज़्ज़म ने अपना ढंग बदल दिया और चारों तरफ़ जगह-जगह अकबर की गिरफ़्तारी के लिए

दुर्गादास का शाहज़ादे अकबर को शरण में लेना और उसे लेकर शम्भा के पास जाना

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है—"बादशाह ने २० हज़ार सेना के साथ शाहज़ादे आलम (? मुअज़्ज़म) को अकबर को गिरफ़्तार करने के लिए उसके पीछे भेजा। राव इन्द्रसिंह, राठोड़ रामसिंह रतनोत और नवाब कुलीचख़ां आदि इस फ़ौज के साथ थे। जालोर के पास पहुंचते ही राठोड़ों ने शाही सेना का बहुतसा सामान आदि लूट लिया। इस लापरवाही के कारण बादशाह ने इन्द्रसिंह से जोधपुर, रामसिंह से जालोर और कुलीचख़ां से उसकी जागीर ज़ब्त कर ली। यही नहीं कुलीचख़ां क़ैद में डाल दिया गया (जि० २, पृ० ४३)।" मुंशी देवीप्रसाद-लिखित "औरंगज़ेबनामे" में भी अकबर के पीछे बादशाह-द्वारा बहुतसा धन आदि साथ देकर शाहआलम, इन्द्रसिंह, रामसिंह आदि का भेजा जाना लिखा है (भाग २, पृ० १०४)। हम ऊपर लिख आये हैं कि इन्द्रसिंह का केवल दो मास तक ही जोधपुर पर अधिकार रहा था, ऐसी दशा में ख्यात का यह कथन कि इस समय उससे जोधपुर की जागीर ज़ब्त हुई संदिग्ध प्रतीत होता है।

सैनिक नियुक्त कर दिये। अजमेर से भागने के एक सप्ताह के बीच विद्रोही शाहज़ादा सांचोर पहुंचा, पर गुजरात में रक्खे हुए मुग़ल सैनिकों-द्वारा वहां से भगाये जाने पर उसे अपने आश्रय-दाताओं-सहित मेवाड़ में जाना पड़ा[1], जहां के महाराणा जयसिंह ने उसका आदरपूर्वक स्वागत किया और उसे अपने यहां ठहरने के लिए कहा। वहां भी ठहरना खतरे से खाली नहीं था, अतएव दुर्गादास ने उसे दक्षिण ले जाने का निश्चय किया[2]। केवल ५०० राठोड़ों के साथ वह मेवाड़ से निकलकर डूंगरपुर

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में लिखा है—"जालोर से नज़राना वसूलकर राठोड़ शाहज़ादे को लेकर सांचोर की तरफ़ गये, जहां शाहज़ादे (शाह) आलम (?) की सेना से उनका युद्ध हुआ। फिर गांव कोटकोलर में डेरा होने पर शाहज़ादे (शाह) आलम ने राठोड़ों से सन्धि की बात-चीत की और कहलाया कि राजा के पुत्र (अजीतसिंह) को मनसब और उसकी जागीर (जोधपुर) दी जायगी तथा अकबर को गुजरात का परगना दिया जायगा। साथ ही उसने चार हज़ार मोहरें भी खरचे के लिए उनके पास भेजीं, जो राठोड़ हरिसिंह मोहकमसिंहोत, बाघ मुरारसिंहोत तथा जुझारसिंह कुशलसिंहोत ज़ामिन होकर ले आये। शाहज़ादे अकबर और दुर्गादास को यह बात पसन्द न आई और खरचे के लिए आई हुई अशरफ़ियां भी सरदारों में बांट दी जाने के कारण वापस न की जा सकीं। फलतः यह सन्धि-वार्ता अपूर्ण ही रह गई और बाघ, हरिसिंह आदि शाहज़ादे आलम से सारी हक़ीक़त कह आये। श्रावणादि वि० सं० १७३७ (चैत्रादि १७३८) वैशाख सुदि १० (ई० स० १६८१ ता० १७ अप्रेल) को बादशाह ने इनायतख़ां को जोधपुर के सूबे में भेजा। इसपर पालणपुर और थराद से पेशकशी वसूल करते हुए दुर्गादास और अकबर राणा जयसिंह के पास चले गये (जि० २. पृ० ४३)।" मुन्शी देवीप्रसाद ने "औरंगज़ेबनामे" में यह सारा कथन टिप्पण में दिया है (भाग २, पृ० १०६ टि० १)। उसमें बादशाह की तरफ़ से भेजे हुए शाहज़ादे का नाम मुअज़्ज़म दिया है, पर अन्य फ़ारसी तवारीख़ों में कहीं भी इन घटनाओं का उल्लेख नहीं मिलता, इसलिए इनकी सत्यता संदिग्ध ही है।

(२) "वीरविनोद से पाया जाता है कि इसी बीच बादशाह और महाराणा के बीच सन्धि की चर्चा चल रही थी। विद्रोही अकबर के मेवाड़ की तरफ़ जाने का समाचार सुनकर शाहज़ादे आज़म ने महाराणा को हि० स० १०६२ ता० २४ रबीउल्अव्वल (वि० सं० १७३८ वैशाख वदि १० = ई० स० १६८१ ता० ३ अप्रेल) को एक निशान भेजकर लिखा कि शाहज़ादा अकबर देसूरी की तरफ़ जा रहा

के पहाड़ी प्रदेश में होता हुआ दक्षिण की ओर चला[1]। मार्ग में प्रत्येक जगह शाही सैनिकों का कड़ा पहरा था, परन्तु वीर और चतुर दुर्गादास उनसे बचता हुआ बढ़ता ही गया। डूंगरपुर से वह अहमदनगर की तरफ़ बढ़ा, परन्तु जब उसे उस ओर सफलता नहीं मिली तब वह दक्षिण पूर्व की तरफ़ से बांसवाड़ा और दक्षिणी मालवा में होता हुआ अकबरपुर के पास नर्मदा को पार कर बुरहानपुर के निकट पहुंचा; लेकिन उधर भी शाही अफ़सरों का कड़ा पहरा था, अतएव वह वहां से पश्चिम की तरफ़ चला और ख़ानदेश एवं बुगलाना होता हुआ रायगढ़ पहुंचा[2]।

मेवाड़ के साथ के लम्बे युद्ध से बादशाह तंग आ गया था। उधर महाराणा जयसिंह भी सन्धि के लिए उत्सुक था। फलस्वरूप श्यामसिंह[3]

है, उसे पकड़ लेना अथवा मार डालना। उस समय अकबर के साथ राठोड़ दुर्गादास, सोनिंग आदिससैन्य थे। महाराणा ने उनसे कहला दिया कि शाहज़ादे को इधर न लाकर दक्षिण में पहुंचा दो, क्योंकि यहां सुलह की बात-चीत चल रही है (भाग २, पृ० ६५३)।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि दक्षिण की तरफ़ प्रस्थान करने से पूर्व दुर्गादास ने दस वर्ष का ख़र्चा देकर अकबर के ज़नाने को बाड़मेर भेज दिया और वहां उनकी रक्षा का समुचित प्रबन्ध करवा दिया (जि० २, पृ० ४५)।

(२) सरकार; हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब, जि० ३, पृ० ३६४-७। "वीरविनोद" में लिखा है कि राठोड़ दुर्गादास अकबर को भोमट (मेवाड़), डूंगरपुर और राजपीपला के मार्ग से दक्षिण में ले गया, जहां शंभा ने उसे आश्रय दिया (भाग २, पृ० ६५३)।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि शंभा ने जब अकबर को आश्रय देने के सम्बन्ध में अपने सरदारों से सलाह की तो उनमें से अनेक ने इसके विरुद्ध राय दी, पर एक ब्राह्मण ने यही कहा कि शाहज़ादा और राठोड़ एक होकर आये हैं अतएव शरण देना ही उचित है, चाहे इसमें झगड़े की ही आशङ्का क्यों न हो। इसके बाद पौष वदि २ को रायगढ़ से १७ कोस दूर पातसाहपुर में शंभाजी का शाहज़ादे एवं दुर्गादास से मिलना हुआ (जि० २, पृ० ४५-६)।

(३) सर जदुनाथ सरकार ने श्यामसिंह को बीकानेर का बतलाया है (हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब; जि० ३, पृ० ३७०), जो ठीक नहीं है; क्योंकि राजप्रशस्ति महाकाव्य

उपद्रव करना आरम्भ कर दिया[1]। जिस समय "बादशाह महाराणा से सुलह कर दक्षिण जाने की तैयारी में था, उसी समय खबर आई कि तहव्वरखां के मारे जाने के पीछे उसके ताल्लुक़े का बादशाही सेवक मेड़तिया मोहकमसिंह कल्याणदासोत (तोसीणे का स्वामी) घर बैठ रहा है। बादशाह ने जब उसको दंड देने का प्रयत्न किया तो वह राठोड़ सोनिंग से जा मिला। इसके बाद राठोड़ों ने बगड़ी को लूटा तथा सोजत के हाकिम सरदारखां से लड़ाई की, जिसपर वह भाग गया। इस लड़ाई में जोधपुर के चांपावत कान गिरधरदासोत, चांपावत हरनाथ गिरधरदासोत (मालगढ़वालों का पूर्वज), चांपावत चतुरा हरिदासोत, सोढ़ विशला बाघावत, सींधल दला गोदावत, राठोड़ बीजो चतुरावत आदि कई सरदार काम आये। मुग़लों ने यह देखकर जोधपुर के प्रबंध में कई अन्तर कर दिये। बादशाह ने वि० सं० १७३८ प्रथम आश्विन सुदि ६ (ई० स० १६८१ ता० ८ सितम्बर) को दक्षिण की तरफ़ प्रस्थान किया[2]। इसके बाद असदखां ने राजा भीमसिंह (महाराणा राजसिंह का छोटा पुत्र) की मारफ़त मेल की बातचीत कराई। तब राठोड़ सोनिंग आदि कई सरदार अजमेर की तरफ़ चले, पर मार्ग में पूजलोत गांव में सोनिंग की अचानक मृत्यु हो गई[3],

---

(१) ख्यातों आदि से पाया जाता है कि मुग़लों का मारवाड़ पर अधिकार होने पर वहां के कुछ सरदारों ने अपनी जागीरें बचाने के लिए उनकी अधीनता स्वीकार कर ली थी; परन्तु अधिकांश सरदार महाराजा के ही पक्ष में रहे और उन्होंने कई अवसरों पर मुसलमानों से मिले हुए सरदारों पर हमले भी किये।

(२) मुन्शी देवीप्रसाद के "औरंगज़ेबनामे" (भाग २, पृ० ११२-३) से भी पाया जाता है कि इसी तिथि को बादशाह ने अजमेर से बुरहानपुर के लिए कूच किया।

(३) इस सम्बन्ध में मुन्शी देवीप्रसाद के "औरंगज़ेबनामे" में लिखा है कि ता० १८ ज़ीकाद हि० स० १०६२ (वि० सं० १७३८ मार्गशीर्ष वदि ४ = ई० स० १६८१ ता० १६ नवम्बर) को एतकादखां ने बहुतसी फ़ौज के साथ राठोड़ों पर, जो मेड़ता के पास तीन हज़ार सवार के क़रीब जमा हो गये थे, धावा किया। घमासान लड़ाई हुई, जिसमें सोनिंग, उसका भाई अजबसिंह, सांवलदास, बिहारीदास और गोकुलदास आदि काम आये और विजय मुसलमानों की हुई (भाग २, पृ० ११४)।

जिससे मेल की बात-चीत बीच में ही रह गई और राठोड़ों ने फिर लूट-मार शुरू कर दी। उन्होंने डीडवाणे से पेशकशी ले मकराणे को लूटा, फिर कार्तिक वदि १४ (ता० ३० अक्टोबर) को मेड़ता को लूटा और वे दो दिन इंदावड़ में रहे। इसपर बादशाही फ़ौज के साथ असदख़ां के पुत्र इतमादख़ां ने उनपर चढ़ाई की। कार्तिक सुदि १ (ता० १ नवम्बर) को गांव डीगराणा में लड़ाई होने पर उसमें राठोड़ अजबसिंह विट्ठलदासोत, राठोड़ सबलसिंह खानावत, रामसिंह, करण बलुओत, नाहरख़ां हरीसिंह महेशदासोत, मेड़तिया राठोड़ गोपीनाथ, राठोड़ सादूल, राठोड़ अर्जुन आदि जोधपुर की तरफ़ के सरदार मारे गये। उन्हीं दिनों राठोड़ उदयसिंह लखधीर विट्ठलदासोत चांपावत, राठोड़ खींवकरण आसकरणोत और राठोड़ मोहकमसिंह कल्याणमलोत ने पुर और मांडल[1] के शाही थानों को लूटा तथा दक्षिण जाते हुए क़ासिमख़ां से झगड़ा कर शाही नक़ारा और निशान आदि छीन लिये। इस प्रकार लूट-मार कर राठोड़ पहाड़ों में भाग जाते, जिससे शाही सेना पीछा करके भी उनका पता न लगा सकती। वि० सं० १७३९ (ई० स० १६८२) में ऊदावत जगराम-(नींबाजवालों का पूर्वज), जो पहले मेवाड़ का और पीछे से बादशाह का सेवक रहा था, राठोड़ों से मिल गया और उसने जैतारण में लूट-मारकर और भी कितने ही स्थानों का बिगाड़ किया। इसी तरह चांपावत बीजा वग़ैरह ने भी अलग-अलग झगड़े किये। जोधा उदयसिंह भाद्राजूण से चढ़कर मुल्क में इधर-उधर फ़साद करने लगा। पीछे वह और

कविराजा बांकीदास ने पूजलोत गांव में ही वि० सं० १७३८ आश्विन सुदि ७ (ई० स० १६८१ ता० ६ सितम्बर) को सोनिंग की अकस्मात मृत्यु होना लिखा है (ऐतिहासिक बातें; संख्या ११८३)।

(१) "औरंगज़ेबनामे" में भी राठोड़ों का मांडल और पुर पर धावाकर वहां से बहुतसा माल-असबाब लूटना लिखा है। इसकी सूचना बादशाह को हि० स० १०९३ ता० १० मुहर्रम (वि० सं० १७३८ माघ सुदि १२ = ई० स० १६८२ ता० १० जनवरी) को मिली (भाग २, पृ० ११६)।

खींवकरण दुर्गादास के भाई के साथ होकर लूटने के लिए चले, पर उनके पीछे शेर मोहम्मद जा पहुंचा, जिसके साथ युद्धकर कई राठोड़ सरदार काम आये। राठोड़ मुकन्ददास, सादूल तथा रत्नसिंह मालदेवोत जोधा झगड़ा आरंभ होने के समय से ही भाद्राजूण में रहते थे। वि० सं० १७४० (ई० स० १६८३) में उनके ऊपर जोधपुर से इनायतखां ने अपने पुत्र को सेना देकर भेजा। मुकन्ददास ने उससे लड़कर ऊंट आदि छीन लिये। दूसरी बार फिर लड़ाई होने पर मुसलमान अफ़सरों ने पेशकशी देना ठहराकर शान्ति की। उसी वर्ष मेड़ते के पास मोहकमसिंह मेड़तिया ने, जैतारण के पास ऊदावत जगराम ने और सारण की तरफ़ उदयसिंह ने झगड़े किये। इसपर बादशाही अफ़सरों ने मोहकमसिंह को तोसीणे और जोधा उदयभाण मुकन्ददासोत को भाद्राजूण की चौरासी में बैठाया(अधिकार दिया)। इसी बीच खींवकरण आसकरणोत, तेजकरण दुर्गादासोत आदि ने साथ एकत्र कर फलोधी की तरफ़ लूट-मार की और चांपावत सावंतसिंह तथा भाटी राम वग़ैरह ने गांव बंवाल आदि को लूटा। मेड़तिया सादूल मुसलमानों से मिल गया था, जिससे ऊदावत जगराम ने अपने साथियों सहित चढ़कर उसे मार डाला। उधर अन्य सरदारों ने जोधपुर और सोजत के बीच बहुत से गांवों को लूटा। श्रावणादि वि० सं० १७४० (चैत्रादि १७४१ = ई० स० १६८४) के वैशाख मास में सोजत के थाने पर बहलोलखां से लड़ाई होने पर राठोड़ सावंतसिंह जोगीदास विट्ठलदासोत, राठोड़ हिम्मतसिंह शक्तसिंह सुंदरदासोत मेड़तिया, राठोड़ बिहारीदास मोहणदासोत ऊदावत आदि मारे गये[1]। इस प्रकार राठोड़ जगह-जगह दंगा फ़साद करते रहे, पर मुसलमानों से उनका कोई प्रबन्ध न हो सका, क्योंकि वे (राठोड़) इधर-उधर लूटकर बहुधा पहाड़ियों में छिप जाते थे।

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ४६-४८।

टॉड ने भी करणीदान के ग्रन्थ "सूरजप्रकाश" के आधार पर लगभग ऐसा ही वर्णन अपने ग्रन्थ "राजस्थान" में दिया है। उक्त पुस्तक से पाया जाता है कि राठोड़ों

उधर दक्षिण में शाहज़ादे अकबर के साथ रहकर दुर्गादास ने पीछा करनेवाले शाही अफ़सरों के साथ लड़कर बड़ी वीरता दिखलाई[1]। वि० सं० १७४३ (ई० स० १६८६) के श्रावण मास में उसके पास मारवाड़ से खींची मुकन्ददास का पत्र पहुंचा, जिसमें लिखा था कि राठोड़ उदयसिंह लखधीरोत आदि सरदार बालक महाराजा के दर्शन करने के लिए उत्सुक हो रहे हैं; आप आवें तो उसका प्रबन्ध किया जाय। अब अधिक समय तक उसे छिपाकर रखना कठिन है। यह पत्र पाकर दुर्गादास ने शाहज़ादे से निवेदन किया कि जो कुछ मुझ से बना मैंने अब तक आपकी सेवा की, अब आप मारवाड़ चले चलें। मारवाड़ जाने में शाहज़ादे को बादशाह की तरफ़ से खटका था, जिससे उसने ऐसा करना स्वीकार

दुर्गादास का दक्षिण से लौटना

की इन लड़ाइयों में जैसलमेर के भाटियों ने भी काफ़ी मदद पहुंचाई (राजस्थान; जि० २, पृ० १००१-६)। सरकार ने केवल इतना लिखा है कि दक्षिण में नई लड़ाई छिड़ने अथवा कहीं पराजय होने पर जब मारवाड़ में रक्खी हुई मुग़ल सेना उधर भेजी जाती तो देशभक्त राजपूत अपने-अपने छिपने के स्थानों से निकलकर बची हुई कमज़ोर मुग़ल सेना को बड़ा नुक़सान पहुंचाते। दक्षिण से अवकाश मिलने पर पुनः राजस्थान में सेना भेजी गई और मुग़लों ने अपने खोये हुए ठिकानों पर फिर अधिकार कर लिया (हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब; जि० ३, पृ० ३७१-२)।

इससे इतना तो स्पष्ट है कि बादशाह का ध्यान दक्षिण की तरफ़ आकर्षित होते ही, मारवाड़ में मुग़लों की शक्ति कम हो गई और वहां के राठोड़ बलवान हो गये थे।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि औरंगज़ेब ने दक्षिण में पहुंच कर मुर्तबख़ां (?) और राव इन्द्रसिंह रामसिंहोत की अध्यक्षता में पांच हज़ार सवार अकबर पर भेजे। राठोड़ों और मरहटों ने वि० सं० १७३९ में कई जगह उनसे लड़ाई की और कई सौ आदमियों को मारा। संवत् १७४० में मीर ख़लील और उसकी मां को, जो अकबर की दाई थी, अकबर के पास सुलह के लिए भेजा गया। अकबर को बादशाह का भरोसा नहीं था, इसलिये उसने कहलाया कि यदि गुजरात का सूबा और मेरा माल-असबाब मुझे दिया जाय तो मैं अहमदाबाद चला जाऊं, पर बादशाह ने यह बात मंज़ूर नहीं की (जि० २, पृ० ९०)।

न किया और दुर्गादास को अपने देश जाने की अनुमति दी। इस अवसर पर उसने उस(दुर्गादास)से मारवाड़ में छोड़े हुए अपने परिवार की देख-रेख करने के लिए भी कहा[1]। तदनन्तर ई० स० १६८७ के फ़रवरी (वि० सं० १७४३ फाल्गुन) मास में जहाज़ पर सवार होकर शाहज़ादा फ़ारस के लिये रवाना हो गया[2]। इस प्रकार उसको सकुशल विदाकर दुर्गादास मारवाड़ लौटा[3]।

राठोड़ सरदारों के समक्ष बालक महाराजा का प्रकट किया जाना

जैसा कि ऊपर लिखा गया है वि० सं० १७३८ (ई० स० १६८१) के आस-पास अजीतसिंह के अनुगामी उसे मेवाड़ से हटाकर सिरोही इलाक़े के कालिंद्री गांव में ले गये थे। लम्बी अवधि तक महाराजा को न देख सकने के कारण कितने ही राठोड़ सरदार उसे देखने के लिए उत्सुक हो रहे थे। मालपुरा की ओर लूटमार करके राठोड़ उदयसिंह, मुकुन्ददास, तेजसिंह (चांपावत), ऊदावत जगराम, उदयभाण आदि जब गांव मोकलसर में एकत्र हुए तो उन्होंने यह सोचा कि बालक महाराजा की अवस्था आठ बरस की हो गई है, अब उसे प्रकट करना चाहिये। यह निश्चय होने पर उदयसिंह सिरोही (इलाक़े) जाकर मुकन्ददास खींची से मिला और उसने उससे कहा कि तमाम राठोड़ एकत्रित हुए हैं,

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ५२।

(२) मार्ग में मौसिम की ख़राबी के कारण अकबर का जहाज़ मस्कत के बन्दरगाह में जा पहुंचा। वहां अकबर कई मास तक पड़ा रहा। फिर उसने ईरान के बादशाह सुलेमानशाह से पत्र व्यवहार किया, जिसने उसे प्रतिष्ठा के साथ अपने यहां बुला लिया।

(३) सर जदुनाथ सरकार; शॉर्ट हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब; पृ० ३०७। मिर्ज़ा मुहम्मद हसन (अलीमुहम्मदख़ां बहादुर); मिरात-इ-अहमदी; जि० १, पृ० ३१७-८।

जोधपुर राज्य की ख्यात में दुर्गादास के मारवाड़ की तरफ़ प्रस्थान करने के कई रोज़ बाद शाहज़ादे का ईरान जाना लिखा है (जि० २, पृ० ५२), पर यह ठीक नहीं है।

महाराजा को प्रकट करो। पहले तो मुकुन्ददास राज़ी न हुआ, परन्तु बाद में यह सोचकर कि राठोड़ सरदारों को नाराज़ करना ठीक नहीं, उसने महाराजा से जाकर निवेदन किया। श्रावणादि वि० सं० १७४३ (चैत्रादि १७४४) वैशाख वदि ५ (ई० स० १६८७ ता० २३ मार्च) को[1] सिरोही के पालड़ी गांव में अजीतसिंह ने प्रकट होकर नागणेची की पूजा की। अनन्तर दरबार हुआ, जिसमें उपस्थित सरदारों ने नज़रें आदि महाराजा के सम्मुख पेश कीं। इस अवसर पर दुर्जनसिंह हाड़ा भी उपस्थित था[2]।

अजीतसिंह का कई सरदारों के यहां जाना

तदनन्तर बालक महाराजा को लेकर राठोड़ सरदार आऊवा गये जहां के सरदार ने घोड़े आदि देकर उसका सम्मान किया। फिर रायपुर, बीलाड़ा और बलूंदा के सरदारों की नज़रें स्वीकार करता हुआ वह आसोप गया, जहां कूंपावतों के मुखिया ने उसका स्वागत किया। वहां से वह भाटियों की जागीर लवेरा, मेड़तियों की रीयां और करमसोतों की खींवसर में गया। क्रमशः उसका साथ बढ़ता गया। कालू पहुंचने पर पाबू राव धांधल भी अपने सैन्य-सहित उसका अनुगामी हो गया[3]।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इतना उल्लेख नहीं है। उससे पाया जाता है कि हाड़ा दुर्जनसिंह ने महाराजा के प्रकट होने के पीछे सोजत की तरफ़ देश का बिगाड़ किया। इनायतखां ने जब यह सुना तो उसने सोजत जाकर बात-चीत की और सिवाणा देने के साथ ही अन्य स्थानों से चौथ[4]

(१) बांकीदास ने भी यही तिथि दी है (ऐतिहासिक बातें; संख्या १६८७)। टॉड ने चैत्र सुदि १५ दी है (राजस्थान; जि० २, पृ० १००७), जो ठीक नहीं है।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ५२-३।

(३) टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १००८।

(४) सर जदुनाथ सरकार-कृत "हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब" में दुर्गादास के दक्षिण से लौटने पर मुसलमानों का राठोड़ों की लड़ाइयों से तंग आकर, उन्हें चौथ देना लिखा है (जि० ३, पृ० ३७२)।

उगाहने का अधिकार महाराजा को दिया। तब महाराजा सिवाणा में दाखिल हो गया[1]।

राठोड़ दुर्गादास दक्षिण से रवाना होकर रतलाम पहुंचा, जहां से उसने जोधा अखैसिंह रत्नसिंहोत को भी साथ ले लिया। बादशाही प्रदेश में लूट-मार करते हुए आगे बढ़-कर उन्होंने मालपुरे[2] को लूटा। वहां उस समय सैयद कुतुब था, जिसने सामने आकर लड़ाई की। उसमें राव अनूपसिंह ईश्वरसिंहोत मारा गया और कितने ही राठोड़ घायल हुए। वि० सं० १७४४ श्रावण सुदि १० (ई० स० १६८७ ता० ८ अगस्त) को दुर्गादास महेवा के गांव भींवरलाई में अपने ठिकाने में पहुंचा। फिर बाहड़मेर में शाहज़ादे सुलतान से मिलने के अनन्तर उसने महाराजा अजीतसिंह के पास इस आशय की अर्ज़ी भिजवाई कि मैंने दक्षिण में ६ वर्ष तक मार-काट की और वहां से लौटते हुए मार्ग में रतलाम से जोधा अखैसिंह रत्नसिंहोत के साथ मालपुरा और केकड़ी वग़ैरह को लूटकर पेशकशी ली। अब मैं महाराजा से भेंट करने का इच्छुक हूं। उन्हीं दिनों महाराजा तलवाड़ा गांव में मल्लीनाथ का दर्शन करने के लिए गया। वहां से कार्तिक वदि ११ (ता० २१ अक्टोबर) को वह भींवरलाई पहुंचा, जहां दुर्गादास अपने साथियों-सहित उसकी सेवा में उपस्थित हुआ[3]। उस (दुर्गादास) ने महाराजा से निवेदन किया कि आप कुछ दिनों पीपलोद के पहाड़ों में ही रहें, मैं तब तक देश में लूट-मार मचाता हूं[4]।

दुर्गादास का अजीतसिंह की सेवा में उपस्थित होना

(१) जिल्द २, पृ० ५३।

(२) सर जदुनाथ सरकार-कृत "हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब" में राठोड़ों का मालपुरे के अतिरिक्त पुर-मांडल, अजमेर तथा मेवात पर आक्रमण करना लिखा है (जि० ५, पृ० २७२, ई० स० १९२४ का संस्करण)।

(३) कर्नल टॉड दुर्गादास का वि० सं० १७४४ भाद्रपद (वदि) १० को पोकरण में अजीतसिंह के शामिल होना लिखता है (राजस्थान; जि० २, पृ० १००८)।

(४) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ५३-४।

दुर्गादास के मारवाड़ में पहुंच जाने से राठोड़ों का उत्साह बहुत बढ़ गया और वे जगह-जगह मारवाड़ में रक्खी हुई मुसलमान सेना को तंग करने लगे। धीरे-धीरे उनका मुसलमानों पर पूरा आंतक स्थापित हो गया। जब महाराजा अजीतसिंह के प्रकट होने और मुसलमान अफ़सरों के राठोड़ों को चौथ देने की ख़बर बादशाह को मिली तो वह बड़ा नाराज़ हुआ और उसने जोधपुर के फ़ौजदार इनायतख़ां को महाराजा को पकड़ने के लिए लिखा, पर इसी बीच उस(इनायतख़ां)का देहांत हो गया[1]।

दुर्गादास के मारवाड़ में पहुंचने के बाद वहां की स्थिति

इनायतख़ां के मरने की ख़बर बादशाह के पास पहुंचने पर उसने मारवाड़ का प्रबंध अहमदाबाद की सूबेदारी में शामिल कर दिया। इस अवसर पर कारतलबख़ां को, जो अहमदाबाद का सूबेदार था, शुजातख़ां का ख़िताब, ५००० ज़ात ४००० सवार का मनसब, नक़ारा, निशान और एक करोड़ दाम दिये गये। उस समय जोधपुर का प्रबंध करने के लिए उससे योग्य व्यक्ति दूसरा न था। ऐसा कहते हैं कि उस समय राठोड़ों के भय से कोई मुसलमान अफ़सर जोधपुर की फौज़दारी स्वीकार करने के लिए उद्यत नहीं होता था। शुजातख़ां ने एक लाख रुपयों की मांग की, जो उसे शाही ख़ज़ाने से दिये गये। अनन्तर उसने जोधपुर जाकर उधर का प्रबंध इस प्रकार किया कि वहां के कुछ सरदारों की जागीरें के, जो उनके अधिकार में पुश्त दर पुश्त से चली आती थीं, उसने पट्टे कर दिये और कुछ सरदारों के मनसबों के एवज़ उनकी तनख़्वाहें नियत कर दीं। फिर वह क़ासिमबेग मुहम्मद अमीनख़ानी को वहां का नायब नियत कर अहमदाबाद लौट गया। राठोड़ों के उपद्रव से पालनपुर और सांचोर के फ़ौजदार कमालख़ां जालोरी को सख़्त ताकीद की गई कि वह पालनपुर से जालोर जाकर उधर का ठीक प्रबन्ध रक्खे और

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ४४। "मिरात-इ-अहमदी" में हि० स० १०९९ (वि० सं० १७४४ = ई० स० १६८७) में इनायतख़ां की मृत्यु लिखी है।

क़ासिमबेग को यह हुक्म हुआ कि तैयार फ़ौज के साथ मेड़ता जावे। साथ ही उसे यह भी आज्ञा दी गई कि किराये के जानवरों और गाड़ीवालों से ऐसे मुचलके लिये जावें कि वे व्यापार का माल उदयपुर के मार्ग से अहमदाबाद पहुंचावें[1]।

उन्हीं दिनों राठोड़ों ने एकत्र होकर जोधपुर के आस-पास हमला किया। पीछे से मुसलमान उनपर चढ़े। दोनों दलों में लड़ाई होने पर

अजीतसिंह का छप्पन के पहाड़ों में जाना

भंडारी मयाचंद मारा गया और सिवाणा पुनः मुसलमानों के हाथ में चला गया। इस घटना के बाद ही अजीतसिंह छप्पन (मेवाड़) के पहाड़ों में जा रहा[2]। वहां महाराणा जयसिंह ने उसे आश्रय दिया।

यह ऊपर लिखा जा चुका है कि राठोड़ों के आतंक के कारण जोधपुर में रक्खे हुए मुसलमान अफ़सरों ने उन्हें चौथ देना ठहरा लिया था,

जगह-जगह मुसलमानों और राठोड़ों में मुठभेड़

पर उसकी वसूली में मुसलमानों और राठोड़ों में जगह-जगह मुठभेड़ हो जाती थी। श्रावणादि वि० सं० १७४४ (चैत्रादि १७४५) वैशाख वदि ६ (ई० स० १६८८ ता० ११ अप्रेल) को राठोड़ मदनसिंह मनरूपोत आदि का रामसर में मुसलमानों से झगड़ा हुआ, जिसमें वह तथा उसके साथ के कई व्यक्ति घायल हुए। उसी वर्ष फाल्गुन सुदि ८ (ई० स० १६८९ ता० १७ फ़रवरी) को राठोड़ तेजकरण दुर्गादासोत और राठोड़ राजसिंह अखैराजोत जालोर से पेशकशी लेने के लिए गये। गांव सेणा से कूच करते ही उनका कमालख़ां की फ़ौज से सामना हुआ, जिसमें सीसो-

(१) मिर्ज़ा मुहम्मद हसन; मीरात-इ-अहमदी; जि० १, पृ० ३२८-२८।

जोधपुर राज्य की ख्यात (जि० २, पृ० ५४) तथा सर जदुनाथ सरकार की "हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब" (जि० ५, पृ० २७३) में भी इनायतख़ां की मृत्यु होने पर अहमदाबाद के सूबेदार कारतलबख़ां (शुजातख़ां) का ही जोधपुर का भी फ़ौजदार बनाया जाना लिखा है।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ५५।

दिया राजसिंह सबलसिंहोत और राठोड़ हरनाथसिंह अमरावत जैतमालोत काम आये। उसी वर्ष क़ासिमबेग ने जोधपुर से सोजत के गुड़े पर चढ़ाई कर जैतावत नाथा नरायणदासोत को पकड़ लिया और गांव को लूटा। इसके दूसरे वर्ष (वि० सं० १७४६ में) जब मेड़ता का सूबेदार मुहम्मद-अली मेड़ता से दिल्ली जा रहा था, उस समय मेड़तिया गोकुलदास (जावला का) और जोधा हरनाथसिंह चन्द्रभाणोत (देधाणा का) ने उसका पीछाकर उसे मार डाला और उसकी स्त्रियों को पकड़ लिया[1]। मेड़ता की चौथ के लिए राठोड़ मुकन्ददास सुजानसिंहोत चांपावत और राठोड़ मानसिंह दलपतोत मेड़तिया नियत किये गये थे। वि० सं० १७४७ माघ सुदि १३ (ई० स० १६९१ ता० १ जनवरी) को उनका कायमखानियों से झगड़ा हुआ, जिसमें कई राठोड़ मारे गये और कितने ही घायल हुए[2]।

अजमेर के सूबेदार से लड़ाई

वि० सं० १७४७ (ई० स० १६९०) में अजमेर का हाकिम सफ़ीखां था। दुर्गादास ने उसपर आक्रमण करने का निश्चय किया। इसपर उक्त हाकिम ने घाटी में शरण ली, जहां आक्रमण कर दुर्गादास ने उसे अजमेर की तरफ़ भागने पर बाध्य किया। बादशाह के पास से इस सम्बन्ध में उपालम्भपूर्ण पत्र पाने पर सफ़ीखां ने दूसरा मार्ग पकड़ा। उसने अजीतसिंह के पास इस आशय का पत्र लिखा—"मेरे पास आपकी जागीर आपको सौंपने की शाही सनद आ गई है, आप उसे लेने के लिए मेरे पास आवें।" इसपर अजीतसिंह

---

(१) टॉड-कृत "राजस्थान" में भी इस घटना का उल्लेख है, परन्तु उसमें इनायतख़ां के पुत्र का जोधपुर से दिल्ली जाना और रैनवाल नामक स्थान में जोधा हरनाथ-द्वारा उसकी स्त्रियां और सामान छीना जाना लिखा है। वहां से ख़ान (इनायतख़ां का पुत्र) भागकर कछवाहों की शरण में गया। उसको छुड़ाने के लिए अजमेर से शुजाबेग गया, पर उसे मुकुन्ददास चांपावत ने परास्त कर उसका सामान आदि लूट लिया (जि० २, पृ० १००८-९)। संभव है कि ऊपर आया हुआ मुहम्मदअली इनायतख़ां का ही पुत्र रहा हो।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ४४-७।

ने बीस हज़ार राठोड़ों के साथ अजमेर की तरफ़ प्रस्थान किया और मुकन्ददास चांपावत को यह जानने के लिए आगे रवाना कर दिया कि कहीं उक्त बात में छल तो नहीं है। इससे ठीक समय पर छल का पता चल गया और इसकी सूचना अजीतसिंह को मिल गई, पर वह पीछे न लौटा। उसके नगर में पहुंचने पर बाध्य होकर सफ़ीख़ां को उसके सम्मुख उपस्थित होना और रत्न तथा घोड़े आदि भेंट में देने पड़े[1]।

अजमेर के सूबेदार की दुर्गादास पर चढ़ाई

श्रावणादि वि० सं० १७४८ (चैत्रादि १७४६) आषाढ सुदि १४ (ई० स० १६९२ ता० १७ जून) को वावल परगने (मेवाड़ राज्य) के भड़मिया गांव में रहते समय राठोड़ दुर्गादास पर अजमेर के सूबेदार ने चढ़ाई की, जिसमें राठोड़ों की तरफ़ के मनोहरपुर का स्वामी गुमानीचंद देवीचंद तिलोकचंदोत, भाटी दौलतख़ां रघुनाथोत आदि काम आये और कितने ही सरदार घायल हुए[2]।

अलाकुली का जोधपुर के गांवों में बिगाड़ करना

वि० सं० १७४९ (ई० स० १६९२) में जोधपुर से क़ासिमबेग के बेटे अलाकुली ने सुजानसिंह के साथ चढ़कर सेतरावा आदि गांवों का बिगाड़ किया और फिर वह जोधपुर लौट गया[3]।

अकबर की पुत्री को सौंपने के विषय में मुग़लों की दुर्गादास से बातचीत

शाहज़ादे अकबर ने वि० सं० १७३८ (ई० स० १६८१) में दक्षिण की तरफ़ जाने से पूर्व अपने पुत्र सुलतान बुलन्दअख़्तर और पुत्री सफ़ीयतुन्निसा बेगम को मारवाड़ में ही छोड़ दिया था, जहां दुर्गादास ने उनकी देख-रेख और निवास आदि का समुचित प्रबंध कर दिया था। वि० सं० १७४६ (ई० स०

(१) टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १००६। सरकार-कृत "हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब" में केवल इतना लिखा मिलता है कि ई० स० १६९० (वि० सं० १७४७) में दुर्गादास ने सफ़ीख़ां को, जो मारवाड़ की सीमा पर आ गया था, परास्तकर अजमेर की तरफ़ भगा दिया (जि० ५, पृ० २७८)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ५६।

(३) वही; जि० २, पृ० ६०।

१६६२) में सफ़ीखां ने राठोड़ों से मेल-जोल का व्यवहार स्थापित कर दुर्गादास से अकबर की पुत्री को बादशाह को सौंप देने के विषय में बात-चीत चलाई; परन्तु इसका कोई परिणाम न निकला, क्योंकि बादशाह (औरंगज़ेब) उस समय अजीतसिंह का हक़ आदि मानने के लिए तैयार न था[1]।

मुग़लों के साथ राठोड़ों की पुनः लड़ाइयां

उपर्युक्त घटना का फल यह हुआ कि राठोड़ों और मुग़लों के साथ की लड़ाई, जो कुछ शिथिल हो गई थी, फिर बढ़ गई। जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि इसके एक साल पूर्व अजीतसिंह और दुर्गादास के बीच कुछ मनोमालिन्य[2] हो गया था। मुकन्ददास और तेजसिंह ने जाकर दुर्गादास को समझाया, जिससे वह महाराजा के शामिल हो गया। अनन्तर उन्होंने जोधपुर, जालोर, सिवकोटड़ा और पोहकरण आदि स्थानों से पेशकशी वसूल की। जोधपुर से क़ासिमबेग और राठोड़ भगवानदास ने उनका पीछा किया, पर वे उनका कुछ बिगाड़ न कर सके और उन्हें वापस लौट जाना पड़ा[3]।

---

(१) सर जदुनाथ सरकार; हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २८०।

टॉड के कथनानुसार यह बात-चीत नारायणदास कुलम्बी की मारफ़त हुई थी (राजस्थान; जि० २, पृ० १००९-१०)। जोधपुर राज्य की ख्यात में भी नारायणदास कुलम्बी-द्वारा यह बात-चीत होना लिखा है, पर उसमें उक्त घटना का समय वि० सं० १७४१ दिया है (जि० २, पृ० ६१), जो ठीक नहीं है।

(२) मनोमालिन्य का कारण ख्यात में इस प्रकार दिया है—

दुर्गादास के गांव भीमरलाई में रहते समय उसके पास अजीतसिंह ने जाकर उसका सम्मान आदि किया और कहा कि तुम्हारी राय के विपरीत अजमेर जाने के कारण मैंने सिवाणा भी गंवा दिया। दुर्गादास ने उत्तर दिया कि अब आपका विश्वास दो महीने में होगा, उस समय मैं उपस्थित हो जाऊंगा। इसपर महाराजा अप्रसन्न होकर कुंडल चला गया (जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ६०-१)।

(३) जि० २, पृ० ६१।

ई० स० १६६३ (वि० सं० १७५०) में दुर्गादास के ...
अजीतसिंह ने भीलाड़ा (?) नामक स्थान में रहना स्थिर किया, जहां समय उसने कई बखेड़े किये, लेकिन इसी शुजातखां के मारवाड़ में पहुंच जाने; जालोर और सिवाणे के फ़ौजदारों के एकत्र आक्रमण करने एवं आसा बख़्श के मुग़ल-सेना-द्वारा परास्त किये जाने पर अजीतसिंह को भागकर पुनः पहाड़ों में आश्रय लेना पड़ा[1]।

अजीतसिंह का पुनः पहाड़ों में आश्रय लेना

उसी वर्ष एक सांड की हत्या किये जाने के कारण मोकलसर में मुग़लों और राठोड़ों में मुठभेड़ हो गई, जिसमें चांपावत मुकुन्ददास ने चांक के हाकिम को उसके समस्त अनुयायियों-सहित क़ैद कर लिया[2]। टॉड लिखता है—"वि० सं० १७५१ (ई० स० १६९४) में राठोड़ों और मुग़लों के निरंतर संघर्ष का परिणाम यह हुआ कि मारवाड़ में मुग़ल-शक्ति बहुत क्षीण हो गई। स्थान-स्थान पर चौथ देने के साथ ही उनमें से बहुतों ने राठोड़ों के यहां नौकरी तक कर ली[3]।"

मारवाड़ में मुग़ल शक्ति का कम होना

उसी वर्ष क़ासिमख़ां और लश्करख़ां ने अजीतसिंह पर, जो उन दिनों विजयपुर (?बीजापुर, गोड़वाड़) में था, चढ़ाई की। इसपर दुर्गादास के पुत्र ने उनका सामना कर उन्हें हराया[4]।

शाही मुलाज़िमों का अजीतसिंह पर आक्रमण

उसी वर्ष शाहज़ादे अकबर के पुत्र और पुत्री के सौंपे जाने के सम्बन्ध में पुनः बादशाह से बात-चीत शुरू हुई। इस बार यह कार्य शुजातख़ां को

(१) सर जदुनाथ सरकार; हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २८०। टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०१०। जोधपुर राज्य की ख्यात में इस घटना का उल्लेख नहीं है।

(२) टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०१०।

(३) वही; जि० २, पृ० १०१०।

(४) वही; जि० २, पृ० १०१०।

अकबर के परिवार के लिए राठोड़ों से पुनः बात-चीत होना

सौंपा गया[1]। टॉड लिखता है—"अपनी पौत्री के लिए बादशाह की चिन्ता बढ़ती जाती थी, क्योंकि वह धीरे-धीरे युवावस्था को प्राप्त होने लगी थी। उस(बादशाह)ने जोधपुर के हाकिम शुजातखां को लिखा कि जिस प्रकार भी हो सके मेरे सम्मान की रक्षा करो[2]।"

वि० सं० १७५३ (ई० स० १६९६) के प्रारम्भ में उदयपुर के महाराणा जयसिंह और उसके पुत्र अमरसिंह के बीच दुबारा विरोध उत्पन्न हुआ[3]। उन दिनों महाराजा अजीतसिंह कोटकोलर-(जसवन्तपुरा परगना) की तरफ़ था। वहां के शाही सेवक लश्करखां को परास्तकर वह उदयपुर गया[4], जहां महाराणाने अपने भाई गजसिंह की पुत्री की शादी उसके साथ आषाढ वदि ८[5] (ता० १२ जून) को की और ६ हाथी, १५० घोड़े आदि बहुतसा सामान उसे दहेज़ में दिया[6]। इसके कुछ ही दिनों बाद उसका देवलिया-प्रतापगढ़ में विवाह हुआ[7]। उदयपुर के राजघराने में अजीतसिंह

महाराजा के उदयपुर तथा देवलिया में विवाह

(१) सर जदुनाथ सरकार; हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २८० ।

(२) टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०१० ।

(३) महाराणा और उसके पुत्र में पहले विरोध वि० सं० १७४८ में हुआ था और दोनों ओर से युद्ध की तैयारी भी हो गई थी। उस अवसर पर राठोड़ों की सेना-सहित जाकर दुर्गादास भी महाराणा के शरीक हुआ था (वीरविनोद; भाग २, पृ० ६७३-७ ।

(४) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ६१ । उससे पाया जाता है कि इस लड़ाई में मुसलमानी सेना के ८० आदमी काम आये और राठोड़ों की तरफ़ के राठोड़ सुन्दरदास अमरावत कूंपावत के गोली लगी।

(५) जोधपुर राज्य की ख्यात में आषाढ वदि ७ दिया है।

(६) वीरविनोद; भाग २; पृ० ६८२ ।

(७) टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०१० । बांकीदास ने देवलिया की कुंवरी का नाम कल्याणकुंवरी दिया है, जो पृथ्वीसिंह (कुंवर) की पुत्री और रावत प्रताप-

का विवाह हो जावे
और उसी समय
अकबर
चार शुजातखां

अकबर के पुत्र और
बादशाह को सौंपा

करने के लिए नियुक्त
अख़्तर तथा पुत्री
उन्हें गिरधर जोशी के
उनकी शारीरिक और मान
इस्लाम-धर्म की शिक्षा भी दी जाती
के पास इस सम्बन्ध में जाने पर
गया था, अजीतसिंह के तथा अपने
करने में उत्सुकता प्रकट की। उसने इस
के पास भेजा कि यदि शुजातख़ां बादशाह के
अर्ज़ी का जवाब आने तक मेरे घर आदि की
आने की सुविधा का वचन दे तो मैं
दरबार में भेज दूंगा। बादशाह ने तुरत उसकी शर्त को
फिर उसके पास से उत्तर प्राप्त होने पर शुजातख़ां के
ने दुर्गादास के पास जाकर इसकी सूचना दी और

सिंह की पौत्री थी (ऐतिहासिक बातें; संख्या २५००)। यह विवाह
की विद्यमानता में हुआ था।

(१) ईश्वरदास को इतिहास से बड़ा प्रेम था। उसने बादशाह औरंगज़ेब
समय का बहुत सा हाल अपनी फ़ारसी पुस्तक "फ़तूहात-इ-आलमगीरी" में दिया है।
मारवाड़ के उस समय के इतिहास के लिए यह ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगी है और मुहम्मद
मासूम के लिखे हुए "फ़तूहात-इ-आलमगीरी" से भिन्न है।

शाहज़ादी को वापस करने पर राज़ी किया। फिर खां के पास लौटकर उसने समुचित सेवकों और सवारी आदि का प्रबंध किया। अनन्तर वह दुर्गादास के पास जाकर शाहज़ादी को अपने साथ ले आया। मार्ग-प्रबंध समुचित रूप से करने से प्रसन्न हो कर शाहज़ादी ने ईश्वरदास को ही शाही दरबार तक चलने की आज्ञा दी। वहां पहुंचने पर बादशाह ने शाहज़ादी को इस्लाम-धर्म की शिक्षा देने के लिए एक शिक्षिका नियुक्त करने की इच्छा प्रकट की। इसपर शाहज़ादी ने उत्तर दिया कि दुर्गादास ने हर बात का ध्यान रक्खा है और मेरी मज़हबी शिक्षा के लिए अजमेर से एक मुसलमान शिक्षिका बुलाकर रख दी थी, जिसके शिक्षण में रहकर मैंने क़ुरान का अध्ययन कर उसे कण्ठस्थ कर लिया है। यह जानकर बादशाह दुर्गादास से अत्यंत प्रसन्न हुआ और उसने उसके पहले के अपराध क्षमा कर दिये। उसने अपनी पौत्री से पूछा कि दुर्गादास इस सेवा के बदले में किस पुरस्कार की इच्छा रखता है। शाहज़ादी के यह कहने पर कि इस विषय में ईश्वरदास ही अच्छी तरह जानता है, औरंगज़ेब ने उसको अपने पास बुलाया। अनन्तर दुर्गादास का मनसब निर्धारित किया गया और उसके लिए माहवार तनख़्वाह भी नियत हुई। ईश्वरदास २०० सवारों का अफ़सर बनाया जाकर दुर्गादास और बुलन्दअख़्तर को साथ लाने के लिए मारवाड़ में भेजा गया; पर इस कार्य की पूर्ति में लग-भग दो वर्ष लग गये।

दुर्गादास यह चाहता था कि जोधपुर का राज्य अजीतसिंह को दे दिया जाय, परन्तु बादशाह उसे मारवाड़ का कुछ भाग ही देना चाहता था। दुर्गादास ने केवल अपने लिए बड़े से बड़ा मनसब लेने से इनकार कर दिया। जब तक उसके पास बुलन्दअख़्तर विद्यमान था तब तक उसे अपनी बात पूरी होने की पूर्ण आशा थी। फ़ल यह हुआ कि यह बात-चीत इसी प्रकार चलती रही। उधर अजीतसिंह भी निराश्रय घूमने से तंग आ गया था और महाराणा के भाई गजसिंह की पुत्री के साथ विवाह हो जाने के कारण उसकी यह अभिलाषा थी कि वह एक स्थान पर जम कर रहे। ऐसी परिस्थिति में दुर्गादास ने अपनी मांगों में कमी

कर दी। बादशाह ने अजीतसिंह को मनसब[1] प्रदान कर जालोर[2], सांचोर और सिवाणा[3] की जागीर दी, जहां का वह फ़ौजदार भी नियत किया गया। इसके एवज़ में शाहज़ादा बुलन्दअख़्तर बादशाह को सौंप दिया गया[4]।

ईश्वरदास इस संबंध में लिखता है—

"शाही दरबार से प्रस्थान कर मैं कई वार दुर्गादास के पास गया और शुजाअतखां की तरफ़ से विश्वासघात न होने का मैंने उसे आश्वासन दिया। शाही परवाने के मिलने और मिली हुई जागीर पर अधिकार करने के अनन्तर वह शाहज़ादे को साथ ले मेरे साथ पहले अहमदाबाद और फिर सूरत तक आया, जहां कतिपय शाही अफ़सर शाहज़ादे की अगवानी करने

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में महाराजा के साथ-साथ राठोड़ दुर्गादास, राठोड़ खींवकरण आसकर्णोत, राठोड़ तेजकरण दुर्गादासोत, राठोड़ मेहकरण दुर्गादासोत, भाटी दूदा आदि तेरह सरदारों को मनसब मिलना लिखा है (जि० २, पृ० ६२-३)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है—"बादशाह ने जहानाबाद से दीवान असदख़ां की मुहर-युक्त एक परवाना जोधपुर के सूबेदार शुजाअतख़ां के पास भिजवाया कि डेढ़ हज़ार ज़ात एवं पांचसौ सवारों का मनसब तथा जालोर की जागीर अजीतसिंह को दी जाय। शुजाअतख़ां ने इस आज्ञा का पालन किया और श्रावणादि वि० सं० १७५४ (चैत्रादि १७५५ = ई० स० १६९८) ज्येष्ठ सुदि १३ को अजीतसिंह ने जालोर के गढ़ में प्रवेश किया (जि० २, पृ० ६४)।"

(३) टॉड के अनुसार वि० सं० १७५७ (ई० स० १७००) के पौष मास में अजीतसिंह का जोधपुर पर अधिकार हो गया, जहां पहुंचकर उसने गढ़ के पांचों फाटकों पर एक-एक भैंसे का बलिदान किया। उस समय शुजाअत मर गया था, अतएव शाहज़ादे ने उसका स्वागत किया। पीछे ई० स० १७५९ में वहां फिर आज़मशाह ने क़ब्ज़ा कर लिया (राजस्थान; जि० २, पृ० १०११), जो ठीक नहीं है; क्योंकि ई० स० १७०१ में तो वहां का फ़ौजदार शाहज़ादा आज़म था (देखो सरकार; हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २८४ का टिप्पण)।

(४) सरकार; हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २८१-४। "मिरात-इ-अहमदी" में भी इस घटना का वर्णन क़रीब-क़रीब ऐसा ही और कहीं-कहीं अधिक विस्तार से दिया है (जि० १, पृ० ३३१-३)।

और उसे शाही शिष्टाचार की शिक्षा देने के लिए उपस्थित थे; लेकिन शाहज़ादा मौन ही बना रहा और आये हुए शाही अफ़सर उसे कुछ भी सिखाने में समर्थ न हुए[1]।"

दुर्गादास को मनसब मिलना

शाहज़ादे बुलंदअख़्तर को सौंपने के बाद, जब भीमा (नदी) के तट पर इस्लामपुरी के खेमे में दुर्गादास शाही दरबार के प्रवेशद्वार पर पहुंचा तो उसे निशस्त्र भीतर जाने की आज्ञा हुई। दुर्गादास ने निर्विरोध अपनी तलवार छोड़ दी। यह सुनकर बादशाह उससे बड़ा प्रसन्न हुआ और उसने उसे सशस्त्र भीतर आने की आज्ञा प्रदान की। शाही खेमे में प्रवेश करते ही अर्थ-मंत्री रूहुल्लाखां ने आगे बढ़कर उस(दुर्गादास)के दोनों हाथ एक रूमाल से बांध दिये और तब उसे लेकर वह बादशाह के समक्ष गया[2]। बादशाह ने उसके हाथ खोले जाने की आज्ञा देकर उसे तीन हज़ार सवार का मनसब, एक रत्न-जटित कटार, एक सुवर्ण पदक, एक मोतियों की माला और शाही ख़ज़ाने से एक लाख रुपये दिलवाये[3]।

अजीतसिंह का बादशाह के पास अर्ज़ी भेजना

ई० स० १७०० (वि० सं० १७५७) के अक्टोबर मास में बादशाह के पास अजीतसिंह की इस आशय की अर्ज़ी पहुंची कि यदि सेना रखने के लिए मुझे जागीर अथवा नक़द धन दिया जाय तो मैं चार हज़ार सवारों के साथ शाही दरबार में उपस्थित हो जाऊं। बादशाह ने इसपर उसे अजमेर के ख़ज़ाने से धन दिये जाने की आज्ञा दी और साथ ही यह वादा

---

(१) सरकार; हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २८४-५।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात में भी दुर्गादास का हथियार छोड़कर हाथ बांधे बादशाह की सेवा में उपस्थित होना और सौ मोहरें तथा एक हज़ार रुपये भेंट करना लिखा है (जि० २, पृ० ६३)।

(३) सरकार; हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २८५-६।

"मिरात-इ-अहमदी" से पाया जाता है कि इस अवसर पर दुर्गादास को धन्धुका तथा गुजरात के कई परगने जागीर में मिले (जि० १, पृ० ३३८)।

भी किया कि उसके दरबार में उपस्थित होते ही उसे जागीर भी दे दी ज़ायगी[1]।

शाही सेवा में उपस्थित हो जाने के बाद बादशाह ने दुर्गादास को पाटण (अणहिलवाड़ा, बड़ोदा राज्य) का फ़ौजदार नियतकर उधर भेज दिया। बात यह थी कि उसे दुर्गादास की तरफ़ से खटका बना हुआ था, जिससे उसने उसे मारवाड़ से दूर रखना ही ठीक समझा। ई० स० १६६८ से १७०१ (वि० सं० १७५५ से १७५८) तक तो कुछ शान्ति रही पर इसके बाद ही पुनः राठोड़ों और मुग़लों के बीच झगड़े का सूत्रपात हो गया। औरंगज़ेब के साथ मैत्री-संबंध स्थापित कर लेने पर भी दुर्गादास एवं अजीतसिंह दोनों के मन में उसकी तरफ़ से सन्देह बना ही रहा। ई० स० १७०१ (वि० सं० १७५८) में बादशाह-द्वारा कई बार बुलाये जाने पर भी अजीतसिंह उसके पास न गया और टाल-टूल करता रहा। ई० स० १७०१ ता० ६ जुलाई (वि० सं० १७५८ श्रावण वदि १) को मारवाड़ के शासक शुजाअतखां का देहान्त हो गया[2]। उसके स्थान में शाहज़ादे मुहम्मद आज़मशाह की नियुक्ति होकर वह वहां भेजा गया। वह स्वभाव का घमंडी था। बादशाह ने उसको आज्ञा दी कि यदि हो सके तो वह दुर्गादास को शाही सेवा में भेजने का प्रयत्न करे अन्यथा उसे वहीं मरवा डाले, जिससे उसके अजीतसहिं तथा अन्य राठोड़ों को उकसाने का भय ही जाता रहे। इस आज्ञा के अनुसार शाहज़ादे ने दुर्गादास को लिखा कि तुम अहमदाबाद में मेरे पास हाज़िर हो। उस (शाहज़ादे) के एक अफ़सर सफ़दरखां बाबी[3] ने शाहज़ादे के रूबरू दुर्गादास के उपस्थित

दुर्गादास को मारने का प्रयत्न

सरकार; हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २८६।

होते ही उसे क़ैद करने अथवा मार डालने का ज़िम्मा लिया। पाटण से अपने अनुयायियों-सहित प्रस्थानकर दुर्गादास अहमदाबाद के निकट साबरमती नदी के किनारे करीज (? वाडेज) नामक गांव में ठहरा। मुलाक़ात के लिए निश्चित तिथि को शिकार के बहाने शाहज़ादे ने सारी सेना तैयार रक्खी थी। सब मनसबदार मौजूद थे और सफ़दरख़ां बाबी अपने पुत्रों और सेवकों-सहित सशस्त्र दरबार में उपस्थित था। शाहज़ादे ने दरबार में पहुंचते ही दुर्गादास को बुलाने के लिए आदमी भेजे। पहले दिन एकादशी का व्रत रखने के कारण दुर्गादास ने भोजनादि से निवृत्त होकर दरबार में उपस्थित होने की इच्छा प्रकट की। शाहज़ादे को एक-एक क्षण का विलम्ब अखर रहा था। उसने दूत पर दूत भेजने शुरू किये। यह देखकर दुर्गादास के मन में स्वभावतया ही सन्देह हो गया। फिर जैसे ही उसने मुग़ल सेना के तैयार रहने की बात सुनी तो वह एकदम शंकित हो उठा। ऐसी दशा में भोजन किये बिना ही वह अविलम्ब अपने डेरे आदि में आग लगाकर माल-असबाब और साथियों-सहित वहां से मारवाड़ की तरफ़ चला गया। यह ख़बर पाते ही मुग़ल सेना की एक टुकड़ी ने, जिसमें सफ़दरख़ां बाबी भी था, उसका पीछा किया। कुछ ही समय में पाटण के मार्ग में वे भागते हुए राठोड़ों के निकट जा पहुंचे। ऐसी दशा देखकर दुर्गादास के पौत्र[1] ने उससे कहा—"युद्ध सम्मुख

आया। ई० स० १६५४ में जब शाहज़ादा मुरादबख़्श गुजरात की सूबेदारी पर मुक़र्रर हुआ, तो बहादुरख़ां बाबी का पुत्र शेरख़ां बाबी भी उसके साथ वहां गया। प्रारम्भ में ई० स० १७६३-६४ में शेरख़ां बाबी को चुंवाळ परगने की थानेदारी सौंपी गई। चतुर और दृढ़व्रती होने के कारण वह इस पद के सर्वथा योग्य था। उसके चार पुत्र हुए, जिनमें से तीसरे ज़ाफ़रख़ां बाबी को चुंवाळ में रहकर अच्छी सेवा करने के एवज़ में "सफ़दरख़ां" का ख़िताब मिला और वह पाटण का नायब सूबेदार नियत हुआ। पीछे से उसको पाटण और बीजापुर की सूबेदारी मिली। मराठा सरदार धन्नाजी यादव के साथ की लड़ाई में वह क़ैद हुआ और बड़ा दंड देकर छूटा। सफ़दरख़ां के वंशजों के अधिकार में इस समय जूनागढ़, राधनपुर, वाडासिनोर आदि राज्य हैं।

(१) सरकार ने आगे चलकर इसी पौत्र का मारा जाना लिखा है, परन्तु

उसका नाम नहीं

(१)

गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे

ही वृत्तान्त "मिरात-इ

सम्बन्ध में जोधपुर राज्य की

"राठोड़ दुर्गादास पाटण

में बुलाया तो उस(शाहज़ादे)ने

मिलो। वि० सं० १७६२ कार्तिक

को अहमदाबाद में पहुंचने पर दुर्गादास को

है, सावधान रहना। इससे वह दरबार में न

हज़ार फ़ौज-सहित उसपर चढ़ गया। ऐसी

पाटण की ओर रवाना हो गया। सात कोस

तब मेहकरण ने अपने पिता (दुर्गादास) से कहा—

लड़ता हूं, आप जावें।" इसपर दुर्गादास तो आगे

अभयकरण, अनूपसिंह (दुर्गादास का पौत्र, तेजकरण का पुत्र

सिंहोत चांपावत, भाटी दुर्जनसिंह चन्द्रभाणोत, राठोड़

राठोड़ हरनाथ चन्द्रभाणोत जोधा आदि ने ठहरकर मुग़ल

जिसमें अट्ठारह वर्षीय अनूपसिंह तथा दूसरे कई व्यक्ति वीरतापूर्वक

इसी बीच दुर्गादास पाटण पहुंच गया, जहां से अपने परिवार को उसने

दिया और वह स्वयं वहीं ठहर गया। बादशाह ने जब यह समाचार सुना

दुर्गादास के मारवाड़ में पहुंचने पर अजीतसिंह उसके शामिल हो गया और दोनों मिलकर ई० स० १७०२ (वि० सं० १७५९) में खुल्लमखुल्ला उपद्रव करने लगे। उन्होंने मुग़लों के साथ कई झगड़े किये, लेकिन कोई विशेष परिणाम न निकला। अनवरत युद्ध, लूट-खसोट, दुर्भिक्ष आदि के कारण मारवाड़ की आर्थिक दशा दिन-दिन हीन होती जा रही थी। करणीदान (कविया चारण) के अनुसार—"वि० सं० १७५९ (ई० स० १७०२) में अजीतसिंह जालोर चला गया। कुछ राठोड़ों ने महाराणा की और कुछ ने मुग़लों की अधीनता स्वीकार कर ली, क्योंकि मुसलमानों का अत्याचार उस समय चरम सीमा को पहुंच गया था[1]।"

महाराजा का दुर्गादास से मिलकर उपद्रव करना

वि० सं० १७५९ मार्गशीर्ष वदि १४ (ई० स० १७०२ ता० ७ नवम्बर) शनिवार को महाराजा अजीतसिंह की चौहान राणी के उदर से कुंवर अभयसिंह का जन्म हुआ[2]।

कुंवर अभयसिंह का जन्म

इसी समय के आस-पास अजीतसिंह तथा दुर्गादास के बीच मन-

कहलाया कि शाहज़ादे ने नासमझी से मेरी आज्ञा के बिना यह सब किया है, तुम निश्चिंत होकर पाटण में रहो और वहां की फ़ौजदारी करो। इसपर दुर्गादास सतर्कता के साथ गांव कंबोई में रहता और पाटण में उसकी सेना तथा कोतवाल पड़िहार शिवदान महेशदासोत रहता। उसी वर्ष माघ वदि २ (ता० २१ दिसंबर) को दुर्गादास ने इस घटना का समाचार अजीतसिंह के पास लिख भेजा और उसे सावधान रहने को लिखा (जि० २, पृ० ६४-५)। ख्यात में दिया हुआ समय आदि ठीक नहीं है।

(१) सरकार; हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २८९।

टॉड-कृत "राजस्थान" में भी करणीदान के उपर्युक्त कथन का उल्लेख है। उसमें यह भी लिखा मिलता है कि वि० सं० १७५७ (ई० स० १७००) में अजीतसिंह ने जोधपुर पर अधिकार कर लिया था, पर वि० सं० १७५९ (ई० स० १७०२) में शाहज़ादे आज़म ने वह स्थान उससे छीन लिया, जिससे अजीतसिंह को जालोर जाना पड़ा (जि० २, पृ० १०११); परन्तु यह कथन विश्वसनीय नहीं है।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ६४। टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०११।

मुटाव हो गया। बादशाह

अजीतसिंह को मेड़ता की जागीर मिलना

से उसने उसके साथ सन्धि
मिलने पर कुशलसिंह को
नाराज़ होकर नागोर के
बाल्यावस्था से ही उसके साथ की
था, औरंगज़ेब से जा मिला और
जाति भाइयों पर आक्रमण करने लगा[२]।

---

(१) टॉड-कृत "राजस्थान" से पाया जाता
५७०४) में मुर्शिदकुली जोधपुर का हाकिम होकर
मेड़ता दिये जाने की शाही सनद अजीतसिंह को दी (

(२) सरकार; हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब; जि० ५, पृ०
स्थान" में भी लिखा है कि महाराजा-द्वारा वहां (जोधपुर में)
धांधल गोविन्ददास के नियुक्त किये जाने के कारण इन्द्र का पुत्र (
गया। उसने बादशाह को लिखा कि मुझे मारवाड़ में नियुक्त कर
और मुसलमान दोनों के लिए सन्तोषपूर्ण प्रबन्ध कर दूं (जि० २, पृ०

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में लिखा है—

"वि० सं० १७६२ (ई० स० १७०५) में चांपावत उदयसिंह (
तथा चांपावत उर्जनसिंह (प्रतापसिंहोत) ने मोहकमसिंह से, जो बादशाह की
मेड़ते के थाने पर था, कहलाया कि आप चढ़कर जालोर आवें, हम अजीतसिंह
पकड़ा देंगे। इसपर वह दो हज़ार सवारों के साथ चढ़ गया। इसकी ख़बर
उदयकरण तथा मारवाड़ के कई दूसरे सरदारों ने ऊंट सवारों-द्वारा अजीतसिंह के पास
भिजवाई। महाराजा ने अपने सरदारों से इस विषय में बात की तो उन्होंने वहां से हट
जाना ही उचित बतलाया। तब वह वहां से हट गया। माघ सुदि ३ (ई० स० १७०६
ता० ६ जनवरी) को मोहकमसिंह ने जालोर पहुंचकर कुछ लड़ाई के बाद वहां अधिकार
कर लिया। अनन्तर राठोड़ बिट्ठलदास भगवानदासोत अपने तथा राठोड़ उदयसिंह

मोहकमसिंह के विरोधी हो जाने के कुछ ही समय बाद महाराजा अजीतसिंह ने दुनाड़ा नामक स्थान में उसपर आक्रमण किया और उसे परास्त कर अपनी शक्ति और सम्मान में पर्याप्त अभिवृद्धि की[1]।

अजीतसिंह का मोहकमसिंह को हराना

के परिवार के साथ कालंधरी (?) गांव में महाराजा के शामिल हो गया। मेड़तिया कुशलसिंह अचलसिंहोत तथा विजयसिंह हरिसिंहोत अगरवगरी गांव में महाराजा से मिले। कुछ अन्य सरदार भी उसके शामिल हुए (जि० २, पृ० ६५-७)।"

(१) सरकार; हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २६१-२। टॉड-कृत "राजस्थान" में लिखा है—"वि० सं० १७६१ (ई० स० १७०४) में शत्रुओं (अर्थात् मुग़लों) का सितारा अस्त होने लगा। मुग़ल मुर्शिदकुली के स्थान में जाफ़रखां की नियुक्ति हुई। मोहकमसिंह का पत्र (बादशाह के पास भेजा हुआ) बीच में ही पकड़ लिया गया। वह अजीतसिंह का विरोधी होकर शत्रुओं से मिल गया था। अजीत ने उसके ख़िलाफ़ चढ़ाई की और दुनाड़ा नामक स्थान में उसकी शत्रु-सेना से लड़ाई हुई, जिसमें उसकी विजय हुई और विरोधी इन्द्रावत (मोहकमसिंह) मारा गया। यह घटना वि० सं० १७६२ (ई० स० १७०५) में हुई (जि० २, पृ० १०११-१२)।" टॉड ने इस लड़ाई में मोहकमसिंह का मारा जाना लिखा है, जो ठीक नहीं है।

यही घटना जोधपुर राज्य की ख्यात में इस प्रकार दी है—

"जालोर पर मोहकमसिंह का अधिकार होने के पश्चात् क्रमशः बहुतसे राठोड़ सरदार अजीतसिंह से जा मिले। इस प्रकार अपना बल बढ़ जाने पर उसने मोहकमसिंह से कहलाया कि आये हो तो जमे रहना, मैं भी आता हूं। मोहकमसिंह को जब पता लगा कि महाराजा के पास विशाल फ़ौज है तो वह माघ सुदि १३ (ई० स० १७०६ ता० १५ जनवरी) को जालोर छोड़कर चला गया। महाराजा ने उसका पीछा किया। मार्ग में अन्य कितने ही जोधपुर के सरदार भी उसके शामिल हो गये। दुनाड़ा पहुंचने पर आमने सामने दोनों सेनाओं के मोर्चे जमे और गोलियां चलने लगीं। राठोड़ बड़ी वीरता से लड़े और अन्त में विजय उन्हीं की हुई। मोहकमसिंह के साथ के तीस आदमी मारे गये और पचास घायल हुए तथा उसका नगारा, निशान, हाथी, घोड़े आदि विजेताओं के हाथ लगे। इस लड़ाई में अजीतसिंह की तरफ़ के भी कई राठोड़ और भाटी सरदार मारे गये तथा कितने ही घायल हुए। अनन्तर महाराजा का डेरा गांव ढीडस में हुआ और मोहकमसिंह उसी रात कूचकर पीपाड़ चला गया (जि० २, पृ० ६७-८)।

ई० स० १७०५ (वि० सं० १७६२) में इब्राहीमखां का पुत्र ज़बर्दस्तखां लाहोर से बदलकर अजमेर और जोधपुर का हाकिम नियुक्त किया गया।

दुर्गादास का पुनः शाही अधीनता स्वीकार करना

उन्हीं दिनों दुर्गादास ने भी शाहज़ादे आज़म की मारफ़त बादशाह से माफ़ी की दर्ख्वास्त की। इसपर उसका मनसब बहालकर उसकी नियुक्ति गुजरात में पहले के स्थान पर कर दी गई[1]।

बादशाह औरंगज़ेब के अंतिम राज्यवर्ष में गुजरात में मरहटों का उपद्रव बढ़ गया और उन्होंने अपने ऊपर आक्रमण करनेवाले अब्दुल-

अजीतसिंह और दुर्गादास का पुनः विद्रोही होना

हमीदखां को हराया। इस घटना से मुग़लों की स्थिति अधिक कमज़ोर हो गई और उनके शत्रुओं की आशा पुनः बलवती हो उठी। ऐसी परिस्थिति देख अजीतसिंह फिर विद्रोही हो गया। दुर्गादास भी शाही आश्रय छोड़कर उससे जा मिला और थराद आदि स्थानों में उपद्रव करने लगा। राजपीपला के स्वामी वैरिशाल ने भी मुग़लों को छेड़ना शुरू किया। इसपर आज़मशाह के पुत्र बेदारबख़्त ने, जो गुजरात में मुक़र्रर था, विद्रोही राठोड़ों के पीछे सेना भेजी, जिससे बाध्य होकर अजीतसिंह को पीछे हटना पड़ा और दुर्गादास सूरत से दक्षिण के कोलियों के देश में चला गया[2]।

वि० सं० १७५६ (ई० स० १७०२) में बादशाह औरंगज़ेब ने महाराणा अमरसिंह (द्वितीय) के नाम सिरोही और आबू की जागीर का

महाराजा और उदयपुर के महाराणा के बीच मनमुटाव

(जिसकी आय एक करोड़ बीस लाख दाम अर्थात् तीन लाख रुपये मानी जाती थी) फ़रमान कर दिया था। वि० सं० १७३८ (ई० स० १६८१) में उदयपुर से जाने के बाद महाराजा अजीतसिंह की सिरोही राज्य में

(१) सरकार; हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २६१। कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेन्सी; जि० १, खंड १, पृ० २६३।

(२) कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी; जि० १, भाग १, पृ० २६३-४। सरकार; हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब जि० ५, पृ० २६१।

परवरिश हुई थी, इसलिए वहां के देवड़ा स्वामी के पक्ष में होकर उसने महाराणा का वहां अधिकार स्थापित होने में वाधा डाली। इसकी शिकायत होने पर मालवा के सूबेदार अमीरुल्‌उमरा शाइस्ताखां ने हि० स० १११४ ता० ११ ज़िलहिज्ज (वि० सं० १७६० वैशाख सुदि १२ = ई० स० १७०३ ता० १७ अप्रेल) को फ़ौजदार यूसुफ़खां के नाम यह हुक्म भेजा कि अजीतसिंह सिरोही से हटाये हुए जागीरदार की मदद करता है, इसलिए उसको देवड़ों की मदद से वाज़ आने की हिदायत की जावे। इसपर भी जव अजीतसिंह ने कोई ध्यान न दिया तो महाराणा और उसके वीच मनमुटाव हो गया। विपत्ति के समय महाराजा को मेवाड़ में आश्रय मिलता रहा था और पुनः वादशाह की तरफ़ से छल होने की संभावना थी, अतएव महाराजा तथा उसके साथी राठोड़ों ने महाराणा से मेल रखना ही उचित समझा। तदनुसार महाराजा के सरदारों में से ठाकुर मुकुंददास ने महाराणा के प्रधान दामोदरदास पंचोली की मारफ़त पारस्परिक मनमुटाव को मिटाने और महाराणा की तरफ़ से महाराजा को मदद मिलने के वारे में वात-चीत चलाई तथा महाराजा के कर्मचारी (विट्ठलदास भंडारी) ने भी वि० सं० १७६३ वैशाख वदि १४ (ई० स० १७०६ ता० १ अप्रेल) को अपनी अर्ज़ी के साथ महाराणा के नाम का महाराजा का पत्र भेजा। मोहकमसिंह के जालोर के आक्रमण के समय महाराजा के कई सरदार भी उस(मोहकमसिंह)के शरीक हो गये थे। इससे महाराजा का उन सरदारों पर से विश्वास हट गया और उसने तेजसिंह चांपावत को अपना प्रधान नियत किया। उसकी इस कार्यवाही से ठाकुर मुकुंददास, जो मेल के लिए यत्न कर रहा था, महाराजा से खिन्न रहने लगा। महाराजा इससे उसपर भी संदेह करने लगा और उसने महाराणा से मेल करने के लिए सबीनाखेड़ा के गोस्वामी नीलकंठ गिरि को मध्यस्थ वनाकर वि० सं० १७६२ चैत्र सुदि ११ (ई० स० १७०६ ता० १३ मार्च) को पत्र के साथ तरवाड़ी सुखदेव, भगवान और धरणीधर को उस(गोस्वामी)के पास उदयपुर भेजा। ऐसा ही एक पत्र वैशाख सुदि ११ (ता० १२ अप्रेल) शुक्रवार

को उसने पुनः उक्त गोस्वामी के नाम भेजकर उसके साथ महाराणा के नाम भी पत्र भेजा[1]। अनुमान होता है कि इससे महाराणा और महाराजा के बीच का बढ़ता हुआ मनमुटाव दूर हो गया।

ई० स० १७०७ (वि० सं० १७६३) के फ़रवरी मास में अहमदनगर में रहते समय बादशाह बीमार पड़ा। इस बीमारी से वह कुछ समय के लिए अच्छा ज़रूर हो गया, पर उसके हृदय में इस विश्वास ने घर कर लिया कि उसका अन्तकाल निकट ही है। अतएव उसने कामबख़्श को बीजापुर और मुहम्मद आज़म को मालवे की तरफ़ रवाना कर दिया, पर मुहम्मद आज़म बादशाह की हालत समझ गया था, जिससे उसने मार्ग तय करने में ढील रक्खी। उधर बादशाह की दशा क्रमशः बिगड़ती गई। बृहस्पतिवार ता० १६ फ़रवरी (फाल्गुन वदि १३) को हमीदुद्दीनख़ां ने उससे एक हाथी दान करने को कहा, पर बादशाह ने हाथी के एवज़ में ४००० रुपये ग़रीबों को बंटवा देने की आज्ञा दी। इसके दूसरे दिन बादशाह ने प्रातःकाल की नमाज़ पढ़कर तसबीह (माला) फेरना शुरू किया और इसी दशा में लगभग आठ बजे उसका देहांत हो गया[2]।

औरंगज़ेब की मृत्यु

औरंगज़ेब के जीवन-काल में ही उसके कठोर हिन्दू-विरोधी आचरण के कारण भारतवर्ष के कोने-कोने में असन्तोष फैल गया था; यहां तक कि जगह-जगह लोग उसके विरुद्ध विद्रोह भी करने लगे थे। इसका परिणाम यह हुआ कि न तो उसे ही जीवन-भर शान्ति मिली और न प्रजा को ही सुख-शान्ति प्राप्त हुई। उसके मरते ही उसके विरोधियों का ज़ोर बहुत बढ़ गया। अजीतसिंह जिस अवसर की तलाश में था और जिसकी प्रतीक्षा में उसने अपने जीवन का इतना दीर्घ समय संकट में बिताया था, वह उसे अब प्राप्त हुआ। औरंगज़ेब की मृत्यु का समाचार उसके पास ई० स० १७०७

अजीतसिंह का जोधपुर आदि पर अधिकार करना

(१) ये पत्र "वीरविनोद" (भाग २, पृ० ७४६-५० तथा ७६४-७) में छपे हैं।

(२) सरकार; हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २५५-८।

ता० ४ मार्च (वि० सं० १७६३ फाल्गुन सुदि १२) को पहुंचा[1]। इसके तीसरे दिन इस समाचार की पुष्टि हो जाने पर, उसने ससैन्य जोधपुर पर आक्रमण कर दिया और वहां के नायब फ़ौजदार जाफ़रक़ुली को भगाकर उसने अपने पैतृक राज्य पर क़ब्ज़ा कर लिया। उसके जोधपुर में प्रवेश करते ही मुग़ल अपना सामान आदि वहां छोड़कर भाग गये। राठोड़ों ने पीछा-कर उनमें से बहुतों को मार डाला और बहुतों को क़ैद कर लिया। कुछ मुसलमान तो जान बचाने के लिए हिन्दुओं का वेष बनाकर भाग गये। मेड़ता पर राठोड़ों का आक्रमण होने पर मुहकमसिंह घायल दशा में मेड़ता छोड़कर नागोर चला गया[2]।

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार महाराजा उस समय जालोर के पास देवलवाटी में था, परन्तु बांकीदास उस समय उसका सांचोर में होना लिखता है (ऐतिहासिक बातें; संख्या १४१६)।

(२) सरकार; "हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब" जि० ५, पृ० २६१-२।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में इस प्रकार लिखा है—

"वि० सं० १७६३ (ई० स० १७०६) के मार्गशीर्ष मास में, जिस समय महाराजा जालोर की तरफ़ देवलवाटी में पेशकशी वसूल कर रहा था, उसे बादशाह की मृत्यु का समाचार मिला। उसी समय उसने जोधपुर की तरफ़ प्रस्थान किया। जोधपुर में उन दिनों फ़ौजदार क़ाज़िमबेग का पुत्र जाफ़रबेग (? जाफ़रक़ुली) था। उसके पास उसके भाई ने गुजरात से बादशाह के मरने की सूचना देते हुए कहलाया कि अब जोधपुर में ठहरना निरापद नहीं है। इसपर जाफ़रबेग ने तत्काल अपना सारा सामान ऊंटों पर लदवाकर अजमेर भिजवा दिया। उसका इरादा स्वयं भी वहां से चल देने का था, पर अन्य मनसबदारों के कहने से वह वहीं ठहर गया। अजीतसिंह के जोधपुर पहुंचने पर जाफ़रबेग-द्वारा भेजे हुए राठोड़ कीरतसिंह (कूंपावत), राठोड़ उदयभाण (चांपावत) आदि ने उसके पास उपस्थित होकर कहा कि आप नागोरी दरवाज़े के पास जाफ़रबेग के डेरे के निकट ठहरें, बिना शाही आज्ञा के शहर में प्रवेश करना उचित नहीं; पर किसी ने उनकी बात पर ध्यान न दिया। बलपूर्वक उन्हें हटा-कर वे नगर में घुस गये और तलहटी के महलों में प्रविष्ट हुए। इस अवसर पर वहां जाफ़रबेग की दो स्त्रियां और मामा मोहम्मदज़मां थे, जो दरवाज़ा बन्द कर बैठ गये। अजीतसिंह ने आगे बढ़कर दरवाज़ा खोल दिया और जाफ़रबेग की स्त्रियों को उसके

महाराजा अजीतसिंह के जोधपुर पर अधिकार करने की ख़बर मिलने पर दुर्गादास जोधपुर गया। महाराजा ने भांडेलाव तालाब तक जाकर उसका स्वागत किया। दुर्गादास ने उसका उचित अभिवादन कर ग्यारह रुपये नज़र किये। इसके बाद महाराजा उससे सूरसागर के डेरे पर जाकर मिला। दुर्गादास ने उसे दो घोड़े भेंट किये। महाराजा ने भी वैशाख सुदि ७ (ता० २७ अप्रेल) को उसे एक घोड़ा और सिरोपाव दिया[1]।

दुर्गादास का अजीतसिंह के पास जाना

बीकानेर पर उन दिनों महाराजा सुजानसिंह का राज्य था, पर वह बादशाह की तरफ़ से दक्षिण में नियुक्त था और बीकानेर का राज्य-कार्य मंत्री तथा अन्य सरदार आदि करते थे। सुजानसिंह की अनुपस्थिति में राज्य-विस्तार करने का अच्छा अवसर देखकर अजीतसिंह ने बीकानेर पर चढ़ाई करने का निश्चय किया। बीकानेर के महाराजा अनूपसिंह और रतलाम के राजा रामसिंह ने अपने वकीलों-द्वारा बादशाह औरंगज़ेब से मारवाड़ का राज्य अजीतसिंह को, उसके जन्म के कुछ ही समय बाद, दिलाने की सिफ़ारिश कराई थी[2]; परन्तु अजीतसिंह ने राज्य पाते ही फ़ौज के साथ बीकानेर की ओर प्रस्थान किया और लाडणूं में जाकर ठहरा। बीकानेर

अजीतसिंह की बीकानेर पर असफल चढ़ाई

पास भिजवा दिया। जोधपुर पर अजीतसिंह का अधिकार हो जाने के कारण घर-घर बड़ा आनन्द-उत्सव मनाया गया। महाजनों और प्रजा ने उसकी अधीनता स्वीकार की। उस समय उसके साथ चांपावत हरनाथसिंह, कूंपावत पद्मसिंह (जैतसिंहोत), जोधा भीम (रणछोड़दासोत), खींवकरण (आसकर्णोत), ऊदावत जगराम (विजयरामोत), हृदयनारायण (बलरामोत), भाटी सूरजमल (जगन्नाथोत) आदि थे। चैत्र वदि १३ (ई० स० १७०७ ता० १८ मार्च) को पांच घड़ी दिन चढ़े अजीतसिंह ने बड़े समारोह के साथ गढ़ में प्रवेशकर उसके कंगूरे को अपनी पगड़ी के पल्ले से साफ़ किया। इसके बाद वि० सं० १७६४ चैत्र सुदि १० (ई० स० १७०७ ता० ३१ मार्च) को उसके परिवार के अन्य लोग भी जालोर से जोधपुर पहुंच गये (जि० २, पृ० ६९-७१)।"

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ७१-२।

(२) वही; जि० २, पृ० १६।

राज्य की सीमा के तेजसिंहोत बीदावत महाराजा सुजानसिंह से विरोध रखते थे। अजीतसिंह ने उन्हें लाडणूं बुलाकर उनसे बात-चीत की, जिससे उनमें से अधिकांश उसके सहायक हो गये, परन्तु गोपालपुरा के कर्मसेन तथा बीदासर के बिहारीदास ने इस बुरे कार्य में सहयोग देना स्वीकार न किया, जिससे उन्हें नज़रक़ैद कर अजीतसिंह ने भंडारी रघुनाथ को एक बड़ी सेना के साथ बीकानेर पर भेजा। कर्मसेन और बिहारीदास ने नज़रक़ैद होने पर भी इस चढ़ाई का समाचार गुप्त-रूप से बीकानेर भिजवा दिया, परन्तु बीकानेरवालों की शक्ति जोधपुरवालों का सामना करने की न पड़ी, जिससे वहां पर अजीतसिंह का अधिकार हो गया और नगर में उसके नाम की दुहाई फिर गई। बीकानेर में रामजी नाम का एक वीर, साहसी एवं राजभक्त लुहार रहता था। उसके हृदय को यह घटना इतनी असह्य हुई कि वह अकेला ही जोधपुर के सैनिकों से भिड़ गया और पांच को मारकर मारा गया। इस घटना से बीकानेर के सैनिकों का जोश भी बढ़ा और भूकरका के ठाकुर पृथ्वीराज एवं मलसीसर के बीदावत हिन्दूसिंह (तेजसिंहोत) सेना एकत्रकर जोधपुर की फ़ौज के समक्ष जा डटे, जिससे जोधपुर की सेना में खलबली मच गई। विजय की आशा के लोप होते ही सारे सरदारों ने संधि कर लौट जाने में ही भलाई समझी। जब अजीतसिंह के पास यह समाचार पहुंचा तो उसने भी यही ठीक समझा। फलतः जोधपुर की सेना जैसी आई थी वैसी ही लौट गई। लौटते समय अजीतसिंह ने कर्मसेन तथा बिहारीदास को मुक्त कर दिया[1]।

---

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६० । पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट्; पृ० ४३ ।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस चढ़ाई का उल्लेख नहीं है; परन्तु कविराजा श्यामलदास-रचित "वीरविनोद" में भी लिखा है कि औरंगज़ेब की मृत्यु होने पर जोधपुर पर अधिकार करने के उपरांत अजीतसिंह ने बीकानेर लेने का भी इरादा किया, पर उसका यह विचार पूरा न हुआ (भाग २, पृ० ५००)। इससे यह निश्चित है कि दयालदास का कथन कोरी कल्पना नहीं है।

बादशाह औरंगज़ेब की दक्षिण में मृत्यु होते ही शाहज़ादे मुअज़्ज़म ने, जो उन दिनों काबुल में था, अपने आप को बादशाह घोषित कर आगरे की तरफ़ प्रस्थान किया। उसका छोटा भाई आज़म उस समय दक्षिण में ही था। वह भी अपने को बादशाह प्रकटकर ससैन्य आगरे की तरफ़ अग्रसर हुआ। धौलपुर और आगरे के बीच जजाओ नामक स्थान में दोनों का परस्पर युद्ध हुआ, जिसमें हि० स० १११९ ता० १८ रबीउल्अव्वल (वि० सं० १७६४ आषाढ वदि ४ = ई० स० १७०७ ता० ६ जून) को आज़म मारा गया। तब शाहज़ादा मुअज़्ज़म "शाह आलम बहादुरशाह" नाम धारणकर मुग़ल साम्राज्य का स्वामी बना[1]।

बहादुरशाह का राज्यासीन होना

औरंगज़ेब के जीतेजी राठोड़ भावसिंह सबलसिंहोत, राठोड़ उरजनसिंह प्रतापसिंहोत आदि कितने ही सरदार महाराजा के विरोधी हो गये थे। एक फ़र्ज़ी दलथंभन को खड़ाकर चार साल तक वे सोजत के परगने में, जहां का हाकिम सरदारख़ां था, लूट-मार करते रहे। फिर बादशाह औरंगज़ेब के मरने की खबर पाकर जब देश में चारों ओर अराजकता और उत्पात फैलने लगा, तो उन्होंने भी उस अवसर से लाभ उठाकर सोजत के शाही हाकिम के भाग जाने पर वहां अधिकार कर लिया। उन्होंने अन्य सरदारों को भी लालच देकर अपनी ओर मिलाने का प्रयत्न किया। इन सब बातों की सूचना पाते ही महाराजा ने पन्द्रह-बीस हज़ार सवार सेना के साथ सोजत पर चढ़ाई कर उसे घेर लिया। ग्यारह दिन तक घेरा रहने के पश्चात् महाराजा ने कहलाया कि व्यर्थ प्राण गंवाने से क्या लाभ, आप दलथंभन को मेरे पास लावें, वह मेरा भाई है; पर विद्रोही सरदारों ने यह स्वीकार न किया। गढ़ के भीतर का सामान इत्यादि समाप्त हो जाने पर श्रावणादि वि० सं० १७६३ (चैत्रादि १७६४) ज्येष्ठ वदि ६ (ई० स० १७०७ ता० ११ मई) रविवार को आधी रात के समय

सरदारों-द्वारा खड़े किये हुए फ़र्ज़ी दलथंभन को मरवाना

(१) वीरविनोद; भाग २, पृ० ८३४, ६२७।

गढ़ के भीतर के लोग वहां से चले गये और महाराजा का वहां अधिकार हो गया[१]। दलथंभन के साथी उसे लेकर बादशाह के पास गये, पर वहां उनकी बात मानी नहीं गई। तब वे मेहराबख़ां के पास जाकर स्वामी गोविन्ददास के स्थान में ठहरे। इसकी सूचना मिलने पर महाराजा ने सोजत से वहां आदमी भेजकर उन्हें मौत के घाट उतरवा दिया। इस सेवा के एवज़ में इस कार्य को अंजाम देनेवाले व्यक्तियों को महाराजा ने बहुत कुछ पुरस्कार देकर सन्तुष्ट किया। फिर जोधपुर पहुंचने पर महाराजा ने अन्य अपराधी व्यक्तियों को दंड दिया[२]।

जोधपुर पर अधिकार होने के बाद ही महाराजा अजीतसिंह ने वहां औरंगज़ेब के समय बनी हुई मसजिदों को तुड़वाने के साथ ही आज़ान

बादशाह बहादुरशाह का जोधपुर ख़ालसा करना और अजीतसिंह का उसकी सेवा में जाना

का देना भी बन्द करवा दिया[३]। यही नहीं उसने बादशाह की गद्दीनशीनी के समय अपना कोई वकील भी न भेजा[४]। इन सब बातों से बादशाह की उसपर नाराज़गी हो गई और उसने जोधपुर की तरफ़ ससैन्य प्रस्थान किया[५]। आंबेर होता हुआ वह अजमेर पहुंचा, जहां से उसने शाहज़ादे अज़ीमुश्शान और ख़ानख़ाना मुनइमख़ां को फ़ौज देकर मारवाड़ पर भेजा और आप जोधपुर से छः कोस पर जा ठहरा। जोधपुर पर भेजी गई फ़ौज ने वहां पहुंचकर बरबादी करना तथा प्रजा को

---

(१) सरकार ने भी जोधपुर पर अधिकार होने के पश्चात् महाराजा का सोजत पर अधिकार करना लिखा है (हिस्ट्री ऑव् औरंगज़ेब; जि० ५, पृ० २६२)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ७२-५।

(३) वीरविनोद; भाग २, पृ० ६२६।

(४) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४५।

(५) "वीरविनोद" में बादशाह के प्रस्थान करने की तारीख़ ७ शाबान हि० स० १११६ (वि० सं० १७६५ कार्तिक सुदि ८ = ई० स० १७०८ ता० ११ अक्टोबर) और "लेटर मुग़ल्स" में १७ शाबान दी है।

लूटना शुरु कर दिया और वहां शाही अधिकार स्थापित हो गया[1]। ऐसी हालत में महाराजा अजीतसिंह महाराजा जयसिंह[2]-सहित वज़ीर मुनइमखां की मारफ़त बादशाह की सेवा में उपस्थित हो गया[3]।

इर्विन लिखता है—"ता० २१ फ़रवरी को बादशाह मेड़ता पहुंचा। इसके चौथे दिन ता० २४ फ़रवरी को अजीतसिंह भी खानज़मां के साथ वहां पहुंच गया। उसे मुनइमखां के डेरों में रहने को स्थान दिया गया। दूसरे दिन रूमाल से उसके हाथ बांधकर वह बादशाह के समक्ष उपस्थित किया गया। उस समय उसने सौ मोहरें तथा एक हज़ार रुपये बादशाह को नज़र किये। बादशाह ने उसका समुचित सत्कार कर इस्लामखां को उसे खिलअत आदि सम्मान की वस्तुएं प्रदान करने की आज्ञा दी। फिर ता० २६ फ़रवरी को दरबार में उपस्थित होने पर अजीतसिंह सिंहासन की बाईं तरफ़ खड़ा किया गया। इसके तीसरे और चौथे दिन बादशाह की तरफ़ से उसे कई चीज़ें उपहार में मिलीं। ता० १० मार्च को

---

(१) वीरविनोद; भाग २; पृ० ८२९। इर्विन लिखता है कि मार्ग से बादशाह ने जोधपुर के फ़ौजदार मेहराबखां को जोधपुर की तरफ़ भेजा था, जिसका मेड़ता में महाराजा अजीतसिंह से मुक़ाबला हुआ। इस लड़ाई में महाराजा हारकर भाग गया और मेड़ता पर शाही क़ब्ज़ा हो गया (लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४७)।

(२) बादशाह औरंगज़ेब की मृत्यु के बाद उसके शाहज़ादों के बीच राज्य के लिए जो लड़ाई हुई उसमें जयपुर का महाराजा सवाई जयसिंह शाहज़ादे आज़म के पक्ष में था और उसका छोटा भाई विजयसिंह बहादुरशाह (शाह आलम) के। इस कारण बहादुरशाह उस (जयसिंह) से नाराज़ था और उसने बादशाह बनते ही सर्वप्रथम आंबेर को ख़ालसा कर विजयसिंह को वहां का राजा बनाया (इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४६)। अपना राज्य पीछा प्राप्त करने की इच्छा से ही जयसिंह भी महाराजा अजीतसिंह के साथ बादशाह की सेवा में गया था। जोधपुर ख़ालसा होने के पूर्व जयसिंह ने अजीतसिंह को लिखा कि आंबेर पर शाही थाना स्थापित हो गया है और अब बादशाह जोधपुर से समझना चाहता है। इस समय बादशाह का जोधपुर जाना अच्छा नहीं, अतएव उसके हुज़ूर में हाज़िर हो जाना ही ठीक होगा। पीछे हम जैसा उचित समझेंगे करेंगे (जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ७८)।

(३) वीरविनोद; भाग २; पृ० ८२९।

उसे "महाराजा" का ख़िताब और ता० २३ अप्रेल को साढ़े तीन हज़ार ज़ात तीन हज़ार सवार (एक हज़ार दुअस्पा) का मनसब, झंडा, नक्क़ारा आदि दिये गये। उसके बड़े पुत्र अभयसिंह को १५०० ज़ात ३०० सवार, उससे छोटे बाग़ीसिंह (? आनंदसिंह) को ७०० ज़ात २०० सवार तथा दूसरे दो छोटे पुत्रों को ५०० ज़ात १०० सवार के मनसब मिले[1]।" इतना होने पर भी उसे उसका राज्य नहीं दिया गया।

अजीतसिंह और जयसिंह का बादशाह को सूचना दिये बिना चले जाना

जोधपुर का मामला इस प्रकार तय हो जाने पर बादशाह मेड़ता से अजमेर की तरफ़ रवाना हुआ, जहां वह ई० स० १७०८ ता० २४ मार्च (वि० सं० १७६५ चैत्र सुदि १४) को पहुंचा। अजीतसिंह, सवाई जयसिंह और दुर्गादास उसके साथ रहे। मार्ग से उस(बादशाह)ने क़ाज़ीख़ां और मुहम्मद गौस मुफ़्ती को जोधपुर में पुनः मुसलमानी धर्म का प्रभुत्व स्थापित करने के लिए उधर रवाना किया। ता० ३० अप्रेल (ज्येष्ठ वदि ६) को बादशाह का मुक़ाम मंडेश्वर(?मण्डलेश्वर) में हुआ। वहां तक अजीतसिंह आदि राज्य-प्राप्ति की आशा से बादशाह के साथ रहे, पर जब ऐसी कोई आशा नज़र नहीं आई और उनपर बादशाह की तरफ़ से निगरानी रहने लगी तो वे अपने डेरे-डंडे वहीं छोड़कर बादशाह को सूचना दिये बिना ही वहां से चले गये[2]। उस

---

(१) लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४८। उससे यह भी पाया जाता है कि मार्ग से बादशाह ने दुर्गादास के पास फ़रमान भेजा, जिसका उत्तर अजीतसिंह के पास से आने पर राजा बुधसिंह हाड़ा एवं नजाबतख़ां के साथ ख़ानज़मां जोधपुर भेजा गया (बहादुरशाहनामा; पृ० ६८)।

जोधपुर राज्य की ख्यात में भी लिखा है कि अजीतसिंह के बादशाह की सेवा में उपस्थित होने पर उसे तथा उसके पुत्रों को अलग-अलग मनसब मिले। उससे यह भी पाया जाता है कि इस अवसर पर महाराजा को सोजत, सिवाणा और फलोधी के परगने मिले, पर जोधपुर और मेड़ता उसे बादशाह ने नहीं दिये (जि० २, पृ० ८१-२)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में लिखा है कि अजीतसिंह के शाही आज्ञा के बिना जोधपुर पर अधिकार करने के कारण बादशाह ने वहां के प्रबन्ध के लिए मेहराबख़ां को भेजा। श्रावणादि वि० सं० १७६४ (चैत्रादि १७६५) वैशाख सुदि २

समय विद्रोही कामवख़्श का प्रबन्ध करना बहुत ज़रूरी था, अतएव बादशाह ने इस ओर ध्यान न दिया और वह दक्षिण की तरफ़ चला गया[1]।

अजीतसिंह आदि बादशाह का साथ छोड़कर उदयपुर की ओर अग्रसर हुए। उनके देवलिया पहुंचने पर रावत प्रतापसिंह ने उनका स्वागत किया[2]। वहां से प्रस्थान कर उन्होंने अपने आने की सूचना महाराणा को दी। महाराणा अमरसिंह वि० सं० १७६५ ज्येष्ठ वदि ५ (ई० स० १७०८ ता० २६ अप्रेल) को उदयपुर से जाकर उदयसागर की पाल पर ठहरा। दूसरे दिन वह उनके स्वागत के लिए गाडवा गांव तक गया, जहां महाराजा अजीतसिंह, जयसिंह, दुर्गादास और मुकुन्ददास भी पहुंचे। महाराणा पहले अजीतसिंह से मिला; फिर जयसिंह के पास गया। अनन्तर वह दुर्गादास और मुकुन्ददास से मिला। सन्ध्या समय सब उदयपुर गये, जहां महाराजा अजीतसिंह कृष्णविलास और जयसिंह सर्व ऋतुविलास महल में ठहराये गये। इसकी ख़बर मिलने पर शाहज़ादे मुईज़ुद्दीन जहांदारशाह ने महाराणा के पास ता० १४ सफ़र सन् जलूस २ (वि० सं० १७६५ ज्येष्ठ वदि १=ई० स० १७०८ ता० २४ अप्रेल) को एक निशान[3] भेजकर लिखा—

अजीतसिंह आदि का देवलिया होते हुए उदयपुर जाना।

(ई० स० १७०८ ता० १४ अप्रेल) को बादशाह का डेरा मंदसोर में हुआ। वहां रहते समय अजीतसिंह ने दुर्गादास से सलाह की कि अब क्या करना चाहिये। अनन्तर सवाई जयसिंह से बात ठहराकर वैशाख सुदि १२ (ता० २० अप्रेल) को गांव वदोद से बादशाह का साथ छोड़ अजीतसिंह, दुर्गादास और सवाई जयसिंह पीछे लौट गये (जि० २, पृ० ८२)। टॉड लिखता है कि बादशाह के नर्मदा पार करते ही दोनों राजा (अजीतसिंह और सवाई जयसिंह) उसका साथ छोड़कर राजवाड़ा की ओर चले गये (राजस्थान; जि० २, पृ० १०१४)।

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४८-५० तथा ६७। वीरविनोद; भाग २; पृ० ७६७-६८।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ८३।

(३) यह निशान उदयपुर राज्य में अब तक विद्यमान है। जोधपुर राज्य की ख्यात में भी शाहज़ादे मजीवदीन (? मुईज़ुद्दीन)-द्वारा भेजे गये, लगभग इसी आशय

"अजीतसिंह, जयसिंह और दुर्गादास जागीर और तनख़्वाह न मिलने के के कारण भाग गये हैं। तुम्हें चाहिये कि उन्हें अपने यहां नौकर न रक्खो और उन्हें समझा दो कि वे बादशाह के पास अर्ज़ियां भेजें, मैं उनके अपराध क्षमा करवाकर उनकी जागीरें उन्हें दिलवा दूंगा।" महाराणा ने उनसे माफ़ी की अर्ज़ियां लिखवाकर शाहज़ादे की मारफ़त बादशाह के पास भिजवादीं और उन्हें अपने पास ही रक्खा। उनके वहां रहते समय महाराणा ने अपनी पुत्री चन्द्रकुंवरी का विवाह सवाई जयसिंह के साथ किया। इस विवाह के प्रसंग में तीनों राजाओं के बीच एक प्रतिज्ञापत्र लिखा गया, जिसके अनुसार यह निश्चय हुआ कि

(१) उदयपुर की राजकुमारी, चाहे वह छोटी ही क्यों न हो, सब राणियों में मुख्य समझी जाय।

(२) उदयपुर की राजपुत्री का पुत्र ही युवराज माना जाय।

(३) यदि उदयपुर की राजपुत्री से कन्या उत्पन्न हो तो उसका विवाह मुसलमान के साथ न किया जाय[1]।

जब कुछ समय बीत जाने पर भी बादशाह की तरफ़ से उन्हें अपने राज्य प्राप्त न हुए तो उन्होंने अपने बाहुबल से उन्हें हस्तगत करने का विचार किया। इस विचार के अनुसार महाराणा ने अपने दो अफ़सरों की अध्यक्षता में अपनी सेना उन राजाओं के साथ कर उन्हें विदा किया[2]। तीनों

अजीतसिंह का पुनः जोधपुर पर अधिकार होना

के एक निशान का उल्लेख है (जि० २, पृ० ८४)। इर्विन-कृत "लेटर मुग़ल्स" में आगे चलकर लिखा है कि ई० स० १७०८ ता० ३० मई (वि० सं० १७६५ आषाढ वदि ७) को दोनों राजाओं के महाराणा के पास पहुंचने की निश्चित ख़बर बादशाह को मिली (जि० १, पृ० ६७)।

(१) वीरविनोद; भाग २, पृ० ७६६-७१। वंशभास्कर; चतुर्थ भाग, पृ० ३०१७-८। जोधपुर राज्य की ख्यात में भी इस विवाह का उल्लेख है (जि० २, पृ० ८३)। इर्विन ने जयसिंह की पुत्री का विवाह महाराणा अमरसिंह के साथ होना लिखा है (लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ६७), जो ठीक नहीं है।

(२) वीरविनोद; भाग २, पृ० ७७४-५।

राजाओं की सम्मिलित सेना ने प्रथम जोधपुर को जा घेरा। दुर्गादास के बीच में पड़ने से जोधपुर का शाही फ़ौजदार मेहराबख़ां क़िला ख़ालीकर चला गया[1]।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि अजमेर तक सही-सलामत पहुंचा दिये जाने की शर्त पर वि० सं० १७६५ श्रावण वदि ११ (ई० स० १७०८ ता० ३ जुलाई) को मेहराबख़ां गढ़ ख़ाली कर चला गया। इसके दूसरे दिन महाराजा अजीतसिंह ने सवाई जयसिंह और दुर्गादास आदि सहित गढ़ में प्रवेश किया। महाराजा के सिंहासनासीन होने के अवसर पर सवाई जयसिंह ने उसके टीका किया। अनन्तर सब सरदारों ने टीका कर नज़रें पेश कीं। महाराजा ने सवाई जयसिंह का डेरा सूरसागर के महलों में, दुर्गादास का ब्रह्मकुंड पर और महाराणा के सैनिकों का कूंपावत राजसिंह खीमावत के बाग़ में कराया[2]।

महाराजा अजीतसिंह आदि के उदयपुर में रहते समय ही महाराजा जयसिंह के दीवान रामचन्द्र और श्यामसिंह कछवाहा ने आंबेर के शाही फ़ौजदार पर आक्रमण कर उसे निकाल दिया[3]।

महाराजा अजीतसिंह आदि के आचरण के सम्बन्ध में महाराणा के नाम शाहज़ादे जहांदारशाह का निशान भेजना

इस विषय में शाहज़ादे जहांदारशाह ने महाराणा के नाम ता० २७ रबीउस्सानी सन् जुलूस २ (वि० सं० १७६५ श्रावण वदि १४ = ई० स० १७०८ ता० ५ जुलाई) को इस आशय का एक निशान भेजा

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ६७। टॉड लिखता है कि उदयपुर से चलकर दोनों राजा आउवा पहुंचे, जहां उदयभाण के पुत्र चांपावत संग्राम ने अजीतसिंह का स्वागत किया। वि० सं० १७६५ श्रावण वदि ७ (ई० स० १७०८ ता० २६ जून) को उसने जोधपुर पर घेरा डाला। श्रावण वदि १२ को दुर्गादास द्वारा जीवन-दान प्राप्त कर मेहराबख़ां चला गया (राजस्थान; जि० २, पृ० १०१४)।

(२) जि० २, पृ० ८५।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात से भी पाया जाता है कि श्रावण सुदि में आंबेर से सवाई जयसिंह के पास ख़बर आई कि मेहता रामचन्द्र दीवान के ऊपर आंबेर के

लूट-मार में लगे हुए थे, प्राण-रक्षा के निमित्त भाग गये[1]। जब यह समाचार राजाओं के पास पहुंचा तो पहले तो उन्हें इसपर विश्वास ही न हुआ, परन्तु अन्त में वे वापस लौटे। हुसेनख़ां का मृत शरीर हाथी के हौदे के नीचे मिला। वह तथा अन्य शव रणभूमि में ही गाड़ दिये गये[2]।

---

(१) "मआसिरुल्-उमरा" (जि० २, पृ० ५००) में इससे बिल्कुल भिन्न वर्णन मिलता है। उससे पाया जाता है कि सैयद हुसेनख़ां आंबेर का फ़ौजदार था। दोनों राजाओं के शाही सेवा से भागने और उनके आंबेर पर आक्रमण करने के इरादे का पता पाकर, उसने अपने पुत्रों आदि सहित युद्ध की तैयारी की, लेकिन राजपूतों के पहुंचते ही उसकी सेना भाग गई। तब ख़ां ने आंबेर से निकलकर कालादहरा (?) नामक मैदान में दुर्गादास का सामना किया, जिसमें राजपूतों की पराजय तो हुई पर ख़ां का डेरा भी लुट गया और उसका एक पुत्र मारा गया। दूसरे दिन ख़ां को भी भागना पड़ा। नारनोल में पहुंचकर उसने नई सेना एकत्र की। सांभर के निकट फिर विरोधी दलों का सामना हुआ। प्रारम्भ में तो ख़ां की ही विजय हुई, परन्तु अचानक बालू की पहाड़ी के पीछे छिपे हुए दो-तीन हज़ार राजपूत बन्दूक़चियों ने उसकी सेना पर बन्दूकें चलाईं। इस प्रकार घिर जाने पर ख़ां और उसके बहुतसे साथी मारे गये। मुहम्मदज़मांख़ां और सैयद मसऊदख़ां गिरफ़्तार कर लिए गये, जिनमें से पहला मार डाला गया और दूसरा राजा के समक्ष पेश किया गया (इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ७० टिप्पण १)।

(२) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, ६९-७०। जोधपुर राज्य की ख्यात में इस लड़ाई के संबंध में लिखा है कि वि० सं० १७६५ भाद्रपद सुदि २ (ई० स० १७०८ ता० ६ अगस्त) शुक्रवार को राजा जयसिंह का डेरा शेखावत के तालाब पर हुआ, जहां गुजरात के सूबेदार गाजूदीख़ां (? ग़ाज़ीउद्दीनख़ां) के पास से क़ासिद पत्र लेकर आये। इसके दूसरे दिन अजीतसिंह, जयसिंह तथा दुर्गादास कूचकर मेड़ता होते हुए पुष्कर गये, जहां अजमेर के सूबेदार शुजाअतख़ां ने राठोड़ कनीराम ऊदावत की मारफ़त उनसे कहलाया कि अजमेर बादशाही इलाक़ा है, उसकी इज़्ज़त रखना फ़र्ज़ है, मैं बादशाह को लिखकर जोधपुर और आंबेर का मनसब मंगवा दूंगा और ख़र्च का जो तीन लाख रुपया मंज़ूर हुआ था, वह भी पहुंचा दूंगा। इस प्रकार धोखे में डाल उसने दोनों राजाओं को एक मास तक पुष्कर में ही रोक रक्खा और बादशाह के पास मदद के लिए लिखा। इसपर आगरा, मथुरा, नारनोल तथा आंबेर से रामचन्द्र-द्वारा भगाई हुई सेनाएं सहायतार्थ आ गईं। यह ख़बर पाकर जयसिंह ने सांभर पर चढ़ाई की। वहां के फ़ौजदार अलीमुहम्मद ने कार्तिक वदि १३ (ता० ३० सितम्बर) को उसका मुक़ाबला किया, पर पीछे से भागकर

इस प्रकार सांभर पर अधिकार कर लेने के बाद वहां की आय दोनों नरेशों में बराबर-बराबर बांटी जाने का निर्णय होकर वहां दोनों के अधिकारी रख दिये गये। इसके बाद ही डीडवाणा पर भी महाराजा अजीतसिंह का अधिकार हो गया[1]।

दुर्गादास का मारवाड़ से निर्वासित किया जाना

अपनी अपूर्व वीरता, स्वामीभक्ति, युद्ध-कौशल, राजनैतिक योग्यता एवं स्वार्थत्याग के कारण दुर्गादास की प्रतिष्ठा राठोड़ सरदारों एवं अन्य राजाओं आदि में बढ़ी हुई थी। उसकी यह बढ़ती हुई प्रतिष्ठा महाराजा को असह्य होने से उसने बुरे लोगों के बहकाने में आकर दुर्गादास को, जिसने उस (अजीतसिंह) के बाल्यकाल से ही उसकी पूरी मदद की थी, वि० सं० १७६५ के अन्त के आस-पास मारवाड़ से निकाल दिया[2]। इससे महाराजा की बड़ी बदनामी

वह देवजानी के कोट में चला गया। अनन्तर मथुरा का फ़ौजदार सैयद ग़ैरतख़ां, नारनोल का सैयद हसनख़ां और आंबेर का सैयद हुसेनअहमद आठ हज़ार सवार और विशाल तोपख़ाने के साथ आये। दोनों राजाओं के पास बीस-पचीस हज़ार फ़ौज थी। परस्पर लड़ाई होने पर सैयद सरदार, जो हाथी पर था, मारा गया, अलीमुहम्मद पकड़ लिया गया और मुसलमानों की अन्य सेना भाग गई, जिसका महाराजा की फ़ौज ने पांच कोस तक पीछा किया। इस लड़ाई में हाथी, घोड़े आदि बहुत सा सामान विजेताओं के हाथ लगा। महाराजा की तरफ़ के राठोड़ भीम सबलसिंहोत कूंपावत (आसोप), भाटी किशनसिंह (आंटण), राठोड़ केसरीसिंह काशीसिंहोत आदि काम आये और अन्य कितने ही घायल हुए (जि० २, पृ० ८९-९०)।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ९०। "वीरविनोद" (भाग २, पृ० ८३५-६) में दुर्गादास का उदयपुर के पंचोली बिहारीदास के नाम का एक पत्र छपा है, जिससे पाया जाता है कि दोनों राजाओं (जयसिंह और अजीतसिंह) ने महाराणा अमरसिंह (द्वितीय) को भी सहायतार्थ बुलाया था; परन्तु दुर्गादास उस समय उसे लाने के लिए न जा सका जिससे महाराणा स्वयं सम्मिलित न हुआ, जैसा कि जोधपुर राज्य की ख्यात से भी प्रकट है (जि० २, पृ० ९१ तथा ११६)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि सांभर-विजय के बाद वहां डेरे होने पर दुर्गादास ने अपनी सेना-सहित अलग डेरा किया। महाराजा ने उससे मिलने

हुई[1]। दुर्गादास मारवाड़ का परित्याग कर उदयपुर महाराणा (अमरसिंह द्वितीय) की सेवा में चला गया[2]। महाराणा ने उसे विजयपुर की जागीर[3] देकर अपने पास रक्खा और उसके लिए पांचसौ रुपये रोज़ाना नियत कर दिये[4]। पीछे से वह रामपुरे का हाकिम नियत हुआ[5], जहां रहते समय

(सरदारों की पंक्ति) में डेरा करने को कहा तो उसने उत्तर दिया कि मेरी तो उमर अब थोड़ी रह गई है, मेरे पीछे के लोग मिसल में डेरा करेंगे। दुर्गादास को महाराजा के इस व्यवहार का ध्यान रहा और जब वह राणा को बुलाने के लिए भेजा गया तो वहां से लौटा ही नहीं (जि० २, पृ० ११६)।

(१) इस विषय में निम्नलिखित पद्य प्रसिद्ध है—

महाराज अजमालरी जद पारख जाणी।
दुर्गो देशां काढ़ियो गोलां गांगाणी॥

आशय—महाराज अजमाल (अजीतसिंह) की परीक्षा तो तब हुई जब उसने दुर्गा (दुर्गादास) को देश से निकाल दिया और गोलों को गांगाणी जैसी जागीर दी।

(२) बांकीदास लिखता है कि दुर्गादास के साथ उसके दो पुत्र तेजकरण और महेशकरण उदयपुर गये। अभयकरण महाराजा जयसिंह के पास गया और चैनकरण समदरडी में ही रहा (ऐतिहासिक बातें; संख्या २६८)।

(३) वीरविनोद; भाग २, पृ० ६६३-४। उक्त पुस्तक में विजयपुर की जागीर के सम्बन्ध के दुर्गादास के बिहारीदास पंचोली के नाम के वि० सं० १७७४ कार्तिक वदि ६ के पत्र की नक़ल छपी है।

बांकीदास लिखता है कि दुर्गादास को सादड़ी की जागीर मिली थी, जहां रहते समय उसने अपनी नौ बहिन-बेटियों के विवाह किये (ऐतिहासिक बातें; संख्या २६७)।

(४) टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०२४। टॉड ने महाराणा के नाम लिखे हुए बादशाह बहादुरशाह के एक पत्र का उल्लेख किया है, जिसमें इसका वर्णन है। उससे यह भी पाया जाता है कि बादशाह ने महाराणा को दुर्गादास को सौंपने के विषय में लिखा, जिसे उसने अस्वीकार कर दिया।

(५) वीरविनोद; भाग २, पृ० ६६२। वहां रहते समय वि० सं० १७७४ कार्तिक वदि ५ को दुर्गादास ने महाराणा के नाम एक अर्ज़ी भेजी, जिसकी नक़ल उक्त पुस्तक में छपी है।

उसकी वि० सं० १७७५ मार्गशीर्ष सुदि ११ (ई० स० १७१८ ता० २२ नवंबर) को मृत्यु हुई[1]। उसका अन्तिम संस्कार क्षिप्रा नदी के तट पर हुआ[2]।

वि० सं० १७६५ (ई० स० १७०८) के मार्गशीर्ष मास में दोनों नरेशों ने आंबेर की ओर प्रस्थान किया। आंबेर पहुंचकर जयसिंह वहां की गद्दी पर बैठा। महाराजा ने उसे टीके में हाथी-घोड़े दिये। कुछ समय बाद अजीतसिंह वहां से सांभर लौट गया[3]।

जयसिंह का आंबेर पर अधिकार होना

इसी बीच रूपनगर (कृष्णगढ़) के राजा राजसिंह (मानसिंहोत) ने, जो अजीतसिंह के भयसे अपनी ननसार देवलिया में जा रहा था,

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में भी दुर्गादास का मेवाड़ में ही मरना लिखा है (जि० २, पृ० ११६)।

चंडू के यहां से प्राप्त जन्मपत्रियों के संग्रह में दुर्गादास का जन्म वि० सं० १६९५ द्वितीय श्रावण सुदि १४ (ई० स० १६३८ ता० १३ अगस्त) सोमवार को होना लिखा है। बांकीदास लिखता है कि दुर्गादास ने ८० वर्ष ३ मास २८ दिन की उमर पाई (ऐतिहासिक बातें; संख्या २७१)। इसके अनुसार उसकी मृत्यु की ऊपरि-लिखित तिथि ही आती है।

(२) इस विषय में निम्नलिखित प्राचीन पद्य प्रसिद्ध है—

अण घर याही रीत दुर्गो सफरां दागियो।

आशय—इस घराने (जोधपुर) की ऐसी ही रीति है कि दुर्गादास का दाह सफरां (क्षिप्रा) नदी के तट पर हुआ (मारवाड़ में नहीं)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ६१। टॉड; राजस्थान; जि० २,

इर्विन-कृत "लेटर मुग़ल्स" से पाया जाता है कि राजा जयसिंह ने बीस हज़ार सवार और पैदल सेना के साथ रात्रि के समय आक्रमण कर आंबेर के फ़ौजदार सैयद हुसेनख़ां को भगा दिया और इस प्रकार उसका वहां अधिकार हो गया (जि० १, पृ० ६९)।

अजीतसिंह और जयसिंह के नाम उनके राज्यों का फ़रमान होना

शाहज़ादे अज़ीमदीन (? अज़ीमुश्शान) को लिखा कि दोनों राजाओं के पास बड़ी सेना है और उनका दिल्ली तक बिगाड़ करने का इरादा है, अतएव उन्हें उनके वतन (जोधपुर और आंबेर) दिला दिये जावें तो अच्छा हो। इसपर शाहज़ादे ने बादशाह से अर्ज़कर दोनों राजाओं के नाम उनके इलाक़ों के फ़रमान लिखवाकर भिजवा दिये। राजसिंह फ़रमान लेकर अजीतसिंह के पास गया, जिसपर वह जोधपुर चला गया[1]।

पाली के ठाकुर को छल से मरवाना

जोधपुर पहुंचने पर महाराजा ने पाली के ठाकुर मुकुन्ददास चांपावत को धोखे से मरवा डाला। महाराजा ऊपर से तो उससे खुश था, पर भीतर ही भीतर वह उससे जलता था, क्योंकि पाली की जागीर और मनसब उसे बादशाह की तरफ़ से प्राप्त हुआ था। मुकुन्ददास क़िले पर बुलवाया गया, जहां छीपिया के ठाकुर प्रतापसिंह ऊदावत और सबलसिंह कूंपावत ने उसको मार डाला। इसपर मुकुन्ददास के वीर राजपूतों भीमा और धन्ना[2] ने प्रतापसिंह को मारकर बदला लिया और आप भी मारे

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ९१। इर्विन-कृत "लेटर मुग़ल्स" से भी पाया जाता है कि शाहज़ादे अज़ीमुश्शान के बीच में पड़ने से ई० स० १७०८ तां० ६ अक्टोबर (वि० सं० १७६५ कार्तिक सुदि ४) को अजीतसिंह तथा जयसिंह शाही सेवा में बहाल कर लिये गये (जि० १, पृ० ७१)।

(२) भीमा चौहान और धन्ना गहलोत था तथा दोनों मामा-भांजे लगते थे। सरलहृदय मुकुन्ददास के मारे जाने की ख़बर सुनते ही उन्होंने बलपूर्वक ताशलीपोल के किंवाड़ तोड़कर महल के भीतर प्रवेश किया और प्रतापसिंह को मारकर अपने स्वामी का वैर लिया तथा राजसेना से वीरतापूर्वक लड़कर वे स्वयं भी मारे गये। वे राजपूताने में अप्रतिम वीर माने जाते हैं। उनके विस्तृत परिचय के लिए देखो मलसीसर (जयपुर) के विद्यानुरागी शेखावत ठाकुर भूरसिंह-द्वारा संगृहीत "विविध संग्रह" (प्रथम संस्करण); पृ० ११०-१२।

गये[1]।

उसी वर्ष पौष मास में महाराजा ने ससैन्य नागोर की तरफ़ प्रस्थान कर गांव उचेरे में डेरा किया। वहां के स्वामी इन्द्रसिंह के पुत्र मोहकमसिंह को इसकी पहले से खबर मिल जाने पर वह वहां से भाग गया। फिर महाराजा का डेरा मूंडवा में होने पर इन्द्रसिंह की माता तथा कुंवर अजबसिंह उसके पास उपस्थित हो गये। इन्द्रसिंह की माता ने महाराजा से प्रार्थना कर नागोर के संबंध में उसकी माफ़ी प्राप्त की। पीछे से इन्द्रसिंह भी अपने पुत्र-पौत्र सहित हाज़िर हो गया। कुछ समय बाद इन्द्रसिंह का कुंवर २०० सवारों के साथ जोधपुर जाकर माघ सुदि २ (ई० स० १७०६ ता० १ जनवरी) को महाराजा के पास उपस्थित हुआ और चार दिन वहां रह कर लौटा[2]।

महाराजा का नागोर पर जाना

---

(१) वीरविनोद; भाग २, पृ० ८३७-८। जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ८५-६। इस सम्बन्ध में नीचे लिखी कविता प्रसिद्ध है—

आजूणी अधरात, महळज रूणी मुकंदरी।
पातलरी परभात, भली रुवाणी भींमड़ा॥
पांच पहर लग पौळ, जड़ी रही जोधाणरी।
रै गढ़ ऊपर रौळ, भली मचाई भीमड़ा॥
चांपा ऊपर चूक, ऊदा करे न आदरे।
धन्ना वाळी धूक, जण जण ऊपर जूझवे॥
भीमा धन्ना सारखा, दो भड़ राख दुबाह।
सुण चन्दा सूरज कहे, राह न रोके राह॥
गढ़ साखी गहलोत, कर साखी पातल कमध।
मुकन रुघारी मोत, भली सुधारी भीमड़ा॥

रुघा (रघुनाथ) मुकन्ददास का भाई था, जो उसके साथ ही मारा गया था।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ९१-२।

महाराजा अजीतसिंह के महाराणा अमरसिंह (दूसरा) के नाम के वि० सं०

उन्हीं दिनों अजमेर के सूबेदार शुजाअतखां ने महाराजा से कहलाया कि बादशाह ने मुझे यहां से हटा दिया है। आपने सांभर एवं डीडवाणा पर अधिकार कर लिया और सैयदों को (सांभर में) मारा, इससे बादशाह मुझसे नाराज़ है; अतएव मैं तो वतन को जा रहा हूं। यहां फ़ीरोज़खां का पुत्र नियुक्त हुआ है, पर वह भय के कारण नहीं आ रहा है और उज्जैन के मार्ग से आगरे चला गया है, अतएव आप आकर अजमेर पर अधिकार कर लें। वास्तव में यह सब उसका छल था और वह चाहता था कि महाराजा के पहुंचते ही उसे मार डाले। महाराजा ने पचीस-तीस हज़ार फ़ौज एकत्रकर वि० सं० १७६५ फाल्गुन सुदि ५ (ई० स० १७०६ ता० ३ फ़रवरी) को प्रस्थान किया। उधर शुजाअतखां ने मेवाती फ़ीरोज़खां के पुत्र (पुर मांडल का थानेदार) के पास से तथा अन्य स्थलों से सेना मंगवा रक्खी थी और दरवाज़े के बाहर खाई खोदकर वह तैयार बैठा था। दांतड़ा पहुंचकर जब महाराजा को यह सब हाल ज्ञात हुआ तो उसने अन्य स्थानों से तोपखाना तथा फ़ौज बुलवाकर चैत्र वदि ७ (ता० १६ फ़रवरी) को आक्रमण किया। कई दिन तक लड़ाई होने पर भी जब शुजाअतखां को विजय के दर्शन न हुए तो उसने रूपनगर के स्वामी राजसिंह की मारफ़त हाथी, घोड़े और ४५००० रुपये देकर घेरा उठवा दिया[1]।

अजीतसिंह का अजमेर के सूबेदार पर आक्रमण करना

१७६५ माघ सुदि ७ (ई० स० १७०६ ता० ७ जनवरी) के खरीते से भी इस घटना की पुष्टि होती है, जो उदयपुर राज्य में विद्यमान है। आगे चलकर उसमें महाराजा ने लिखा है कि अब तक जो कार्य हुए हैं वह सब आपकी कृपा से ही हुए हैं और आगे भी जो होंगे आपकी सहायता से होंगे। साथ ही उसमें उसने शाहज़ादे अज़ीम के साथ, जो उधर आ रहा था, स्वयं मुकाबिला करने की बात लिखकर महाराणा को भी इसके लिए तैयार रहने को लिखा। इससे स्पष्ट है कि उस समय तक अजीतसिंह को महाराणा की तरफ़ से सहायता मिलती रही थी।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ६३-४। "वीरविनोद" में भी महाराजा का अजमेर से रुपये वसूल करना लिखा है (भाग २, पृ० ८३६)।

बहादुरशाह के राज्यसमय के ता० ४ सफ़र सन् जलूस ३ (वि० सं० १७६६

कई रोज़ अजमेर में रहकर महाराजा देवलिया गया, जहां उसने विना मुहूर्त के श्रावणादि वि० सं० १७६५ (चैत्रादि १७६६) चैत्र सुदि १२ (ई० स० १७०९ ता० ११ मार्च) को महारावत पृथ्वीसिंह की पुत्री से विवाह किया। वहां से वैशाख वदि ५ (ता० १९ मार्च) को वह जोधपुर लौटा[1]।

महाराजा का देवलिया में विवाह होना

अजमेर की चढ़ाई की खबर बादशाह बहादुरशाह के पास दक्षिण में पहुंची तो नवाब असदख़ां ने ता० ११ सफ़र सन् जुलूस ३ (वि० सं० १७६६ प्रथम वैशाख सुदि १३=ई० स० १७०९ ता० ११ अप्रेल) को शुजाअतख़ां को महाराजा अजीतसिंह आदि को समझाने के लिए ख़त लिखा[2]। ई० स० १७०९ ता० २५ दिसंबर (वि० सं० १७६६ पौष सुदि ५) को बहादुरशाह ने नर्मदा को पार किया। अनन्तर वह मांडू, नालछा, देपालपुर आदि स्थानों में होता हुआ अजमेर से तीस कोस दूर दांदवा सराय में ठहरा। वहां यारमुहम्मदख़ां कुल और हांसी का नाहरख़ां, जो विद्रोही राजाओं के पास भेजे गये थे, उनके मंत्रियों आदि को लेकर बादशाह के पास पहुंचे। ई० स० १७१० ता० २२ मई (वि० सं० १७६७ ज्येष्ठ सुदि ५) को शाहज़ादे अज़ीमुश्शान ने दोनों राजाओं के पत्र बादशाह के समक्ष पेश किये। उस (शाहज़ादे) के प्रार्थना करने पर बादशाह ने उनके अपराध क्षमा कर दिये। शाहज़ादे ने मंत्रियों को ख़िलअतें दीं। इसके चार दिन पश्चात् बादशाह के लोडा (? टोडा) पहुंचने पर महाराणा अमरसिंह, महाराजा अजीतसिंह और जयसिंह के सेवकों के

महाराजा का बादशाह के पास हाजिर होना

प्रथम वैशाख सुदि ६ = ई० स० १७०९ ता० ४ अप्रेल) के अख़बार से भी पाया जाता है कि अजमेर के निवासियों से रुपये वसूलकर अजीतसिंह ने वहां से घेरा उठाया। ये अख़बार "अख़बारात-इ-दरबार-इ-मुअल्ला" के नाम से प्रसिद्ध हैं और जयपुर के संग्रह में सुरक्षित हैं।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ६४। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८३९। ऊपर टिप्पण १ में दिये हुए अख़बार से भी बीस हज़ार सवारों के साथ महाराजा अजीतसिंह का अपनी शादी के लिए देवलिया जाना स्पष्ट है।

(२) वीरविनोद; भाग २, पृ० ८३९-४०।

लिए ख़िलअतें भेजी गईं। इस अवसर पर एक ख़िलअत दुर्गादास के पास से पत्र लानेवाले व्यक्ति को भी दी गई। इसी बीच सरहिन्द के उत्तर से सिक्खों के विद्रोह की खबर आई। ऐसी परिस्थिति में राजपूताने के राजाओं के साथ शीघ्रातिशीघ्र मेल करना बादशाह के लिए आवश्यक हो गया। वज़ीर मुनइमख़ां के निवेदन करने पर उसका पुत्र महाबतख़ां दोनों राजाओं अजीतसिंह और जयसिंह को आश्वासन देकर उन्हें लाने के लिए भेजा गया। इसके तीन दिन बाद देवराई (दौराई) में डेरे होने पर बादशाह के पास खबर आई कि गंगवाना में दोनों राजाओं से मिलकर महाबतख़ां ने ता० २० जून (आषाढ सुदि ५) को उन्हें शाही सेवा में उपस्थित होने के लिए राज़ी कर लिया है। इसपर मुनइमख़ां भी दोनों राजाओं के पास भेजा गया। ता० २१ जून (आषाढ सुदि ६) को अजीतसिंह और जयसिंह महाबतख़ां के साथ बादशाह के पास उपस्थित हुए और प्रत्येक ने दो सौ मोहरें तथा दो हज़ार रुपये उसको नज़र किये। इसके बदले में बादशाह की तरफ़ से उन्हें ख़िलअत, रत्न-जटित तलवार और कटार, बेशक़ीमत रूमाल, हाथी, फ़ारस के घोड़े आदि दिये गये। इसके बाद बादशाह ने उन्हें अपने-अपने देश लौटने की इजाज़त दी[1]।

---

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ७१-३। आगे चलकर उसी पुस्तक में लिखा है कि राजपूत मुसलमानों के वचन का कितना कम भरोसा करते थे यह तत्कालीन इतिहास-लेखक कामवरख़ां के लेख से प्रकट होता है। कामवरख़ां ने, जो उस समय मौजूद था, देखा कि चारों ओर पहाड़ियों और मैदानों में राजपूत भरे हुए थे। कई हज़ार राजपूत तो दो-दो, तीन-तीन की संख्या में बन्दूक़ अथवा तीर-कमान से सज्जित ऊंटों पर सवार पहाड़ियों की घाटियों में छिपे हुए थे। वस्तुतः विश्वासघात का ज़रा भी आभास पाने पर वे अपने स्वामियों की रक्षा के लिए अपने प्राण तक देने को तैयार थे।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में जो वृत्तान्त दिया है वह नीचे लिखे अनुसार है—

"वि० सं० १७६७ में बहादुरशाह दक्षिण से अजमेर गया। इसपर राज-परिवार को पोकरण फलोधी में भेजकर महाराजा ने भंडारी खींवसी को अजमेर भेजा, जिसने शाहज़ादे अज़ीमशाह (? अज़ीमुश्शान) की मारफ़त बादशाह से मुलाक़ात कर,

बादशाह के पास से विदा होकर दोनों राजा पुष्कर गये, जहां वे पर्व-स्नान के लिए ठहरे। वहां से दोनों अलग हो-कर अपने-अपने राज्यों को गये। अजीतसिंह जुलाई मास में जोधपुर पहुंचा[1]।

महाराजा का पुष्कर होते हुए जोधपुर जाना

महाराजा की तरफ़ से भंडारी पेमसी ने देवगांव (ज़िला अजमेर) जाकर वहां के स्वामी से १५००० रुपये वसूल किये थे। कुछ ही समय बाद महाराजा ने स्वयं वहां जाकर राठोड़ नाहरसिंह[2] से गढ़ी खाली कर देने को कहलाया। उसने अर्ज़ की कि मुझे तो राठोड़ दुर्गादास ने यहां बैठाया है और मैं तो आपका सेवक हूं। तब फिर १५००० रुपये पेशकशी के

देवगांव के स्वामी से पेश-कशी वसूल करना

अपने स्वामी के लिए काबुल के सूबे का फ़रमान प्राप्त किया। पीछे बादशाह का डेरा गांव सढोरे (?) में हुआ, जहां रहते समय भंडारी खींवसी पुनः उसके पास गया। फिर उसके कहलाने पर महाराजा बादशाह के पास गया। आंबेर से जयसिंह भी गया और दोनों शाहज़ादे की मारफ़त बादशाह की सेवा में उपस्थित हुए (जि० २, पृ० ९९)।

"वीरविनोद" में भी वि० सं० १७६७ में भंडारी खींवसी को भेजकर शाहज़ादे अज़ीमुश्शान की मारफ़त बादशाह से फ़रमान पाना और खुद अजीतसिंह का बादशाह के पास जाना लिखा है (भाग २; पृ० ८४०)। टॉड-कृत "राजस्थान" से पाया जाता है कि अजीतसिंह के नागोर पर चढ़ाई करने से अप्रसन्न हो इन्द्रसिंह ने इसकी शिकायत बादशाह से की। इसपर बादशाह अजीतसिंह से बड़ा नाराज़ हुआ। तब दोनों राजाओं ने भयभीत होकर उससे मेल करना ही ठीक समझा। फ़रमान और पंजा प्राप्त होने पर अजमेर में वे बादशाह के पास वि० सं० १७६७ आषाढ वदि १ को उपस्थित हो गये, जहां उनका समुचित सम्मान होकर जोधपुर और आंबेर की जागीरें उन्हें मिल गईं (जि० २, पृ० १०१५-६)।

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ७२। टॉड-कृत "राजस्थान" (जि० २, पृ० १०१६) में भी इसका उल्लेख है, पर जोधपुर राज्य की ख्यात तथा "वीरविनोद" में महाराजा का सीधे जोधपुर जाने का उल्लेख है और उसका पुष्कर ठहरना नहीं लिखा है।

(२) चन्द्रसेन के वंशधर भिणाय के स्वामी श्यामसिंह के छोटे भाई साटोला के स्वामी गिरधारीसिंह का पौत्र एवं देवगांव बघेरा का संस्थापक।

ठहराकर तथा उसके पुत्र के सदैव चाकरी में रहने और बुलाये जाने पर स्वयं उसके हाज़िर होने की शर्त कर महाराजा ने वहां से कूच किया[1]।

राजा राजसिंह पर महाराजा की चढ़ाई

वि० सं० १७६८ (ई० स० १७११) के भाद्रपद मास में महाराजा फ़ौज लेकर कृष्णगढ़ गया, जहां के राजा राजसिंह से उसने दंड वसूल किया[2]। जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि कृष्णगढ़ में झंडा लगाकर महाराजा रूपनगर गया, जहां चार दिन तक लड़ाई होने के बाद बात ठहराकर राजसिंह महाराजा के पास उपस्थित हो गया[3]।

महाराजा का नाहन के विरोधी सरदारों पर जाना

उसी वर्ष बादशाह की आज्ञा से महाराजा नाहन (पंजाब) गया, जिधर के विरोधी सरदारों का उसने दमन किया। वहां से वह गंगा-स्नान के लिए गया और वसन्त ऋतु में जोधपुर लौटा[4]।

बादशाह बहादुरशाह की मृत्यु

उसी वर्ष पंजाब के सिक्खों का उपद्रव दबाने के लिए बादशाह स्वयं पंजाब की तरफ़ गया। ई० स० १७११ ता० ११ अगस्त (वि० सं० १७६८ प्रथम भाद्रपद सुदि ६) को वह लाहोर पहुंचा। ई० स० १७१२ (वि० सं० १७६८) के जनवरी मास के मध्य में वह बीमार पड़ा। उसके बाद क्रमशः उसकी दशा बिगड़ती गई और हि० स० ११२४ ता० २१ मुहर्रम (ता० २६

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ६६।

(२) वीरविनोद; भाग २; पृ० ८४०।

(३) जि० २, पृ० ६६-७। "वंशभास्कर" से पाया जाता है कि मारवाड़ के राजा के अजमेर पर अधिकार करने के कारण रूपनगर का राजा राजसिंह उससे विरोध रखने लगा था और उसने दिल्ली जाकर बादशाह से उसकी शिकायत तक की थी (चतुर्थ भाग; पृ० ३०४०)। संभवतः यही चढ़ाई का कारण रहा हो।

(४) टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०२०। अन्य किसी ख्यात आदि में इसका उल्लेख नहीं है।

फ़रवरी = फाल्गुन वदि ७) को उसका देहान्त हो गया[1]।

बहादुरशाह के मरते ही उसके पुत्रों, अज़ीमुश्शान, जहांदारशाह, जहांशाह (खुजस्तह अख़्तर) तथा रफ़ीउलक़द्र (रफ़ीउश्शान) के बीच बादशाहत के लिए विरोध पैदा हुआ। उनमें से अज़ीमुश्शान एक तरफ़ रहा और शेष तीनों भाइयों ने सम्मिलित होकर उसका विरोध किया। कई लड़ाइयां होने के बाद अज़ीमुश्शान और उसके बहुत से पक्षपाती मारे गये तथा तीनों शाहज़ादों की विजय हुई। पीछे से उनमें भी संपत्ति के बंटवारे के संबंध में झगड़ा हुआ और दोनों भाइयों को मारकर मुइज्जुद्दीन जहांदारशाह बादशाह बना। लाहोर से चलकर हि० स० ११२४ ता० १८ जमादिउलअव्वल (वि० सं० १७६९ आषाढ़ वदि ५ = ई० स० १७१२ ता० १२ जून) को वह दिल्ली पहुंचा, जहां उसने अपने दूसरे विरोधियों को मरवाया या क़ैद में डलवा दिया। वह भी अधिक समय तक राज्य-सुख न भोगने पाया था कि उस-पर अज़ीमुश्शान के पुत्र फ़र्रुख़सियर ने चढ़ाई कर दी।

बादशाहत के लिए लड़ाई

औरंगज़ेब के समय अज़ीमुश्शान को बंगाल और बहादुरशाह के समय उड़ीसा, इलाहाबाद और अज़ीमाबाद (पटना) की सूबेदारी मिली थी, जहां क्रमशः जाफ़रखां, सैयद अब्दुल्लाखां एवं सैयद हुसेनअलीख़ां को अपनी तरफ़ से नियुक्त कर वह खुद बादशाह (बहादुरशाह) की सेवा में

(१) बील; एन ओरिएन्टल बायोग्राफ़िकल डिक्शनरी; पृ० ९५।

बादशाह के मरने के सम्बन्ध में भिन्न-भिन्न पुस्तकों में भिन्न-भिन्न मत मिलते हैं। "वंशभास्कर" से पाया जाता है कि बहादुरशाह की मृत्यु एक कलावंत के हाथ से हुई (चतुर्थ भाग; पृ० ३०३२-३)। जोधपुर राज्य की ख्यात में भी ऐसा ही उल्लेख है (जि० २, पृ० ९९)। ख़ाफ़ीख़ां लिखता है कि वह दिमाग़ में ख़लल आने से ७-८ दिन में मर गया। "मिरात-इ-आफ़तावनुमा" और "ख़ानदान-इ-आलमगीरी" में उसका पेट के दर्द से मरना लिखा है। "सैरुलमुताख़िरीन" में दो-चार दिन पूर्व से उसका मिज़ाज और होश बदल जाना और फिर बीमारी से मरना लिखा है। कर्नल टॉड बादशाह का विष-प्रयोग-द्वारा मारा जाना लिखता है। "वीरविनोद" में उसका एकाएक मरना लिखा है।

रहता था। अज़ीमुश्शान की मृत्यु के समय उसका पुत्र फ़र्रुख़सियर ज़नाने-सहित अकबरनगर में था। जहांदारशाह ने बादशाह होने पर फ़र्रुख़सियर को गिरफ़्तार कर भेजने के लिए जाफ़रख़ां के पास एक फ़रमान भेजा। स्वामिभक्त जाफ़रख़ां ने शाहज़ादे को आगाह कर दिया। इसपर पटने में सैयद हुसेनअलीख़ां के पास जाकर उसने उससे मदद मांगी। उसने मदद देना स्वीकार कर अपने भाई अब्दुल्लाख़ां को भी अपने शरीक किया। तदनन्तर फ़र्रुख़सियर को बादशाह घोषित कर हुसेनअलीख़ां ने पटने से प्रस्थान किया। यह ख़बर मिलने पर जहांदारशाह ने सैयद अब्दुलग़फ़्फ़ारख़ां कुर्देज़ी को दस-बारह हज़ार सवारों के साथ इलाहाबाद की हुकूमत पर भेजा, पर वह अब्दुल्लाख़ां की सेना-द्वारा परास्त होकर मार डाला गया। फिर इलाहाबाद से अब्दुल्लाख़ां को भी साथ लेकर फ़र्रुख़सियर आगे बढ़ा। इसपर जहांदारशाह का बड़ा शाहज़ादा अअज़्ज़ुद्दीन उसके मुक़ाबले के लिए गया, पर खजवा गांव में उसकी हार हुई। तब हि० स० ११२४ ता० १२ ज़िलक़ाद (मार्गशीर्ष सुदि १५ = ता० १ दिसम्बर) सोमवार को जहांदारशाह स्वयं मुक़ाबले के लिए दिल्ली से रवाना हुआ। आगरे के आगे समूनगर के निकट विपक्षी दलों का सामना होने पर जहांदारशाह हारकर आगरे के क़िले में चला गया। फिर उसके दिल्ली पहुंचने पर आसफ़ुद्दौला असदख़ां ने उसे नज़रबन्द कर दिया। इस प्रकार विजय प्राप्तकर ता० १५ ज़िलहिज (माघ वदि २ = ई० स० १७१३ ता० २ जनवरी) को फ़र्रुख़सियर ने दरबार किया, जिसमें अब्दुल्लाख़ां की मारफ़त हाज़िर होकर तूरानी सरदारों ने नज़रें पेश कीं। फिर अब्दुल्लाख़ां को कई उमरावों के साथ दिल्ली का बन्दोबस्त करने के लिए भेजकर एक सप्ताह बाद फ़र्रुख़सियर ने स्वयं भी उधर प्रस्थान किया। हि० स० ११२५ ता० १४ मुहर्रम (माघ सुदि १५ = ता० ३० जनवरी) को दिल्ली के पास बारहपुले में पहुंचकर उसने अब्दुल्लाख़ां को "क़ुतुबुल्मुल्क" का ख़िताब तथा सात हज़ार ज़ात सात हज़ार सवार का मनसब देकर अपना वज़ीर-आज़म और हुसेनअलीख़ां को "इमामुल्मुल्क" का ख़िताब तथा सात

बादशाह का सैयद बन्धुओं से विरोध होना

ही उसने सैयद अब्दुल्लाखां की मर्ज़ी के खिलाफ़ लोगों को ओहदे, मनसब आदि देना शुरू कर दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि बादशाह और वज़ीर के दिलों में फ़र्क़ आने लगा। खुशामदी लोगों का बादशाह पर प्रभाव बढ़ने से इस विरोध में वृद्धि ही होती गई[1]।

श्रावणादि वि० सं० १७६६ (चैत्रादि १७७० = ई० स० १७१३) में महाराजा-द्वारा बुलवाये जाने पर जूनिया के ठाकुर सुजानसिंह के पुत्र कर्णसिंह और जुझारसिंह[2] जोधपुर गये, जहां उनके पिता के

महाराजा का जूनिया के कर्णसिंह तथा जुझारसिंह को मरवाना

वैर[3] में उन्हें महाराजा के पक्ष के राठोड़ जैतसिंह सूरसिंहोत (मेड़तिया, बोरूंदा का), राठोड़ दौलतसिंह जुझारसिंहोत (मेड़तिया, कोसाणा का), राठोड़ पृथ्वीसिंह दुलेराजोत (मेड़तिया, राहण का) आदि ने ज्येष्ठ सुदि १ (ता० १४ मई) को चूक कर मार डाला[4]।

इसके बाद उसी वर्ष (वि० सं० १७७०) भाद्रपद सुदि ५ (ता० २४ अगस्त) को महाराजा ने अपने आदमियों को भेजकर दिल्ली में नागोर के

---

(१) वीरविनोद; भाग २, पृ० ११३५।

(२) इनके वंश में क्रमशः मेहरूं और पीसांगण के ठिकाने हैं। जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार जैतारण का गांव रास इनके पट्टे में था (जि० २, पृ० १००)। "वीरविनोद" से पाया जाता है कि ये बड़े वीर थे और बादशाह की तरफ़ से इन्हें, बदनोर, पुर, मांडल आदि परगने मिले थे, जिसकी वजह से उदयपुरवालों के साथ इनका झगड़ा रहता था (भाग २, पृ० ७५२)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात में वैर का कारण यह दिया है कि अजीतसिंह के राज्य पाने से पूर्व सुजानसिंह (केसरीसिंहोत, जूनिया का स्वामी) ने शाही-सेवा स्वीकार कर ली थी। उसके एवज़ में उसे जागीर में सोजत और सिवाना मिले। उसकी महाराजा के राजपूतों से भी कई लड़ाइयां हुईं (जि० २, पृ० ९७)।

(४) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ९७ तथा १००। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८४१।

मोहकमसिंह को मरवाना

राव इन्द्रसिंह के कुंवर मोहकमसिंह को मरवा डाला। इसपर वादशाह ने इन्द्रसिंह को उसके छोटे कुंवर मोहनसिंह-सहित वुलवाया। महाराजा ने मोहनसिंह को भी मार्ग में दग़ा से मरवा दिया[1]।

इसके वाद ही वादशाह ने जोधपुर पर सेना रवाना की। राजपूतों का उपद्रव पहले—वहादुरशाह के राज्यकाल में—ही वढ़ गया था,

महाराजा पर शाही सेना की चढ़ाई

जिसका समुचित प्रवंध नहीं होता था। उसके मरते ही जोधपुर में नियुक्त शाही अफ़सरों को निकालने और उनके घर नष्ट करने के अतिरिक्त अजीतसिंह ने अपने यहां गो-हत्या और आज़ानका दिया जाना वन्द करवा दिया। साथ ही उसने अजमेर पर भी क़ब्ज़ा कर लिया। फ़र्रुख़सियर

---

(१) वीरविनोद; भाग २, पृ० ८४१। जोधपुर राज्य की ख्यात में इसका विस्तृत विवरण दिया है, जो इस प्रकार है—

"वादशाह फ़र्रुख़सियर के सिंहासनारूढ़ होने पर नागोर के राव इन्द्रसिंह का कुंवर मोहकमसिंह उसके पास दिल्ली गया। वहां रहनेवाले जोधपुर के वकीलों ने लिखा कि वह जोधपुर पाने के लिए प्रयत्नशील है तो महाराजा ने भाटी अमरसिंह केशोदासोत, राठोड़ अमरसिंह नाथावत और उसके भाई मोहकमसिंह (कीटणोद के), राठोड़ कर्णसिंह विजयसिंहोत (थोव का) एवं राठोड़ दुर्जनसिंह सवलसिंहोत जोधा (पाटोदी का) को वीस-पचीस सवारों के साथ उस(मोहकमसिंह)को चूककर मारने के लिए भेजा। वे व्यापारियों के रूप में दिल्ली पहुंचे और जब एक दिन कुंवर (मोहकमसिंह) संध्या-समय किसी नवाव के यहां से मातमपुर्सी करके लौट रहा था, उन्होंने उसे मार्ग में ही मार डाला। इससे प्रसन्न होकर महाराजा ने उनके लौटने पर उन्हें सिरोपाव तथा आभूषण आदि पुरस्कार में दिये। वादशाह ने इसपर राव इन्द्र-सिंह और उसके छोटे कुंवर मोहनसिंह को दिल्ली वुलवाया, जिसपर वे एक-दो हज़ार आदमियों के साथ रवाना हुए। इसकी ख़वर पाकर महाराजा ने राठोड़ दुर्जनसिंह, राठोड़ सूरजमल, राठोड़ शिवसिंह गोपीनाथोत (सरनावड़ा का), राठोड़ मोहकमसिंह और राठोड़ फ़तहसिंह को उनपर चूक करने के लिए भेजा। उन्होंने मार्ग में ही मोहनसिंह को, जब वह सो रहा था, मार डाला, जिससे राव इन्द्रसिंह अकेला ही दिल्ली गया (जि० २, पृ० १००-२)।"

ने अपने राज्यारम्भ में अजीतसिंह के पास इस विषय में लिखा, पर वहां से सन्तोषजनक उत्तर प्राप्त न होने से अन्त में चढ़ाई करने का ही निश्चय हुआ[1]। बादशाह की इच्छा स्वयं युद्ध में सम्मिलित होने की थी, पर स्वास्थ्य ठीक न होने एवं अन्य लोगों के समझाने से उसने अपना विचार स्थगित रक्खा और इस कार्य के लिए सैयद हुसेनअलीख़ां को नियुक्त किया[2]। इस अवसर पर बादशाह ने दुहरी चाल चली। इधर तो उसने अजीतसिंह के विरुद्ध हुसेनअलीख़ां को रवाना किया और उधर अजीतसिंह को गुप्तरूप से फ़रमान भेजकर लिखा कि वह जैसे भी हो हुसेनअलीख़ां को मार डाले[3]। इसके बदले में उसे बहुत कुछ इनाम-इकराम देने का वचन दिया गया। हि० स० ११२५ ता० २६ ज़िल्क़ाद (वि० सं० १७७० पौष सुदि १ = ई० स० १७१३

---

(१) जोनाथन स्कॉट भी चढ़ाई का क़रीब-क़रीब यही कारण देता है (हिस्ट्री ऑव् डेक्कन; जि० २, पृ० १३६)।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि इन्द्रसिंह के दिल्ली पहुंचने के बाद बादशाह ने सैयद हुसेनअलीख़ां की अध्यक्षता में एक बड़ी फ़ौज मारवाड़ पर रवाना की (जि० २, पृ० १०२)। "वीरविनोद" से भी पाया जाता है कि नागोर के मोहकमसिंह और मोहनसिंह के मरवाये जाने से बादशाह अजीतसिंह से बड़ा नाराज़ हुआ और उसने हुसेनअलीख़ां को एक बड़ी फ़ौज के साथ मारवाड़ पर भेजा (भाग २, पृ० ८४१)। टॉड ने भी यही कारण दिया है (राजस्थान; जि० २, पृ० १०२०)।

(२) जोनाथन स्कॉट लिखता है कि बादशाह ने मीर जुमला और उसके साथियों की सलाह से दोनों भाइयों (सैयद बन्धुओं) को अलग करने का यह उपाय स्थिर किया कि उनमें से एक को महाराजा अजीतसिंह को दंड देने के लिए भेज दिया जाय। तदनुसार अमीरुलउमरा (हुसेनअलीख़ां) इस कार्य के लिए रवाना किया गया (हिस्ट्री ऑव् डेक्कन; जि० २, पृ० १३६)। "वीरविनोद" में भी इसका उल्लेख है (भाग २, पृ० ११३५)।

(३) "वीरविनोद" में भी इस आशय के फ़रमान के भेजे जाने का उल्लेख है। उससे यह भी पाया जाता है कि यह फ़रमान महाराजा ने हुसेनअलीख़ां को दिखा दिया (भाग २, पृ० ११३५)।

ता० ७ दिसम्बर) को हुसेनअलीख़ां ने बादशाह से विदा ली। इस चढ़ाई में उसके साथ अन्य सरदारों में सरबुलन्दख़ां, अफ़्रास्याबख़ां, एतक़ादख़ां, दिलदिलेरख़ां, सैफ़ुद्दीनअलीख़ां, नज्मुद्दीनअलीख़ां, राजा गोपालसिंह भदोरिया तथा रूपनगर का राजा राजबहादुर (राजसिंह) आदि थे। हि० स० ११२५ ता० १५ ज़िल्हिज (माघ वदि ३ = ता० २३ दिसम्बर) को अजीतसिंह के पास से एक प्रार्थनापत्र आया, पर वह सन्तोषजनक न होने से चढ़ाई का कार्य पूर्ववत् जारी रहा। फिर उस(महाराजा)का मुन्शी रघुनाथ एक हज़ार सवारों के साथ सन्धि की शर्तें तय करने के निमित्त सराय सहल में आया[1]। हुसेनअलीख़ां उस समय सराय अल्लावर्दीख़ां में था। उसने महाराजा अजीतसिंह-द्वारा रक्खी गई शर्तें अस्वीकार कर दीं। इसके बाद मुसलमान सेना पुनः आगे बढ़ी। उस समय राठोड़ सेना के सांभर से बारह कोस दक्षिण में होने की ख़बर थी और ऐसी अफ़वाह थी कि अवसर पाते ही वे मुसलमान फ़ौज पर आक्रमण करेंगे, परन्तु दिल्ली से अजमेर तक कोई घटना न घटी। सांभर के परगने से गुज़रते समय शाही सेना ने सनमगढ़ का नाश किया। अजमेर पहुंचने पर शाही सेना कुछ दिनों तक आनासागर के किनारे पड़ी रही, जहां से महाराजा के पास क़ासिद भेजे गये। फिर वहां से प्रस्थान कर मुसलमान सेना पुष्कर होती हुई मेड़ता पहुंची, जहां एक थाना नियत कर दो हज़ार सेना रख दी गई। अजीतसिंह इसके पूर्व ही वहां से हट गया था। अजमेर और मेड़ता के बीच जोधपुर और जयपुर राज्यों के गांव मिले-जुले थे। शाही सेना का आगमन सुनते ही जोधपुर के गांवों के निवासी गांव खाली कर चले गये। इसपर खाली गावों को नष्ट करने और लूटने की आज्ञा दी गई। यह देखकर जोधपुर के गांवों के निवासी अपने पड़ोसी जयपुर के गांववालों की मारफ़त बात ठहराकर अपने-अपने गांवों में लौट आये। मेड़ता के मार्ग में ही हुसेनअलीख़ां

(१) लालराम-कृत "तुहफ़तुल्हिन्द" में इस घटना का समय हि० स० ११२६ ता० १४ मुहर्रम (वि० सं० १७७० फाल्गुन वदि १ = ई० स० १७१४ ता० २० जनवरी) दिया है।

महाराजा अजीतसिंह ने अपने पुत्र अभयसिंह को उसके साथ कर दिया[1]।

कुंवर अभयसिंह का बादशाह के पास जाना

ता० ५ रज्जब (द्वितीय आषाढ़ सुदि ६ = ता० ७ जुलाई) को हुसेनअलीखां बादशाह के पास पहुंचा, जिसने उसके साथ गये हुए सरदारों को इनाम दिये। इसके तीसरे दिन अभयसिंह बादशाह के रूबरू पेश किया गया[2]। बादशाह ने सैयद अहमद जिलानी को सोरठ (सौराष्ट्र) से हटाकर अभयसिंह को वहां का हाकिम नियत किया। इसपर वह स्वयं तो दरबार में ही रहा, परन्तु उसने सोरठ का प्रबंध करने के लिए अपने कार्यकर्ता फ़तहसिंह कायस्थ को भेज दिया[3]। कुछ मास तक वहां ठहरकर श्रावणादि वि० सं० १७७१ (चैत्रादि १७७२ = ई० स० १७१५) के आषाढ़ मास में अभयसिंह बादशाह की आज्ञा प्राप्तकर जोधपुर लौटा। बादशाह ने उसके दरबार से प्रस्थान करते समय उसे सिरोपाव एवं आभूषण आदि दिये[4]।

सन्धि हो जाने और अभयसिंह के भंडारी खींवसी के साथ दिल्ली चले जाने पर वि० सं० १७७१ (ई० स० १७१४) के आश्विन मास में

महाराजा का अहमदाबाद जाना

महाराजा जोधपुर से सिवाणा होता हुआ वाड़मेर-कोटड़ा गया। वहां से उसने खींवसी को लिखा कि गुजरात, मारोठ, पर्वतसर, वावल और केकड़ी

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार भंडारी खींवसी भी अभयसिंह के साथ दिल्ली गया (जि० २, पृ० १०४)।

(२) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० २६०।

(३) कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी; जि० १, भाग १, पृ० २९७। मीरात-इ-अहमदी; भाग २, पृ० १।

(४) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १०४। टॉड लिखता है कि अभयसिंह के दरबार में उपस्थित होने पर उसे पांच हज़ारी मंसब मिला। उसके कथनानुसार पीछे से महाराजा भी दिल्ली गया, जहां से थोड़े समय बाद वह अपने मनोरथ सफल कर लौटा (राजस्थान; जि० २, पृ० १०२१)। करणीदान-कृत "सूरजप्रकाश" में भी अभयसिंह को पांच हज़ारी मंसब मिलना लिखा है (पृ० १२८)।

यदि मेरे मनसब में लिखे जायेंगे तो मैं अपनी कुंवरी का डोला भेजूंगा। तदनुसार बादशाह से अर्ज़ कर उसी वर्ष मार्गशीर्ष मास में खींवसी ने उक्त स्थानों का फ़रमान उसके नाम करा दिया, जिसके प्राप्त होने पर महाराजा ने जोधपुर जाकर पहले भंडारी विजयराज खेतसिंहोत को रवाना किया और फिर वि० सं० १७७२ में वह स्वयं भी अहमदाबाद चला गया[1]।

वि० सं० १७७२ (ई० स० १७१५) के आश्विन मास में महाराजा की पुत्री इन्द्रकुंवरी का विवाह बादशाह फ़र्रुख़सियर से करने के लिए

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १०४। कैम्पबेल-कृत "गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी" (जि० १, भाग १, पृ० २९६) तथा "वीरविनोद" (भाग २, पृ० ८४१) में भी महाराजा अजीतसिंह को अहमदाबाद की सूबेदारी मिलना और वि० सं० १७७२ में उसका वहां जाना लिखा है। "मीरात-इ-अहमदी" से पाया जाता है कि महाराजा को छ हज़ार ज़ात छ हज़ार सवार का मनसब और अहमदाबाद की सूबेदारी मिलने पर उसने भंडारी विजयराज को वहां का नायब बनाकर भेजा, जो वहां हि० स० ११२७ ता० ७ शाबान (वि० सं० १७७१ श्रावण सुदि ८ = ई० स० १७१४ ता० ७ अगस्त) को पहुंचा। महाराजा खुद हि० स० ११२८ ता० १० रबीउल्-अव्वल (वि० सं० १७७२ फाल्गुन सुदि १२ = ई० स० १७१६ ता० २३ फ़रवरी) गुरुवार को शाही बाग़ (अहमदाबाद के निकट) में पहुंचा और अच्छा मुहूर्त देखकर भद्र (अहमदाबाद में) के क़िले में उसने प्रवेश किया। वहां के नौकरों, जागीरदारों, दारोग़ाओं और तहवीलदारों को उसने पूर्ववत् बहाल रक्खा (मिर्ज़ा मुहम्मद हसन कृत; जि० २, पृ० १-२)। टॉड लिखता है कि वि० सं० १७७२ में अजीतसिंह अपने पुत्र अभयसिंह के साथ अपनी हुकूमत (अहमदाबाद की सूबेदारी) पर गया। सर्वप्रथम वह जालोर गया, जहां वह वर्षा ऋतु पर्यन्त रहा। अनन्तर उसने मेवासा (सिरोही इलाक़े में) पर आक्रमण कर नीमज (? नींबज, सिरोही राज्य) के देवड़ों से दंड लिया। पालनपुर से फ़ीरोज़ख़ां उससे मिलने के लिए आया। थराद के राव ने एक लाख रुपया उसे दिया। इसी प्रकार खम्भातवालों और कोली सरदार चेमकर्ण को भी महाराजा ने अधीन बनाया। फिर चांपावत शक्ता एवं भंडारी विजय, जो एक वर्ष पूर्व उक्त सूबे का प्रबन्ध करने के लिये भेजे गये थे, पाटण से आकर उसके शामिल हो गये (राजस्थान, जि० २, पृ० १०२२)।

इन्द्रकुंवरी का डोला दिल्ली जाना

उस (कुंवरी) का "डोला" दिल्ली भेजा गया। उसके साथ भंडारी खींवसी सपरिवार गया[1]। इर्विन लिखता है—"हि० स० ११२७ ता० १२ जमादिउल्‌अव्वल (वि० सं० १७७२ वैशाख सुदि १३ = ई० स० १७१५ ता० ५ मई) को बादशाह का मामा शाइस्ताखां जोधपुर से दुलहिन को लाने के लिए भेजा गया। वह उसे साथ लेकर ता० २५ रमज़ान (आश्विन वदि १२ = ता० १३ सितम्बर) को दिल्ली पहुंचा, जहां दुलहिन के स्वागत के लिए महल के आंगन में तम्बू खड़े किये गये थे। अनन्तर वह अमीरुल्‌उमरा (सैयद हुसेनअलीखां) के मकान में भेजी गई तथा विवाह के इन्तज़ाम का कार्य कुतुबुल्‌मुल्क (सैयद अब्दुल्लाखां) के सुपुर्द किया गया[2]।"

बादशाह की बीमारी

उन्हीं दिनों विवाह से पूर्व बादशाह सख़्त बीमार पड़ा। जब उसके दरबारी हकीम उसे अच्छा करने में समर्थ न हुए, तो लाचारी की हालत में उसने ईस्ट इंडिया कम्पनी के दूत-दल के साथ आये हुए डॉक्टर सर्जन हैमिल्टन से अपना इलाज कराना मंजूर किया। उसने चीरा लगाकर उसे पुनः नीरोग कर दिया। चीरा लगाने के समय ऐसी अफ़वाह उड़ी कि बादशाह हैमिल्टन के हाथों मर गया। इस अफ़वाह से जनता इतनी क्रुद्ध हुई कि लोगों ने जाकर उस मकान को घेर लिया, जहां दूत-दल ठहरा हुआ था और उनको मारने की धमकी दी। लोगों को सन्तोष उसी समय हुआ, जब बादशाह ने स्वयं महल की खिड़की पर आकर लोगों को आश्वासन दिया कि हैमिल्टन की योग्य चिकित्सा के कारण ही मुझे नया जीवन प्राप्त हुआ है। इसपर लोग अंग्रेज़ों को आदर की दृष्टि से देखने लगे। बादशाह हैमिल्टन की

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १०४-५। मुरारीदास-कृत "तवारीख़-इ-मारवाड़" में भी इसका उल्लेख है।

(२) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ३०४। इस वर्णन के लिखने में इर्विन ने मिर्ज़ा मुहम्मद-लिखित "तज़किरा अथवा इबरतनामा" और कामवरख़ां-लिखित "तज़किरातुस्सलातीन-इ-चग़ातिया" का आश्रय लिया है।

सेवा से बड़ा प्रसन्न हुआ और उसने उसका पूर्ण सम्मान करने के साथ ही उससे कहा कि जो तुम्हारी इच्छा हो मांग लो। हैमिल्टन ने अपने लिए कुछ भी न मांगकर ईस्ट इंडिया कम्पनी की व्यापारिक सुविधा के लिए कुछ मांगें पेश कीं, जो बादशाह ने उसी समय स्वीकार कर लीं[1]। दूत-दल के लौटते समय बादशाह ने हैमिल्टन से शाही सेवा स्वीकार करने की ख़्वाहिश प्रकट की, जिसे उसने उस समय अस्वीकार कर दिया; परन्तु कलकत्ते का प्रबंध कर उसने लौटने का वायदा किया। उस समय बादशाह ने उसे उपहार में जो वस्तुएं दीं उनमें उसके चीर-फाड़ के कुल औज़ारों के सुवर्ण-निर्मित नमूने भी थे। बंगाल में लौटने के कुछ ही समय बाद हैमिल्टन की मृत्यु हो गई[2]।

---

(१) "वीरविनोद" में लिखा है कि उस नेक शख़्स (हैमिल्टन) ने अपने लिए कुछ भी न मांगकर ईस्ट इंडिया कम्पनी के फ़ायदे के लिए निम्नलिखित दो मांगें पेश कीं—

(१) कम्पनी के लिए बंगाल में ३८ गांव ख़रीदने की इजाज़त।

(२) जो माल कलकत्ते के प्रेसिडेन्ट के दस्तख़त से रवाना हो उसके महसूल की माफ़ी।

बादशाह ने ये दोनों बातें क़बूल कर लीं, लेकिन बंगाल के सूबेदार ने ज़मींदारों को मना कर दिया, जिससे ज़मीन तो कम्पनी को न मिल सकी, परन्तु महसूल माफ़ हो गया (भाग १, पृ० ८१)

(२) जोनाथन स्कॉट; हिस्ट्री ऑव् डेक्कन; जि० २, पृ० १३९ और उसका टिप्पण।

जोनाथन स्कॉट आगे चलकर लिखता है कि इस घटना का पता मुझे मि० हेस्टिंग्स से लगा, जिसने मुझसे कहा कि जब मैं भारतवर्ष में प्रथम बार आया उस समय यहां ऐसे व्यक्ति विद्यमान थे, जिन्होंने ये घटनायें आंखों देखी थीं। साथ ही हैमिल्टन के कलकत्ते के स्मारक स्तंभ पर भी इनका उल्लेख था।

बादशाह विवाह से पूर्व सख़्त बीमार पड़ा था, जिस वजह से इन्द्रकुंवरी के दिल्ली में पहुंच जाने पर भी विवाह में विलम्ब हुआ ऐसा इर्विन-कृत "लेटर मुग़ल्स" में भी लिखा है तथा उससे यह भी पाया जाता है कि उसका इलाज दूत-दल के साथ आये हुए सर्जन विलियम हैमिल्टन ने किया। ई० स० १७१५ ता० ३ दिसम्बर

रोग-मुक्त होने के वाद पौष मास[1] में महाराजा अजीतसिंह की पुत्री इन्द्रकुंवरी का विवाह वादशाह के साथ हुआ। विवाह के समय वादशाह ने हिन्दू रीति के अनुसार तोरण-वन्दन किया और भंडारी खींवसी की पत्नी ने उसकी आरती कर केसर का तिलक किया एवं मोतियों के अक्षत लगाये तथा उसकी नाक खींची। इससे वादशाह वड़ा खुश हुआ और उसने पुरोहित अखैराज, वारहट केसरीसिंह तथा भंडारी खींवसी को सिरोपाव तथा अन्य पुरस्कार दिये[2]।

वादशाह के साथ इन्द्रकुंवरी का विवाह होना

जोनाथन स्कॉट इस विवाह के प्रसंग में लिखता है—"दुलहिन की तरफ़ के सारे कार्य अमीरुल्उमरा ने किये और शादी ऐसी शानोशौक़त और धूमधाम से हुई, जैसी हिन्दुस्तान के राजाओं के यहां पहले कभी नहीं देखी गई थी। शाही जलूस में शानदार झंडे नज़र आते थे। नगर की रोशनी सितारों की रोशनी को मात करती थी। छोटे-वड़े सभी ने इस विवाह के जलसों में भाग लिया और सव आनन्द से भरे नज़र आते थे। वादशाह अमीरुल्उमरा के महलों में गया, जहां शादी की रस्म अदा होने के अनन्तर वह राजकुमारी को शाही शानो-शौक़त और वाजे-गाजे के साथ, आनन्द से चिल्लाते हुए जन-समूह के वीच से अपने महल में ले गया[3]।"

(वि० सं० १७७२ पौष वदि ४) को अच्छे होने के वाद वादशाह ने पहले पहल स्नान किया और ता० १० दिसम्वर को उसने हैमिल्टन को मूल्यवान उपहार दिये (जि० १, पृ० ३०५-६)।

(१) "वीरविनोद" में पौष वदि ८ (ता० ७ दिसम्वर) को फ़र्रुखसियर के साथ इन्द्रकुंवरवाई का विवाह होना लिखा है (जि० २, पृ० ८४१)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १०४-५। "वंशभास्कर" में स्वयं महाराजा का दिल्ली जाकर अपनी पुत्री का वादशाह से विवाह करना लिखा है (चतुर्थ खंड, पृ० ३०५०)।

(३) हिस्ट्री ऑव् डेक्कन; जि० २, पृ० १३६।

इस घटना का वर्णन जोनाथन स्कॉट ने इरादतख़ां की ऐतिहासिक पुस्तक

नागोर का मनसब कुंवर अभयसिंह के नाम होने की सूचना मिलने पर महाराजा ने मेड़ता के हाकिम भंडारी प्रेमसी और जोधपुर के हाकिम भंडारी अनूपसिंह के पास आज्ञा भेजी कि वे वहां जाकर अधिकार कर लें। इसपर श्रावणादि वि० सं० १७७२ (चैत्रादि १७७३) ज्येष्ठ सुदि १३ (ई० स० १७१६ ता० २३ मई) को रवाना होकर सोजत की सेना के साथ जोधपुर का हाकिम आषाढ वदि १३ (ता० ६ जून) को गांव नाराधणा में पहुंचा। नागोर से राव इन्द्रसिंह की फ़ौज ने जाकर उसका मुक़ाबला किया, पर तीन पहर तक घमासान लड़ाई होने के बाद

महाराजा का नागोर पर क़ब्ज़ा करना

"तारीख़-इ-इरादतख़ां" से दिया है। इरादतख़ां बादशाह फर्रुख़सियर के समय विद्यमान था, जिसके समय का हाल उसने अपनी पुस्तक में दिया है। पहले इस पुस्तक का अंग्रेज़ी अनुवाद जोनाथन स्कॉट ने पुस्तकाकार प्रकाशित किया था। पीछे से स्वलिखित "हिस्ट्री ऑव् डेक्कन" की दूसरी जिल्द प्रकाशित करते समय उसने उसे भी उसमें शामिल कर दिया।

इर्विन इस विवाह के सम्बन्ध में लिखता है—"बादशाह की तरफ़ से उसकी पत्नी के लिए उपहारों का प्रबन्ध उस (बादशाह) की माता ने किया था, जो हि० स० ११२७ ता० १४ ज़िलहिज (वि० सं० १७७२ पौष वदि २ = ई० स० १७१५ ता० १ दिसम्बर) को उसके पास भेजे गये। ता० २१ ज़िलहिज (पौष वदि ८ = ता० ७ दिसम्बर) को सारे दीवाने आम, जिलाउख़ाना (महल का आंगन), सड़कों आदि पर रोशनी का बहुत सुन्दर प्रबन्ध किया गया। रात्रि को नौ बजे, भंडारी खींवसी-द्वारा लाई हुई पोशाक पहनकर बादशाह बड़े समारोह के साथ अमीरुल्उमरा के मकान पर गया। इस अवसर पर जो कृत्य हुए उनमें हिन्दू एवं मुसलमानी रीति रिवाजों का सम्मिश्रण पाया जाता था। राजपूतों ने अपने यहां का रिवाज बताकर मुसलमानों को गुलाबजल में घोली हुई अफ़ीम पीने पर मजबूर किया, जिसपर उनमें से बहुतों ने उसे पिया भी। इस अवसर पर एक सोने की अद्भुत तश्तरी देखने में आई, जो पहले कभी देखी नहीं गई थी। उसके पांच ख़ानों में से चार में क्रमशः हीरे, लाल, पन्ने तथा पुखराज और मध्यवाले ख़ाने में बड़े-बड़े मूल्यवान मोती रक्खे थे। विवाह का जशन मनाने में विलम्ब होने का कारण बादशाह की बीमारी थी (लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ३०४-५)।" एक स्थल पर इर्विन लिखता है कि बादशाह ने अपनी पत्नी के लिए "मेहर" में एक लाख मोहरें लिखवाईं (वही; जि० १, पृ० ३०४)।

उसे हारकर नागोर भागना पड़ा। तब भंडारी प्रेमसी कूचकर आषाढ सुदि १५ (ता० २३ जून) को नागोर पहुंचा। अनन्तर वहां मोर्चे लगने पर राठोड़ भीम रणछोड़दासोत की मारफ़त बात ठहराकर राव इन्द्रसिंह ने नागोर खाली कर दिया और स्वयं दिल्ली चला गया। उसी वर्ष श्रावण वदि ७ (ता० ३० जून) को जोधपुर का नागोर पर अधिकार हो गया, जिसकी सूचना अहमदाबाद में महाराजा के पास पहुंचने पर उसने सरदारों के लिए सिरोपाव आदि भेजे और भंडारी प्रेमसी को वहां का हाकिम नियत किया तथा मेड़ता में उसके स्थान में भंडारी गिरधरदास नियुक्त हुआ[1]।

महाराजा की द्वारिका-यात्रा

सोरठ की ओर के राजाओं आदि की तरफ़ शाही खिराज की बहुत रक़म बाक़ी रह गई थी। उसे वसूल करने के लिए अहमदाबाद से महाराजा अजीतसिंह रवाना हुआ। नवानगर-(जामनगर) पहुंचकर जब उसने वहां के स्वामी से पेशकशी की अधिक रक़म मांगी तो दोनों में कई रोज़ तक तोप-बन्दूक की लड़ाई हुई। तदनन्तर वहां का मामला तयकर मार्ग में दूसरे राजाओं से खिराज वसूल करता हुआ, महाराजा द्वारिका गया[2]। द्वारिका में रहते समय आलणियावास के ठाकुर कल्याणसिंह तथा रीयां के ठाकुर सरदार-सिंह की मृत्यु हो गई। यही नहीं द्वारिका की इस यात्रा में महाराजा के साथ के ३००० आदमी और बेशुमार ऊंट, घोड़े एवं बैल मर गये[3], जिसका

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १०५।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मद हसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० ११। कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी; जि० १, खंड १, पृ० ३७०।

जोधपुर राज्य की ख्यात में महाराजा का चढ़ाई कर बड़नगर (? जामनगर) के जाड़ेचा स्वामी से पांच लाख रुपया पेशकशी ठहराना लिखा है (जि० २, पृ० १०६)।

(३) और सबै आणंद हुओ एक बात नह चाह।
कील्याणो राजण तणो मुवो द्वारिका मांह ॥ १ ॥

कारण सम्भवतः किसी बीमारी का फैल जाना था।

महाराजा अजीतसिंह के गुजरात में नियत किये हुए नायब आदि, उधर के लोगों पर बहुत ज़ुल्म करते थे, जिसकी शिकायत बादशाह के पास होने पर महाराजा वहां की सूबेदारी से अलग कर दिया गया[1] और उसके स्थान में शम्सामुद्दौला ख़ानदौरां (नसरतजंग बहादुर) सूबेदार नियत हुआ[2]। उसने महाराजा के नायबों को निकाल दिया, जिसपर महाराजा

महाराजा का गुजरात की सूबेदारी से हटाया जाना

सिरदारै साथे हुंती नारी परतग दोय।
ठाली भूली रह गई साथ गई नह कोय॥ ४७॥
ईते मरगे राह में मांणस तीन हजार।
ऊंट, तुरंगम वैलरी कर कुण सकै सुमार॥ ६३॥

अजीतविलास।

"अजीतविलास" नामक हस्तलिखित ग्रन्थ में राव सीहा से लगाकर अजीतसिंह तक का कुछ-कुछ वृत्तान्त मिलता है। उक्त पुस्तक के मध्यभाग में स्वयं महाराजा अजीतसिंह के बनाये हुए बहुतसे दोहे अङ्कित हैं, जिनमें से २१२ में स्वामीभक्त सरदारों का उल्लेख और ११७ में उसकी द्वारिका-यात्रा का वर्णन है। "अजीतविलास" के कर्ता का परिचय नहीं मिलता।

जोधपुर राज्य की ख्यात में भी महाराजा की द्वारिका-यात्रा का उल्लेख है, पर उसमें उसका वापस जोधपुर जाना लिखा है (जि० २, पृ० १०६), जो ठीक नहीं है। महाराजा द्वारिका से वापस अपने सूबे अहमदाबाद गया था (कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑव् दि बांबे प्रेसिडेंसी; ज़ि० १, खंड १, पृ० ३००)।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि सैय्यदों से मेल रखने के कारण वि० सं० १७७४ में बादशाह ने महाराजा को अहमदाबाद के सूबे से अलग कर दिया। उससे यह भी पाया जाता है कि अहमदाबाद का सूबा महाराजा से द्वारिका-यात्रा के पूर्व ही हटा लिया गया था। महाराजा के लिखने पर खींवसी ने उसे ४ मास के लिये और बहाल करवाया (जि० २, पृ० १०६)।

(२) इससे कुछ समय पूर्व ही कुंवर अभयसिंह सोरठ की फ़ौजदारी से अलग किया जाकर, उसके स्थान में हैदरकुलीख़ां नियुक्त हुआ (मिर्ज़ा मुहम्मद हसन; मिरात-इ-अहमदी; ज़ि० २, पृ० ८)।

को बहुत बुरा लगा और वह लड़ाई करने के इरादे से साबरमती के निकट शाही बाग़ में ठहरा; परन्तु नाहरखां के, जो महाराजा का कार्यकर्ता और उसकी तरफ़ से वकील का काम करता था, समझाने से हि० स० ११२६ तारीख़ ११ रज्जब (वि० सं० १७७४ द्वितीय ज्येष्ठ सुदि १३ = ई० स० १७१७ ता० १० जून) को उसने जोधपुर की तरफ़ कूच किया[1] ।

बीकानेर के महाराजा सुजानसिंह को पकड़ने का असफल प्रयत्न

उन दिनों बीकानेर का महाराजा सुजानसिंह केवल थोड़े से साथियों-सहित नाल में ठहरा हुआ था। महाराजा अजीतसिंह ने बीकानेर पर अधिकार करने के हेतु उस(सुजानसिंह)पर घात करने का यह उपयुक्त अवसर समझा और उसके पुत्र अभयसिंह के जन्म के उपलक्ष्य में अपने आदमियों-द्वारा वस्त्राभूषण भिजवाये। गुप्तरूप से उसने अपने आदमियों को यह आज्ञा दी कि यदि अवसर मिले तो महाराजा सुजानसिंह को पकड़ लाना नहीं तो भेंट का सामान देकर चले आना। उसके इस उद्देश्य का पता सुजानसिंह को किसी प्रकार चल गया, जिससे वह नाल का परित्याग कर गढ़ में चला गया। तब जोधपुर के आदमी भेंट का सामान देकर जोधपुर लौट गये। इस प्रकार अजीतसिंह

---

(१) मिर्ज़ा मुहम्मद हसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० ११-१२ । कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑव् दि बांबे प्रेसिडेंसी; जि० १, खंड १, पृ० २९९-३०० । वीरविनोद; भाग २, पृ० ८४१ ।

"मुन्तख़बुल्लुबाब" में लिखा है कि अजीतसिंह ने, जो अहमदाबाद तथा अजमेर का सूबेदार था, अपनी अमलदारी में गोहत्या बन्द करवादी, अतएव आगरे के सूबेदार सआदतख़ां को उसे दंड देने के लिए जाने की आज्ञा दी गई, पर वह न जा सका। तब शम्सुद्दौला कमरुद्दीनख़ां बहादुर और हैदरकुलीख़ां भेजे गये, परन्तु वे भी कई कारणों से बीच से ही लौट गये। इसी बीच यह ख़बर आई कि निज़ामुल्मुल्क ने अजीतसिंह की अच्छी तंबीह कर दी है। कुछ ही समय बाद महाराजा ने अहमदाबाद से हटना स्वीकार कर माफ़ी मांग ली, लेकिन अजमेर का सूबा बहाल रखने के लिए उसने प्रार्थना की (इलियट; हिस्ट्री ऑव् इण्डिया; जि० ७, पृ० ५१७)।

का आन्तरिक उद्देश्य सफल न हो सका[1]।

उधर इसी बीच बादशाह और उसके मंत्री सैयदों के बीच का विरोध क्रमशः बढ़ता ही गया, यहां तक कि बादशाह ने सैयद बन्धुओं का ख़ात्मा करने का निश्चय किया। कुतबुल्मुल्क को जब उसकी ऐसी मंशा का पता लगा तो वह सावधान रहने लगा। उन्हीं दिनों बादशाह ने एक नये व्यक्ति को अपना प्रीतिपात्र बनाया, जिसका नाम मुहम्मद मुराद[2] था। वह पहले तीसरे दर्जे का "मीर तुज़क" था, पर क्रमशः अपनी वाक्पटुता एवं चाटुकारी से वह बादशाह का पूर्ण विश्वास-भाजन बन गया। उसने बादशाह को विश्वास दिलाया कि मैं सैयदों का अन्त कर दूंगा। बादशाह उससे इतना खुश रहा कि उसने धीरे-धीरे बढ़ाते हुए उसका मनसब ७००० ज़ात ७००० सवार[3] का कर दिया और जम्मू की फ़ौजदारी के अतिरिक्त उसे अनेक मूल्यवान् वस्तुएं उपहार में दीं। साथ ही उसने उसे दिल्ली, आगरे आदि के सूबों में अच्छी से अच्छी जागीरें प्रदान कीं[4]। उसकी सलाह के अनुसार बादशाह ने सरबुलंदख़ां को बुलाकर सैयदों का प्रबन्ध करने के लिए नियत किया और उसे ७००० ज़ात ६००० सवार

बादशाह-द्वारा बुलाये जाने पर महाराजा का दिल्ली जाना

---

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६०-१। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ४७।

(२) मुहम्मद मुराद का जन्म काश्मीर में हुआ था और वह उसी स्थान का रहनेवाला था, जहां की फर्रुख़सियर की माता थी, जिसकी मारफ़त वह बादशाह की ख़िदमत में हाज़िर हुआ था।

(३) उस समय मनसब नाम मात्र का रह गया था और हर किसी को बड़ा से बड़ा मनसब दे दिया जाता था, पर उसकी तनख़्वाह में मनसब के अनुसार कोई जागीर नहीं मिलती थी। राजाओं की जागीरें ही उनके मनसब में गिनी जाती थीं, चाहे मनसब बड़ा हो चाहे छोटा।

(४) जोनाथन स्कॉट-कृत "हिस्ट्री ऑव् डेक्कन" (जि० २, पृ० १२३-४) में भी इसका उल्लेख है।

का मनसब एवं "मुबारिज़ुलमुल्क नामवरजंग" का ख़िताब दिया। वह बुद्धिमान एवं वीर व्यक्ति था, इससे लोगों की यह धारणा होने लगी कि अब सैयद-बन्धुओं का अन्त अवश्य हो जायगा। क़ुतुबुल्मुल्क यह देख अधिक सावधानी से रहने लगा। वह दरबार में जाता तो अपने साथ तीन-चार हज़ार सेना ले जाता। सरबुलन्दख़ां को यह आशा थी कि सैयद बन्धुओं का ख़ातमा होते ही वज़ीर का पद उसे मिल जायगा, पर जब उसने स्वयं बादशाह के मुख से सुना कि वज़ीर का पद मुहम्मद मुराद के लिए सुरक्षित है तो वह इस कार्य से हट गया, लेकिन ऊपर से उसने अपना यह भाव प्रकट न होने दिया। हि० स० ११३० ता० १६ शव्वाल (वि० सं० १७७५ आश्विन वदि ५ = ई० स० १७१८ ता० ४ सितम्बर) को जब उसकी नियुक्ति आगरा में की गई तो वह इस्तीफ़ा देकर फ़रीदाबाद से ही लौट गया।

इसी बीच ईद के दिन हि० स० ११३० ता० १ शव्वाल (वि० सं० १७७५ भाद्रपद सुदि ३ = ई० स० १७१८ ता० १७ अगस्त) को ईदगाह में क़ुतुबुल्मुल्क का अन्त करने का निश्चय हुआ, परन्तु इसकी ख़बर क़ुतुबुल्-मुल्क को अपने जासूसों-द्वारा लग गई, जिससे बादशाह का इरादा पूरा न हो सका। ऐसी दशा में बादशाह की सारी आशाएं अजीतसिंह में केन्द्रित हो गईं, क्योंकि वह उसका श्वसुर लगता था, जिससे उसे उससे मदद की पूरी उम्मेद थी। उसको बुलाने के लिए नाहरख़ां भेजा गया, पर उस-(नाहरख़ां)की सहानुभूति सैयद बन्धुओं की तरफ़ होने से उसने अजीत-सिंह को भी सैयदों के पक्ष में कर लिया[1]। यद्यपि मन से अजीतसिंह सैयद बन्धुओं का सहायक हो गया तथापि ऊपर से दिखाने के लिए उसने जोधपुर से दिल्ली की तरफ़ प्रस्थान किया। बादशाह यह सुनकर बड़ा

(१) "वीरविनोद" में अजीतसिंह को बुलाने की घटना पहले और ईदगाह में क़ुतुबुल्मुल्क को मरवाने का षड्यन्त्र रचने की घटना बाद में दी है। उससे यह भी पाया जाता है कि महाराजा को बादशाह ने अहमदाबाद से बुलवाया था (भाग २; पृ० ११३८)।

खुश हुआ। हि० स० ११३० ता० ४ शव्वाल (वि० सं० १७७५ भाद्रपद सुदि ६ = ई० स० १७१८ ता० २० अगस्त) को महाराजा के मल्हनशाह के बाग के निकट पहुंचने की खबर पाकर बादशाह ने एतकादखां (मुहम्मद मुराद) के हाथ उसके पास एक कटार भेजी और शम्सामुद्दौला को उसे लाने के लिए भेजा। साथ ही उसके द्वारा बादशाह ने यह भी कहलाया कि मेरी मेहरबानी तुमपर इतनी ज्यादा है कि तुम क़ुतुबुल्मुल्क के बिना ही दरबार में उपस्थित हो सकते हो; पर उसने ऐसा करना स्वीकार न किया, क्योंकि उसे बादशाह पर भरोसा न था। पहले तो यह जानकर बादशाह को बड़ा गुस्सा आया, लेकिन और कोई रास्ता न होने से उसने क़ुतुबुल्-मुल्क को भी दूसरे दिन दरबार में उपस्थित होने के लिए कहला दिया। ता० ५ शव्वाल (भाद्रपद सुदि ७ = ता० २१ अगस्त) को एतकादखां और शम्सामुद्दौला महाराजा को लेकर दरबार में चले, परन्तु बाहरी फाटक पर पहुंचकर उसने तबतक आगे बढ़ने से इनकार कर दिया जबतक कि उसे क़ुतुबुल्मुल्क के मौजूद होने का निश्चित पता न लग जाय। कई बार विश्वास दिलाये जाने पर वह वहां से आगे चला, लेकिन "दीवाने आम" के फाटक पर वह फिर रुक गया। वहां भी उसकी दिल-जमई होने पर वह आगे बढ़ा, परन्तु "दीवानेख़ास" के प्रवेश-द्वार पर वह फिर रुक गया, जहां क़ुतुबुल्मुल्क आकर उससे मिला। उसके साथ वह बादशाह के समक्ष उपस्थित हुआ। बादशाह उस(अजीतसिंह)से प्रसन्न तो न था, पर उसने प्रथानुसार ख़िलअत तथा अन्य उपहार की चीज़ें उसे दीं। इसके बाद बीस दिन तक महाराजा अथवा क़ुतुबुल्मुल्क दोनों में से कोई भी दरबार में उपस्थित न हुआ, पर भीतर ही भीतर उनमें बात-चीत जारी रही। इस अवधि में बादशाह और उसके वज़ीर के बीच का मनमुटाव प्रकट हो गया था, अतएव बादशाह ने प्रकटरूप से इस संबंध में कार्यवाही की, लेकिन जैसे ही उसे ज्ञात हुआ कि महाराजा तथा क़ुतुबुल्मुल्क एक हैं, तो उसने उनसे मेल करना चाहा। पहले एतकादखां और फिर अफ़ज़लखां सदरुस्सदर ने इसके लिए प्रयत्न किया, पर कोई

परिणाम न निकला। अनन्तर इस कार्य को अंजाम देने के लिए सरबुलंदखां और शम्सामुद्दौला नियत किये गये, जिन्हें कुछ सफलता मिली। वे महाराजा एवं कुतुबुल्मुल्क को राज़ी कर दरबार में ले गये, जहां कुतुबुल्मुल्क के प्रार्थना करने पर बीकानेर का राज्य महाराजा के नाम कर दिया गया, लेकिन भीतर ही भीतर बादशाह अपने वज़ीर का अन्त करने के उद्योग में लगा रहा। सब तरफ़ से निराश होकर बादशाह ने मुरादाबाद के फ़ौजदार निज़ामुल्मुल्क को दरबार में बुलवाया, पर बादशाह की कमज़ोर हालत देखकर वह भी भीतर ही भीतर उससे खिंच गया। दिन पर दिन बीतने पर भी जब उसने कोई कार्यवाही न की तो बादशाह ने उससे नाराज़ होकर उसकी जागीर मुरादाबाद मुहम्मद मुराद के नाम कर दी। फिर मीरजुमला को, जो पहले सरहिन्द और फिर लाहोर में हटा दिया गया था, बादशाह ने दरबार में आने को लिखा, परन्तु पीछे से सैयदों के भय से उसने उसे मार्ग से ही वापस जाने को लिखा। मीर जुमला ने इसपर कोई ध्यान न दिया और वह दिल्ली पहुंचकर सीधा कुतुबुल्मुल्क के मकान पर गया। इससे चिढ़कर बादशाह ने मीरजुमला का मनसब उतार दिया और उसे कुतुबुल्मुल्क के मकान से हटाने के लिए आदमी भेजे। ऐसी परिस्थिति में कुतुबुल्मुल्क ने अपने भाई हुसेनअलीखां के पास, जो दक्षिण में था, पत्र लिखकर उसे शीघ्र दिल्ली आने को लिखा। जब इसकी सूचना बादशाह को मिली तो उसने शम्सामुद्दौला को भेजकर वज़ीर का भय मिटाना चाहा[1]।

हि० स० ११३० ता० ६ ज़िल्काद (वि० सं० १७७५ आश्विन सुदि ८ = ई० स० १७१८ ता० २० सितम्बर) को बादशाह शिकार के लिए गया। वहां से लौटते हुए उसने अपनी मंशा कुतुबुल्मुल्क के यहां जाने की प्रकट की। उधर से गुज़रते समय अजीतसिंह के उसकी ताज़ीम के

अजीतसिंह को क़त्ल करने का प्रयत्न

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ३३९-४३। जोधपुर राज्य की ख्यात में इन घटनाओं का उल्लेख नहीं है।

लिए बाहर निकलते ही उसका खात्मा करने का बादशाह ने षड्यंत्र रचा था, पर इसका उसे किसी प्रकार पता चल गया, जिससे वह क़ुतुबुल्मुल्क के पास जा रहा। यह ख़बर मिलने पर बादशाह ने अपना इरादा बदल दिया और क़ुतुबुल्मुल्क के यहां ठहरे बिना ही वह चला गया। इसके बाद ही फिर कई बार क़ुतुबुल्मुल्क को मारने के षड्-यंत्र रचे गये, पर उनमें सफलता नहीं मिली। इसी समय के आस-पास बादशाह को पूरा यक़ीन हो गया कि उसके मन्सूबों का पता सैयदों को उसकी धाय[1] तथा एतमादख़ां नाम के एक ख़ोजे की मारफ़त मिल जाता है, जिससे वे समय पर सचेत हो जाते हैं[2]।

हुसेनअलीख़ां का दक्षिण से रवाना होना

भाई का पत्र मिलने पर ज़िल्हिज मास के प्रारंभ में हुसेनअलीख़ां ने दक्षिण से प्रस्थान किया। अपने दरबार में लौटने का कारण उसने यह प्रकट किया कि मैं औरंगज़ेब के पुत्र शाहज़ादे अकबर के पुत्र मुईनुद्दीन को अपने हमराह ला रहा हूं। उसने मरहटों की भी सहायता प्राप्त कर ली, जो ग्यारह-बारह हज़ार की संख्या में पेशवा बालाजी विश्वनाथ, खांडेराव, सन्ताजी आदि की अध्यक्षता में उसके साथ थे। कुल मिलाकर उसके पास लगभग २५००० सवार और तोपखाना वगैरह था। इस ख़बर से बादशाह को बड़ी चिन्ता हुई और उसने हुसेनअलीख़ां को वापस लौटाने के लिए इख़लासख़ां को भेजा, जिसका उसपर बड़ा प्रभाव माना जाता था; परन्तु उसने उल्टा बादशाह के विरुद्ध उस(हुसेनअलीख़ां)के कान भरे। इससे हुसेनअलीख़ां दिल्ली पहुंचने के लिए अधिक व्यग्र हो उठा। तब बादशाह

(१) "वीरविनोद" में मा लिखा है (भाग २, पृ० ११३६)।

(२) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ३५३-६। "वीरविनोद" में भी इसका उल्लेख है (भाग २; पृ० ११३६)। जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि सैयदों से मिल जाने के कारण बादशाह महाराजा से नाराज़ हो गया और उसने उसे मार डालने के लिए कई बार जाल बिछाये, परन्तु सफलता नहीं मिली। पहली बार तो उसपर चूक होने की ख़बर स्वयं उसकी पुत्री (फर्रुख़सियर की पत्नी) ने उसे दी थी (जि० २, पृ० १०८-६)।

ने घबराकर कुतुबुल्मुल्क से मेल करना चाहा। तदनुसार हि० स० ११३१ ता० २६ मुहर्रम (वि० सं० १७७५ पौष वदि १३ = ई० स० १७१८ ता० ८ दिसम्बर) को बादशाह स्वयं कुतुबुल्मुल्क के यहां गया और उसने अपनी पगड़ी उसके सिर पर पहनाई[1]।

ता० २७ मुहर्रम हि० स० ११३१ (पौष वदि १४ = ता० ९ दिसम्बर) को कुतुबुल्मुल्क बादशाह के पास उपस्थित हुआ। उसी दिन शाम को बीका (?टीका) हज़ारी तथा अजीतसिंह एवं चूड़ा (?चूड़ामन) जाट के आदमियों के बीच झगड़ा हो गया। तीन घंटे की लड़ाई में दोनों तरफ़ के कितने ही आदमी मारे गये। अन्त में ग़ाज़ीउद्दीनखां ग़ालिबजंग, सैयद कुलीखां कुल तथा सैयद नज्मुद्दीनअलीखां के बीच में पड़ने से लड़ाई बन्द होकर मेल स्थापित हो गया। बादशाह ने भी ज़फ़रखां को भेजकर महाराजा से इस घटना के लिए माफ़ी मांग ली[2]।

बादशाह का अजीतसिंह से माफी मांगना

अनन्तर बादशाह ने कुतुबुल्मुल्क के कहने के अनुसार ता० १ सफ़र (पौष सुदि ३ = ता० १३ दिसम्बर) को उसके साथ महाराजा अजीतसिंह के डेरे पर जाकर उसे उपहार आदि दिये। इसके दूसरे दिन अजीतसिंह तथा कुतुबुल्मुल्क साथ-साथ शाही दरबार में गये। ता० १६ सफ़र (माघ वदि २ = ता० २८ दिसम्बर) को बादशाह ने अजीतसिंह को "राजेश्वर" का ख़िताब और अहमदाबाद गुजरात का सूबा दिया। साथ ही उसने अपने दूसरे विरोधियों एवं कृपापात्रों को भी पुरस्कार आदि देकर सन्तुष्ट करने का प्रयत्न किया[3]।

अजीतसिंह को "राजेश्वर" का ख़िताब मिलना

---

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ३५७-३६३।

(२) वही; जि० १, पृ० ३६३।

(३) वही; जि० १, पृ० ३६३-६५। जोधपुर राज्य की ख्यात में महाराजा के बादशाह के पास पहुंचने पर उसे "राजराजेश्वर" के ख़िताब के अतिरिक्त सिरोपाव, हाथी, घोड़ा, माही मरातिब, आभूषण आदि और एक करोड़ दाम मिलना लिखा है।

सरबुलंदखां की नियुक्ति बादशाह ने काबुल के सूबे में कर दी थी, परन्तु इससे भी उसको सन्तोष न हुआ। तब ता० ६ रबीउल्अव्वल (माघ सुदि १०=ई० स० १७१६ ता० २० जनवरी) को बादशाह की आज्ञानुसार कुतुबुल्मुल्क उसको सन्तोष देने के लिए उससे जाकर मिला। इसके तीन दिन बाद महाराजा अजीतसिंह तथा महाराव भीमसिंह (कोटा) भी उसके पास गये[1]।

अजीतसिंह का सरबुलंदखां से मिलना

इस बीच दिन-दिन हुसेनअलीखां दिल्ली के निकट पहुंचता जा रहा था। मार्ग में ही उसे बादशाह और अपने भाई (कुतुबुल्मुल्क) के बीच मेल हो जाने की सूचना मिली। इसपर उसने ऊपरी मन से खुशी ज़ाहिर की, परन्तु दिल्ली की ओर बढ़ना जारी रक्खा। बादशाह ने उसको खुश करने की ग़रज़ से हाकिमों में फेर-फार कर सैयदों के पक्ष के लोगों को नियत किया। ता० २१ रबीउल्अव्वल (फाल्गुन वदि ८ = ई० स० १७१६ ता० १ फ़रवरी) को ज़फ़रखां एवं इसके एक-दो रोज़ बाद हुसेनअलीखां के निकट पहुंचने पर एतकादखां उसका स्वागत करने के लिए भेजे गये। ता० २७ रबीउल्अव्वल (फाल्गुन वदि १४ = ता० ७ फ़रवरी) को हुसेनअलीखां जमुना के किनारे नगर से चार मील उत्तर वज़ीराबाद में पहुंचा। इसके तीन दिन बाद कुतुबुल्मुल्क, महाराजा अजीतसिंह एवं महाराव भीमसिंह उससे जाकर मिले और उससे बात-चीत कर उन्होंने अपना कार्यक्रम निश्चित किया। उस समय भी बादशाह ने एतकादखां की सलाह से सैयदों की कई मांगें स्वीकृत कर उनको

हुसेनअलीखां का दिल्ली पहुंचना तथा महाराजा जयसिंह का वहां से अपने देश भेजा जाना

उससे पाया जाता है कि बादशाह उससे बड़े सम्मानपूर्वक खड़ा होकर मिला और उसे उसने अपनी दाहिनी ओर खड़ा किया (जि० २, पृ० १०८)। टॉड ने इन सबके अतिरिक्त उसे सात हज़ारी मंसब मिलना भी लिखा है (राजस्थान; जि० २, पृ० १०२३)।

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ३७०।

मंशा के मुताबिक़ व्यक्ति महलों में नियत कर दिये। इस बीच बादशाह फ़र्रुखसियर के सच्चे सहायक जयसिंह ने कई बार उससे कहा—"विपक्षियों (सैयदों आदि) का इरादा मेल करने का नहीं दिखाई देता, अतएव समय पर सैयदों पर आक्रमण करना ठीक होगा। इससे लोग आपसे आ मिलेंगे। मेरे पास २०००० अनुभवी तथा विश्वासपात्र सवार हैं और मैं प्राण रहते आपके लिए लड़ने को प्रस्तुत हूं। दुश्मन हमारे सामने अधिक समय तक टिक न सकेंगे और यदि भाग्य हमारे प्रतिकूल हुआ, तो भी हम कायरता के कलंक से बच जावेंगे।" उसके इस कथन का बादशाह पर कोई असर न हुआ, क्योंकि वह जैसे बने वैसे सैयदों को अपने पक्ष में करना चाहता था। फलस्वरूप कुछ ही समय बाद उसने कुतुबुल्मुल्क के दबाव डालने पर अपने हाथ से पत्र लिखकर राजा जयसिंह तथा राव बुधसिंह (बूंदी का) को अपने-अपने देश जाने की आज्ञा दी। जयसिंह ने इसका विरोध किया, पर कोई सुनवाई नहीं हुई। तब और कोई रास्ता न देख ता० ३ रबीउल्आख़िर (फाल्गुन सुदि ४ = ता० १२ फ़रवरी) को उसने दिल्ली से प्रस्थान किया[1]।

सैयदों और महाराजा अजीतसिंह का बादशाह से मुलाक़ात करना

ता० ४ रबीउल्आख़िर (फाल्गुन सुदि ५ = ता० १३ फ़रवरी) को कुतुबुल्मुल्क एवं हुसेनअलीख़ां का दरबार में जाना तय हुआ था। उस दिन बड़े सवेरे ही महल में जाकर कुतुबुल्मुल्क और अजीतसिंह ने शाही रक्षकों को हटाकर उनके स्थान में अपने आदमी नियुक्त कर दिये। अनन्तर मरहटों की सेना तथा अपनी फ़ौज के साथ वे महल में गये। मुलाक़ात के समय अन्य लोग वहां से हटा दिये गये और वे बादशाह के साथ अकेले रह गये। उस समय हुसेनअलीख़ां ने कई मांगें उसके सामने पेश कीं, जिन सब को ही बादशाह ने स्वीकार कर लिया। तीन घंटे रात जाने तक बात-चीत करने के बाद वे अपने-अपने स्थानों को लौटे। इस घटना से

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ३६८-७१।

लोगों के मन में विश्वास हो गया कि अब बादशाह और सैयद बन्धुओं के बीच स्थायी मेल स्थापित हो गया, परन्तु बात इसके विपरीत निकली[1]।

बादशाह फर्रुख़सियर का कैद किया जाना

हि० स० ११३१ ता० ८ रबीउल्‌आख़िर (फाल्गुन सुदि ९ = ता० १७ फ़रवरी) को क़ुतुबुल्मुल्क ने नज्मुद्दीनअलीख़ां, ग़ैरतख़ां, महाराजा अजीतसिंह, महाराव भीमसिंह हाड़ा, राजा गजसिंह नरवरी तथा कई दूसरे व्यक्तियों के साथ शाही महल में प्रवेशकर वहां प्रत्येक स्थान में अपने आदमियों को नियुक्त कर दिया। इस अवसर पर उपर्युक्त हिन्दू राजाओं ने दीवानी और खानसामां के कमरों पर क़ब्ज़ा किया। उसी दिन दो पहर के समय तीस-चालीस हज़ार सवारों के साथ हुसेनअलीख़ां ने भी नगर में प्रवेश किया। उसने यह प्रकट किया कि वह शाहज़ादे को अपने साथ ला रहा है। मरहटे सवार महल के फाटकों तथा आस-पास के मार्गों में तैयार थे। दोपहर के बाद क़ुतुबुल्मुल्क बादशाह के पास उपस्थित हुआ। उससे बातों ही बातों में बादशाह की कहा-सुनी हो गई। पीछे से उस (बादशाह) ने क्रोधावेश में एतक़ादख़ां को निकाल दिया। परिस्थिति गंभीर होने पर बादशाह ने अजीतसिंह से मदद चाही। उसने उसको लिखा—"महल का जमुना की तरफ़ का पूर्वी भाग रक्षकों से रहित है। यदि हो सके तो उधर अपने कुछ आदमी भेज दो, ताकि मैं यहां से बाहर निकलकर अन्यत्र चला जाऊं।" अजीतसिंह ने इसका उत्तर यही दिया कि अब अवसर नहीं है। कुछ लोगों का ऐसा भी कहना है कि उसने बादशाह का पत्र अब्दुल्लाख़ां के पास भिजवा दिया। ता० ९ रबीउल्‌आख़िर (फाल्गुन सुदि १० = ता० १८ फ़रवरी) को बड़े सवेरे ही नगर में एक बखेड़ा खड़ा हुआ। जिस समय मुहम्मद अमीनख़ां चिन बहादुर तथा ज़करियाख़ां (अब्दुस्समदख़ां का पुत्र) ने अपने दल-बल सहित महल में जाना चाहा तो मार्ग में नियुक्त मरहटे सैनिकों ने उन्हें रोका, जिसपर झगड़ा हो गया और मरहटों के हज़ार-डेढ़ हज़ार

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ३७६-८।

लोगों के मन में विश्वास हो गया कि अब बादशाह और सैयद बन्धुओं के बीच स्थायी मेल स्थापित हो गया, परन्तु बात इसके विपरीत निकली[1]।

हि० स० ११३१ ता० ८ रबीउल्आखिर (फाल्गुन सुदि ६ = ता० १७ फ़रवरी) को क़ुतुबुल्मुल्क ने नज्मुद्दीनअलीखां, ग़ैरतखां, महाराजा अजीतसिंह, महाराव भीमसिंह हाड़ा, राजा गजसिंह नरवरी तथा कई दूसरे व्यक्तियों के साथ शाही महल में प्रवेशकर वहां प्रत्येक स्थान में अपने आदमियों को नियुक्त कर दिया। इस अवसर पर उपर्युक्त हिन्दू राजाओं ने दीवानी और खानसामां के कमरों पर क़ब्ज़ा किया। उसी दिन दो पहर के समय तीस-चालीस हज़ार सवारों के साथ हुसेनअलीखां ने भी नगर में प्रवेश किया। उसने यह प्रकट किया कि वह शाहज़ादे को अपने साथ ला रहा है। मरहटे सवार महल के फाटकों तथा आस-पास के मार्गों में तैयार थे। दोपहर के बाद क़ुतुबुल्मुल्क बादशाह के पास उपस्थित हुआ। उससे बातों ही बातों में बादशाह की कहा-सुनी हो गई। पीछे से उस (बादशाह) ने क्रोधावेश में एतक़ादखां को निकाल दिया। परिस्थिति गंभीर होने पर बादशाह ने अजीतसिंह से मदद चाही। उसने उसको लिखा—"महल का जमुना की तरफ़ का पूर्वी भाग रक्षकों से रहित है। यदि हो सके तो उधर अपने कुछ आदमी भेज दो, ताकि मैं यहां से बाहर निकलकर अन्यत्र चला जाऊं।" अजीतसिंह ने इसका उत्तर यही दिया कि अब अवसर नहीं है। कुछ लोगों का ऐसा भी कहना है कि उसने बादशाह का पत्र अब्दुल्लाखां के पास भिजवा दिया। ता० ६ रबीउल्आखिर (फाल्गुन सुदि १० = ता० १८ फ़रवरी) को बड़े सवेरे ही नगर में एक बखेड़ा खड़ा हुआ। जिस समय मुहम्मद अमीनखां चिन बहादुर तथा ज़करियाखां (अब्दुस्समदखां का पुत्र) ने अपने दल-बल सहित महल में जाना चाहा तो मार्ग में नियुक्त मरहटे सैनिकों ने उन्हें रोका, जिसपर झगड़ा हो गया और मरहटों के हज़ार-डेढ़ हज़ार

बादशाह फर्रुखसियर का क़ैद किया जाना

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ३७६-८।

सैनिक तथा कई अफ़सर मारे गये[1]। इसी बीच इस अफ़वाह ने ज़ोर पकड़ा कि अजीतसिंह ने बादशाह की रक्षा करने की दृष्टि से क़ुतुबुल्मुल्क को मार डाला। इससे बादशाह के पक्ष के लोगों का उत्साह बढ़ा और जगह-जगह उन्होंने विरोधियों का मुक़ाबला करने की तैयारी की। क़ुतुबुल्मुल्क के मारे जाने की अफ़वाह से सैयदों के पक्षपाती बड़े हतोत्साह हुए, परन्तु पीछे से वज़ीर के जीवित रहने की खबर से उनमें पुनः आशा का संचार हुआ और उन्होंने थोड़ी लड़ाई के बाद ही बादशाह के पक्ष के लोगों को बिखेर दिया[2]।

फ़र्रुख़सियर उस समय ज़नानख़ाने में छिप रहा था। क़ुतुबुल्मुल्क ने उसे बाहर आकर नित्य के अनुसार दरबार करने के लिये कई बार कहलाया, परन्तु उसने ऐसा करना स्वीकार न किया। हुसेनअलीख़ां-द्वारा कई बार लिखे जाने पर क़ुतुबुल्मुल्क आदि ने शीघ्रता से मशविरा कर बादशाह औरंगज़ेब के पौत्र शाहज़ादे बेदारदिल (बेदारबख़्त का पुत्र) को गद्दी पर बैठाने का निश्चय किया। क़ुतुबुल्मुल्क ने क़ादिरदादख़ां तथा अजीतसिंह के भंडारियों को शाहज़ादे को लाने को भेजा। बेगमों ने उनके वहां पहुंचने पर यह समझा कि बादशाह को गिरफ़्तार कर सैयदों ने शाहज़ादों का अन्त करने के लिए आदमी भेजे हैं, अतएव उन्होंने द्वार बन्दकर दिये और उन्हें भीतर न घुसने दिया। तब एक हाथ नवाब तथा दूसरा अजीतसिंह पकड़े हुए रफ़ीउश्शान के पुत्र रफ़ीउद्दरजात को बाहर लाये और उन्होंने उसे तख़्त पर बैठाया। इस कार्य के बाद बादशाह की तलाश हुई। नज्मुद्दीनअलीख़ां, राजा रत्नचंद, राजा बख़्तमल और

---

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ३७८-८४। जोनाथन स्कॉट लिखता है कि झगड़ा ख़ानदौरां के आदमियों और मरहटों के बीच हुआ था। उसी समय मुहम्मद अमीनख़ां को, जो अमीरुलउमरा से मिलने जा रहा था, आते देख, उसे दुश्मन समझकर मरहटे भाग खड़े हुए और उनके लगभग १५०० आदमी एवं तीन अफ़सर मारे गये (हिस्ट्री ऑव् डेकन; जि० २, पृ० १६१)।

(२) जोनाथन स्कॉट; हिस्ट्री ऑव् डेकन, जि० २, पृ० १६१-२।

जलालखां का पुत्र दीनदारखां कतिपय अफ़ग़ानों के साथ ज़नानख़ाने से गद्दी से उतारे हुए बादशाह (फ़र्रुख़सियर) को क़ैद कर लाने के लिए भेजे गये। सब मिलाकर लगभग चारसौ व्यक्ति शाही महलों की ओर वेग से बढ़े। मार्ग में कुछ औरतों ने शस्त्र लेकर उन्हें रोकना चाहा, पर इसका कोई परिणाम न निकला और उनमें से कई घायल हुईं तथा मारी गईं। अंत में बादशाह एक छोटे कमरे में मिला। उसने स्वयं लड़ने की निरर्थक कोशिश की तथा उसकी पुत्रियों, माता आदि ने भी उसकी रक्षा करने का विफल प्रयत्न किया; परन्तु उसका कोई परिणाम न निकला और सैयदों के मनुष्यों ने घेरकर उसे क़ैद कर लिया तथा वे अपमान के साथ घसीटते हुए उसे दीवानेख़ास में कुतुबुल्मुल्क के समक्ष ले गये। वहां उसकी दोनों आंखें फोड़ दी गईं और वह क़ैद कर त्रिपोलिया दरवाज़े के ऊपर रक्खा गया, जहां साधारण अपराधी रक्खे जाते थे। साथ ही शाही ज़नानख़ाने एवं भंडार अथवा वहां के आदमियों के पास जो भी सामान—सोना, चांदी, आभूषण, रत्न, तांबे के बर्तन, वस्त्र आदि—था वह सब लूट लिया गया[1]। यही नहीं दासियों

(१) बांकीदास लिखता है कि उस समय अजीतसिंह भी हुर्रमख़ाना लूटकर, रत्नों की २१ परात अपने डेरे पर ले गया (ऐतिहासिक बातें; संख्या ५६)।

कविया करणीदान-कृत "सूरजप्रकाश" में अजीतसिंह का भी लूट के माल में हिस्सा बंटाना लिखा है—

इक साह तख़त उथाप, इक साह तखतह आप ॥
कथ कहे जिम कमधेस, द्रब लीध बांट दलेस ॥
रजतेस कनक रखत्त, तै चमर छत्र तखत्त ॥
असि गयंद लीध अपार, हद माल मुलक जुहार ॥

[पृ० १२२, हमारे संग्रह की हस्तलिखित प्रति से]

अर्थात् एक शाह को तख़्त से उतार तथा दूसरे को तख़्त पर बैठाकर कमधेस (अजीतसिंह) ने दिल्लीपति का द्रव्य बांट लिया और चांदी, सोने का सामान, चंवर, छत्र, तख़्त, हाथी, घोड़े, मुल्क आदि अधिकार में कर लिये।

और अन्य स्त्रियों तक पर अधिकार कर लिया गया[1]। महाराजा अजीत-सिंह के प्रार्थना करने पर उसकी पुत्री बादशाह की बेगम का सामान नहीं लूटा गया[2]।

हिन्दुओं पर से जज़िया हटाया जाना

रफीउद्दरजात ने प्रथम दरबार के दिन महाराजा अजीतसिंह, राजा भीमसिंह (कोटा) तथा राजा रत्नचंद[3] के कहने पर हिन्दुओं पर लगनेवाला जज़िया नाम का कर हटा दिया[4]।

फ़र्रुख़सियर का मारा जाना

क़ैद की हालत में फ़र्रुख़सियर को अनेक प्रकार के कष्ट दिये गये। फ़र्रुख़सियर ने, जिसे आंखें फोड़ी जाने पर भी कुछ-कुछ दिखाई पड़ता था, सैयदों से कई बार कहलाया कि यदि तुम मुझे मुक्त कर तख़्त पर बैठा दो तो मैं सारा शासन-भार तुम्हें सौंपने के लिए तैयार हूं। उधर से निराश होकर उसने अपने एक जेलर अब्दुल्लाख़ां अफ़ग़ान से मदद चाही। उससे उसने कहा कि यदि तुम मुझे सकुशल राजा जयसिंह के पास पहुंचा दो तो मैं तुम्हें सात

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १; पृ० ३८६-९०। जोधपुर राज्य की ख्यात (जि० २, पृ० १०८-१०), वीरविनोद (भाग २, पृ० ११४०-१) तथा टॉड-कृत "राजस्थान" (जि० २, पृ० १०२३-४) में भी इन घटनाओं का कहीं-कहीं कुछ भिन्नता के साथ मूल रूप में ऐसा ही वर्णन मिलता है।

(२) जोनाथन स्कॉट; हिस्ट्री ऑव् डेक्कन; जि० २, पृ० १६४।

(३) यह जात का महाजन और इलाहाबाद के सूबेदार सैयद अब्दुल्लाख़ां का दीवान था। फर्रुख़सियर ने तख़्तनशीन होने पर अपने अन्य मददगारों के साथ इसे भी "राजा" का ख़िताब और दो हज़ारी मनसब दिया। सैयदों का प्रीतिपात्र होने के कारण इसका ख़ूब दबदबा रहा। पीछे से मुहम्मदशाह के समय जब सैयदों का सितारा अस्त हुआ, उस समय यह भी शाही सेना के साथ लड़कर क़ैद हुआ और बाद में मार डाला गया।

(४) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४०४। मुतख़बुलुबाब—इलियट; हिस्ट्री आव् इंडिया; जि० ७, पृ० ४७९। जोनाथन स्कॉट; हिस्ट्री आव् डेक्कन; जि० २, पृ० १६४।

लिखकर उसके मकान के दरवाज़े पर लगा देते थे। एक बार उसके पूजा के पात्रों पर गौ की हड्डियां फेंकी गईं। इसपर वज़ीर ने दो-तीन अपराधी काश्मीरियों को पकड़ लिया और उन्हें गधों पर बैठाकर नगर में घुमाया। प्रतिदिन के अपमान से बचने के लिए महाराजा ने शीघ्र दिल्ली का परित्याग करने की इच्छा प्रकट की। नक़द धन और रत्न आदि उपहार में मिलने के बाद ता० १७ जमादिउल्आख़िर (ज्येष्ठ वदि ४ = ता० २६ अप्रेल) को उसे अपने सूबे गुजरात जाने की आज्ञा हुई, पर कुछ ही समय बाद कई ऐसे कारण उत्पन्न हो गये, जिनसे उसका जाना रुक गया[1]।

रफ़ीउद्दरजात की मृत्यु और रफ़ीउद्दौला का बादशाह होना

नवीन बादशाह रफ़ीउद्दरजात का स्वास्थ्य प्रारंभ से ही ख़राब था। उसे दिक की बीमारी थी और वह अफ़ीम का इस्तेमाल भी करता था। गद्दी पर बैठने के बाद से उसकी हालत दिन-दिन गिरने लगी। जब उसे यह आभास हुआ कि मैं अब कुछ दिनों का ही मेहमान हूं, तो उसने सैयदों से अपने बड़े भाई रफ़ीउद्दौला को बादशाह बनाने की ख़्वाहिश प्रकट की। तदनुसार ता० १७ रज्जब (आषाढ वदि ४ = ता० २६ मई) को रफ़ीउद्दरजात गद्दी से हटाया जाकर दो दिन बाद रफ़ीउद्दौला दिल्ली के तख़्त पर बैठाया गया। इसके सात दिन बाद ता० २४ रज्जब (आषाढ वदि ११ = ता० २ जून) को रफ़ीउद्दरजात का देहांत हो गया[2]।

बादशाह रफ़ीउद्दरजात के जीते जी ही सैयदों के मित्रसेन[3] आदि कुछ विरोधियों ने शाहज़ादे अकबर (औरंगज़ेब का पुत्र) के पुत्र निकोसियर

---

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४०८।

(२) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४१७-८।

(३) यह जात का नागर ब्राह्मण और निकोसियर का सेवक था। हिकमत जानने के कारण इसका शाही सैनिकों पर बहुत-कुछ प्रभाव था। निकोसियर ने बादशाह घोषित किये जाने पर इसे सात हज़ारी मनसब दिया।

व्यवहार क़ायम कर उन्हें बड़े-बड़े मंसब और ओहदे देकर अपना सहायक बनाया। इसका परिणाम अच्छा हुआ एवं भारत में मुग़ल बादशाहत की जड़ जम गई। उसके पीछे जहांगीर और शाहजहां ने भी उसकी निर्धारित नीति का अनुसरण किया, जिससे राज्य की बड़ी उन्नति हुई। शाहजहां के उत्तराधिकारी औरंगज़ेब ने धर्म के प्रश्न को प्रधानता देकर अपने पूर्वजों से उलटा आचरण करना शुरू किया। उसकी कट्टर धार्मिकता और हिन्दू-विरोधिनी नीति के कारण मुग़ल-साम्राज्य के स्तम्भस्वरूप हिन्दुओं का उससे विरोध पैदा हो गया तथा देश भर में जगह-जगह विप्लव होने लगे। फलस्वरूप अकबर की डाली हुई मुग़ल-साम्राज्य की नींव औरंगज़ेब के जीते जी ही हिल गई और उसको इस बात का आभास हो गया कि मेरे पीछे बादशाहत की दशा अवश्य बिगड़ जायगी। हुआ भी ऐसा ही। उसके बाद शाहआलम (बहादुरशाह) ने केवल पांच वर्ष तक राज्य किया। फिर उसका पुत्र मुहम्मद मुईज़ुद्दीन (जहांदारशाह) तख़्त पर बैठा, परन्तु नौ मास बाद ही उसके भतीजे फ़र्रुख़सियर ने उसे मरवा डाला। फ़र्रुख़सियर के समय से ही शाही सत्ता का लोप सा हो गया। उसके समय राज्य-कार्य उसके वज़ीर सैयद-बन्धु चलाते थे और वह नाम मात्र का बादशाह रह गया था। उसकी मृत्यु बड़ी दुःखद हुई। यह औरंगज़ेब की ही नीति का फल था कि उसकी मृत्यु के बारह वर्ष बाद ही मुग़ल साम्राज्य की ऐसी स्थिति हो गई कि मुग़ल वंश का शासक-(फ़र्रुख़सियर) अपने नौकरों के हाथों अपमानित होकर बुरी तरह से मारा गया। उसके पीछे मुग़ल साम्राज्य की दशा क्रमशः बिगड़ती ही गई और बादशाह सिर्फ़ नाम के ही रह गये।

बादशाह फ़र्रुख़सियर को क़ैद करने और मरवाने में महाराजा अजीतसिंह की भी सलाह होने से जनता उसके भी विरुद्ध थी। जब भी वह बाज़ार से गुज़रता तो लोग उसे "दामाद-कुश" (जमाई की हत्या करनेवाला) कहकर संबोधन करते थे। कोई-कोई अपमान-सूचक शब्द काग़ज़ों पर

महाराजा का दिल्ली छोड़ने का इरादा करना

लिखकर उसके मकान के दरवाज़े पर लगा देते थे। एक बार उसके पूजा के पात्रों पर गौ की हड्डियां फेंकी गईं। इसपर वज़ीर ने दो-तीन अपराधी काश्मीरियों को पकड़ लिया और उन्हें गधों पर बैठाकर नगर में घुमाया। प्रतिदिन के अपमान से बचने के लिए महाराजा ने शीघ्र दिल्ली का परित्याग करने की इच्छा प्रकट की। नक़द धन और रत्न आदि उपहार में मिलने के बाद ता० १७ जमादिउल्आख़िर (ज्येष्ठ वदि ४ = ता० २६ अप्रेल) को उसे अपने सूबे गुजरात जाने की आज्ञा हुई, पर कुछ ही समय बाद कई ऐसे कारण उत्पन्न हो गये, जिनसे उसका जाना रुक गया[1]।

नवीन बादशाह रफ़ीउद्दरजात का स्वास्थ्य प्रारंभ से ही ख़राब था। उसे दिक की बीमारी थी और वह अफ़ीम का इस्तेमाल भी करता था। गद्दी पर बैठने के बाद से उसकी हालत दिन-दिन गिरने लगी। जब उसे यह आभास हुआ कि मैं अब कुछ दिनों का ही मेहमान हूं, तो उसने सैयदों से अपने बड़े भाई रफ़ीउद्दौला को बादशाह बनाने की ख़्वाहिश प्रकट की। तदनुसार ता० १७ रज्जब (आषाढ वदि ४ = ता० २६ मई) को रफ़ीउद्दरजात गद्दी से हटाया जाकर दो दिन बाद रफ़ीउद्दौला दिल्ली के तख़्त पर बैठाया गया। इसके सात दिन बाद ता० २४ रज्जब (आषाढ वदि ११ = ता० २ जून) को रफ़ीउद्दरजात का देहांत हो गया[2]।

रफ़ीउद्दरजात की मृत्यु और रफ़ीउद्दौला का बादशाह होना

बादशाह रफ़ीउद्दरजात के जीते जी ही सैयदों के मित्रसेन[3] आदि कुछ विरोधियों ने शाहज़ादे अकबर (औरंगज़ेब का पुत्र) के पुत्र निकोसियर

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४०८।

(२) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४१७-८।

(३) यह जात का नागर ब्राह्मण और निकोसियर का सेवक था। हिकमत जानने के कारण इसका शाही सैनिकों पर बहुत-कुछ प्रभाव था। निकोसियर ने बादशाह घोषित किये जाने पर इसे सात हज़ारी मनसब दिया।

विद्रोही निकोसियर का गिरफ़्तार होना

को क़ैद से निकालकर आगरे में बादशाह घोषित किया और उसके नाम का सिक्का जारी किया। उन्होंने महाराजा जयसिंह, राजा भीमसिंह हाड़ा, चूड़ामन जाट, छबीलेराम नागर[1] आदि को भी उसकी सहायतार्थ खड़ा किया। महाराजा जयसिंह अपने राज्य से कई मंज़िल आगे बढ़ा, पर जब उसने दूसरों को आते न देखा तो वह भी ठहर गया। कुतुबुल्मुल्क निकोसियर से मेल कर लेना ठीक समझता था, पर हुसेनअलीखां ने इसका विरोध कर ता० ६ शाबान (आषाढ सुदि ८ = ता० १४ जून) को आगरे की तरफ़ निकोसियर के विरुद्ध प्रस्थान किया। वहां पहुंच उसने घेरा डालकर मोर्चे लगाये और कुछ ही दिनों के घेरे के बाद निकोसियर आदि को गिरफ़्तार कर आगरे के क़िले की सारी सम्पत्ति पर अधिकार कर लिया[2]।

महाराजा अजीतसिंह की पुत्री का उसको सौंपा जाना

उधर इसी बीच जयसिंह के निकोसियर की सहायतार्थ आंबेर से प्रस्थान करने के समाचार सुनकर बादशाह रफ़ीउद्दौला और कुतुबुल्मुल्क ने स्वयं सेना के साथ उसके विरुद्ध प्रस्थान किया। उस समय अजीतसिंह शाही सेना की हरावल का अफ़सर बनाया गया, परन्तु उसने यह कहकर आगे बढ़ने से इनकार कर दिया कि यदि मैं अपनी पुत्री (फ़र्रुख़सियर की बेगम) को अकेली छोड़कर जाऊंगा तो या तो वह विष खा लेगी अथवा उसकी इज़्ज़त भ्रष्ट होगी। इसपर अब्दुल्लाखां ने महाराजा की पुत्री उसको सौंप दी। फिर हिन्दू मतानुसार उसकी शुद्धि की गई और उसने मुसलमानी पोशाक उतारकर हिन्दू वेष धारण किया। अनन्तर अपनी

---

(१) यह दयाराम नागर का, जो शाहज़ादे अज़ीमुश्शान की सरकार में किसी माली ख़िदमत पर नियत था, भाई और प्रसिद्ध गिरधर बहादुर का चाचा था। दयाराम की मृत्यु होने के बाद यह उसकी जगह पर मुक़र्रर हुआ और क्रमशः उन्नति करता हुआ पहले अकबराबाद और पीछे इलाहाबाद का सूबेदार हो गया। हि० स० ११३१ में इलाहाबाद में इसकी मृत्यु हुई।

(२) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४०८-१६, ४२२-२८।

एक करोड़ से भी अधिक रुपयों की सम्पत्ति के साथ वह जोधपुर भेज दी गई। इससे कट्टर मुसलमानों को बहुत बुरा लगा और क़ाज़ी ने यह फ़तवा दिया कि धर्मपरिवर्तन किये हुए व्यक्ति को वापस देना मुसलमानी मज़हब के ख़िलाफ़ है। अब्दुल्लाख़ां अजीतसिंह को खुश रखना चाहता था, जिससे उसने इन सब बातों पर ध्यान न दिया[1]। महाराजा की पुत्री के निर्वाह के लिए अट्ठारह हज़ार रुपया[2] मासिक देना तय हुआ था, जिसके अहमदाबाद के सूबे के शाही खज़ाने से देते रहने के सम्बन्ध में परवाना जारी हुआ[3]।

ता० १६ रमज़ान (भाद्रपद वदि ६ = ता० २६ जुलाई) को बादशाह मय अपनी फ़ौज के करहका और कोरी के बीच में पहुंचा। वहां से

महाराजा का मथुरा जाना

महाराजा अजीतसिंह को मथुरा-यात्रा के लिए जाने की आज्ञा दी गई। ता० ११ शव्वाल (भाद्रपद सुदि १४ = ता० १७ अगस्त) को बादशाह के डेरे ओल नामक स्थान में होने पर मथुरा से लौटकर अजीतसिंह पुनः उसके शरीक हो गया[4]।

रफ़ीउद्दौला का स्वास्थ्य भी अपने भाई की तरह ही ख़राब रहता था और वह अफ़ीम भी बहुत खाया करता था। दिल्ली से प्रस्थान करते समय

रफ़ीउद्दौला की मृत्यु तथा मुहम्मदशाह का बादशाह होना

ही उसकी तबियत ज़्यादा ख़राब हो गई थी। फ़तहपुर सीकरी के पास विद्यापुर में पहुंचने पर ता० ४ अथवा ५ ज़िल्काद (प्रथम आश्विन सुदि ६, ७ = ता० ८, ९ सितम्बर) को उसकी मृत्यु हो गई, पर यह बात तबतक

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४२८-९।

(२) "वीरविनोद" में बारह हज़ार रुपया वार्षिक लिखा है (भाग २, पृ० ११४२)।

(३) मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० २६-७। जोधपुर राज्य की ख्यात में भी फ़र्रुख़सियर की मृत्यु के बाद उसकी बेग़म अजीतसिंह की पुत्री का अपनी कुल सम्पत्ति लेकर जोधपुर जाना और पीछे से विष का प्याला पीकर मरना लिखा है (जि० २, पृ० ११०)।

(४) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४२८-३०। इलियट; हिस्ट्री ऑव् इंडिया; जि० ७, पृ० ४८३।

छिपाई गई जब तक कि दिल्ली से दूसरा शाहज़ादा शाही सेना में न पहुंच गया। बादशाह की मृत्यु के लगभग एक सप्ताह पूर्व ही ग़ुलामअलीख़ां (सैयदों का भानजा) तथा कई दूसरे अमीर इस कार्य के लिए दिल्ली भेजे गये थे। ता० ११ ज़िल्काद (प्रथम आश्विन सुदि १३ = ता० १५ सितंबर) को वे शाहज़ादे रोशनअख़्तर[1] को लेकर विद्यापुर पहुंचे। तब बादशाह की मृत्यु की घोषणा करने और उसका शव दिल्ली रवाना करने के अनन्तर ता० १५ ज़िल्काद (द्वितीय आश्विन वदि २ = ता० १६ सितंबर) को रोशनअख़्तर "अबुल्फ़तह नासिरुद्दीन मुहम्मदशाह बादशाह ग़ाज़ी" का विरुद धारण कर दिल्ली के तख़्त का स्वामी बना[2]।

महाराजा अजीतसिंह को अजमेर तथा अहमदाबाद की सूबेदारी मिलना

अजीतसिंह ने बीच में पड़कर जयसिंह और बादशाह के बीच सुलह कराने का प्रयत्न किया, पर जब इसमें बहुत समय लगने लगा, तो उस (जयसिंह) पर आतंक स्थापित करने के लिए बादशाह ने अजमेर की तरफ़ प्रस्थान किया। इसी बीच अजीतसिंह ने अपने देश जाने को आज्ञा चाही। साथ ही उसने यह भी कहा कि मैं मार्ग में जयसिंह से भी मिलता जाऊंगा। इसपर उसे देश जाने की आज्ञा दी गई। ता० २ ज़िलहिज (द्वितीय आश्विन सुदि ३ = ता० ५ अक्टोबर) को बादशाह के पास ख़बर आई कि जयसिंह इसके तीन दिन पूर्व आंबेर लौट गया। अनन्तर संधि हो जाने पर जयसिंह को सोरठ (दक्षिणी काठियावाड़) तथा अजीतसिंह को अहमदाबाद एवं अजमेर की सूबेदारी प्रदान की गई[3]।

---

(१) बादशाह बहादुरशाह के चतुर्थ पुत्र जहांशाह खुजिस्तअख़्तर का पुत्र।

(२) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० १, पृ० ४३०-३२ तथा जि० २, पृ० १-२।

(३) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० २, पृ० ३-४।

"मुंतख़बुल्लुबाब" में रफ़ीउद्दौला के वृत्तान्त में ही लिखा है कि जब जयसिंह को किसी तरफ़ से सहायता न मिली तो उसने अपने वकील भेजकर माफ़ी मांग ली। उस समय यह निर्णय हुआ कि सोरठ की फ़ौजदारी जयसिंह को दी जाय तथा अजमेर, अहमदाबाद और जोधपुर पूर्ववत् अजीतसिंह के अधिकार में रहें (इलियट्; हिस्ट्री

अहमदाबाद की सूबेदारी मिलने पर महाराजा स्वयं तो वहां न गया लेकिन भंडारी अनूपसिंह को उसने अपना नायब बनाकर वहां का प्रबन्ध करने के लिए भेज दिया। हि० स० ११३२ के जमादिउस्सानी (वि० सं० १७७७ चैत्र-वैशाख = ई० स० १७२० अप्रेल) मास में वह शाही बाग़ में पहुंचा। फिर भद्र के क़िले में रहकर उसने सूबे का कार्य शुरू किया। वहां रहते समय उसकी वहां के नायब सूबेदार मेहरअली से अनबन हुई। मेहरअली के पास बड़ी फ़ौज थी, जिससे भंडारी उपर्युक्त मौक़े का इन्तज़ार करने लगा। ऐसी स्थिति में वहां रहना नामुनासिब समझ मेहरअली अपनी नई जगह खंभात चला गया। उन्हीं दिनों भणसाली कपूरचन्द अहमदाबाद में जाकर नगर सेठ का कार्य करने लगा। उसने भंडारी-द्वारा लोगों पर अनुचित जुरमाना किये जाने, उनपर झूठे आरोप लगाकर उनसे ज़बरदस्ती धन वसूल करने आदि का विरोध किया। महाराजा की क़ुतुबुल्मुल्क एवं अमीरुल्उमरा से घनिष्ठ मैत्री होने के कारण भंडारी को बड़ा अभिमान हो गया था। वह अपने स्वार्थ-साधन में नगर सेठ को बाधक मानकर उसे दूर करने का उपाय करने लगा। इसपर कपूरचन्द सावधान रहने लगा और उसने भद्र में जाना छोड़ दिया। साथ ही उसने

अजीतसिंह के नायब अनूपसिंह का गुजरात में जुल्म करना

ऑव् इंडिया; जि० ७, पृ० ४८१)।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि मुहम्मदशाह के बादशाह होने पर अब्दुल्लाख़ां ने आंबेर पर चढ़ाई की। इस अवसर पर गुजरात के सूबे का फ़रमान अजीतसिंह के नाम करा वह (अब्दुल्लाख़ां) उसे भी साथ ले गया। आंबेर को नष्ट करने की अब्दुल्लाख़ां की बड़ी इच्छा थी, पर जब जयसिंह के वकील अजीतसिंह के पास पहुंचे तो उसने समझा-बुझाकर उसे वापस लौटा दिया (जि० २, पृ० ११०-११)।

कैम्पबेल-कृत "गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी" से पाया जाता है कि मुहम्मदशाह के सिंहासनारूढ़ होने के समय अजीतसिंह ही सबसे शक्तिशाली नरेश था। उसको अपनी तरफ़ मिलाये रखने के लिए सैयदों ने गुजरात की सूबेदारी उसके नाम करादी और उसके वहां पहुंचने तक वहां का प्रबन्ध करने के लिए मेहरअलीख़ां को नियुक्त किया (जि० १; खंड १; पृ० ३०१)।

क़रीब ५०० पैदल सिपाही अपनी सेवा में रख लिये। जब भी वह पूजा करने के लिए मन्दिर में जाता, उसके साथ बहुत से आदमी रहते। तब भंडारी ने अपने आदमियों में से ख़्वाजाबख़्श को नगर सेठ को मारने के लिये नियत किया। वह क़ासिद का वेष बनाकर कपूरचंद के नाम के कितनेक ज़ाली पत्र तैयार कर रात्रि के समय, जब वह घर में अकेला था, उसके पास गया। जैसे ही कपूरचंद उन पत्रों को पढ़ने लगा, ख़्वाजाबख़्श कटार से उसे मारकर भाग गया। रात्रि के अन्त में इस घटना का पता लगने पर कपूरचंद के संबंधी एकत्र हुए और उसके शव को लेकर चले। भंडारी के आदमियों ने शव को रोका और वे उसे लेजानेवालों को तकलीफ़ देने लगे। डेढ़ पहर दिन चढ़े तक उसका शव वहीं पड़ा रहा। इसके बाद कहीं उसे लेजाने की आज्ञा भंडारी से प्राप्त हुई[1]।

अजीतसिंह का जोधपुर जाना

जोधपुर की तरफ़ प्रस्थान करते समय अजीतसिंह ने महाराजा जयसिंह को भी अपने साथ ले लिया। वि० सं० १७७७ (ई० स० १७२०) में मनोहरपुर के गौड़ों के यहां विवाह करने के अनन्तर वह जयसिंह के साथ जोधपुर पहुंचा, जहां जयसिंह सूरसागर के महलों में ठहराया गया। श्रावणादि वि० सं० १७७७ (चैत्रादि १७७८) के ज्येष्ठ मास में महाराजा ने अपनी पुत्री सूरजकुंवरी का विवाह जयसिंह के साथ किया[2]।

मारवाड़ के निकट के गुजरात के प्रदेश पर महाराजा का क़ब्ज़ा करना

यह ऊपर लिखा जा चुका है कि बादशाह की तरफ़ से अहमदाबाद का सूबा महाराजा अजीतसिंह को दे दिया गया था। ई० स० १७१९ (वि० सं० १७७६) में महरटों का प्रभाव बहुत बढ़ गया था। पीलाजी गायकवाड़ ने सैयद आक़िल तथा मुहम्मद पनाह की सेनाओं को परास्त

---

(१) मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० २८, ३१-२ तथा ३४-५। कैम्पबेल-कृत "गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी" (जि० १, खंड १, पृ० ३०१-२) एवं जोधपुर राज्य की ख्यात (जि० २, पृ० १११) में भी इस घटना का संक्षिप्त उल्लेख है।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १११।

कर सोनगढ़ पर क़ब्ज़ा कर लिया। इसी समय के आस-पास मुग़लों की शक्ति का ह्रास शुरू हुआ। अजीतसिंह भी मुसलमानों से घृणा रखने के कारण गुप्त रूप से मरहटों का पक्षपाती हो गया। यही नहीं उसने मारवाड़ की सीमा से मिले हुए गुजरात के कई स्थानों पर अधिकार कर लिया। पीछे से सरबुलंदख़ां ने इन स्थानों पर पुनः अधिकार करने के लिए कई बार प्रयत्न किये, परन्तु इसमें उसे सफलता नहीं मिली[1]।

सैयद भाइयों का पतन और मारा जाना

मुहम्मदशाह के राज्य के प्रारंभिक दिनों में ही सैयदों और चिन-क़लीचख़ां निज़ामुल्मुल्क के बीच विरोध पैदा हो गया। विरोध यहां तक बढ़ा कि सैयदों ने उसका नाश करने के लिए सैनिक तैयारियां कीं। इसी बीच बादशाह ने गुप्त रूप से निज़ामुल्मुल्क के पास इस आशय के पत्र भेजे कि मुझे सैयदों के पंजे से मुक्त करो। हुसैनअलीख़ां ने कोटा के महाराव भीमसिंह को अपने पक्ष में कर उसको दिलावरख़ां के साथ दक्षिण में निज़ामुल्मुल्क पर भेजा। हि० स० ११३२ ता० १३ शाबान (वि० सं० १७७७ ज्येष्ठ सुदि १५ = ई० स० १७२० ता० ६ जून) को रत्नपुर (बुरहानपुर से १७ कोस दूर) के निकट लड़ाई होने पर महाराव भीमसिंह आदि कितने ही व्यक्ति मारे गये और निज़ामुल्मुल्क की फ़तह हुई। अनन्तर उसने आलमअलीख़ां (सैयदों के संबंधी) को भी हराया। तब ता० ६ ज़िलक़ाद (भाद्रपद सुदि १२ = ता० २ सितंबर) को हुसैनअलीख़ां ने स्वयं बादशाह के साथ आगरे से दक्षिण की तरफ़ प्रस्थान किया। मार्ग से ही अब्दुल्लाख़ां वापस राजधानी (दिल्ली) भेजा गया। सैयदों के बढ़ते हुए आतंक से चिन्तित होकर बादशाह की मा की मर्ज़ी और सलाह के अनुसार एतमादुद्दौला मुहम्मद अमीनख़ां, सआदतख़ां एवं मीर हैदरख़ां काशगरी ने हुसैनअलीख़ां को मार डालने का षड्यंत्र रचा। फ़तहपुर से पैंतीस कोस दक्षिण तोरा नामक स्थान में बादशाह के डेरे होने पर ता० ६ ज़िलहिज (आश्विन सुदि ८ = ता० २८ सितंबर) को,

---

(१) कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी; जि० १, खंड १, पृ० ३०१।

जब हुसेनअलीखां बादशाह से विदा होकर अपने डेरे की तरफ़ जा रहा था, मार्ग में मीर हैदरख़ां काशगरी ने एक अर्ज़ी उसके सामने पेश की, जिसमें मुहम्मद अमीनख़ां की कुछ शिकायत लिखी थी। जैसे ही हुसेनअलीख़ां ने उसे पढ़ना शुरू किया, हैदरख़ां ने उसके पेट में खंजर भोंककर उसे मार डाला, पर वह भी जीवित न बचा और एक मुग़ल के हाथ से मारा गया। हुसेनअलीख़ां की एक करोड़ रुपये से भी अधिक की सम्पत्ति पर शाही अधिकार हो गया और नागोर का मुहकमसिंह, जो हुसेनअलीख़ां का दोस्त था, हैदरकुलीखां के समझाने पर बादशाह से मिल गया। हुसेनअलीख़ां का सिर काटकर मुग़लों ने बादशाह के सामने पेश किया। अब्दुल्लाख़ां ने जब यह समाचार सुना तो वह चिन्तित हुआ। दिल्ली पहुंचकर उसने ता० ११ ज़िल्हिज (आश्विन सुदि १३ = ता० ३ अक्टोबर) को रफ़ीउद्दरजात के बेटे सुलतान इब्राहीम को बादशाह घोषित कर क़रीब एक लाख सेना के साथ मुहम्मदशाह के विरुद्ध प्रस्थान किया। इसपर मुहम्मदशाह भी दिल्ली की ओर बढ़ा। उसके पास अब्दुल्लाख़ां की सेना से आधी सेना थी। हुसेनपुर नामक स्थान में सामना होने पर हि० स० ११३३ ता० १३ और १४ मुहर्रम (कार्तिक सुदि १५ और मार्गशीर्ष वदि १ = ता० ३ और ४ नवंबर) को दोनों में भीषण युद्ध हुआ। मुहकमसिंह, जो अबतक शाही सेना के साथ था, इस अवसर पर अब्दुल्लाख़ां से जा मिला। अन्त में विजय शाही सेना की हुई तथा अब्दुल्लाख़ां और सुलतान इब्राहीम क़ैद कर लिये गये। लगभग दो वर्ष तक क़ैद[1] में रहने के बाद हि० स० ११३५ ता० १ मुहर्रम (वि० सं० १७७९ आश्विन सुदि २ = ई० स० १७२२ ता० १ अक्टोबर) को वह विष देकर मार डाला गया। उसकी इच्छानुसार उसकी लाश दिल्ली में ही पुम्बा दरवाज़े के बाहर राजा बख़्तमल द्वारा

(१) अब्दुल्लाख़ां की क़ैद की दशा में महाराजा अजीतसिंह ने बादशाह से अर्ज़ कराई कि यदि अब्दुल्लाख़ां को मुक्त कर दिया जाय तो मैं पुनः शाही सेवा में आने को तैयार हूं, परन्तु इसका कोई परिणाम न निकला।

क़ुतुबुल्मुल्क को दिये गये बाग़ में गाड़ी गई[1], जो निज़ामुद्दीन औलिया के मज़ार को जानेवाली सड़क पर था[2]।

उन्हीं दिनों महाराजा अजीतसिंह ने अजमेर जाकर वहां रहना इख़्तियार किया और अपने दोनों सूबों (गुजरात और अजमेर) में गो-वध बन्द किये जाने की आज्ञा प्रचारित की। ऐसी अवस्था में उसका अविलम्ब दमन किया जाना आवश्यक समझकर सर्वप्रथम अकबराबाद के हाकिम सआदतख़ां और फिर क्रमशः शम्सामुद्दौला, क़मरुद्दीनख़ां तथा हैदरक़ुलीख़ां को अजमेर का सूबा एवं शाही सेना देकर उधर का प्रबन्ध करने के लिए जाने को कहा गया; परन्तु उनमें से एक ने भी उधर प्रस्थान न किया और एक न एक बहाना कर इस कार्य को हाथ में लेने से इनकार कर दिया। शम्सामुद्दौला चाहता था कि अजमेर का परित्याग करने की शर्त पर अजीतसिंह के नाम गुजरात का सूबा बहाल रक्खा जाय, परन्तु हैदरक़ुलीख़ां ने इसका विरोध किया। तब सआदतख़ां को अजीतसिंह पर जाने का कार्य सौंपा गया। नया आदमी होने की वजह से वह इस कार्य के लिए पर्याप्त व्यक्ति एकत्र न कर सका। क़मरुद्दीनख़ां ने जाने से पूर्व यह मांग पेश की कि सैयद अब्दुल्लाख़ां आदि बारहा के सैयदों को क्षमा कर मेरे साथ भेजा जाय, परन्तु बादशाह का सैयदों पर विश्वास न होने से यह मांग स्वीकृत न हुई। तब सैय्यद मुज़फ़्फ़रअलीख़ां देपुरी की अजमेर में नियुक्ति हुई[3]।

महाराजा का अजमेर जाकर रहना

उसी समय महाराजा से अहमदाबाद का सूबा हटाया जाकर हैदर-

(१) अब्दुल्लाख़ां ने अपने जीते जी अजमेर में (वर्तमान रेल्वे स्टेशन और मार्टिंडेल ब्रिज के बीच सड़क की दाहिनी ओर) अपना मक़बरा बनवाया था, पर उसकी लाश अजमेर न आने से वह योंही रह गया।

(२) वीरविनोद; भाग २, पृ० ११६३-६६। इर्विन; लेटर मुग़लस; जि० २, पृ० ५६-६६।

(३) इर्विन; लेटर मुग़लस; जि० २, पृ० १०८।

क़ुलीख़ां वहां का सूबेदार नियत हुआ[1]। उसने अपने नायब को वहां भेज दिया। सूबा उतर जाने से अब भंडारी अनूपसिंह क्या करेगा यह मालुम न होने से मेहरअलीख़ां (जो पहले दीवान का कार्य करता था) अपनी प्रतिष्ठा के बचाव के लिए अरबों की एक टुकड़ी, कुछ पैदल तथा सवार अपने साथ रखने लगा। उनमें से एक व्यक्ति की एक दिन बाज़ार में अनूपसिंह के नौकरों के साथ खट-पट हो गई और वह ज़ख्मी हो गया। लोगों को सूबे की बदली की ख़बर मिल गई थी और उसके ज़ुल्म से लोग ऊब गये थे, अतएव उस छोटे से झगड़े ने लड़ाई का रूप धारण कर लिया। उसकी ख़बर मेहरअलीख़ां के पास पहुंचने पर उसने अपने नौकरों तथा दूसरे लोगों को प्रबंध करने के लिए भेजा। इससे लड़ाई बढ़ गई और बदमाश तथा लुटेरे लोगों ने लड़ाई में शरीक होकर क़िले को घेर लिया। जब अनूपसिंह को इस बखेड़े का हाल मालुम हुआ तो भद्र की साबरमती की तरफ़ की खिड़की से निकलकर वह शाही बाग़ में चला गया। तब मेहरअलीख़ां के नौकरों और दूसरे लोगों ने, जो उनके साथ हो गये थे, क़िले में घुसकर अनूपसिंह की जो-जो चीज़ हाथ लगी उसे नष्ट किया और भंडारी ने जो वहां एक नई इमारत बनवाई थी, वह मेहरअलीख़ां की आज्ञा से तोड़ डाली गई[2]। इस प्रकार भंडारी की अत्याचारपूर्ण हुकूमत का अन्त हुआ।

महाराजा से अहमदाबाद का सूबा हटाये जाने पर भंडारी अनूपसिंह का वहां से भागना

---

(१) "मिरात-इ-अहमदी" (जि० २, पृ० ३८) में अजीतसिंह के अहमदाबाद की सूबेदारी से हटाये जाने का समय हि० स० ११३३ का रज्जब मास (वि० सं० १७७८ वैशाख, ज्येष्ठ= ई० स० १७२१ मई) और इर्विन-कृत "लेटर मुग़ल्स" (जि० २, पृ० १०८) में ई० स० १७२१ ता० १२ अक्टोबर (वि० सं० १७७८ कार्तिक सुदि २) दिया है। जोनाथन स्कॉट लिखता है कि अजीतसिंह-द्वारा नियत किये हुए हाकिम के ज़ुल्मों की शिकायत होने पर बादशाह ने अजीतसिंह को वहां से हटा दिया (हिस्ट्री ऑव् डेक्कन; जि० २, पृ० १८५)।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मद हसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० ३८-९।

इधर अजमेर के नये सूबेदार मुज़फ़्फ़रअलीखां ने स्वयं उधर जाने का विचार किया, पर उसके पास धन की कमी थी। उसे छः लाख रुपये दिये जाने का हुक्म हुआ, पर उस समय उसे दो लाख से अधिक न मिल सके। उसने उतने से ही सन्तोष कर सैनिकों की भर्ती शुरू की। मनोहरपुर पहुंचते-पहुंचते उसके पास २०००० सेना हो गई, लेकिन इसी बीच उसको मिला हुआ सब रुपया भी खतम हो गया। सवाई जयसिंह का मामला आसानी से तय हो गया था और ई० स० १७२१ (वि० सं० १७७८) में उसने दरबार में उपस्थित हो बादशाह की अधीनता स्वीकार कर ली थी; लेकिन अजीतसिंह का मामला इतना आसान न निकला। उसने अजमेर खाली करने का कोई इरादा ज़ाहिर न किया और अपने ज्येष्ठ पुत्र अभयसिंह को मुज़फ़्फ़रअलीखां का सामना करने को भेजा। इसपर (ई० स० १७२१ ता० २ अक्टोबर = वि० सं० १७७८ कार्तिक वदि ८) को मुज़फ़्फ़र-अलीखां के पास दिल्ली से यह आज्ञा पहुंची कि वह मनोहरपुर से आगे न बढ़े। वह वहां तीन मास तक पड़ा रहा। इस बीच दिल्ली से शेष रुपये भी न आये। तनख्वाहें न मिलने के कारण उसके सिपाहियों ने अपने शस्त्र आदि बेच दिये। अन्ततः उन्होंने नारनोल के निकट के कई गांवों को लूट लिया और फिर वे उसका साथ छोड़कर चले गये। ऐसी परिस्थिति में मुज़फ़्फ़र-अलीखां ने राठोड़ों पर आक्रमण करने का एक बार भी प्रयत्न न किया। कुछ समय बाद जयसिंह का सेनापति आकर उसे अपने साथ आंबेर ले गया, जहां से अजमेर की सूबेदारी का शाही फ़रमान, खिलअत आदि लौटाकर वह फ़क़ीर हो गया। तब सैयद नसरतयारखां बारहा की नियुक्ति हुई।

इसी बीच चूड़ामन जाट के पुत्र मोहकमसिंह के सेना-सहित अजमेर पहुंच जाने से अजीतसिंह की शक्ति बढ़ गई। इससे पूर्व कि नसतरयारखां उसके विरुद्ध कोई कार्यवाही करे, अजीतसिंह ने अभयसिंह को नारनोल तथा आगरा एवं दिल्ली के सूबों पर आक्रमण करने के लिए भेज दिया। उस(अभय-सिंह)के पास अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित बारह हज़ार ऊंट-सवार थे। उसके

महाराजा का अजमेर छोड़ना

नारनोल पहुंचने पर वहां के हाकिम (बयाज़िदखां मेवाती का प्रतिनिधि) ने शक्ति भर उसका सामना किया, पर अन्त में वह हारकर मेवात चला गया। तब नारनोल को लूट उसने अलवर, तिजारा एवं शाहजहांपुर को लूटा और वह दिल्ली से सोलह मील दूर सराय अल्लावर्दीखां तक जा पहुंचा। इस बीच अजीतसिंह के सम्बन्ध की कार्यवाही के विषय में दिल्ली में गड़बड़ी ही बनी रही। पहले तो शम्सामुद्दौला ने, बदला लेने की बड़ी क़समें खाकर, जाने की आज्ञा प्राप्त की। उसने अपने डेरे आदि आगे रवाना भी कर दिये, पर इससे आगे उसने कुछ न किया। बादशाह उसके इस आचरण से बड़ा नाराज़ हुआ, जिसके फलस्वरूप शम्सामुद्दौला ने दरबार में आना-जाना बन्द कर दिया। इसके बाद हैदरकुलीखां इस कार्य के लिए नियुक्त किया गया, जिसने बहुतसी मांगें पेश कीं। इसपर सारा शाही तोपखाना उसके अधिकार में देकर उसके जाने की तैयारी की गई, परन्तु अन्त में उसने भी जाने से इनकार कर दिया। इसी प्रकार क़मरुद्दीनखां ने भी इनकार ही किया। अन्ततः नसरतयारखां इस कार्य के लिए रवाना हुआ, पर उसके कुछ दूर आगे बढ़ते ही ख़बर आई कि अजीतसिंह नगर-(अजमेर) खालीकर अपने देश चला गया। राठोड़ों के अजमेर छोड़ने का कारण यह था कि उन्हें निज़ामुल्मुल्क के वज़ीर आज़म का पद स्वीकार करने और दक्षिण से प्रस्थान करने का पता लग गया था[1]।

महाराजा का बादशाह के पास अर्ज़ी भेजना

इस घटना के एक मास बाद ई० स० १७२२ ता० २१ मार्च (वि० सं० १७७६ चैत्र सुदि १५) को सांभर के फ़ौजदार नाहरखां के साथ महाराजा की ओर से भंडारी खींवसी उसकी अर्ज़ी लेकर बादशाह की सेवा में उपस्थित हुआ। उस अर्ज़ी में अपनी पुरानी वफ़ादारी की याद दिलाते हुए महाराजा ने लिखा था—"सैयदों के अधिकारच्युत होने के पूर्व ही मुझे अहमदाबाद और अजमेर के सूबे मिले थे, जहां का शासन करते समय मैंने इसलाम धर्म का पूरा-पूरा ख़याल रक्खा। फिर जब आपकी

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० २, पृ० १०८-११।

विजय हुई तो अहमदाबाद का सूबा हैदरकुलीख़ां को दे दिया गया, लेकिन इसपर भी मैंने कुछ न कहा। अजमेर के बारे में भी मेरा ऐसा ही इरादा था, लेकिन मुज़फ़्फ़रअलीख़ां पहुंचा ही नहीं। अनन्तर नारनोल आदि की घटनाओं की आड़ लेकर लोगों ने मेरे विरुद्ध विद्रोह की शिकायतें कीं, जो ठीक नहीं थीं। वस्तुतः वे आक्रमण मेवातियों से झगड़ा होने के कारण हुए थे। अब मैं आपकी न्याय-प्रियता पर विश्वास रखते हुए, यह मामला आपके समक्ष पेश करता हूं, क्योंकि मैं स्वामिभक्ति के मार्ग से तनिक भी विचलित नहीं हुआ हूं। अब जैसी भी आज्ञा होगी उसके अनुसार या तो मैं दरबार में हाज़िर हो जाऊंगा या अपने देश में ही रहूंगा[1]।"

महाराजा की अर्ज़ी के उत्तर में फ़रमान जाना

बादशाह ने महाराजा की उपर्युक्त अर्ज़ी के उत्तर में एक फ़रमान भेजा, जिसमें उसकी स्वामिभक्ति की प्रशंसा करते हुए दोनों सूबों के उतारे जाने के संबंध में अस्पष्ट बातें लिखी थीं। आगे चलकर उसमें लिखा था कि कुछ समय के लिए अजमेर का सूबा फिर उसे ही सौंपा जाता है और ख़ुदा की मर्ज़ी हुई तो अहमदाबाद का सूबा भी बहाल कर दिया जायगा। इस फ़रमान के साथ उसके पास उपहार में ख़िलअत, जड़ाऊ सरपेंच, एक हाथी और एक घोड़ा भेजा गया[2]।

नाहरख़ां का अजमेर का दीवान नियत होना

ई० स० १७२२ ता० ८ दिसम्बर (वि० सं० १७७९ मार्गशीर्ष सुदि १२) को बादशाह ने नाहरख़ां को सांभर की फ़ौजदारी के साथ ही अजमेर का दीवान नियुक्त किया। इसी अवसर पर उसके भाई (रुहुल्लाख़ां) को गढ़ पतीली (? बीटली) की फ़ौजदारी दी गई। भंडारी खींवसी उन दोनों को अपने साथ लेकर अजमेर गया[3]।

---

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० २, पृ० १११।

(२) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० २, पृ० १११-२।

(३) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० २, पृ० ११२। जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि बादशाह ने भंडारी खींवसी को कहा कि वह महाराजा को उत्पात न करने

नारनोल पहुंचने पर वहां के हाकिम (बयाज़िदखां मेवाती का प्रतिनिधि) ने शक्ति भर उसका सामना किया, पर अन्त में वह हारकर मेवात चला गया। तब नारनोल को लूट उसने अलवर, तिजारा एवं शाहजहांपुर को लूटा और वह दिल्ली से सोलह मील दूर सराय अल्लावर्दीखां तक जा पहुंचा। इस बीच अजीतसिंह के सम्बन्ध की कार्यवाही के विषय में दिल्ली में गड़बड़ी ही बनी रही। पहले तो शम्सामुद्दौला ने, बदला लेने की बड़ी क़समें खाकर, जाने की आज्ञा प्राप्त की। उसने अपने डेरे आदि आगे रवाना भी कर दिये, पर इससे आगे उसने कुछ न किया। बादशाह उसके इस आचरण से बड़ा नाराज़ हुआ, जिसके फलस्वरूप शम्सामुद्दौला ने दरबार में आना-जाना बन्द कर दिया। इसके बाद हैदरक़ुलीखां इस कार्य के लिए नियुक्त किया गया, जिसने बहुतसी मांगें पेश कीं। इसपर सारा शाही तोपखाना उसके अधिकार में देकर उसके जाने की तैयारी की गई, परन्तु अन्त में उसने भी जाने से इनकार कर दिया। इसी प्रकार क़मरुद्दीनखां ने भी इनकार ही किया। अन्ततः नसरतयारखां इस कार्य के लिए रवाना हुआ, पर उसके कुछ दूर आगे बढ़ते ही खबर आई कि अजीतसिंह नगर-(अजमेर) खालीकर अपने देश चला गया। राठोड़ों के अजमेर छोड़ने का कारण यह था कि उन्हें निज़ामुल्मुल्क के वज़ीर आज़म का पद स्वीकार करने और दक्षिण से प्रस्थान करने का पता लग गया था[1]।

महाराजा का बादशाह के पास अर्ज़ी भेजना

इस घटना के एक मास बाद ई० स० १७२२ ता० २१ मार्च (वि० सं० १७७९ चैत्र सुदि १५) को सांभर के फ़ौजदार नाहरखां के साथ महाराजा की ओर से भंडारी खींवसी उसकी अर्ज़ी लेकर बादशाह की सेवा में उपस्थित हुआ। उस अर्ज़ी में अपनी पुरानी वफ़ादारी की याद दिलाते हुए महाराजा ने लिखा था—"सैयदों के अधिकारच्युत होने के पूर्व ही मुझे अहमदाबाद और अजमेर के सूबे मिले थे, जहां का शासन करते समय मैंने इसलाम धर्म का पूरा-पूरा खयाल रक्खा। फिर जब आपकी

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० २, पृ० १०८-११।

विजय हुई तो अहमदाबाद का सूबा हैदरक़ुलीख़ां को दे दिया गया, लेकिन इसपर भी मैंने कुछ न कहा। अजमेर के बारे में भी मेरा ऐसा ही इरादा था, लेकिन मुज़फ्फ़रअलीख़ां पहुंचा ही नहीं। अनन्तर नारनोल आदि की घटनाओं की आड़ लेकर लोगों ने मेरे विरुद्ध विद्रोह की शिकायतें कीं, जो ठीक नहीं थीं। वस्तुतः वे आक्रमण मेवातियों से झगड़ा होने के कारण हुए थे। अब मैं आपकी न्याय-प्रियता पर विश्वास रखते हुए, यह मामला आपके समक्ष पेश करता हूं, क्योंकि मैं स्वामिभक्ति के मार्ग से तनिक भी विचलित नहीं हुआ हूं। अब जैसी भी आज्ञा होगी उसके अनुसार या तो मैं दरबार में हाज़िर हो जाऊंगा या अपने देश में ही रहूंगा[1]।"

महाराजा की अर्ज़ी के उत्तर में फ़रमान जाना

बादशाह ने महाराजा की उपर्युक्त अर्ज़ी के उत्तर में एक फ़रमान भेजा, जिसमें उसकी स्वामिभक्ति की प्रशंसा करते हुए दोनों सूबों के उतारे जाने के संबंध में अस्पष्ट बातें लिखी थीं। आगे चलकर उसमें लिखा था कि कुछ समय के लिए अजमेर का सूबा फिर उसे ही सौंपा जाता है और खुदा की मर्ज़ी हुई तो अहमदाबाद का सूबा भी बहाल कर दिया जायगा। इस फ़रमान के साथ उसके पास उपहार में खिलअत, जड़ाऊ सरपेंच, एक हाथी और एक घोड़ा भेजा गया[2]।

नाहरख़ां का अजमेर का दीवान नियत होना

ई० स० १७२२ ता० ८ दिसम्बर (वि० सं० १७७९ मार्गशीर्ष सुदि १२) को बादशाह ने नाहरख़ां को सांभर की फ़ौजदारी के साथ ही अजमेर का दीवान नियुक्त किया। इसी अवसर पर उसके भाई (रुहुल्लाख़ां) को गढ़ पतीली (? बीटली) की फ़ौजदारी दी गई। भंडारी खींवसी उन दोनों को अपने साथ लेकर अजमेर गया[3]।

---

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० २, पृ० १११।

(२) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० २, पृ० १११-२।

(३) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० २, पृ० ११२। जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि बादशाह ने भंडारी खींवसी को कहा कि वह महाराजा को उत्पात न करने

अजमेर के निकट पहुंचकर राठोड़ों को अपना मित्र समझने के कारण नाहरखां एवं रुहुल्लाखां ने उनके बहुत निकट डेरा किया। ई० स० १७२३ ता० ६ जनवरी (वि० सं० १७७६ पौष सुदि ११) को प्रातःकाल के समय राठोड़ों ने उन पर आक्रमण कर उन्हें मार डाला। उनका भानजा हाफ़िज़ महमूदखां तथा उसके दूसरे संबंधी आदि पकड़ लिये गये, जिनमें से २५ के सिर काट डाले गये और कुछ ही समय में उनका सारा सामान लूट लिया गया। जो वहां से भागने में समर्थ हुए उन्होंने आंबेर के जयसिंह की शरण ली, जहां से वे शाही अमलदारी में पहुंचा दिये गये। इस घटना की ख़बर बादशाह को ता० ६ फ़रवरी (माघ सुदि द्वितीय १५) को मिली[1]।

नाहरखां एवं रुहुल्लाखां का मारा जाना

और दरबार में हाज़िर होने के लिए लिखे। महाराजा ने ऐसा करने से पूर्व जज़िया माफ़ करने और अब्दुल्लाख़ां को मुक्त करने की दरख़्वास्त की। बादशाह ने जज़िया माफ़ कर महाराजा को "राजराजेश्वर" का ख़िताब दिया और उसके दिल्ली पहुंचने पर अब्दुल्लाख़ां को मुक्त करने का वादा कर खींवसी के साथ नाहरख़ां को उसे लाने के लिए भेजा, परन्तु महाराजा ने शर्त पूरी हुए बिना चलने से इनकार कर उन्हें वापस लौटा दिया। उनके दिल्ली पहुंचने पर क़मरुद्दीनख़ां, ख़ानदौरां एवं महाराजा जयसिंह ने नाहरख़ां की मार्फ़त अब्दुल्लाख़ां को मरवा दिया। अनन्तर नाहरख़ां को जयसिंह आदि की सिफ़ारिश पर सात हज़ारी मंसब देकर भंडारी खींवसी के साथ पुनः महाराजा को लाने के लिए बादशाह ने रवाना किया (जि० २, पृ० ११२-३)।

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० २, पृ० ११२। जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि महाराजा को अब्दुल्लाख़ां के मरवाये जाने की ख़बर मिल गई, जिसके बारे में उसने सांभर में भंडारी खींवसी से कहा। भंडारी के सारी हक़ीक़त निवेदन करने पर महाराजा ने नाहरख़ां को मारने का इरादा किया। भंडारी ने उसे बहुतेरा, समझाया, पर जब वह नहीं माना तो वह बीमारी का बहाना कर सांभर शहर में जा रहा। अनन्तर भण्डारी थानसिंह (खींवसिंहोत) तथा राठोड़ शिवसिंह (गोपीनाथोत) मेड़तिया ने प्रातःकाल के समय आक्रमण कर नाहरख़ां और उसके भाई को मारडाला और उनका सारा सामान लूट लिया (जि० २, पृ० ११३)।

टॉड लिखता है कि नाहरख़ां ने महाराजा के प्रति कुछ अपमान-सूचक शब्दों

इसपर बादशाह ने शर्फ़ुद्दौला इरादतमंदखां[1] को महाराजा पर चढ़ाई करने के लिए नियुक्त किया। इस अवसर पर उसका मनसब बढ़ाकर ७००० ज़ात और ६००० सवार का कर दिया गया तथा उसे ५०००० फ़ौज दी गई। ता० २६ फ़रवरी (फाल्गुन सुदि ३) को उसे प्रस्थान करने की इजाज़त मिली और इसके चार दिन बाद उसे फ़ौज खर्च के लिए शाही ख़ज़ाने से दो लाख रुपये दिये गये। ता० १० मार्च (फाल्गुन सुदि १५) को दूसरे कई अमीरों को भी उसके साथ जाने का हुक्म हुआ और ता० ४ अप्रेल (वि० सं० १७८० चैत्र सुदि १०) को महाराजा जयसिंह, मुहम्मदखां बंगश, राजा गिरधर बहादुर तथा अन्य कई व्यक्तियों के पास इस आशय की ज़रूरी इत्तला भेजी गई कि वे भी शर्फ़ुद्दौला के शामिल हो जायें। साथ ही ता० ५ जून (ज्येष्ठ सुदि १३) को इन्द्रसिंह राठोड़ को नागोर की उसकी पुरानी हुकूमत बख़्शी गई। उस समय वह (इन्द्रसिंह) निज़ामुल्मुल्क के साथ दक्षिण में था, जिससे उसके पौत्र मानसिंह ने नज़र आदि पेश करने का समयोचित कार्य सम्पन्न किया। इसी अवसर पर हैदरक़ुलीख़ां अहमदाबाद से दिल्ली को वापस लौट रहा था[2]। उसके रेवाड़ी पहुंचने पर रोशनुद्दौला ने बीच में पड़कर उसे माफ़ी दिला दी।

इरादतमंदखां का महाराजा अजीतसिंह पर भेजा जाना

का व्यवहार किया, जिसपर उसने उसे उसके साथियों सहित मार डाला (राजस्थान; जि० २, पृ० १०२७)।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में हसनकुलीख़ां नाम दिया है (जि० २, पृ० ११३)।

(२) हैदरक़ुलीख़ां ने अहमदाबाद का शासन हाथ में लेते ही वहां मनमाना आचरण करना शुरू किया, जिससे यह स्पष्ट प्रतीत होता था कि वह शाही शक्ति की अवहेलना कर स्वतंत्र बनना चाहता है। तब बादशाह ने निज़ामुल्मुल्क के समझाने पर अहमदाबाद का सूबा ई० स० १७२२ ता० २४ अक्टोबर (वि० सं० १७७९ कार्तिक वदि ११) को हैदरक़ुलीख़ां से हटाकर उसे निज़ामुल्मुल्क के नाम कर दिया। इसपर हैदरक़ुलीख़ां के अनुयायी उसे साथ लेकर वहां से रवाना हो गये (इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० २, पृ० १२८-९)।

फलतः सांभर की फ़ौजदारी और अजमेर की सूबेदारी उसके नाम कर दी गई, जिसका आज्ञापत्र लेकर ख्वाजा सादुद्दीन उसके पास पहुंचा। तब वह भी नारनोल में शाही सेना के शामिल होकर अजमेर की तरफ़ बढ़ा। शाही सेना का आगमन सुनते ही अजीतसिंह, जो भामरा गांव में था, बिना लड़े ही वहां से सांभर होता हुआ जोधपुर चला गया[1]। इसकी ख़बर ता० ३० मई (ज्येष्ठ सुदि ७) को मिली। इसके पांच दिन बाद यह ख़बर आई कि हैदरक़ुलीख़ां ने सांभर पर अधिकार कर लिया। ता० ८ जून (आषाढ वदि १) को अजमेर के नये हाकिम (इरादतमंदख़ां) ने अजमेर में प्रवेश किया[2]।

गढ बीटली पर शाही सेना का अधिकार होना

ता० १७ जून (आषाढ वदि ११) को अजीतसिंह-द्वारा गढ़ बीटली-(तारागढ़) में रक्खी हुई सेना घेर ली गई। लगभग डेढ़ मास तक घेरा रहने के बाद वहां शाही सेना का अधिकार हो गया[3]।

ऐसी अवस्था में महाराजा के लिए बादशाह से मेल कर लेने के

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार महाराजा शाही फ़ौज का सामना करने के लिए मनोहरपुर के निकट तक गया और उसने लड़ाई की तैयारी की, परन्तु महाराजा जयसिंह के समझाने पर वह बिना लड़े अजमेर होता हुआ मेड़ता चला गया (जि० २, पृ० ११३-४)।

(२) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० २, पृ० ११३-४। जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार उस समय गढ़ में ऊदावत अमरसिंह था, जो अच्छा लड़ा (जि० २, पृ० ११४)।

(३) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० २, पृ० ११४। उसी पुस्तक में मुहम्मद शफ़ी वारिद-कृत "मिरात-इ-वारिदात" (पृ० १३०) के आधार पर लिखा है कि इस अवसर पर क़िले में ४०० योद्धा थे। परस्पर शर्तें तय होने के बाद वे क़िला सौंप कर बाहर निकल गये (पृ० ११४ का टिप्पण)। टॉड-कृत "राजस्थान" में लिखा है—"श्रावण मास में तारागढ़ पर घेरा डाला गया। अभयसिंह अमरसिंह पर वहां की रक्षा का भार डालकर बाहर निकल गया। चार मास तक राठोड़ सेना ने शाही फ़ौज का मुक़ाबला किया। पीछे से जयसिंह के समझाने पर अजीतसिंह ने अजमेर सौंप दिया (जि० २, पृ० १०२८)।"

अतिरिक्त दूसरा उपाय न रह गया। स्वयं दरबार में उपस्थित होने के लिए एक वर्ष की मुहलत मांगकर उसने अपने ज्येष्ठ पुत्र अभयसिंह को कई हाथियों और दूसरे उपहारों के साथ शाही सेनाध्यक्ष के पास भेज दिया। हैदरकुलीखां ने अभयसिंह को उपहारों आदि के साथ बादशाह की सेवा में भेजा, जहां उसका समुचित स्वागत हुआ। उसे बहुत सी वस्तुएं उपहार में दी गई और वह दरबार में ही रोक लिया गया[1]।

महाराजा अजीतसिंह का बादशाह से मेल करना

यद्यपि महाराजा दीर्घ समय तक स्थायी रूप से जोधपुर में बहुत कम रहा था, फिर भी भवन निर्माण का शौक होने से उसने अपने समय में कई नये भवन आदि बनवाये। जोधपुर के गढ़ में उसने फ़तहमहल[2] और दौलतखाने का राजमहल बनवाया। नगर के भीतर के घनश्यामजी[3]

महाराजा अजीतसिंह के बनवाये हुए भवन आदि

---

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स, जि० २, पृ० ११४। "तारीख़-इ-हिंदी" (इलियट; हिस्ट्री ऑव् इंडिया; जि० ८, पृ० ४४) में भी इसका उल्लेख है।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि पहले महाराजा ने कुंवर के साथ खींवसी को भेजना चाहा, पर वह (खींवसी) राज़ी न हुआ तो उसने आउवा के चांपावत हरनाथसिंह तेजसिंहोत को भेजा। दोनों अजमेर जाकर हसनकुली और जयसिंह वग़ैरह से मिले। अनन्तर महाराजा तो मेड़ता से कूचकर मंडोवर गया और कुंवर शाही फ़ौज के साथ दिल्ली की ओर गया, पर मार्ग में ही आउवा का ठाकुर मर गया, जिसकी ख़बर मिलने पर महाराजा को बड़ी चिन्ता हुई। दिल्ली पहुंचने पर बादशाह ने कुंवर की बड़ी ख़ातिर की (जि० २, पृ० ११४)।

टॉड-कृत "राजस्थान" में भी अभयसिंह का दिल्ली जाना और उसका वहां अच्छा स्वागत होना लिखा है (जि० २, पृ० १०२८)।

(२) मेरा जोधपुर राज्य का इतिहास; प्रथम खंड, पृ० २२।

(३) घनश्यामजी का मन्दिर राव गांगा ने बनवाया था। जोधपुर पर मुग़लों का अधिकार होने के बाद मुसलमानों ने उसे तोड़कर वहां मस्जिद बनवाई। जब महाराजा अजीतसिंह का जोधपुर पर अधिकार हुआ, तो उसने मस्जिद के स्थान में मंदिर बनवा दिया। पीछे से महाराजा विजयसिंह ने उस मंदिर को और बढ़ाया (मेरा जोधपुर राज्य का इतिहास, प्रथम खंड, पृ० २३-४)।

तथा मूलनायकजी के मन्दिर महाराजा के ही बनवाये हुए हैं। मंडोर में उसने महाराजा जसवन्तसिंह (प्रथम) का स्मारक बनवाया। उसकी राणियों में से राणावत ने गोल में तंवरजी के झालरे के निकट शिखरबन्द मन्दिर तथा जाड़ेची ने चांदपोल के बाहर एक बावड़ी बनवाई।

महाराजा का मारा जाना

कुंवर अभयसिंह के दिल्ली में रहते समय महाराजा जयसिंह तथा अन्य मुग़ल सरदारों ने उसे समझाया कि फ़र्रुख़सियर को मरवाने में शामिल रहने के कारण बादशाह महाराजा (अजीतसिंह) से बहुत नाराज़ है। यदि तुम मारवाड़ का राज्य अपने वंशवालों के पास रखना चाहते हो तो उसको मरवा दो। तब कुंवर ने अपने छोटे भाई बख़्तसिंह को इस विषय में लिखा, जिसने अपने भाई के इशारे के अनुसार वि० सं० १७८१ आषाढ सुदि १३ (ई० स० १७२४ ता० २३ जून) को ज़नाने में सोते हुए अपने बाप को मार डाला। महाराजा के शव के साथ उसकी कई राणियों, ख़वासों, लौंडियों, नाज़िरों आदि ने प्राण दिये[1]। महाराजा का दाह संस्कार मंडोर में हुआ, जहां

(१) वीरविनोद; भाग २; पृ० ८४२। उक्त पुस्तक में आगे चलकर लिखा है कि इस अवसर पर आनंदसिंह, रायसिंह और किशोरसिंह की माताओं ने अपने बालकों को सरदारों के सुपुर्द कर दिया। किशोरसिंह तो उसकी ननिहाल जैसलमेर में भेज दिया गया और शेष दो को देवीसिंह और मानसिंह चौहान पहाड़ों में ले गये (भाग २; पृ० ८४४)।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस संबंध में भिन्न वर्णन दिया है, जो नीचे लिखे अनुसार है—

"अभयसिंह पर बादशाह की बड़ी कृपा थी और साथ ही उस (अभयसिंह)-की महाराजा जयसिंह से भी घनिष्टता थी। इससे महाराजा के मन में उसकी तरफ़ से खटका हो गया। उसने पुरोहित जगू तथा रोहट के ठाकुर चांपावत सगतसिंह को दिल्ली से कुंवर को लाने को भेजा। उधर बादशाह के कहने से महाराजा जयसिंह ने कुंवर को समझाया कि सैयदों एवं महाराजा अजीतसिंह ने फ़र्रुख़सियर को मरवाया था, उनमें से सैयदों को तो बादशाह ने मरवा दिया और अब वह अजीतसिंह को मारने का मौक़ा देख रहा है। यही नहीं वह अवसर मिलते ही जोधपुर पर क़ब्ज़ा कर लेगा और हज़ारों

उसका एक थड़ा (स्मारक) अबतक विद्यमान है, जो विशाल और दर्शनीय है[1]।

जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार महाराजा अजीतसिंह के सत्रह राणियां थीं, जिनसे उसके निम्नलिखित सत्रह पुत्र[2] तथा आठ पुत्रियां हुई[3]—

राणियां तथा सन्तति

राठोड़ों के प्राण जायंगे, अतएव आप चूककर महाराजा को मरवा दें, जिससे उसका क्रोध शान्त हो। भंडारी रघुनाथ ने भी यही राय दी कि जिससे बादशाह प्रसन्न हो वही करना चाहिये। तब उसने महाराजा पर चूक करने के लिए अपने भाई बख़्तसिंह को लिखा, जिसने श्रावणादि वि० सं० १७८० (चैत्रादि १७८१) आपाढ सुदि १३ (ई० स० १७२४ ता० २३ जून) को महाराजा को, जब वह महल में सो रहा था, अपने हाथ से मार डाला। कुंवर आनंदसिंह, रायसिंह और किशोरसिंह बाहर चले गये। महाराजा के शव के साथ कई राणियां आदि सती हुई (जि० २, पृ० ११५)।

कामवरख़ां अजीतसिंह के मारे जाने का दूसरा ही कारण देता है। उसके अनुसार महाराजा का अपनी पुत्रवधू (बख़्तसिंह की पत्नी) के साथ अनुचित संबंध हो गया था। इस अपमान से लज्जित एवं पीड़ित होकर बख़्तसिंह ने एक रात को, जब अजीतसिंह शराब के नशे में ग़ाफ़िल पड़ा हुआ था, उसे मार डाला (तज़्किरतुस्सलातीन-इ-चग़ातिया—इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० २, पृ० ११६-७)। यह कथन कहां तक ठीक है यह कहा नहीं जा सकता, क्योंकि अन्य किसी इतिहासवेत्ता ने इसकी पुष्टि की हो ऐसा हमारे देखने में नहीं आया।

टॉड लिखता है कि सैयदों ने महाराजा से विरोध हो जाने के कारण अभयसिंह से कहा कि तुम अपने पिता को मरवा दो, नहीं तो हम मारवाड़ का नाश कर देंगे। इसपर अभयसिंह ने अपने भाई बख़्तसिंह को नागोर की जागीर देने का वादा कर इस कार्य को पूरा करने के लिए लिखा। तदनुसार बख़्तसिंह ने रात्रि के समय पिता के शयनागार में छिपकर निद्रावस्था में उसे मार डाला (राजस्थान; जि० २, पृ० ८५७-८)। टॉड का यह कथन असंगत है, क्योंकि अजीतसिंह तो अन्त तक सैयदों के पक्ष में रहा था और उसके मारे जाने के बहुत पूर्व ही सैयद बन्धुओं का ख़ात्मा हो चुका था। ऐसी दशा में सैयदों का अभयसिंह को इस कुकृत्य के लिए उभारना कल्पना मात्र है।

(१) देखो मेरा जोधपुर राज्य का इतिहास; प्रथम खंड; पृ० २५।

(२) "वीरविनोद" में केवल पन्द्रह पुत्रों के ही नाम मिलते हैं (भाग २, पृ० ८४२)।

(३) जि० २, पृ० ११७–२०।

महाराजा अभयसिंह

ग्यारहवां अध्याय

महाराजा अभयसिंह से महाराजा बख़्तसिंह तक

अभयसिंह

जन्म तथा जोधपुर का राज्य मिलना

अभयसिंह का जन्म वि० सं० १७५९ मार्गशीर्ष वदि १४ (ई० स० १७०२ ता० ७ नवम्बर) शनिवार को जालोर में हुआ था। अपने पिता के मारे जाने का समाचार दिल्ली पहुंचने पर वि० सं० १७८१ श्रावण वदि ८ (ई० स० १७२४ ता० २ जुलाई) शुक्रवार को वह वहीं जोधपुर राज्य का स्वामी बना। अनन्तर वह बादशाह की सेवा में उपस्थित हुआ, जिसने सिरोपाव आदि देने के अतिरिक्त उसे सात हज़ारी मनसब दिया। इस अवसर पर महाराजा अजीतसिंह से वि० सं० १७७९ (ई० स० १७२२) में ज़ब्त किये हुए परगनों में से नागोर, केकड़ी, घटियाली, मारोठ, परबतसर, फूलिया तथा कुछ बाहर के परगने अभयसिंह को मिले[1]।

अभयसिंह के दिल्ली में रहते समय ही उसके पास महाराजा जयसिंह की पुत्री के साथ विवाह करने का संदेशा आंबेर से आया। उसने

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १२१।

इर्विन-कृत "लेटर मुग़ल्स" के अनुसार महाराजा अजीतसिंह के मारे जाने के बाद उसके पुत्रों में गद्दी के लिए बखेड़ा खड़ा हुआ। ई० स० १७२४ ता० २९ जुलाई (वि० सं० १७८१ भाद्रपद वदि १) को शम्सामुद्दौला के बीच में पड़ने पर बादशाह ने अभयसिंह को "राजराजेश्वर" का ख़िताब तथा सात हज़ारी मनसब देने के साथ ही जोधपुर पर अधिकार करने के लिए जाने की आज्ञा दी (जि० २, पृ० ११५)।

कुछ सरदारों का अप्रसन्न होकर महाराजा का साथ छोड़ना

इस विषय में अपने पास रहनेवाले भंडारी रघुनाथ तथा अन्य सरदारों आदि से सलाह की। उन्होंने कहा कि पहले आप जोधपुर चलें, फिर आंबेर जाकर विवाह करें; परन्तु उसने यह सलाह न मानी और मथुरा जाकर पहिले आंबेर-नरेश की पुत्री से भाद्रपद वदि ८ (ता० १ अगस्त) को विवाह किया। इससे अप्रसन्न होकर चैनकरण दुर्गादासोत (समदड़ी), उदयसिंह हरनाथसिंहोत (खींवसर) तथा अन्य कितने ही चांपावत, कूंपावत, जैतावत, करणोत, मेड़तिया, जोधा, करमसोत तथा ऊदावत सरदार उसका साथ छोड़कर चले गये। उनमें से कई तो अपने-अपने घर गये और कितने ही महाराजा के छोटे भाइयों आनन्दसिंह तथा रायसिंह के शामिल हो गये। किशोरसिंह जैसलमेर अपनी ननसाल में चला गया[1]।

आनंदसिंह तथा रायसिंह ने उन सरदारों की सहायता से सोजत आदि परगनों पर अधिकार कर लिया और वे मुल्क में लूट-मार करने लगे[2]। जब उनपर फ़ौजकशी हुई, तो उन्होंने जाकर ईडर पर अधिकार कर लिया, जो बादशाह ने अभयसिंह को दिया था[3]।

आनंदसिंह तथा रायसिंह का ईडर पर अधिकार करना

जोधपुर राज्य के कार्यकर्ता भंडारियों से राठोड़ सरदार अप्रसन्न थे, क्योंकि उनका विश्वास था कि महाराजा अजीतसिंह को मरवाने में उनका भी हाथ था। एक वार राठोड़ शक्तिसिंह आईदानोत रोहट गया। इसकी ख़बर पाकर बख़्तसिंह ने उसे अपने पास बुलवाया, तो उसने

भंडारी रघुनाथ आदि का क़ैद किया जाना

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १२१-२४। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८४४। "वीरविनोद" से यह भी पाया जाता है कि जोधपुर में रहे हुए शेष (? कई) भाइयों को बख़्तसिंह ने मरवा डाला।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १२४।

(३) वीरविनोद; भाग २, पृ० ६६७।

उत्तर में कहलाया—"मैं तो महाराजा अजीतसिंह के पुत्र का ही सेवक हूं, परन्तु आपने भंडारियों के कहने से जो कुछ किया वह उचित नहीं था[1], क्योंकि राज्य तो अन्त में आपको ही मिलता। इसके बाद मैंने महाराजा-(अभयसिंह) को जयपुर में विवाह करने के लिए मना किया, परन्तु उस-पर भी ध्यान नहीं दिया गया। राठोड़ भंडारियों से अप्रसन्न हैं। अब तो भंडारियों को क़ैद करने से ही राठोड़ राज़ी होंगे और देश का फ़साद मिटेगा।" भंडारियों के क़ैद किये जाने का वचन मिलने पर शक्तिसिंह बख़्तसिंह के पास गया। अनन्तर देश का समुचित प्रबन्ध करने के लिये बख़्तसिंह ने पंचोली केसरीसिंह के झालरे पर रहते समय वि० सं० १७८१ (ई० स० १७२४) के कार्तिक मास में भंडारियों को गिरफ़्तार करने का हुक्म दिया। इस पकड़ा-धकड़ी में कई व्यक्ति मारे गये और ज़ख़्मी हुए। राज्य-कार्य पंचोली रामकिशन बख़्शी को सौंपा गया। फिर इन सब बातों की ख़बर बख़्तसिंह ने महाराजा अभयसिंह के पास मथुरा भेजी, जिस पर उस(महाराजा)ने भंडारी रघुनाथ को नज़रक़ैद किया और दीवान का पद पंचोली रामबख़्श बालकिशन को सौंपा[2]।

महाराजा का जोधपुर पहुंचना

बादशाह से आज्ञा प्राप्तकर जोधपुर की तरफ़ प्रस्थान करते समय महाराजा ने जयसिंह की तरफ़ से खत्री लाला शिवदास नारायणदास को ५००० सवारों सहित अपने साथ ले लिया था। जोधपुर पहुंचकर उसने भंडारी रघुनाथ आदि को मुक्त कर दिया। इससे नाराज़ होकर फिर कुछ सरदार जालोर की तरफ़ चले गये। उन्हें खुश करने के लिये उसने

(१) भंडारी रघुनाथ ने, जो अभयसिंह के साथ दिल्ली गया था, सवाई जयसिंह के समान ही उस (अभयसिंह) को अपने पिता अजीतसिंह को मरवाने की राय दी थी। उसने कहा कि महाराजा जयसिंह का कथन ठीक है, हमें जैसे बादशाह खुश रहे वैसा ही करना चाहिये (जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ११५)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १२४-५। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८४४।

करने के एवज़ में आप यह परगना दे दें। महाराजा को भी यह बात पसंद आई और वि० सं० १७८४ (ई० स० १७२७) में उसने उन दोनों को मारने की शर्त पर ईडर का परगना महाराणा को दे दिया[1]। महाराणा ने इसपर भींडर के महाराज जैतसिंह (शक्तावत) तथा धायभाई राव नगराज की अध्यक्षता में ईडर पर सेना भेजी, जिसने जाकर उसे घेर लिया। ऐसी दशा में आनंदसिंह तथा रायसिंह को भी आत्म-समर्पण करना पड़ा। उन दोनों को लेकर जब महाराज जैतसिंह महाराणा के पास पहुंचा तो उसने मारने के बजाय उन्हें अपने पास रख लिया। यह खबर पाने पर महाराजा ने जहानाबाद से वि० सं० १७८५ भाद्रपद वदि २ (ई० स० १७२८ ता० १० अगस्त) को एक उपालम्भपूर्ण पत्र महाराणा के नाम भेजा, परन्तु उसके पहुंचने के पूर्व ही वे दोनों भाई वहां से चले गये। इसके कुछ ही समय बाद उन्होंने मेड़ता आदि मारवाड़ के परगनों में उत्पात करना आरम्भ किया। इसपर महाराजा ने बख़्तसिंह को उधर भेजा। इसी बीच महाराजा जयसिंह के पास से वि० सं० १७८५ भाद्रपद वदि १३ (ता० २२ अगस्त) का पत्र पहुंचने पर महाराणा ने आनंदसिंह तथा रायसिंह के अपने पास आने पर उन्हें ईडर का कुछ इलाक़ा दे दिया[2]।

(१) वीरविनोद; भाग २, पृ० ९६७-८। अभयसिंह का महाराणा के नाम लिखा हुआ श्रावणादि वि० सं० १७८३ (चैत्रादि १७८४) आषाढ वदि ७ (ई० स० १७२७ ता० ३१ मई) का पत्र (वीरविनोद; भाग २, पृ० ९६९)।

(२) वीरविनोद; भाग २, पृ० ९६९-७२। जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में निम्नलिखित वर्णन मिलता है—

"वि० सं० १७८५ में आनन्दसिंह और रायसिंह के जालोर में उपद्रव करने पर जोधपुर से भंडारी अनूपसिंह उनके विरुद्ध फ़ौज लेकर गया, जिसपर वे गुजरात में चले गये। तब अनूपसिंह वापस जोधपुर लौट गया। इसके बाद ही आनन्दसिंह तथा रायसिंह दक्षिणी कंठा पीलू को २०००० फ़ौज के साथ लाकर जालोर में पुनः उपद्रव करने लगे। इसपर बख़्तसिंह नागोर से जोधपुर गया। खींवसी ने दक्षिणियों से बात कर कंठा पीलू को लौटा दिया और बख़्तसिंह ने आनन्दसिंह एवं रायसिंह को समझा-कर उन्हें ईडर का पट्टा दिला दिया (जि० २, पृ० १३१)।

उसी समय के आस-पास किशोरसिंह, महाराजा जयसिंह से आज्ञा लेकर खंडेला में विवाह करने गया, जहां से वह जैसलमेर पहुंचकर पोकरण

किशोरसिंह का पोकरण फलोदी में उत्पात करना

फलोदी की तरफ़ लूट-मार करने लगा। इसकी ख़बर मिलने पर वख़्तसिंह उधर गया, जिसपर किशोरसिंह भागकर जैसलमेर चला गया। तब पोकरण का ठिकाना नरावतों से छीनकर चांपावत महासिंह (भगवानदासोत) को दिया गया[1] और भीनमाल खालसा कर लिया गया[2]।

गुजरात के हाकिम मुवारिज़ुल्मुल्क सरबुलंदख़ां का प्रबंध ठीक न होने के कारण[3] बादशाह ने हि० स० ११४३ (वि० सं० १७८८ = ई० स० १७३२)[4] में उसको हटाकर वहां महाराजा अभय-

महाराजा को गुजरात की सूबेदारी मिलना

सिंह की नियुक्ति की। इसकी सूचना वकीलों-द्वारा प्राप्त होने पर सरबुलंदख़ां ने लौटने का इरादा

---

(१) महासिंह के पूर्वज गोपालदास (मांडणोत) के नाम रणसिंगाव की क़दीमी जागीर थी। वि० सं० १६४२ (ई० स० १५८५) में मोटे राजा उदयसिंह ने उसको आऊवा दिया और उसके बाद आऊवा का पट्टा हटाकर पाली की जागीर उसके नाम कर दी। पाली आदि ३३ गांव गोपालदास के पुत्र विट्ठलदास की जागीर में रहे। वह महाराजा जसवन्तसिंह के समय उज्जैन की लड़ाई में काम आया। विट्ठलदास के प्रपौत्र सावन्तसिंह (जोगीदासोत) के पट्टे में भीनमाल भी रहा; किन्तु वह निःसन्तान था, जिससे उसका छोटा भाई भगवानदास भीनमाल का स्वामी हुआ। महाराजा अजीतसिंह को जब राज्य नहीं मिला था, उस समय अच्छी सेवा करने के एवज़ में उस(महाराजा)ने भगवानदास को वि० सं० १७६६ (ई० स० १७०६) में ३० गांवों के साथ ३४००० रुपये आय की दासपां की जागीर दी। इसके दो वर्ष के भीतर ही उसे २१६०० रुपये की आय के आठ गांव और मिले। उसका पुत्र महासिंह था।

मारवाड़ के राठोड़ सरदारों का इतिहास (हस्तलिखित); जि० १, पृ० १-३।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १३१। मारवाड़ के राठोड़ सरदारों का इतिहास; जि० १, पृ० ३।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि वह दक्षिणियों से मिल गया था और उसने शाही आज्ञा की उपेक्षा करनी शुरू कर दी थी (जि० २, पृ० १३२)।

(४) जोधपुर राज्य की ख्यात में वि० सं० १७८६ दिया है (जि० २, पृ० १३२)।

किया। अन्य उपहारों आदि के अतिरिक्त इस अवसर पर अभयसिंह को शाही ख़ज़ाने से १८ लाख[1] रुपये और भिन्न-भिन्न आकार की ५० तोपें दी गईं। दिल्ली से प्रस्थान कर महाराजा प्रथम जोधपुर[2] गया, जहां उसने मारवाड़ और नागोर से २० हज़ार अच्छे सवार एकत्रित किये। अनन्तर बख़्तसिंह को साथ लेकर उसने अहमदाबाद की तरफ़ प्रस्थान किया[3]। पालनपुर

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में केवल पन्द्रह लाख लिखा है और महाराजा के साथ नवाब अज़ीमुल्लाख़ां का जाना लिखा है (जि० २, पृ० १३२)।

कविया करणीदान-कृत "सूर्यप्रकाश" से पाया जाता है कि बादशाह ने इस अवसर पर महाराजा को सिरोपाव आदि के अतिरिक्त अपनी सेना और ख़ज़ाने से इकतीस लाख रुपये दिये—

ताज कुलह सिरपेच जरी तोरा जर कंव्वर।
खंजर जमदढ़ खड्ग पवंग सिरपाव पटाम्भर।
तई लोक तावीन तोवखाना गजवाना।
सभ्भे साह वगसीस लाख इकतीस खजाना।
अमदावाद दीधो वतन असपति सोच उथालियो।
ईखतां दोयरा हां अभौ होय विदा इम हालियो॥ ६॥

[हमारे संग्रह की हस्तलिखित प्रति से; पृ० २०६]।

परन्तु ३१ लाख रुपये देने का कथन अतिशयोक्तिपूर्ण है।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि वह प्रथम जयपुर जाकर महाराजा जयसिंह से मिला, जहां से चलकर वह कार्तिक मास में जोधपुर पहुंचा (जि० २, पृ० १३२)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार वि० सं० १७८६ चैत्र वदि १० (ई० स० १७३० ता० २ मार्च) को महाराजा ने बख़्तसिंह के साथ जोधपुर से कूच किया। गांव दुनाड़े में डेरा होने पर उसने भाद्राजूण के जोधा पर, जो देश में बहुत बिगाड़ करता था, बख़्तसिंह को भेजा। वह उससे पेशकशी ठहरा और मालगढ़ में थाना स्थापित कर जोधा को साथ ले जालोर में महाराजा के शामिल हो गया। अनन्तर गांव रेवाडोसी के विद्रोही हीरा देवड़ा का दमन किया गया। गांव पोसालिये में उसने सिरोही के राव उम्मेदसिंह की पुत्री से वि० सं० १७८७ भाद्रपद वदि ८ (ई० स० १७३०

पहुंचने पर फ़ौजदार करीमदादख़ां भी उनसे जा मिला। यह पता चलने पर कि सरबुलंदख़ां अवरोध करने पर तुला बैठा है, उस(महाराजा)-ने सरदार मुहम्मदख़ां गोरनी के पास बीस हज़ार रुपये की हुंडी और नायब हाकिमी का पत्र भेजकर आज्ञा दी कि यदि संभव हो तो तुम शहर पर अधिकार कर लो। सरदार मुहम्मदख़ां गुजरातियों की सेना एकत्र कर अवसर देखने लगा। इस बीच शाहनवाज़ख़ां, मुहम्मद अमीनबेग तथा शेख़ अल्लाहयार ने फाटकों को चुनवा दिया और जगह जगह रक्षक नियुक्त कर वे घेरे के लिए सामान इकट्ठा करने लगे। रात-दिन वे पूरी सतर्कता रखते, जिससे सरदार मुहम्मदख़ां को मौक़ा न मिला[1]।

गुजरात के पहले सूबेदार सरबुलंदख़ां के साथ लड़ाई

महाराजा के अहमदाबाद से ६४ मील उत्तर में सिद्धपुर के निकट पहुंचने पर जवांमर्दख़ां तथा सफ़दरख़ां बाबी सरबुलंदख़ां की कृपाओं को भुलाकर राधनपुर से जाकर उससे मिल गये। साथ ही 'क़सबाती' नाम के मुसलमान सिपाही तथा स्वर्गीय मोमिनख़ां का पुत्र मुहम्मद बाक़िर भी गुप्त रूप से तीन-चार व्यक्तियों के साथ महाराजा के शामिल हो गये। हि० स० ११४३ के रबीउल्आख़िर (वि० सं० १७८७ आश्विन सुदि = ई० स० १७३० अक्टोबर) के प्रारम्भ में अभयसिंह साबरमती के किनारे मोजिर नामक गांव में पहुंचा, जहां से केवल दो मील दूर सरबुलंदख़ां के डेरे थे। खाई आदि खुदवाकर उसने रात्रि को वहीं ठहरने का प्रबन्ध किया। रात्रि पड़ने पर दोनों ओर के सेनाध्यक्ष अपने-अपने सलाहकारों के साथ युद्ध के संबंध में सलाह करते रहे। सुबह होने पर सरबुलंदख़ां सेना-सहित सामने आकर डट गया और युद्ध की बाट देखने लगा, लेकिन महाराजा ने परिस्थिति को

ता० २६ जुलाई) को विवाह किया (जि० २, पृ० १३३)।

बांकीदास भी लिखता है कि गुजरात जाते समय मार्ग में सिरोही के पोसालिया गांव में महाराजा ने सिरोही के राव की पुत्री से विवाह किया (ऐतिहासिक बातें; संख्या ३५५)।

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० २, पृ० १००-१।

देखते हुए युद्ध छेड़ा नहीं। गुजरातियों की सलाह के अनुसार वह नदी के ऊपर की ओर चार-पांच मील चलकर नगर के पश्चिम की तरफ़ उस स्थान पर पहुंचा, जहां पहले सरबुलंदख़ां का डेरा था। वहां पर ही महाराजा ने अपना डेरा नियत किया। ऊंचे स्थान पर बसे हुए गांव के छोटे-छोटे मकानों में राठोड़ों ने निवासस्थान बनाया। दीवारों पर तोपें रक्खी गईं और गांव में प्रवेश करने के जल और स्थल दोनों मार्ग रोक दिये गये। वह स्थान अहमदाबाद के क़िले के ठीक सामने था और वहां से गोलाबारी करने की सुविधा थी। सुरक्षित गांव में जवांमर्दख़ां तथा सफ़दरख़ां बाबी के साथ मारवाड़ी पैदल सेना रक्खी गई। भद्र के क़िले से उनपर थोड़ी गोलाबारी हुई। महाराजा ने सेना की एक टुकड़ी शाह भीकन की क़ब्र के पास तथा बहरामपुर और बाड़ा नैनपुर की तरफ़ भेजी[1]। इसका उद्देश्य यह था कि वहां तोपें लगाकर नगर पर आक्रमण किया जाय। शत्रु की गतिविधि का पता लगभग सूर्यास्त के निकट लगने के कारण सरबुलंदख़ां सुबह तक वहीं ठहरा रहा, लेकिन सतर्कता की दृष्टि से उसने अपने कुछ आदमियों को काली के क़िले में तथा शाही बाग़ के निकट मलिक मक़सूद गुजराती की मस्जिद की छत पर नियुक्त कर दिया। सवेरा होने पर

---

(१) बांकीदास लिखता है कि वि० सं० १७८७ आश्विन सुदि ७ (ई० स० १७३० ता० ७ अक्टोबर) को कोचरपालड़ी पहुंचने पर अहमदाबाद नगर तथा भद्र के क़िले पर पांच मोर्चे लगाये गये, जिनमें से चार महाराजा की सेना के थे और एक बख़्तसिंह की सेना का। एक मोर्चे में अभयकरण (कर्णोत), चांपावत महासिंह (पोकरण का), तथा भागीरथदास आदि, दूसरे में शेरसिंह सरदारसिंहोत (मेड़तिया), प्रतापसिंह भीमोत (जोधा, खैरवा का) तथा पुरोहित केसरीसिंह आदि, तीसरे में मारोठ तथा चौरासी के मेड़तिये एवं भंडारी विजयराज, चौथे में गुजराती सैनिक एवं भंडारी रत्नसिंह और पांचवे में दीवान पंचोली लाला आदि थे। नवाब के पास उस समय आठ हज़ार सवार, दस हज़ार पैदल और छोटी-मोटी नौसौ तोपें थीं (ऐतिहासिक बातें; संख्या ११०२-८)। जोधपुर राज्य की ख्यात में भी इन पांचों मोर्चों का उल्लेख है। उसमें पहले मोर्चे में पाली के चांपावत करण राजसिंहोत का नाम विशेष है (जि० २, पृ० १३४)।

उसने आगे बढ़कर शाही बाग़ के सामने दरगाईख़ां गुजराती की क़ब्र की दूसरी तरफ़ डेरा किया। बचा हुआ तोपख़ाना तथा सामान थोड़ी सेना के साथ उसने शहर में भिजवा दिया। सारा दिन इसी प्रकार बीत गया। हां क़िले की दीवारों से शत्रु पर गोलाबारी अवश्य जारी रही। उधर अधिकृत गांवों में महाराजा के सैनिक पक्की दीवारों का निर्माण करने में लगे थे। बाहर उन्होंने खाइयां खोद दी थीं। इन सब कार्यों से निवृत्त होकर उन्होंने भी गोलाबारी का जवाब दिया। ऊंचे स्थान पर स्थित होने के कारण उनकी गोलाबारी सफल हो रही थी, जब कि शत्रु के गोले व्यर्थ जा रहे थे। ई० स० १७३० ता० २० अक्टोबर (वि० सं० १७८७ कार्तिक वदि ५) को सूर्योदय के एक या दो घंटे बाद सरबुलंदख़ां युद्ध के लिए सन्नद्ध होकर साबरमती के रेतीले मैदान में आया। उसका उद्देश्य शत्रु को सुरक्षित स्थान से हटा देना था। घोड़े पर चढ़कर चलने लायक़ जगह न होने के कारण उसके सैनिकों को, जो मैदान से जा रहे थे, पैदल चलना पड़ा। अन्य बाधाओं का अतिक्रमण करते हुए वे गांवों की दीवारों पर जा पहुंचे, ज़हां से उन्होंने बंदूकें चलाईं। अन्त में उन्हें खानपुर के फाटक खोल देने में भी सफलता प्राप्त हुई। वह स्थान ठीक नदी के किनारे था और उसके नीचे कई खाइयां थीं। फिर भी सरबुलन्दख़ां के आदमी फाटक तथा दूसरे मार्गों से भीतर प्रवेश कर ही गये। महाराजा की सेना के गुजराती भी अटल थे। हाथों-हाथ लड़ाई होने लगी, पर कितने ही अफ़सरों के मारे जाने पर शेष गुजराती सैनिक महाराजा के शामिल हो गये। इसी बीच सरबुलन्दख़ां भी वहां जा पहुंचा, पर उसने तोपख़ाने को वापस क़िले में ले जाने की आज्ञा देकर एक बड़ी ग़लती की। साथ ही उसके पैदल बक्सरी सैनिक लूट-मार करने की ग़रज़ से बिखर गये। सर-बुलन्दख़ां के आगे बढ़ते ही महाराजा अपनी सारी सवार सेना के साथ उसका सामना करने को गया। मारवाड़ी सेना ने बड़े वेग से शत्रु पर आक्रमण कर उनपर बन्दूक़ों की मार की। सरबुलन्दख़ां के पास केवल तीरंदाज़ बच रहे थे। महाराजा और उसका भाई राजपूती प्रथा के विरुद्ध

बजाय हाथियों के घोड़ों पर चढ़कर लड़ रहे थे। सरबुलन्दख़ां ने हाथियों के समूह की तरफ़ आक्रमण किया, पर वहां तो महाराजा था नहीं। मारवाड़ी सैनिक बहुत समय तक तो जमकर लड़े, परन्तु बाद में उनके पैर उखड़ने लगे। सरबुलन्दख़ां ने भी लगातार आक्रमण कर उन्हें पीछे हटने पर मजबूर किया, पर इस बीच मुसलमानों की तरफ़ के कई प्रमुख अफ़सर मारे जा चुके थे, जिससे उनकी यह धारणा होने लगी कि विजयश्री उनके हाथ न लगेगी और उनमें से कितने ही युद्धक्षेत्र का परित्याग कर चले गये। इस घटना ने यहां तक तूल पकड़ा कि अन्त में यह बात फैल गई कि सरबुलन्दख़ां मारा गया। शहर में यह अफ़वाह फैलने पर वहां छोड़े हुए मुहम्मद अमीनबेग तथा अल्लाहयार खानपुर द्वार से बाहर निकल गये। मार्ग में उन्हें दूसरे मुसलमान सैनिक मिले, जिन्होंने कहा कि अब कुछ करना व्यर्थ है। उधर जैसे ही मारवाड़ियों को यह मालूम हुआ कि सरबुलन्दख़ां के सैनिकों की संख्या बहुत घट गई है, तो उन्होंने नवीन उत्साह के साथ आक्रमण किया, पर सरबुलन्दख़ां जमकर लड़ता ही रहा। इसी बीच अल्लाहयार जा पहुंचा, जिसे पहले आक्रमण में ही मारवाड़ियों ने मार डाला, लेकिन इससे सरबुलन्दख़ां हताश न हुआ। उसने अन्त में मारवाड़ियों को भगा दिया और सरखेज तक उनका पीछा किया। सारा दिन इसी प्रकार लड़ाई होती रही। रात्रि पड़ने पर विश्राम के लिए तम्बू लगाये गये। दिन में राजपूतों में यह अफ़वाह फैल गई कि महाराजा युद्धक्षेत्र छोड़कर चला गया। इसका परिणाम यह हुआ कि गुजराती तथा क़सबाती सैनिक भागकर आस-पास के गांवों में चले गये। शाम को महाराजा के वापस लौटने पर लोगों को सन्तोष हुआ। इस प्रकार राजपूतों पर विजय प्राप्तकर संध्या पड़ने पर मुहम्मद अमीनबेग के समझाने से सरबुलन्दख़ां घायल और मृत व्यक्तियों का प्रबन्ध करने के लिए वापस क़िले की तरफ़ चला गया[1]। दूसरे दिन जब महाराजा को यह ज्ञात हुआ

(१) फ़ारसी तवारीख़ों में इस लड़ाई में महाराजा की तरफ़ के मारे जानेवाले व्यक्तियों का उल्लेख नहीं मिलता, अतएव हम तत्सम्बन्धी हाल बांकीदास के

कि सरबुलंदख़ां अभी तक जीवित है, तो उसने लड़ाई की तैयारी की। सरबुलंदख़ां भी सतर्क था, पर उस दिन लड़ाई न हुई और दोनों तरफ़ के लोग अपने-अपने घायलों तथा मृतकों का प्रबंध करने में व्यस्त रहे[1]।

"ऐतिहासिक बातें" नामक ग्रन्थ से उद्धृत करते हैं। वह लिखता है—वि० सं० १७८७ आश्विन सुदि १० (ई० स० १७३० ता० १० अक्टोबर) शनिवार को बड़े सवेरे नवाब (सरबुलन्दख़ां) ने शेरसिंह (सरदारसिंहोत) के मोर्चे पर आक्रमण किया। अभयकरण और चांपावत करण उस (शेरसिंह) की सहायता को गये। बड़ी लड़ाई हुई, जिसमें मुसलमानों के तीन सौ आदमी और महाराजा की सेना के चांपावत करण (पाली), मेड़तिया भोमसिंह (सरासणा), जोधा हठीसिंह जोगीदासोत, धांधल भगवानदास (बूटेलाव) और पुरोहित केसरीसिंह मारे गये। अभयकरण बहुत घायल हुआ। महाराजा का डेरा मोर्चे से अलग था। यह ख़बर पाते ही वह अपने भाई बख़्तसिंह के साथ युद्धस्थल पर पहुंचा, पर उस समय तक लड़ाई बन्द हो चुकी थी। तब अश्वारूढ़ होकर दोनों भाइयों ने मुसलमानों पर आक्रमण कर उनमें से बहुतों को मार डाला और उनका सामान आदि लूट लिया। इस झगड़े में बख़्तसिंह के बीस तीर लगे। नवाब भाग गया और महाराजा की फ़तह हुई (ऐतिहासिक बातें संख्या ११०६-१२)। जोधपुर राज्य की ख्यात में लड़ाई का प्रारम्भिक वृत्तान्त तो ऐसा ही है, परन्तु आगे चलकर कुछ विस्तृत वर्णन दिया है, जो इस प्रकार है—"आश्विन सुदि १० की लड़ाई में महाराजा की सेना के चांपावत किशनसिंह जसवन्तोत (नारनड़ी), चांपावत रामसिंह सबलसिंहोत (रामासणी), चांपावत सुलतानसिंह सावन्तसिंहोत, चांपावत उर्जनसिंह पद्मसिंहोत, मेड़तिया शुभनाथ गोवर्द्धनोत, मेड़तिया सरदारसिंह जोरावरसिंहोत माधोदासोत, जोधा गुमानसिंह हठीसिंहोत, जोधा जोरावरसिंह कुशलसिंहोत, चांदावत हरीसिंह भावसिंहोत (नोखा) आदि कितने ही सरदार काम आये। महाराजा की फ़ौज की फ़तह होते-ही उसके कितनेक सैनिक वापस अपने डेरों को चले गये। इतने में अमीनख़ां ने, जो नदी के किनारे खड़ा था, अपनी दो हज़ार फ़ौज के साथ महाराजा की फ़ौज पर आक्रमण कर दिया। इसकी ख़बर लगते ही सैनिकों ने लौटकर उसका सामना किया और नवाब की फ़ौज को पीछे हटा दिया। दूसरे दिन फिर लड़ाई होने पर महाराजा की तरफ़ के बहुत से आदमी मारे गये और घायल हुए। उसी दिन जोधपुर से जाकर ऊदावत अमरसिंह कुशलसिंहोत (नींबाज) तथा चांदावत अभयसिंह विजयसिंहोत (बलूंदा) महाराजा की सेना में शामिल हुए (जि० २, पृ० १३५-७)।

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० २, पृ० २०५-११। "वीरविनोद" में भी इस लड़ाई का संक्षिप्त उल्लेख है (भाग २, पृ० ८४४-५)। कविया करणीदान ने

महाराजा ने और लड़ने में लाभ की संभावना न देख सुलह की शर्तें तय करने के लिए महमूदावाद के जागीरदार मुखलिसखां एवं खंभात के फ़ौजदार मोमिनखां को नियत कर सरवुलंदखां के पास एक पत्र भिजवाया। उसका ठीक जवाव मिलने पर उपर्युक्त दोनों व्यक्ति सरवुलंदखां से जा-कर मिले। दूसरे दिन मोमिनखां और ऊदावत अमरसिंह (नींवाज) ने जाकर ये शर्तें कीं कि सरवुलंदखां को एक लाख रुपया और भारवरदारी दी जायगी, उसे अपनी तमाम तोपें महाराजा के सुपुर्द करनी होंगी और महाराजा से मिलना होगा। पहली मुलाक़ात के लिए यह तय हुआ कि प्रथम महाराजा सरवुलंदखां के पास जाय। तदनुसार नवाव ग़ाज़ीउद्दीनखां के वाग़ के पास एक तंवू खड़ा किया गया, परन्तु महाराजा ने कई प्रकार के वहाने वनाकर जाना स्थगित रक्खा। दूसरे दिन थोड़े से आदमियों के साथ सरवुलंदखां महाराजा के डेरे पर गया[1]। वहां उस समय सारे मार-वाड़ी सुसज्जित खड़े थे। सरवुलंदखां के पहुंचते ही महाराजा उसके स्वागत के लिए आगे वढ़ा। गले मिलने के अनन्तर दोनों पास-पास बैठ गये। फिर पगड़ी वदलने की रसम हुई, जिसके वाद सरवुलंदखां अपने डेरे को लौट गया। वख़्तसिंह घायल होने के कारण इस मिलन के समय उपस्थित न था और कहते हैं कि उस समय अभयसिंह वस्त्रों के भीतर

सरवुलंदखां के साथ सुलह होना

अपने ग्रन्थ "सूर्य प्रकाश" में इस लड़ाई का अत्यन्त विस्तारपूर्वक वर्णन किया है, पर काव्य ग्रन्थ होने से उसका वर्णन वहुधा प्रशंसात्मक और अतिशयोक्तिपूर्ण है।

(१) मुन्शी मुहम्मद सैयद अहमद मारहरोई-कृत "उमरा-इ-हनूद" से पाया जाता है कि सरवुलन्दख़ां ने अव्वल तो ख़ूब मुक़ाबिला किया, लेकिन बादशाह और नवाब आसफ़जाह के ख़ौफ़ से सुलह करना मुनासिब जानकर एक दिन शाम को चन्द चोबदारों और ख़िदमतगारों के साथ अभयसिंह की मुलाक़ात के लिए चला गया। यह हाल देखकर अभयसिंह को वड़ा ताज्जुब हुआ। बहरहाल स्वयं स्वागत कर उसे अपने निवास-स्थान पर ले गया और अत्यन्त सम्मान के साथ मसनद पर बैठाया। दोनों में स्नेह की बातें हुईं और वे पगड़ी बदल भाई बने (पृ० २३)। इससे भी स्पष्ट है कि विजय सरबुलन्दख़ां की ही हो रही थी।

जिरहबख़्तर पहने था[1]।

ई० स० १७३० ता० २६ अक्टोबर (वि० सं० १७८७ कार्तिक वदि ११) को सरबुलंदख़ां के प्रस्थान का प्रबंध करने के लिए जगदेव नामका एक व्यक्ति नियुक्त किया गया। इसके दूसरे दिन रत्नसिंह भंडारी ने भद्र के क़िले में प्रवेशकर वहां नया कोतवाल रक्खा। गाड़ियों का प्रबंध होने तक सरबुलंदख़ां को वहां रुकना पड़ा। छोटी-बड़ी एकसौ तिहत्तर[2] तोपें सूबे के दीवान अब्दुलग़नी के सुपुर्द कर उससे रसीद लेली गई। अब भी प्रतिज्ञा किये हुए एक लाख रुपयों में से वीस हज़ार देने बाक़ी रह गये, जिन्हें भिजवा देने का ज़िम्मा अमरसिंह ने अपने ऊपर लिया। अनन्तर मोडासा तथा उदयपुर होता हुआ सरबुलंदख़ां आगरे चला गया। तब महाराजा शाही बाग़ के निकट जाकर क़िले में प्रवेश करने की शुभ घड़ी का इन्तज़ार करने लगा। वहां ही अब्दुलग़नीख़ां तथा अब्दुल मुफ़ाख़िरख़ां उससे जाकर मिले। ता० ७ नवंबर (कार्तिक सुदि ९) को महाराजा ने अपने भ्राता सहित भद्र के क़िले में प्रवेश किया, जहां कुछ

महाराजा का भद्र के क़िले में प्रवेश करना

---

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० २, पृ० २११-२। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८४६।

बांकीदास इस सम्बन्ध में लिखता है कि दूसरे दिन नवाब(सरबुलन्दख़ां)-ने शेख़ मुजायद को महाराजा अभयसिंह के पास सुलह की शर्तें तय करने के लिए भेजा। महाराजा ने उससे कहलाया कि अपना सारा तोपख़ाना छोड़कर चले जाओ। ऐसा ही हुआ। इस प्रकार वि० सं० १७८७ आश्विन सुदि १२ (ई० स० १७३० ता० ११ अक्टोबर) को अहमदाबाद पर महाराजा का अधिकार हुआ (ऐतिहासिक बातें; संख्या १११३)। जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि आश्विन सुदि १२ को नवाब ने पत्र लिखकर ऊदावत अमरसिंह को बुलाया। उसने महाराजा की आज्ञा से जाकर यह तय किया कि नवाब शहर छोड़ देगा, उसे भारबरदारी दी जायगी और महाराजा से मिलकर वह पगड़ी बदल भाई बनेगा। इसके एवज़ में उसे कई मंज़िल तक पहुंचा दिया जायगा। कार्तिक वदि ७ को वह (नवाब) महाराजा और उसके भाई से मिला (जि० २, पृ० १३७)।

(२) "मिरात-इ-अहमदी" से पाया जाता है कि महाराजा को छोटी बड़ी २७३ तोपें सरबुलन्दख़ां ने सौंपी (जि० २, पृ० १३१)।

समय तक ठहरने के बाद वह अपने डेरे पर लौट गया। कुछ दिनों बाद स्थायी रूप से वहां रहकर वह सूबे की देख-भाल करने लगा[1]।

उसी वर्ष महाराजा ने अपने भाई बख़्तसिंह को पाटण का हाकिम नियुक्त किया और वहां का कार्य-संचालन करने के लिए उसके साथ एक नायब भेजा[2]।

बख़्तसिंह को पाटण की हाकिमी मिलना

सरबुलंदख़ां ने गुजरात की हाकिमी छूटने के पूर्व राजा साहू के मन्त्री बाजीराव को कुछ मामले तय करने के लिए अपने पास बुलाया था, परन्तु उस (बाजीराव) के रवाना होने के पहिले ही सरबुलंदख़ां गुजरात छोड़कर चला गया और वहां का

बाजीराव के साथ महाराजा की मुलाक़ात

---

(१) इर्विन; लेटर मुग़ल्स; जि० २, पृ० २१२-३। इर्विन ने अपनी पुस्तक में सरबुलन्दख़ां के साथ की महाराजा अभयसिंह की लड़ाई का सारा हाल मिर्ज़ा मुहम्मद हसन-कृत "मिरात-इ-अहमदी" के आधार पर लिखा है (देखो मूल फ़ारसी पुस्तक; जि० २, पृ० ११८-२८)।

कैम्पबेल-कृत "गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी" में लिखा है कि अहमदाबाद में प्रवेश करने पर महाराजा ने रत्नसिंह भंडारी को अपना नायब मुक़र्रर किया और मोमिनख़ां के चचेरे भाई फ़िदाउद्दीनख़ां को शहर कोतवाल बनाया। कुछ समय बाद पालनपुर के हाकिम करीमदादख़ां जालोरी का, जो उसके साथ गुजरात में गया था, देहान्त हो गया। अनन्तर शेरख़ां बाबी के उपस्थित होने पर उसे उसके पिता की जागीर दी गई, जिसकी सूचना बादशाह को भेजी गई। मोमिनख़ां खंभात का शासक तथा फ़िदाउद्दीनख़ां उसके आस-पास के प्रदेश का हाकिम बनाया गया (भाग १, खंड १, पृ० ३११)।

जोधपुर राज्य की ख्यात में भी अहमदाबाद के सूबे पर अभयसिंह का अमल होने, उसके शाही बाग़ में ठहरने और नायब का पद भंडारी रत्नसिंह को देने का उल्लेख है (जि० २, पृ० १३७)।

(२) कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी; भाग १, खंड १, पृ० ३१२।

लगभग उसी समय मुबारिज़ुलमुल्क (सरबुलन्दख़ां) के अनुयायी मीर फ़ख़रुद्दीन ने महाराजा के पास उपस्थित हो जूनागढ़ की नायब हाकिमी प्राप्त की, परन्तु उसके वहां पहुंचने पर मीर इस्माइल ने अमरेली (मध्य काठियावाड़) में लड़ाई कर उसे मार डाला। अनन्तर मुहम्मद पहाड़ अपने पिता करीमदादख़ां जालोरी के स्थान में पालनपुर का शासक बनाया गया तथा जवांमर्दख़ां बड़नगर भेजा गया (वही; भाग १, खंड १, पृ० ३१२)।

सूबेदार महाराजा अभयसिंह हुआ। तब गुजरात की चौथ के सम्बन्ध में क़ौल-करार करने के लिए बाजीराव ने महाराजा को पत्र लिखा, जिसपर उसने बड़ोदा और भड़ोच के फ़ौजदार[१] सैयद अज़मतुल्लाख़ां को बाजीराव के पास भेजा। वह माही नदी के निकट उससे मिला और चंडोला तालाब तक उसके साथ गया, जहां महाराजा की तरफ़ से भंडारी गिरधरदास और भंडारी रत्नसिंह उसके पास शर्तें तय करने के लिए गये। इस कार्य में कई रोज़ तक ढील होती रही। चौथे दिन बाजीराव महाराजा से शाही बाग़ में मिला और शर्तें तयकर लौट गया। उस समय यह भी तय हुआ कि विजयराज भंडारी मारवाड़ी सेना और गुजराती सेना के रिसालदार सरदार मुहम्मदख़ां एवं सैयद फ़ैयाज़ख़ां के साथ बाजीराव की मदद को जाकर पीलाजी[१] का बड़ोदा से अधिकार हटा वहां सैयद अज़मतुल्लाख़ां का अधिकार करा देगा। कूच-दर-कूच बाजीराव आदि बड़ोदा पहुंचे और वहां पर उन्होंने घेरा डाला। पीलाजी का भाई बरमाजी (? मालाजी) उनका मुक़ाबला करने के लिए तैयार हुआ और दोनों तरफ़ से तोप-बन्दूकों की लड़ाई शुरू हुई; परन्तु इसी बीच बाजीराव को अपने गुप्तचरों-द्वारा समाचार मिला कि उसकी अनुपस्थिति से लाभ उठाकर आसफ़जाह उसके मुल्क पर चढ़ आया है। यह समाचार पाकर बाजीराव घबरा गया और महाराजा की सेना को अहमदाबाद लौटने की आज्ञा दे, बड़ोदा का घेरा उठाकर वह अपने देश की तरफ़ चला गया[२]।

---

(१) पूना के पास के दावड़ी गांव के पटेल कैरोजी के दो पुत्र दामाजीराव और झींगोजी राव हुए। शिवाजी (दूसरा) के समय उसके सेनापति खंडेराव दाभाड़े ने गुजरात पर चढ़ाई की। उस समय दामाजी राव उसकी सेना में एक अफ़सर था। दाभाड़े ने साहू राजा के पास दामाजीराव की बड़ी प्रशंसा की और उसको अपने मातहत अफ़सरों में रक्खा। दामाजीराव के मरने पर उसकी जगह उसके भाई झींगाजीराव का पुत्र पीलाजीराव नियत हुआ, जो गुजरात में बड़ोदा राज्य का संस्थापक हुआ।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १३३-४। कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑव् दि बांबे प्रेसिडेंसी; भाग १, खंड १, पृ० ३१२। जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १३६।

उन दिनों भड़ोच शहर का हाकिम अब्दुल्लाबेग था, जिसे उस पद पर मुबारिज़ुल्मुल्क ने नियत किया था। अभयसिंह के हाथ में गुजरात का अधिकार जाने से उसे बड़ी नाराज़गी हुई और उसने निज़ाम को लिखा कि यदि मुझे आज्ञा हो तो मैं आपकी तरफ़ से यहां का नायब बना रहूं। निज़ामुल्मुल्क ने इसकी स्वीकृति देने के साथ ही उसको "नेकआलमखां" का खिताब दिया। उन्हीं दिनों बख़्तसिंह नागोर गया और अज़मतुल्ला आगरे[1]।

बख़्तसिंह का नागोर जाना

मुबारिज़ुल्मुल्क (सरबुलन्दखां) के समय में ही अहमदाबाद में खुशहालचन्द नगर सेठाई से हटाया जाकर गंगादास वहां का नगर सेठ बनाया गया था। अभयसिंह ने सूबेदार होने पर उसकी प्रतिष्ठा बहाल रखने का वचन दिया, जिस सम्बन्ध की अपनी मुहर-सहित सनद अभयकरण दुर्गादासोत ने उसको दी। महाराजा ऊपर से तो उसपर कृपा रखता था, पर भीतर ही भीतर वह उसे क़ैद कर उससे रुपये वसूल करना चाहता था। इसके लिए मोमिनखां की सलाह के अनुसार सम्सामुद्दौला (ख़्वाजा असीम, खानदौरां) की मोहर-सहित दो जाली फ़रमान तैयार किये गये। उनमें से एक का आशय यह था कि अहमदाबाद के लोगों पर जो कर और दंड लगाये गये थे उनका मूल गंगादास था, इसलिए उसको गिरफ़्तार कर सांकल से बांध, बेड़ी पहना बादशाह के दरबार में भेजा जाय। दूसरा फ़रमान मोमिनखां के नाम था, जिसमें यह लिखा गया कि मुख़लिसखां गंगादास को पकड़ने में मदद पहुंचावे, जिसके एवज़ में महमूदाबाद का पट्टा उसे दिया जायगा। इस फ़रमान के अनुसार मुख़लिसखां ने गंगादास को अपने पास बुलवाकर क़ैद कर लिया। अभयकरण को, जिसने उस-(गंगादास) की प्रतिष्ठा क़ायम रहने की सनद कर दी थी, यह बहुत बुरा

महाराजा का अहमदाबाद के लोगों पर ज़ुल्म करना

(१) कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑव् दि बांबे प्रेसिडेंसी; भाग १, खंड १, पृ० ३१२। जोधपुर राज्य की ख्यात में श्रावणादि वि० सं० १७८७ (चैत्रादि १७८८ = ई० स० १७३१) के आषाढ मास में बख़्तसिंह का नागोर जाना लिखा है (जि० २, पृ० १३४)।

लगा और वह लड़ने के लिए तैयार हो गया। महाराजा ने जब उसको अपने पास बुलाकर फ़रमान दिखाया और कहा कि यह तो शाही हुक्म है, तब वह चुप हो गया। गंगादास के साथ ही उसके अन्य सम्बन्धी एवं रेशम के व्यापारी भी क़ैद कर लिये गये। मार-पीट तथा कई तरह के अत्याचार कर गंगादास के पास से दो लाख रुपये, उसके चचेरे भाई खुशहाल से तीन लाख तथा दूसरों से जो कुछ वसूल हो सका वसूल किया गया। इस प्रकार थोड़े समय में ही सख़्ती तथा ज़ोर-जुल्म से नौ लाख रुपये वसूल किये गये। इससे हिन्दुस्तान के शहरों के अतिरिक्त सिंध, तुर्किस्तान, अरब, हबस (अबीसीनिया), ईरान और तूरान तक होनेवाले रेशम के व्यापार को बड़ा धक्का पहुंचा। इसी तरह महाराजा ने बोहरों से भी दंड की बड़ी रक़म वसूल की। छोटे-बड़े हिन्दू मुसलमान तक भी दंड से न बचे और उनका माल और धन छीना गया। यही नहीं आमदनी बढ़ाने की ग़रज़ से सोने, चांदी के प्रचलित सिक्कों में मेल की मात्रा बढ़ाई गई, जिससे अन्यत्र उनका चलन बन्द हो गया। सैयदों, शेख़ों, फ़कीरों आदि को जो भूमि और गांव आदि निर्वाह के लिए दिये गये थे उनपर भी महाराजा ने चौथ लेना स्थिर किया, जिससे उनकी हालत भी ख़राब हो गई। इसी अर्से में मुबारिज़ुल्मुल्क (सरबुलन्दख़ां)-द्वारा एकत्र किया हुआ शीशा, बारूद, गोले तथा अन्य सामग्री, जो उसने तोपों के साथ महाराजा को सौंपी थी, धीरे-धीरे जोधपुर भिजवादी गई[1]।

स्वर्गीय खंडेराव दाभाड़े[2] का प्रतिनिधि, सोनगढ़ का स्वामी तथा

---

(१) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १३६-४१।

(२) दाभाड़ों का मूल पुरुष येसाजी तळेगांव का रहनेवाला था। वह शिवाजी की सेवा में रहता था। उसका बड़ा लड़का खंडेराव रामराजा का सेवक रहा, जिसने उसकी अच्छी सेवा के बदले में उसे "सेना धुरन्धर" की पदवी देकर गुजरात और बगलाना की तरफ़ भेजा। शाहू राजा के समय वह उसका सेनापति नियत हुआ। फिर उसको गुजरात और काठियावाड़ अधीन करने की आज्ञा हुई। उसने वसही से सूरत तक का कोंकण का प्रदेश अपने हस्तगत किया था। ई० स० १७२९ (वि० सं०

महाराजा का पीलाजी गायकवाड़ को छल से मरवाना

भीलों एवं कोलियों का मददगार होने के कारण पीलाजी गायकवाड़ स्वभावतः अभयसिंह को कांटे के समान खटकता था। बड़ोदा नगर और डभोई के किले पर अधिकार हो जाने से उसका पक्ष अधिक मज़बूत हो गया था[1]। खंडेराव को गुजरात की चौथ उगाहने का हक़ प्राप्त था। मही नदी के पार के इलाक़े की चौथ उगाहने के बाद खंडेराव की विधवा पत्नी उमाबाई ने आस-पास के प्रदेश की चौथ उगाहने के लिए कंथाजी (क़दम) के स्थान में पीलाजी गायकवाड़ को नियत किया। वह बड़ा लश्कर लेकर चौथ उगाहने के लिए डाकोर नामक स्थान में पहुंचा। यह खबर सुनकर अभयसिंह सेना और तोपखाना लेकर उससे लड़ने चला, परन्तु प्रकट रूप से उसने अपना पैग़ाम पहुंचाने और सलाह करने के लिए कितनेक मारवाड़ियों को उसके पास भेजा। उनमें से दो तीन छल-कपट करने में प्रवीण व्यक्तियों को महाराजा ने कहा कि अवसर पाते ही पीलाजी को मार डालना। पीलाजी के पास पहुंचकर उन्होंने दो-तीन दिन दिखावटी बात-चीत में व्यतीत किये। फिर एक रात्रि को अपने डेरों पर जाने की आज्ञा हो जाने के बाद उनमें से एक वापस पीलाजी के पास गया और कुछ ज़रूरी बात कहने के बहाने उसके कान के निकट जा उसने कटार के दो घाव कर उसे मार डाला। इसका पता लगते ही पीलाजी के आदमियों ने घातक को मार डाला। अनन्तर माही नदी के सामने के तट पर सांवली गांव में उसके शव का दाह हुआ[2]।

१७८६) में पथरी की बीमारी से उसकी मृत्यु हुई। उसकी मृत्यु के बाद, पुत्र की नाबालिग़ अवस्था के कारण उसकी वीर पत्नी उमाबाई उसका कार्य चलाने लगी।

(१) कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी; भाग १, खंड १, पृ० ३१३।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १४२-३। कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी; भाग १, खंड १, पृ० ३१३। जोधपुर राज्य की ख्यात में भी पीलाजी गायकवाड़ के महाराजा-द्वारा मरवाये जाने का वर्णन है। उसमें घातक का नाम ईंदा लखधीरोत दिया है (जि० २, पृ० १३६-४०)।

महाराजा का बड़ोदा पर अधिकार करना

इसके बाद महाराजा अहमदाबाद से प्रस्थान कर माही नदी से उत्तर बड़ोदा ज़िले में जा पहुंचा। दक्षिणियों ने बड़ोदा और दूसरे परगने छोड़कर डभोई के क़िले में, जो सुरक्षित स्थान समझा जाता था, आश्रय लिया। तब महाराजा ने खाद्य सामग्री, शीशा और दारू-गोला अपने क़ब्ज़े में कर जीवराज भंडारी को बड़ोदा के मालदार आदमियों को क़ैदकर उनसे धन वसूल करने के लिए वहां नियत किया। उसने वहां के लोगों पर यह झूठा आरोप लगाकर कि उनके पास मरहटे धन-माल छोड़ गये हैं उनसे दंड लिया। उन्हीं दिनों बादशाह की तरफ़ से रहीमबावेरख़ां इस आशय का फ़रमान लेकर कि शाही मनसबदारों और सूबे के मुख्य-मुख्य अधिकारियों को उनकी जागीरें दे दी जावें पाटण से अहमदाबाद पहुंचा। महाराजा का नायब रत्नसिंह भंडारी उस (रहीमबावेरख़ां) को लेकर महाराजा के पास गया। महाराजा डभोई पर भी अधिकार करना चाहता था, परन्तु इसमें उसको सफलता नहीं मिली। तब शेरख़ां बाबी को बड़ोदे की हुकूमत पर नियत कर वह अहमदाबाद लौट गया[1]।

उमाबाई की महाराजा पर चढ़ाई

स्वर्गीय खंडेराव दाभाड़े की पत्नी उमाबाई बड़ी वीर और साहसी स्त्री थी। वह घोड़े और हाथी की सवारी करने में अत्यन्त कुशल थी और अपनी सेना का संचालन स्वयं किया करती थी। पीलाजी के मारे जाने की ख़बर पाकर वह बदला लेने के लिए व्यग्र हो उठी। एतदर्थ तीस-चालीस हज़ार सवारों तथा पीलाजी के पुत्र दामाजी एवं कंथाजी के साथ, जो उसकी सेवा में रहते थे, उमाबाई ने अहमदाबाद की तरफ़ प्रस्थान किया।

(१) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १४३-४। उसी पुस्तक से यह भी पाया जाता है कि महाराजा ने बड़ोदा के मुखिया दल्ला को पकड़कर उससे भी धन वसूल करना चाहा। इसी अभिप्राय से वह उसे गढ़ में साथ ले गया और अन्य लोगों को उसने बाहर ही रक्खा, परन्तु दल्ला को किसी प्रकार महाराजा की मंशा का पता चल गया, जिससे वह एक तेज़ अश्व पर सवार हो क़िले से भागकर निकल गया।

नगर से तीन कोस दूर साबरमती के किनारे मौज़ा फ़ैज़ाबाद (शाहबाड़ी) में डेरे कर उसने अपने लश्कर को आस-पास के गांवों को लूटने की आज्ञा दी। महाराजा ने उस समय मोमिनख़ां एवं जवांमर्दख़ां को बुलवाकर उन्हें शाही बाग़ की तरफ़ के हिस्से की रक्षा करने को भेजा। दूसरी तरफ़ के हिस्सों की रक्षा के लिए भंडारियों एवं जागीरदारों के साथ मारवाड़ी सेना नियुक्त की गई। उसी समय राजा बख़्तसिंह एक अच्छी सेना के साथ नागोर से आकर भाई से मिला। बख़्तसिंह सेठ खुशहालचंद झवेरी को नगर सेठाई दिये जाने के सम्बन्ध का परवाना अपने साथ लाया था, जिसके अनुसार महाराजा ने उसको खिलअत देकर नगर सेठाई का कार्य सौंप दिया। इस बीच जीवराज भंडारी का, जो अपनी वीरता का बड़ा गर्व रखता था और गुजराती तथा मारवाड़ी सवारों और पैदलों के साथ राजपुर के पास चारतोड़े में रहकर उधर की रक्षा करने के लिए नियत था, मरहटों से सामना हुआ, जिसमें वह मारा गया। इस लड़ाई के फलस्वरूप जीवराज भंडारी की सेना के घोड़े, शस्त्रास्त्र, छोटी-बड़ी तोपें, झंडे, नक्कारे आदि मरहटों के हाथ लगे। इस लड़ाई के समय महाराजा ने रत्नसिंह को जीवराज भंडारी की सहायतार्थ जाने को कहा, परन्तु वह नहीं गया और जवांमर्दख़ां एवं मोमिनख़ां को शत्रु का सामना करने के लिए कहलाकर वह बहरामपुर की तरफ़ चला गया। जवांमर्दख़ां और मोमिनख़ां शाम होते-होते शाही बाग़ में पहुंचे। उन्होंने लड़ना शुरू किया और मीर अबुल-क़ासिम आदि कई व्यक्तियों को, जो घायल हुए थे, लेकर वे लौट गये। रत्नसिंह भद्र के क़िले की दीवार के नीचे के अपने डेरे में चला गया। इन घटनाओं से लोग घबरा गये और दक्षिणी, हिन्दू एवं मुसलमान सबको लूटने लगे। रसूलाबाद के बाहरी भाग में, जहां शाही वंश के सैयदों का निवास था, दक्षिणियों ने बड़ी लूट-मार की। सैयद लड़ने के लिए तैयार हुए, पर दक्षिणियों का सैन्य बल अधिक होने से उनका कुछ वस न चला। उनमें से कई मारे गये और उनके घर-बार, दरगाह का सामान तथा एक बड़े पुस्तकालय का नाश हो गया। एक सप्ताह तक दिन में दक्षिणी और

रात में कोलियों के दल मकान खोदने, माल-मता लूटने तथा घरों में आग लगाने का कार्य करते रहे। इस प्रकार मरहटों का उत्साह, जो पीलाजी के मारे जाने से कम हो गया था, पुनः बढ़ गया। जीवराज भंडारी के लश्कर का नाश करने के बाद दक्षिणी रत्नसिंह भंडारी पर चढ़े। उसके पास मरहटों का सामना करने योग्य शक्ति का अभाव होने से वह कुछ कर नहीं सकता था। अन्त में मरहटों से संधि करने का निश्चय होकर अभयकरण तथा जवांमर्दखां उमाबाई के पास सुलह की बात-चीत करने के लिए भेजे गये। वे तीन दिन तक वहां रहे और बातचीत के बाद चौथ[1] और सरदेशमुखी[2] के कायम रहने के अतिरिक्त अस्सी हज़ार रुपया छूंद का मरहटों को देना तय हुआ। इस रक़म के चुकाने का भार जवांमर्दखां ने अपने ऊपर लिया। तब उमाबाई बड़ोदा की तरफ़ गई। जवांमर्दखां थोड़े-थोड़े रुपये उसके पास भेजता रहा। अन्त में बीस हज़ार रुपये बाक़ी रह गये, जो उसने स्वयं रख लिये। उमाबाई के बड़ोदा पहुंचने पर शेरखां बाबी ने क़िले को मज़बूत कर उससे लड़ने की तैयारी की, पर उमाबाई ने महाराजा के साथ की अपनी सुलह की बातचीत की सूचना उस (शेरखां बाबी) को दे दी, जिससे लड़ाई न हुई। फिर चौथ की रक़म वसूल करने के लिए एक व्यक्ति को उसके पास छोड़कर वह अपने देश लौट गई[3]।

---

(१) आमद का चौथा हिस्सा।

(२) सरदेशमुखी नामक कर के रूप में आमद का दसवां भाग लिया जाता था। यह कर चौथ से अलग लगता था।

(३) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १५७-६१। कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी; भाग १, खंड १, पृ० ३१४।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस घटना का वि० सं० १७८९ (ई० स० १७३३) के फाल्गुन मास के प्रारम्भ में होना लिखा है। उससे पाया जाता है कि उक्त मास में उमाबाई सत्तर हज़ार फ़ौज के साथ चढ़ आई तब महाराजा ने बख़्तसिंह को बुलाने के साथ जोधपुर, मेड़ता आदि से फ़ौज बुलाई। महाराजा तथा बख़्तसिंह तो क़िले में ही रहे और सारी फ़ौज के मुत्सद्दियों के डेरे किलकिला नदी पर हुए। कुल फ़ौज बीस हज़ार थी।

उसी वर्ष बादशाह की तरफ़ से महाराजा के लिए खिलअ़त, रत्न-जटित सिरपेच, कलगी तथा एक हाथी लेकर ख़्वाजा असदुल्लाख़ां गुर्ज़बर्दार अहमदाबाद गया। इस अवसर पर मोमिनख़ां आदि कई दूसरे अफ़सरों के लिए भी खिलअ़तें भेजी गई[1]।

बादशाह के पास से महाराजा के लिए खिलअत आना

उन दिनों औरंगज़ेब की छावनी का हिसाबी कामदार निज़ामुद्दीनख़ां का पुत्र मीर ग़ाज़ीउद्दीनख़ां था। वह बड़ा धनवान था। रहीमयावरख़ां के चुगली करने पर महाराजा के आदमियों ने उसे क़ैद कर लिया और एक बड़ी रक़म लेने के बाद उसे छोड़ा[2]।

ग़ाज़ीउद्दीनख़ां से धन वसूल करना

उन्हीं दिनों भंडारी गिरधरदास ने महाराजा से झूठी शिकायत की कि राजसी राणावत के पुत्र सुलतानसिंह से भंडारी रघुनाथ मिल गया है और ये बादशाह से उद्दंडता कर रहे हैं। इसपर महाराजा ने नाज़र दौलतराम तथा धांधल केसरीसिंह को लिखा कि वे सुलतानसिंह एवं भंडारी रघुनाथ को मार डालें। इस आशय का परवाना लेकर भंडारी गिरधरदास गुजरात से जोधपुर

सुलतानसिंह को मरवाना

दुर्गादास के पुत्र अभयकरण तथा खंडेराव में भाईचारा था, जिससे महाराजा ने उसे उमाबाई के पास भेजा। उमाबाई ने उससे कहा कि हमारी गुजरात में चौथ लगती है, आपने दग़ाबाज़ बाजीराव से क्यों बात की और पीलाजी को क्यों मारा? अब या तो सम्मुख होकर युद्ध करो या चौथ दो। इसपर अभयकरण ने डेढ़ लाख रुपया देना ठहराकर इसकी सूचना महाराजा को दी। महाराजा की सेना के भंडारी रत्नसिंह, भंडारी विजयराज, मेहता जीवराज, पंचोली लालजी आदि को यह बात पसन्द नहीं आई और उन्होंने उमाबाई की फ़ौज पर चढ़ाई कर दी। लड़ाई होने पर जीवराज मारा गया। इसके दूसरे दिन महाराजा ने अभयकरण को पुनः उमाबाई के पास भेजकर बात कराई और दो लाख रुपया देना ठहराकर उसे वापस लौटाया (जि० २, पृ० १४१)।

(१) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १६२। कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी; भाग १, खंड १, पृ० ३१४।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १६२।

गया। नाज़िर ने तदनुसार चौहान हिन्दूसिंह के हाथ से सुलतानसिंह को मरवा दिया। भंडारी रघुनाथ क़ैद में था, जिसे धांधल केसरीसिंह ने सौंपने से इनकार कर दिया। इसी बीच महाराजा को वास्तविक बात का पता चल गया, जिससे भंडारी रघुनाथ की ज़िन्दगी बच गई। भंडारी गिरधरदास से महाराजा बड़ा नाराज़ हुआ। वह (गिरधरदास) इस घटना के कुछ ही समय बाद बीमार पड़कर मर गया[1]।

हि० स० ११४५ (वि० सं० १७८९ = ई० स० १७३२) में रत्नसिंह भंडारी को अपना नायब नियतकर अपने भाई राजा बख़्तसिंह के साथ महाराजा ने जोधपुर होते हुए दिल्ली जाने के लिए प्रस्थान किया। उसके जाते ही रत्नसिंह भंडारी ने मनमाने तौर से हुकूमत करना आरम्भ किया और वह कर के नाम से अनुचित ढंग से लोगों से धन वसूल करने लगा। उसकी देखा-देखी शहर-कोतवाल एवं बाहर के हिस्से के फ़ौजदार भी रैयत को हैरान करने और दुःख देने लगे[2]।

महाराजा का गुजरात से जोधपुर जाना

उसी वर्ष उमाबाई के दत्तक पुत्र जादोजी ने, महाराजा के गुजरात से लौट जाने की ख़बर सुनकर, बीस हज़ार सवारों के साथ नायब सूबे-(रत्नसिंह) से चौथ तय करने के लिए प्रस्थान किया। मार्ग में पड़नेवाले स्थानों में लूट-मार करता और ख़िराज वसूल करता हुआ वह शाही बाग़ में पहुंचा। भंडारी ने गुजराती सिपाहियों को अपनी फ़ौज में

जादोजी की महाराजा के नायब भंडारी रत्नसिंह पर चढ़ाई

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १४०।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १६२-३। कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी; भाग १, खंड १, पृ० ३१४।

जोधपुर राज्य की ख्यात में भी इसका उल्लेख है। उससे यह भी पाया जाता है कि महाराजा अपने भाई-सहित पहले जालोर गया, जहां से बख़्तसिंह तो नागोर गया और महाराजा कुछ समय वहां रहने के उपरान्त जोधपुर चला गया (जि० २, पृ० १४१-२)।

भर्तीकर मोमिनख़ां को बुलवाया और शहरपनाह के फाटक बन्द करवा एवं वहां सेना नियुक्त कर उसने अपनी मज़बूती की। मुहम्मद अल्लादीन गवर्नी लश्कर-सहित शहर के बाहरी भाग की रक्षा के लिए नियत किया गया। मरहटी सेना की टुकड़ियां शहर के बाहरी हिस्सों पर हमला करतीं, जिनके साथ मुसलमानी सेना की लड़ाई होती। इस प्रकार एक मास व्यतीत हुआ। तब भंडारी ने अपने विश्वासपात्र आदमी जादोजी के पास भेजकर यह पुछवाया कि उमाबाई के साथ सन्धि हो जाने के बाद अब इस चढ़ाई का कारण क्या है। इसपर जादोजी पहले के क़रार के मुताबिक़ चौथ तय कर वहां से सोरठ की तरफ़ चला गया और आपस में सुलह हो गई[1]।

उन दिनों शेरख़ां बाबी बड़ोदे का काम संभालता था। वह कुछ समय के लिए अपनी जागीर बाड़ासिनोर का बन्दोबस्त करने गया।

बड़ोदे पर मरहटों का अधिकार होना

उसकी अनुपस्थिति से लाभ उठाकर पीलाजी गायकवाड़ के भाई महादजी ने बड़ोदा के पास के जम्बूसर के परगने पर क़ब्ज़ा कर लिया। फिर पादरा के मुखिया दल्ला और वीरमगांव के देसाई के उत्तेजित करने पर उसने बड़ोदा पर घेरा डालने का विचार किया। सोनगढ़ से दामाजीराव ने उसकी सहायता के लिए फ़ौज रवाना की। इसपर मुहम्मद सरवाज़ ने, जिसको शेरख़ां बाबी अपनी अनुपस्थिति में बड़ोदा का प्रबन्ध करने के लिए छोड़ गया था, शहरपनाह के फाटक आदि मज़बूत कर युद्ध की तैयारी की। शेरख़ां ने इसकी खबर मिलने पर भंडारी से मदद मंगवाई और वह स्वयं भी रवाना हुआ। भंडारी ने मोमिनख़ां को लिखा कि शेरख़ां के पहुंचते ही वह उसकी मदद कर मरहटों को बाहर निकाल दे। शेरख़ां फ़ौज एकत्र कर क़रीब डेढ़ मास तक पड़ा रहा। फिर उसके माही नदी पार करने की खबर पाते ही महादजी, उसका मार्ग रोकना आवश्यक समझ, बहुतसी सेना के साथ उसके मुक़ाबले के लिए गया। शेरख़ां और

(१) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १६३-४।

उसके साथी बड़ी वीरता से लड़े, पर दक्षिणियों का बल अधिक होने से उनको सफलता नहीं मिली और बड़ोदा पर महादजी का अधिकार हो गया। मोमिनखां, जो उस समय मार्ग में ही था, बड़ोदा का हाल सुनकर खंभात चला गया[1]। तब से ही स्थायी रूप से बड़ोदे पर मरहटों का अधिकार हो गया।

वि० सं० १७६० (ई० स० १७३३)[2] में बख़्तसिंह ने नागोर से एक बड़ी सेना के साथ बीकानेर पर अधिकार करने के विचार से प्रस्थान किया और स्वरूपदेसर के निकट जाकर डेरे किये। उन दिनों बीकानेर के स्वामी सुजानसिंह का ज्येष्ठ पुत्र जोरावरसिंह अपनी सेना-सहित नोहर में था।

बख़्तसिंह की बीकानेर पर चढ़ाई

सुजानसिंह के समाचार भिजवाने पर वह आमरसर पहुंचा, जहां बीकानेर की और फ़ौज भी उसके शामिल हो गई। इस सम्मिलित सेना के साथ जोधपुर की सेना का तालाब नाज़रसर पर मुक़ाबिला होने पर प्रथम आक्रमण में ही बख़्तसिंह की सेना के पैर उखड़ गये और वह भागकर अपने डेरों में चली गई। अनन्तर बख़्तसिंह के यह समाचार जोधपुर भेजने पर अभयसिंह स्वयं एक बड़ी सेना के साथ उससे जा मिला। फिर मोर्चाबन्दी हुई और युद्ध शुरू हुआ, परन्तु बीकानेरवालों ने गढ़ की रक्षा का ऐसा अच्छा प्रबन्ध किया था तथा वे इतनी दृढ़ता के साथ जोधपुरवालों का सामना कर रहे थे कि अभयसिंह को विजय की आशा न रही। फिर रसद आदि का पहुंचना भी जब बन्द हो गया तो अभयसिंह ने मेवाड़ के महाराणा संग्रामसिंह (दूसरा) से कहलाया कि आप अपने प्रतिष्ठित व्यक्तियों

(१) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १६७-८। कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी; भाग १, खंड १, पृ० ३१४-५।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात में बख़्तसिंह का वि० सं० १७६१ (ई० स० १७३४) के भाद्रपद मास में बीकानेर पर चढ़कर जाना लिखा है (जि० २, पृ० १४२), जो ठीक नहीं है। "वीरविनोद" में भी वि० सं० १७६० ही दिया है (भाग २; पृ० ८४७)।

को भेजकर हमारे बीच सुलह करा दें। इसपर महाराणा ने चूंडावत जगतसिंह (दौलतगढ़ का), मोही के भाटी सुरताणसिंह तथा पंचोली कानजी (सहीवालों का पूर्वज) को दोनों दलों में सुलह कराने के लिए भेजा। पहले तो जोधपुरवालों ने ख़र्च की मांग भी की, परन्तु बीकानेर-वालों ने इसे स्वीकार नहीं किया। पीछे से इस शर्त पर सुलह हुई कि पीछे लौटते हुए जोधपुर के सैन्य का बीकानेरवाले पीछा न करें। तदनुसार फाल्गुन वदि १३ (ई० स० १७३४ ता० २० फ़रवरी) को दोनों भाई (अभयसिंह तथा वख़्तसिंह) कूचकर नागोर चले गये[1]।

बीकानेर की प्रथम चढ़ाई में असफल होने पर भी वख़्तसिंह ने आशा का परित्याग नहीं किया। बीकानेर के क़िलेदार नापा सांखला के

---

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६१। वीरविनोद; भाग २, पृ० २००-१। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ४७।

यह घटना जोधपुर राज्य की ख्यात में इस प्रकार दी है—"वि० सं० १७६१ के भाद्रपद (ई० स० १७३४ अगस्त) मास में वख़्तसिंह ने बीकानेर पर चढ़ाई की और गोपालपुर ख़रबूज़ी पर अधिकार करता हुआ वह बीकानेर के निकट जा पहुंचा। आश्विन के शुक्ल पक्ष में अभयसिंह भी जोधपुर से कूचकर खींवसर पहुंचा, जहां पंचोली रामकिशन, जिसे महाराजा ने एक लाख रुपया देकर फ़ौज एकत्र करने के लिए भेजा था, चार हज़ार सवारों के साथ उससे जा मिला। वख़्तसिंह का मोर्चा लक्ष्मी-नारायण के मन्दिर की तरफ़ था। बीकानेरवालों ने बाहर आकर लड़ाई की, परन्तु वख़्तसिंह के राजपूतों ने उन्हें गढ़ में भगा दिया। महाराजा का डेरा नगर के निकट होने पर चारों तरफ़ मोर्चे लगाये गये। बीकानेर के महाराजा सुजानसिंह का कुंवर भाद्रा की तरफ़ था। वह लालसिंह कांधलोत और चार हज़ार सेना के साथ शहर में गया। चार मास तक लड़ाई चली, पर जब गढ़ टूटता न दिखा तो लालसिंह ने जाकर जोधपुरवालों को समझाया कि इस बार तो आप पधारें, फिर आयेंगे तो सारा प्रबन्ध कर दिया जायगा। इस बात का बचन देने पर अभयसिंह और वख़्तसिंह नागोर गये (जि० २, पृ० १४२)।

उपर्युक्त वर्णन में महाराणा संग्रामसिंह (दूसरा) के आदमियों-द्वारा दोनों दलों में संधि स्थापित होना नहीं लिखा है, परन्तु "वीरविनोद" में भी इसका उल्लेख है, अतएव कोई कारण नहीं है कि उसपर अविश्वास किया जाय।

बीकानेर पर पुनः अधिकार करने का बख़्तसिंह का विफल प्रयत्न

वंशज दौलतसिंह ने अपने स्वामी से कपट कर बख़्तसिंह से बीकानेर के गढ़ पर उसका अधिकार करा देने के विषय में गुप्त रूप से बातचीत की। वह तो यह चाहता ही था। दौलतसिंह के उद्योग से जैमलसर का भाटी उदयसिंह, शिव पुरोहित, भगवानदास गोवर्द्धनोत और उसके दो पुत्र हरिदास एवं राम तथा बीकानेर के कितने ही सरदार आदि भी बख़्तसिंह के शामिल हो गये। उदयसिंह के एक सम्बन्धी पड़िहार राजसी के पुत्र जैतसी की बीकानेर राज्य में बहुत चलती थी। उन दिनों कुंवर जोरावरसिंह ऊदासर में था। उदयसिंह जैतसी को साथ ले उसके पास ऊदासर चला गया। इस प्रकार बीकानेर का गढ़ अरक्षित रह गया। ऊदासर में एक रोज़ गोठ के समय उदयसिंह अधिक नशे में हो गया और ऐसी बातें करने लगा, जिनसे स्पष्ट ज्ञात होता था कि उसके मन में कोई भेद है। जैतसी ने जब अधिक दबाव डाला तो उसने सारी बातें खोलकर उससे कह दीं। जैतसी सुनते ही सावधान हो गया और आस-पास से सेना एकत्र करने के लिए उसने ऊंट-सवार रवाना किये। इतना करने के उपरान्त वह बीकानेर जाकर गढ़ के उस भाग की तरफ़ गया, जिधर पड़िहार रक्षा पर थे और उनसे रस्सी नीचे गिरवाकर वह उसके सहारे गढ़ में दाख़िल हो गया। अनन्तर उसने महाराजा को जाकर इसकी सूचना दी। सुजानसिंह तत्काल जैतसी को साथ लेकर सूरजपोल पर पहुंचा तो उसने उसके ताले खुले पाये। उसी समय सब दरवाज़े मज़बूती से बन्द कर दिये गये और गढ़ की रक्षा का समुचित प्रबन्ध कर तोपें दागी गईं। सांखला नाहरख़ां बख़्तसिंह तथा उसके आदमियों को बुलाने गया हुआ था, जो पास ही में थे। जब उसने तोपों की आवाज़ सुनी तो समझ गया कि षड्यन्त्र का सारा भेद खुल गया। बख़्तसिंह ने भी जान लिया कि अब आशा फलीभूत होना असम्भव है, अतएव वह अपने साथियों-सहित वहां से चला गया। उधर गढ़ के भीतर के सांखले मार डाले गये तथा धायभाई को गढ़ की रक्षा का भार सौंपा गया। यह

घटना वि० सं० १७६१ आषाढ वदि ११ (ई० स० १७३४ ता० १६ जून) को हुई[1]।

उसी वर्ष[2] महाराणा जगतसिंह (दूसरा) के राज्याभिषेकोत्सव के अवसर पर बख़्तसिंह नागोर से उदयपुर गया। सवाई जयसिंह भी इस अवसर पर वहां गया हुआ था। अनन्तर हुरडा नामक स्थान में पारस्परिक एकता के सम्बन्ध में अहदनामा करने के लिए राजाओं के एकत्र होने पर[3] अभयसिंह भी वहां जाकर सम्मिलित हुआ। वहां पर उपस्थित महाराजाओं में उदयपुर, जोधपुर, जयपुर, कोटा, बीकानेर आदि के नरेश प्रमुख थे। वहां कुछ विचार होने के उपरान्त एक अहदनामा लिखा गया, जिसमें नीचे लिखी शर्तें स्थिर हुईं—

राजपूत राजाओं का एकता का प्रयत्न

१. सब राजा धर्म की शपथ खाते हैं कि वे एक दूसरे का दुःख-सुख में साथ देंगे। एक का मान अथवा अपमान सबका मान अथवा अपमान समझा जायगा।

---

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६२-३। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ४८-६। "वीरविनोद" में भी इस घटना का संक्षिप्त वर्णन है (भाग २; पृ० ५०१)। जोधपुर राज्य की ख्यात में इस घटना का उल्लेख नहीं है, जिसका कारण संभवतः यही हो सकता है कि इस चढ़ाई का सम्बन्ध केवल बख़्तसिंह से ही था, अभयसिंह से नहीं। एक बार विफल-प्रयत्न होने पर पुनः बीकानेर पर अधिकार करने के लिए बख़्तसिंह का षड्यन्त्र करना असम्भव नहीं है।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात में वि० सं० १७६२ दिया है (जि० २, पृ० १४२), जो ठीक नहीं है; क्योंकि आगे चलकर उसी ख्यात में उस समय महाराणा जगतसिंह (दूसरा) का राज्याभिषेकोत्सव होना भी लिखा है। महाराणा का राज्याभिषेकोत्सव वि० सं० १७६१ के ज्येष्ठ मास में हुआ था, जैसा "वीरविनोद" से भी स्पष्ट है।

(३) राजाओं का यह सम्मेलन सवाई जयसिंह के उद्योग से हुआ था। वह मरहटों के आक्रमणों से घबरा गया था और इसीलिए उसने यह सब किया था (विस्तृत वृत्तान्त के लिए देखो मेरा राजपूताने का इतिहास; जि० २, पृ० ६३७-८)।

२. एक के शत्रु को दूसरा अपने पास न रक्खेगा।

३. वर्षा ऋतु के बाद कार्यारम्भ किया जायगा, तब सब राजा रामपुरा में एकत्र होंगे। यदि कोई किसी कारणवश स्वयं न आसके तो अपने कुंवर को भेजेगा।

४. यदि कुंवर अनुभव की कमी से कुछ ग़लती करे तो महाराणा ही उसको ठीक करेगा।

५. कोई नया काम शुरू हो तो सब एकत्र होकर करें।

यह अहदनामा वि० सं० १७९१ श्रावण वदि १३ (ई० स० १७३४ ता० १७ जुलाई) को लिखा गया। फिर सब राजा अपने-अपने स्थानों को चले गये[1]।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि हुरड़ा से प्रस्थानकर महाराजा अभयसिंह देवलिया[2] के ठिकाने में गया। देवलिया का ठिकाना पहले भिणायवालों का था, परन्तु शाहपुरा के उम्मेदसिंह ने उसे छीनकर अपने भाई ईश्वरीसिंह को दे दिया था। महाराजा ने उसे वापस छुड़ाकर

देवलिया का ठिकाना रघुनाथसिंह को देना

---

(१) वीरविनोद; भाग २, पृ० १२१८-२१। वंशभास्कर; भाग ४, पृ० ३२२७-८। टॉड; राजस्थान; जि० १, पृ० ४८२-३ और टिप्पण।

कर्नल टॉड ने इस अहदनामे की तिथि श्रावण सुदि १३ दी है और "वंशभास्कर' में सब राजाओं का कार्तिक सुदि में एकत्र होना लिखा है। ये दोनों बातें ठीक नहीं हैं। अहदनामे की नक़ल में श्रावण वदि १३ ही दी है।

जोधपुर राज्य की ख्यात में भी इस घटना का संक्षिप्त उल्लेख है, पर उसमें भी समय ग़लत दिया है, जैसा कि ऊपर (पृ० ६३४, टि० २ में) बतलाया गया है। उससे यह भी पाया जाता है कि अभयसिंह ने इस अवसर पर लाल डेरा खड़ा किया था। इसपर बादशाह को यह सुझाया गया कि वह कुछ फ़ितूर करनेवाला है, परन्तु भंडारी अमरसिंह ने समझा-बुझाकर उसकी दिलजमई कर दी, जिससे उसने महाराजा के पास सिरोपाव तथा आभूषण आदि भिजवाये (जि० २, पृ० १४२-३)।

(२) यह ठिकाना आजकल अजमेर प्रान्त के अन्तर्गत है।

राठोड़ रघुनाथसिंह नाहरसिंहोत जोधा को दिया। महाराजा वहां तीन मास तक ठहरा और उसने शाहपुरा के गांवों से पेशकशी वसूल की। इसपर उम्मेदसिंह उसके पास उपस्थित हो गया[1]।

इसके कुछ ही समय बाद सवाई जयसिंह ने ख़ानदौरां की मारफ़त अर्ज़ करा रणथंभोर का क़िला बादशाह से अपने नाम करा लिया। यह

गढ़ बीटली की मांग पेश करना

ख़बर मिलने पर महाराजा की तरफ़ से गढ़ बीटली (तारागढ़) की मांग पेश की गई। इसपर जयसिंह को रणथंभोर का क़िला दिया जाना स्थगित रहा[2]।

उसी समय के आस-पास दक्षिणियों की फ़ौज के पूना से इधर बढ़ने का समाचार मिलने पर बादशाह ने एक बड़ी फ़ौज के साथ बख़्शी नवाब

दक्षिणियों के ख़िलाफ़ महाराजा का शाही सेना के साथ जाना

ख़ानदौरां को उसके विरुद्ध भेजा। इस अवसर पर महाराजा अभयसिंह, जयसिंह (जयपुर का) तथा दुर्जनसाल (कोटा का) आदि समस्त हिन्दू नरेशों को भी ख़ानदौरां के शामिल होने की आज्ञा दी गई। इसपर सब राजा हाड़ोती में उसके शरीक हो गये। अनन्तर चंद्रावतों के ठिकाने रामपुरा से तीस कोस इधर नवाब के डेरे हुए। दक्षिणियों की सेना आसेर में थी। उसके नज़दीक शाही फ़ौज का डेरा होने पर महाराजा ने उसी समय आक्रमण करने की सलाह दी, पर जयसिंह ने इसके विरुद्ध राय दी और गुप्त रूप से दक्षिणियों को कहला दिया कि जमकर लड़ाई करना ठीक नहीं, अतएव मुल्क में लूट-मार करो। तदनुसार उन्होंने सांभर और मौजाबाद को लूटा तथा दिल्ली जाकर कालका के मेले में लूट-मार की। तब महाराजा अभयसिंह और नवाब दिल्ली गये। बादशाह के पूछने पर महाराजा ने सब हाल कह दिया। इसपर वह महाराजा से बड़ा खुश हुआ और उसने दक्षिणियों को तीस लाख तीस हज़ार पांच सौ रुपये दिये। तब वज़ीर नवाब करमदीनख़ां भी, जो

(१) जि० २, पृ० १४३-४।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १४४।

दक्षिणियों के विरुद्ध भेजा गया था, वापस दिल्ली चला गया[1]।

वीरमगांव (झालावाड़) का परगना ख़ालसा होने पर बुरहानुल्मुल्क (सआदतख़ां) ने वह परगना अपने प्रीतिभाजन वहरामख़ां के नाम करा

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १४४।

इर्विन-कृत "लेटर मुग़ल्स" में भी इस घटना का उल्लेख है, पर उसमें अभयसिंह का नाम नहीं है। उससे पाया जाता है कि सम्सामुद्दौला ने एक बड़ी फ़ौज तथा कितने ही राजपूत राजाओं एवं सरदारों के साथ दक्षिणियों के विरुद्ध अजमेर की तरफ़ प्रस्थान किया, जहां मल्हारराव का होना ज्ञात हुआ था। मार्ग में जयसिंह भी अपनी सेना-सहित उसके शामिल हो गया। कोई लड़ाई नहीं हुई और जयसिंह के समझाने से उस (सम्सामुद्दौला) को मरहटों की सारी शर्तें स्वीकार करनी पड़ीं। उसके अनुसार मरहटों के नर्मदा के पार चले जाने की शर्त पर उन्हें चौथ देना मंज़ूर किया गया। साथ ही मालवा से उन्हें बाइस लाख रुपया देना भी तय हुआ। शाही सेना कोटा और बूंदी राज्यों से आगे न गई और सम्सामुद्दौला वहां से वापिस लौटकर ई० स० १७३५ ता० २१ या २२ मई (वि० सं० १७९२ ज्येष्ठ सुदि ११ अथवा १२) को दिल्ली पहुंचा (जि० २, पृ० २८०-१)।

आगे चलकर जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में लिखा है कि बादशाह के पास इसकी शिकायत अभयसिंह ने की थी, जिससे जयसिंह उससे नाराज़ था और उसने दक्षिणियों को मारवाड़ पर चढ़ाई करने को भड़काया। इसपर राणोजी सिंधिया और मल्हारराव होलकर ने पचास हज़ार सेना के साथ गुजरात की तरफ़ से जाकर जालोर और सोजत का बिगाड़ किया। अनन्तर वे मेड़ता चले गये। उनकी सेना की कुछ टुकड़ियां जोधपुर में रातानाडा तक गईं। इसपर चांपावत शक्तिसिंह आईदानोत (रोहट का), चांपावत महासिंह भगवानदासोत (पोकरण का), पुरोहित जगा आदि ने मेड़ते के मालकोट में भंडारी विजयराज, भंडारी मनरूप आदि के साथ रहकर लड़ाई की तैयारी की। अन्य कितने ही परगनों की सेनाएं भी उनके शामिल हुईं और शाहपुरे का राजा उम्मेदसिंह भारतसिंहोत सीसोदिया भी चार हज़ार सेना के साथ गया। महाराजा को इसकी सूचना मिलने पर उसने वहां से हुक्म भेजा कि दक्षिणियों को एक दाम भी न दें। इसके बाद दोनों तरफ़ से मोर्चे लगाये जाकर लड़ाई शुरू हुई, पर कुछ ही समय में तोपों की मार से घबराकर दक्षिणियों ने युद्ध बन्द कर दिया। महाराजा ने दिल्ली से प्रस्थान कर दिया था, लड़ाई बन्द होने की ख़बर पाकर उसने अपनी यात्रा स्थगित कर दी (जि० २, पृ० १४५-६)।

रत्नसिंह भंडारी का लड़ाई में बहरामखां को मारना

दिया। इस सम्बन्ध में वज़ीरुल्मुल्क ने भंडारी रत्नसिंह के पास सूचना भेजी कि वह बहरामखां को मदद पहुंचावे। बहरामखां ने भी परगना मिलने की सनद भंडारी के पास भेजी और रवाना होने की तैयारी की। इस बीच भंडारी ने उस परगने की खेती नष्ट होने की झूठी सूचना बादशाह के पास भिजवाकर वह परगना महाराजा के नाम करवा दिया। बुरहानुल्मुल्क को जब इसकी सूचना मिली तो वह बड़ा नाराज़ हुआ और बादशाह से उसकी कहा-सुनी हो गई। उसने बहरामखां से कहा कि किसी बात की चिन्ता न करते हुए वह जल्दी वीरमगांव में दाख़िल होने का प्रयत्न करे। इसपर सादिक़अलीखां को जूनागढ़ में अपना नायब मुक़र्रर कर वह वीरमगांव की तरफ़ अपनी सेना-सहित रवाना हुआ। भंडारी को इस बात की ख़बर मिलते ही उसने मारवाड़ी फ़ौज और मोमिनखां, शेरखां एवं सफ़-दरखां बाबी को अपने पास बुलवाया। साथ ही उसने गुजराती सिपाहियों को अपनी सेना में भर्ती किया और तोपख़ाना दुरुस्तकर वह लड़ने के लिए चला। धोलका होता हुआ वह कोठ नामक स्थान में पहुंचा। वहां रहते समय उसको ख़बर मिली कि धंधुका नामक स्थान में बहरामख़ां आ पहुंचा है। तब बहरामखां की छावनी से सात कोस दूर हंडाला में उसने पड़ाव किया। वहां पर मोमिनखां, शेरखां एवं सफ़दरखां उसके शामिल हो गये। वहां से प्रस्थान कर धंधुका ज़िले के दमोली गांव में भंडारी ठहरा। वहां रहते समय यह तय हुआ कि इस शर्त पर सुलह का प्रयत्न किया जाय कि इस वर्ष तो बहरामखां शाही हुक्म की तामील करे और दूसरे वर्ष जैसी आज्ञा हो उसका पालन किया जावे। बहरामखां ने यह शर्त स्वीकार नहीं की और लड़ने का निश्चय किया। भंडारी ने भी लड़ने का आयोजन किया और तोप की मार करने योग्य स्थान तक आगे जाकर ठहरा। तीन दिन तक दोनों ओर से बराबर तोपें चलती रहीं। हि० स० ११४७ ता० १ जमादिउलअव्वल (वि० सं० १७६१ आश्विन सुदि २ = ई० स० १७३४ ता० १६ सितंबर) को भंडारी ने अपनी सेना को तैयार

रहने की आज्ञा दी। रात बीतते बीतते भंडारी की फ़ौज ने बहरामख़ां के सैनिकों पर, जो नाच-रंग में मस्त थे, आक्रमण कर दिया। इस अचानक आक्रमण से मुसलमानी फ़ौज भागने लगी। बहरामख़ां ने अपने थोड़े से सैनिकों के साथ ठहरकर मारवाड़ी फ़ौज का सामना किया, परन्तु उसकी शक्ति कम होने से उसके साथ के कई आदमी मारे गये और वह स्वयं भी बुरी तरह घायल हुआ। उसी समय मुहम्मदक़ुलीख़ां वहां पहुंच गया, जो बहरामख़ां को उठाकर सीहोर की तरफ़ रवाना हुआ, पर मार्ग में दो घंटे बाद ही उस(बहरामख़ां)की मृत्यु हो गई। मुसलमानी सेना में भगदड़ मचते ही मारवाड़ी सैनिकों ने मुसलमानों का सारा सामान आदि लूट लिया। इसी बीच एक अज्ञात सैनिक ने भंडारी पर आक्रमण कर उसके सिर और कंधे पर दो घाव किये, जिससे वह दो मास में अच्छा हुआ। भंडारी के आदमियों ने आक्रमणकारी को मार डाला[1]।

रत्नसिंह के भय से मोमिनख़ां का खंभात जाना

बहरामख़ां के मारे जाने का हाल भंडारी तथा मारवाड़ियों को ज्ञात नहीं हुआ। मारवाड़ियों को भय था कि उसके सोरठ पहुंच जाने से उधर बहुत हानि होगी, अतएव उन्होंने भंडारी को यह सुझाया कि बक़ाया वसूल करने की सनद पहले मोमिनख़ां ने ही भेजी थी, लड़ाई करने के लिए भी उसने ही उसे तैयार किया था और लड़ाई उसी की साजिश से हुई थी, इसलिए इस अवसर से लाभ उठाकर उस(मोमिनख़ां)को हटा दिया जावे, जिससे उधर कोई सिर उठानेवाला ही न रहे। भंडारी की मोमिनख़ां के साथ एक प्रकार से मैत्री थी और यह भी पक्की ख़बर नहीं थी कि बहरामख़ां जीवित है अथवा मर गया, जिससे उसने अपने सलाहकारों की बात न मानी; परन्तु यह बात सर्वत्र फैल गई एवं मोमिन-

(१) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १७७-८२। कैम्पबेल-कृत "गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी" में भी इस घटना का संक्षिप्त वर्णन है (भाग १, खंड १, पृ० ३१५-६), परन्तु उसमें सोहराबख़ां नाम दिया है, जो ठीक नहीं है, क्योंकि मूल पुस्तक (मिरात-इ-अहमदी) में बहरामख़ां नाम मिलता है।

खां के कान तक पहुंची। तब बीमारी के बहाने भंडारी की आज्ञा प्राप्त कर मोमिनखां खंभात चला गया[1]।

शेरखां की तबदीली के समय कलिया नाम का एक व्यक्ति मारवाड़ी सैनिकों के साथ वीरमगांव का फ़ौजदार मुक़र्रर किया गया था।

रत्नसिंह और रंगोजी की लड़ाई

मारवाड़ियों के आने से भावसिंह देसाई को भय लगा। दामाजी के धोलका पहुंचने और चौथ तय हो जाने की खबर पाकर उसने उसको अपने यहां बुलाया। मरहटों ने भावसिंह के शत्रु क़सबातियों को निकालकर वीरमगांव पर क़ब्ज़ा कर लिया। कलिया ने यह सारा हाल जाकर भंडारी से कहा। उधर रंगाजी को चौथ उगाहने के लिए वीरमगांव में नियत कर दामाजी स्वदेश चला गया। उसके चले जाने के बाद हि० स० ११४८ (वि० सं० १७९२ = ई० स० १७३५) में, भंडारी की आज्ञा बिना चौथ उगाहना असंभव देख, रंगोजी धोलका परगने के बावला गांव में ठहरा और मरहटे लोग जगह-जगह मुसाफ़िरों को मारने-पीटने, लूटने एवं क़त्ल करने लगे। भंडारी ने रंगोजी पर चढ़ाई करने का निश्चय कर साबरमती के दूसरे किनारे जाकर आंबा तालाब पर छावनी डाली और लश्कर एकत्र करना एवं तोपखाना दुरुस्त करना शुरू किया। मरहटे सवार भंडारी की छावनी तक जाकर लूट मचा देते थे। जब भंडारी आगे बढ़ा तब मरहटों ने धोलका की तरफ़ प्रस्थान किया और भंडारी उनके पीछे-पीछे चला। रंगोजी वीरमगांव की तरफ़ गया और वहां के क़िले को सुरक्षित समझ उसमें ठहरा। अनन्तर उसने भावसिंह की सहायता से क़िले के कोट और बुर्जों की मज़बूती की एवं ईदगाह मुनसर तालाब पर, जो ऊंची जगह थी, अपने मोर्चे जमाये। ता० २९ जमादिउल्अव्वल (कार्तिक सुदि २ = ता० ६ अक्टोबर) को भंडारी भी जा पहुंचा। उसने क़िले के सामने गंगासर

(१) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १८३-४। कैम्पबेल-कृत "गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी" में भी इसका संक्षिप्त उल्लेख है (भाग १, खंड १, पृ० ३१६)।

के पास मोर्चा जमाया। इसी बीच बड़ोदा से ५०० सवार रंगोजी की सहायतार्थ पहुंच गये। ईदगाह के मोर्चे से तोपों की मार होने पर मारवाड़ियों के बहुत से आदमी मारे गये और कितने ही घायल हुए। ऐसी हालत देख मारवाड़ी एकाएक मरहटों पर टूट पड़े और उन्होंने उनमें से बहुतों को मारकर उनकी तोपें आदि छीन लीं। फिर मारवाड़ियों ने वहां सुरंगें खोदना और मोर्चे बनाना शुरू किया। उन्हीं दिनों मरहटों के एक दूसरे सैन्य ने, जो सरताल (ठासरा) क़सबे में था, कपडवंज क़सबे पर कब्ज़ा कर लिया। इस बीच भंडारी ने मोमिनखां को बुलाने के लिए कई पत्र लिखे, पर कपट का संदेह होने से वह रवाना होने में ढील करता रहा। मरहटे अवसर की तलाश में थे। एक दिन भंडारी के रहने का जासूसों-द्वारा ठीक-ठीक पता लगाकर मध्यान्ह के समय, जब कड़ी धूप पड़ रही थी और मारवाड़ियों के मोर्चे के बहुत से रक्षक बाहर गये हुये थे, क़िले में से निकलकर ५०० मरहटों ने उनपर अचानक आक्रमण कर दिया, जिससे भंडारी घबरा गया और मुनसर तालाब के एक मन्दिर में जा छिपा। मरहटों को जब वह नहीं मिला तो वे वापिस क़िले में चले गये। भंडारी ने बाहर निकलकर क़िले को सुरंग लगाकर उड़ाने की कोशिश की, पर इसी बीच मोमिनख़ां के पास से पत्र पहुंचे, जिनसे ज्ञात हुआ कि दामाजी राव के भाई प्रतापराव और देवजी नाघेर दस हज़ार सवारों के साथ गुजरात पर बढ़ रहे हैं। पहले तो भंडारी को इस सम्वाद पर विश्वास ही नहीं हुआ, लेकिन पीछे से दिलजमई होने पर उसने वहां का घेरा उठा लिया और आधीरात के समय तोपखाने, भारबरदारी की गाड़ियों एवं अपने छावनीवालों को अहमदाबाद भिजवा दिया। सुबह को वह स्वयं भी शीघ्रता के साथ वहां से रवाना हो गया। प्रतापराव के आने की खबर रंगोज़ी को नहीं थी, इसलिए पहले तो वह कपट के सन्देह के कारण रुका रहा, परंतु पीछे से उसने अपने सवारों को मारवाड़ियों के पीछे भेजा, जिन्होंने सरखेज के पास पहुंचकर मारवाड़ियों के पीछे रहे हुए ज़ख़्मी उम्मेदसिंह राजपूत तथा अन्य आदमियों और जानवरों आदि को

पकड़ लिया[1]।

अहमदाबाद पहुंचकर भंडारी ने क़िले की मज़बूती की और धन एकत्र करने के लिए वह धनी-निर्धनी सब पर अत्याचार करने लगा, जिससे वहां का वास छोड़कर बहुतसे लोग अन्यत्र जाने लगे। उधर वात्रक ज़िले में पहुंचकर प्रतापराव ने वहां का सारा महसूल वसूल कर लिया। अनन्तर हवेली, वलाद, पेथापुर और झाला होता हुआ वह धोलका पहुंचा, जहां दो हज़ार सवार छोड़कर वह धन्धुका गया। इस बीच बाजीराव पेशवा का अनुयायी कन्थाजी, मल्हारराव होल्कर के साथ ईडर के मार्ग से होता हुआ दांता तक पहुंच गया। दक्षिणियों के भय से वहां रहनेवाले कितने ही धनवान व्यक्ति पहाड़ों में जा छिपे, पर उन्हें पकड़कर उन्हों(दक्षिणियों)ने दस लाख रुपये वसूल किये। फिर वड़नगर होते हुए दक्षिणी पालनपुर गये, जहां के स्वामी पहाड़खां जालोरी ने एक लाख रुपया देना स्वीकार किया। अनन्तर कंथाजी और मल्हारराव भीनमाल के मार्ग से मारवाड़ की ओर बढ़े तथा प्रतापराव और रंगोजी धन्धुका से काठियावाड़ एवं गोहिलवाड़ की तरफ़ गये। हि० स० ११४६ (वि० सं० १७६३ = ई० स० १७३६) में प्रतापराव, जो सोरठ के लोगों से खिराज वसूल करके लौट रहा था, धोलका के निकट कांकर गांव में मर गया[2]।

प्रतापराव की मृत्यु

रत्नसिंह भंडारी की हाकिमी में गुजरात-निवासियों पर बड़े जुल्म हुए। झूठे आरोप लगा-लगाकर वह अलग-अलग बहानों से लोगों से मन-मानी रक़में वसूल करता और उनका माल-मता लूट लेता। उसके जुल्म से तंग होकर कितने ही अपना

रत्नसिंह भंडारी के जुल्म

(१) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १८६-६०। कैम्पबेल-कृत "गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी" में भी इसका संक्षिप्त उल्लेख है (भाग १, खंड १, पृ० ३१६-७)।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १६०-६३। कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी; भाग १, खंड १, पृ० ३१७-८।

घर-बार छोड़कर चले गये, कई ने आत्महत्या कर ली और कितने ही पागल हो गये एवं कितने ही अपना व्यापार बन्दकर मारवाड़ की तरफ़ चले गये[1]।

गुजरात में मारवाड़ियों के जुल्म के कारण अमीरुल्उमरा का मन महाराजा से फिर गया था। इसी बीच गुजरात के व्यापारियों में से अनेक ने बादशाह के पास उपस्थित होकर फ़रियाद की। इसपर मोमिनखां महाराजा अभयसिंह के स्थान में गुजरात का सूबेदार नियत हुआ और जवांमर्दखां पाटण का हाकिम बनाया गया। जालोरी राठोड़ों के मददगार थे। जवांमर्दखां के पाटण पहुंचने पर पहाड़खां जालोरी ने जवांमर्दखां का विरोध किया, परन्तु अन्त में उसे पाटण खाली करना ही पड़ा। ऐसा हो जाने पर मोमिनखां ने भी प्रकट रूप से नजमुद्दौला मोमिनखां बहादुर फ़ीरोज़जंग नाम धारण कर सूबेदारी का कार्य आरम्भ किया। शेरखां बाबी तटस्थ रहने की ग़रज़ से बालासिनोर चला गया और मोमिनखां ने अपनी मदद के लिए रंगोजी को बुलाया। उसने इस शर्त पर मारवाड़ियों को निकालने में सहायता देना स्वीकार किया कि इसमें सफल होने पर अहमदाबाद तथा खंभात को छोड़कर गुजरात की आधी आमदनी उसे दी जाय। जब रत्नसिंह को मोमिनखां की गुजरात में नियुक्ति होने की सूचना मिली तो उसने महाराजा को पत्र लिखकर इस विषय में उसकी आज्ञा जाननी चाही। इस बीच उसने कई मुसलमान अफ़सरों को खंभात में इस उद्देश्य से भेजा कि वे मोमिनखां को तब तक कुछ करने से रोके रहें, जब तक महाराजा के पास से उत्तर न आ जाय। महाराजा का रत्नसिंह के पास यह उत्तर पहुंचा कि वह भरसक मोमिनखां का विरोध करे। तदनुसार रत्नसिंह ने अहमदाबाद की रक्षा करने की तैयारी की। मोमिनखां अपनी फ़ौज के साथ नारणकेसर नामक झील के पास जाकर ठहरा। डेढ़ मास तक वहां रहने के बाद वह सोजत्रा गया, जहां जवांमर्दखां बाबी उसके शामिल हो गया। फिर

महाराजा से गुजरात का सूबा हटाया जाना

(१) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १६४।

ता० १ जमादिउलअव्वल (भाद्रपद सुदि ३ = ता० २७ अगस्त) को वह जवांमर्दखां एवं रंगोजी के साथ मय तोपखाने और लश्कर के वात्रक नदी से आगे बढ़ा। अहमदाबाद के निकट कांकरिया तालाब पर डेरा कर उसने नैनपुरी की गढ़ी पर अधिकार कर लिया। अनन्तर कालूपुर दरवाज़े के सामने जवांमर्दखां, सारंगपुर दरवाज़े के सामने सीदी बशीर की मस्जिद में मीर अबुल्क़ासिम, अस्तोड़िया दरवाज़े के सामने नुरुल्ला तथा अफ़ज़लपुर में मलिक छुम्मी रक्खे गये और जमालपुर से लगाकर साबरमती के किनारे तक का भाग मुहम्मद मोमिन बख़्शी तथा रंगोजी के सिपुर्द किया गया। भंडारी ने अपनी रक्षा के लिए दरवाज़ों को ईंटों से चुनवा दिया।

उन्हीं दिनों मोमिनख़ां के प्रबन्धकर्त्ता विजयराम ने, जो सोनगढ़ से दामाजी को लाने के लिए भेजा गया था, लौटकर सूचना दी कि वह शीघ्र ही शामिल होगा। जोरावरख़ां भी बुला लिया गया। इसी बीच सूरत से महाराजा के प्रतिनिधियों-द्वारा भेजी गई तोपें मोमिनखां के सैनिकों ने छीन लीं। दूसरी बार जब फिर रत्नसिंह ने महाराजा को मोमिनखां के अहमदाबाद पर चढ़ आने की ख़बर दी तो वह नाराज़ हो कर बादशाह के सामने से चला गया। इसपर कई सरदारों ने शंकित हो-कर उसे वापिस बुलवा लिया और बादशाह पर दबाव डालकर गुजरात की सूबेदारी पुनः उस (अभयसिंह) के नाम करा दी। लेकिन गुप्त रूप से मोमिनखां को कहलाया गया कि वह महाराजा की नियुक्ति की उपेक्षा कर राठोड़ों का अधिकार वहां से हटाने में प्रयत्नशील रहे। फलतः उसने पूर्ण उत्साह के साथ अपना कार्य जारी रक्खा। इसी बीच बादशाह के पास से दूसरा आज्ञापत्र पहुंचा, जिसके-द्वारा महाराजा की पुनर्नियुक्ति की पुष्टि की गई थी और फ़िदाउद्दीनखां को ५०० व्यक्तियों के साथ नगर की रक्षा का भार देकर मोमिनखां को खंभात लौटने को लिखा गया था। उसके साथ ही उसमें यह भी लिखा था कि चूंकि रत्नसिंह भंडारी ने अत्याचार-पूर्ण कृत्य किये हैं, अतएव उसके स्थान में किसी दूसरे व्यक्ति की नियुक्ति

आज्ञापत्र का आशय बतलाया गया तो उसने इस शर्त पर खंभात जाना स्वीकार किया कि रत्नसिंह अभयकरण को कार्य-भार सौंपकर नगर का परित्याग करे और फ़िदाउद्दीनखां को अपने आदमियों-सहित नगर में प्रवेश करने की इजाज़त दे; परन्तु रत्नसिंह ने इसको न माना और नगर में रहकर अन्त तक अपनी रक्षा करने का निश्चय किया। इसी बीच ईसनपुर में दामाजी मोमिनखां के शामिल हो गया। रत्नसिंह को जब दामाजी और मोमिनखां के बीच की शर्त का पता चला तो उसने दामाजी के पास सन्देशा भेजा कि अगर आप मेरा साथ दें तो मैं सारे सूबे की आमदनी देने तथा अपने प्रमुख व्यक्तियों को ओल में भेजने के लिए भी प्रस्तुत हूं। दामाजी ने वह सन्देश मोमिनखां को दिखाकर कहा कि अब क्या कहते हो? लाचार उसे भी उतना ही देना स्वीकार करना पड़ा, लेकिन खंभात के एवज़ में उसने सम्पूर्ण वीरमगांव का इलाक़ा देने की शर्त की। इसके फलस्वरूप दामाजी ने रत्नसिंह से बातचीत बन्द कर दी। अनन्तर दामाजी दूदेसर (Dudesar) की यात्रा को गया, जहां से लौटने पर वह और रंगाजी अहमदाबाद की विजय में लगे। उनकी प्रबल शक्ति देखकर एकबार मोमिनखां का दिल भी दहल गया, क्योंकि उसे निश्चय हो गया कि एकबार मरहटों का उधर क़दम जम जाने पर उन्हें निकालना कठिन ही होगा। ऐसी दशा में उसने "मीरात-इ-अहमदी" के कर्ता को इसलिए रत्नसिंह के पास भेजा कि वह उसे विना मार-काट के चले जाने के लिए समझावे, पर रत्नसिंह इसके लिए राज़ी न हुआ। कुछ समय बाद क़ायमअलीखां आदि की अध्यक्षता में मुसलमानों तथा बाबूराव की अध्यक्षता में मरहटों ने एकदम आक्रमण कर अहमदाबाद पर अधिकार करने का प्रयत्न किया, पर एक भीषण लड़ाई के बाद उन्हें पीछे हटना पड़ा। मोमिनखां के घेरे की सख़्ती के कारण शहर के लोगों के पास घास-दाना पहुंचना बन्द हो गया और क़िले के रक्षकों का कार्य कठिन हो गया। इस प्रकार कष्टमय जीवन व्यतीत करते हुए मारवाड़ियों ने जैसे-तैसे डेढ़ मास का समय बिताया। ऐसी परिस्थिति में भंडारी ने अपने ज़मींदारों एवं सलाहकारों को बुलाकर

उनसे राय की। उन्होंने कहा कि गत नौ मास के बीच क़िले की रक्षा के जो-जो उपाय हो सकते थे हमने किये। महाराजा के पास से आज्ञापत्र तो आते हैं, परन्तु किसी प्रकार की दूसरी मदद अथवा ख़ज़ाना नहीं आता। बरसात का मौसिम भी निकट है और शहर के घास-दाने एवं युद्ध सामग्री की स्थिति भी स्पष्ट ही है। इन सब बातों पर दृष्टि रखते हुए उनकी सलाह के अनुसार भंडारी ने हि० स० ११५० (वि० सं० १७९४ = ई० स० १७३७) के मोहर्रम मास के अन्त में नीचे लिखी शर्तों पर सुलह करने का पैग़ाम मोमिनख़ां के पास भिजवाया—

(१) सिपाहियों की तनख़्वाहें, जो बाक़ी रह गई हैं, मोमिनख़ां चुकावे।

(२) सामान ले जाने के जानवर, जो नष्ट हो गये हैं, उनकी पूर्ति मोमिनख़ां करे।

सुलह के लिये भेजे गये लोगों ने परस्पर बातचीत कर यह तय किया कि मोमिनख़ां एक लाख रुपया नक़द देगा और सामान ले जाने के साधनों का प्रबंध कर देगा। साथ ही पूरे रुपयों की पहुंच तथा सामान भिजवाने एवं जब तक मारवाड़ी मार्ग में रहें तबतक के लिए फ़िदाउद्दीनख़ां और मुहम्मद मोमिन भंडारी के पास ओल में रहेंगे। इन सब बातों के तय हो जाने पर उसका आधा मरहटों ने देना तय किया। अनन्तर भंडारी ने जाने की तैयारी की और नई-पुरानी तोपें, बाक़ी बचा हुआ बारूद गोला, मुबारिज़ुल्मुल्क से मिला हुआ सामान एवं माहाराजा-द्वारा सूरत से लाकर खम्भात में लगाई गई तोपें आदि साथ लेकर ता० ९ सफ़र (ज्येष्ठ सुदि ७ = ता० २५ मई) को सूर्यास्त होते-होते हाजीपुर की बुर्ज के पास के ईडर दरवाज़े से जोधपुर जाने के लिये भंडारी बाहर निकला और उसने दरवाज़ों की चावियां मोमिनख़ां को सौंप दीं। उसी रात्रि को मोमिनख़ां की तरफ़ से मुहम्मद यूसुफ़ शहर का कोतवाल नियत हुआ[1]।

---

(१) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० १९५-२३६। कैम्पबेल; गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी; भाग १, खंड १, पृ० ३१८-२०। जोधपुर राज्य की ख्यात में भी इस घटना का संक्षिप्त उल्लेख है। उससे पाया जाता है कि

उसी वर्ष शाही अधिकारी ख़ानदौरां से नाराज़गी हो जाने के कारण महाराजा ने बादशाह से स्वदेश जाने की आज्ञा प्राप्त की। भंडारी अमरसिंह ने इस अवसर पर बीच में पड़कर ख़ानदौरां से उसका मेल कराकर सांभर की फ़ौजदारी उसके नाम करा दी। अनन्तर महाराजा रेवाड़ी पहुंचा, जहां से वह सांभर होता हुआ अजमेर जाकर आनासागर की पाल के महलों में ठहरा। वहां एक बरस तक निवास करने के बाद वह वि० सं० १७६४ आश्विन सुदि १० (ता० २२ सितम्बर) को वहां से प्रस्थान कर मेड़ते गया। वहां रहते समय उसने बख़्तसिंह को नागोर से बुलवाया, जो गांव सोगावा में उसके शरीक हुआ। उससे सलाहकर महाराजा ने लगभग सारे भंडारियों को क़ैद करवा दिया और राज्य-कार्य कायस्थों को सौंपा। अनन्तर उसने पंचोली रामकिशन को भिणाय की तरफ़ भेजा, जिसने गौड़ अमरसिंह से राजगढ़ तथा सावर के शक्तावतों से घटियाली और पीपलाज ख़ाली करा लिये। पीछे से जयपुर के साह नानकदास के बीच में पड़ने से परस्पर मेल हो गया। इसके बाद बख़्तसिंह तो नागोर गया और महाराजा

महाराजा का जोधपुर जाना

डेढ़-दो वर्ष तक लड़ाई होने के बाद भारवरदारी लेकर रत्नसिंह ने नगर ख़ाली कर दिया (जि० २, पृ० १४६)।

"मिरात-इ-अहमदी" से यह भी पाया जाता है कि यह घेरा रहते समय भंडारी ने धन एकत्र करने के लिए अहमदाबाद के निवासियों पर तरह-तरह के अत्याचार किये, जिससे उनकी हालत बड़ी ख़राब हो गई। नायब बख़्शी एवं ख़बरनवीस मुजाहिदुद्दीनख़ां के (जो फ़क़ीरी भेष में रहा करता था और जो मस्जिदों, धर्मशालाओं एवं कुओं के बनवाने में बहुत धन ख़र्च करता था) पास बहुत सम्पत्ति होने का शुबहा होने से भंडारी ने उसपर झूठे आरोप लगाकर उसे अपने विश्वासपात्र फ़क़ीरा यसावुल-द्वारा क़ैद करवा दिया। साथ ही उसका घर-बार ज़ब्त कर लिया गया और उसका पुत्र भी क़ैद कर उसके सामने लाया गया। अनन्तर मुजाहिदुद्दीनख़ां एवं उसके पुत्र को अनेक प्रकार की यंत्रणायें देकर उनसे छिपे हुए धन का पता पूछा गया और उनके घर की भी अच्छी तरह तलाशी ली गई, पर जब अनेक सख़्तियां और छानबीन करने पर भी उससे एक पैसा वसूल नहीं हुआ तो भंडारी ने उसे छोड़ दिया। तब वह अपने परिवार-सहित वहां से बाहर निकल गया (जि० २, पृ० २२७-३०)।

जोधपुर[1]।

कुछ ही समय बाद महाराजा अभयसिंह और उसके भाई बख़्तसिंह के बीच अनबन हो जाने के कारण अभयसिंह ने फ़ौज के साथ जाकर उस-

बख़्तसिंह तथा बीकानेर के महाराजा ज़ोरावरसिंह में मेल होना

(बख़्तसिंह) के इलाक़े की सीमा के पास डेरा किया। बख़्तसिंह की अकेले अपने भाई का सामना करने की सामर्थ्य न थी, जिससे उसने बीकानेर के महाराजा ज़ोरावरसिंह से मेल की बात-चीत शुरू की। जब अभयसिंह को इस रहस्य की ख़बर मिली तो वह तत्काल जोधपुर लौट गया[2]।

वि० सं० १७९६ (ई० स० १७३९) में जोधपुर की चढ़ाई बीकानेर पर हुई। भंडारी तथा मेड़तिये आदि दस हज़ार फ़ौज के साथ बीकानेर

महाराजा अभयसिंह की बीकानेर पर चढ़ाई

राज्य में प्रवेशकर उपद्रव करने लगे। पंचोली लाला, अभयकरण दुर्गादासोत तथा कनीराम रामसिंहोत (आसोप) भी एक बड़ी सेना के साथ फलोधी के मार्ग से कोलायत पहुंचे। तीसरी सेना पुरोहित जगन्नाथ तथा साईंदासोत लालसिंह की अध्यक्षता में बीकानेर पहुंच गई। जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है बख़्तसिंह तथा ज़ोरावरसिंह में मेल की बात-चीत पहले ही शुरू हो गई थी और उसने बारहट दलपत को इस विषय में बात करने के लिए ज़ोरावरसिंह के पास भेजा था, परन्तु ज़ोरावरसिंह को विश्वास न होता

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १४६-८। उक्त ख्यात में एक जगह यह भी लिखा मिलता है कि उसी समय के आस-पास, जब बीकानेर का स्वामी ज़ोरावरसिंह गोपालपुर की गढ़ी में था, बख़्तसिंह ने चढ़ाई कर उस गढ़ी को घेर लिया। महाराजा की आज्ञा प्राप्त होने पर भंडारी मनरूप, भंडारी विजयराज आदि भी जाकर उसके शरीक हो गये। पीछे से कुछ रुपये देने और कांधलोत लालसिंह को चाकरी के लिए भेजने की शर्त पर सन्धि हो गई तथा ख़रबूज़ी की पट्टी बीकानेर के महाराजा ने बख़्तसिंह को दे दी (जि० २, पृ० १४७)। इस घटना में कितना सत्य है यह कहना कठिन है, क्योंकि इसका उल्लेख बीकानेर राज्य के इतिहास में नहीं मिलता।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६३। पाउलेट-कृत "गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट" में भी इसका उल्लेख है।

था, जिससे उसने प्रतीति के लिए प्रमाण मांगा। बख़्तसिंह ने तत्काल मेड़ते पर अधिकार कर अपनी सत्यता का प्रमाण दिया। इसके पश्चात् दोनों में मेल हो गया। तब महाराजा जोरावरसिंह ने कुशलसिंह (भूकरका), दौलतराम अमरावत बीका (महाजन का प्रधान) आदि को बख़्तसिंह के पास भेजा, जिन्होंने वापस आकर बख़्तसिंह और अभयसिंह के बीच वास्तव में फूट पड़ जाने की बात उससे कही। अनन्तर मेहता बख़्तावरसिंह के अर्ज़ करने पर मेहता मनरूप, एवं सिंढायच अजबराम बख़्तसिंह के पास भेजे गये, जिन्होंने जाकर उससे अभयसिंह की चढ़ाई का सारा हाल बतलाया। इसपर बख़्तसिंह ने जोरावरसिंह के पास लिख भेजा कि आप निश्चिंत रहें, मैं यहां से जोधपुर पर चढ़ाई करता हूं, जिससे बाध्य होकर अभयसिंह को अपनी सेना को वापस बुला लेना पड़ेगा, परन्तु आप मेरे साथ विश्वासघात न कीजियेगा। जोरावरसिंह की इच्छा स्वयं बख़्तसिंह की सहायतार्थ जाने की थी, परन्तु अपनी आकस्मिक बीमारी के कारण उसे रुक जाना पड़ा और बख़्तावरसिंह आठ हज़ार सेना के साथ भेजा गया। इसके बाद बख़्तसिंह कापरडा पहुंचा तथा अभयसिंह बीसलपुर, जहां युद्ध की तैयारी हुई, पर लड़ाई न हुई और अभयसिंह ने अपने प्रधानों को भेजकर बख़्तसिंह से सन्धि कर ली। इस सन्धि के अनुसार मेड़ता वापस अभयसिंह को मिल गया और जालोर की मरम्मत के तीन लाख रुपये उसे बख़्तसिंह को देने पड़े। तदनन्तर बख़्तसिंह नागोर चला गया, जहां से उसने बीकानेर के सरदारों को सिरोपाव देकर विदा किया[1]।

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६३-४। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ४९। "वीरविनोद" में भी इस घटना का संक्षिप्त वर्णन है। "जोधपुर राज्य की ख्यात" में अक्षरशः ऐसा वर्णन नहीं मिलता। उसमें भी एक स्थल पर नीचे लिखा वर्णन मिलता है—

"भंडारियों का उचित प्रबन्ध करने का कार्य बख़्तसिंह को सौंपा गया था, पर उसने उनमें से कई के साथ बड़ा अत्याचारपूर्ण व्यवहार किया, जिससे अभयसिंह ने वह कार्य अपने हाथ में ले लिया। इसपर बख़्तसिंह अपने भाई से नाराज़ हो गया

बीकानेर पर चढ़ाई करने में पिछली बार सफल न होने का ध्यान महाराजा अभयसिंह के हृदय में बना ही रहा। वि० सं० १७९७[1] (ई० स० १७४०) में उसने बीकानेर के विद्रोही ठाकुरों—ठाकुर लालसिंह (भाद्रा), ठाकुर संग्रामसिंह (चूरू) तथा ठाकुर भीमसिंह (महाजन)—के साथ मिलकर पुनः बीकानेर पर चढ़ाई कर दी। देशणोक पहुंचकर उसने करणीजी का दर्शन किया और वहां के चारणों से अपने आपको उसी तरह संबोधन करने को कहा, जिस तरह वे अपने स्वामी (बीकानेर के राजा) को करते थे, परन्तु उन्होंने ऐसा न किया। अनन्तर उसने बीकानेर (नगर) में प्रवेश कर तीन पहर तक लूट की जिससे लगभग एक लाख रुपये की संपत्ति उसके हाथ लगी। नगर की लूट का समाचार सुनकर कुंवर गजसिंह एवं रावल रायसिंह कितने ही साथियों के साथ विरोधी दल का सामना करने को आये, परन्तु महाराजा जोरावरसिंह ने उन्हें भी गढ़ के भीतर बुलवा लिया। महाराजा अभयसिंह का डेरा लक्ष्मीनारायण के मंदिर के निकट पुराने गढ़

अभयसिंह की बीकानेर पर दूसरी चढ़ाई

और उसने श्रावणादि वि० सं० १७९५ (चैत्रादि १७९६ = ई० स० १७३९) के आषाढ मास में मेड़ता पर चढ़ाई की। इसपर महाराजा ने जैतसिंह सूरसिंहोत (मेड़तिया) तथा बोरूंदावाले ठाकुर को उसे समझाने के लिए भेजा, परन्तु उसने उनकी बात नहीं मानी और आगे बढ़ता हुआ भाद्रपद मास में वह गांव चांदेलाव में पहुंचा। महाराजा भी कूचकर गांव बीसलपुर में पहुंचा। महाराजा के पास बड़ी फ़ौज थी और उसके सरदार लड़ाई करने के इच्छुक थे, पर महाराजा ने एक पत्र लिख कर उन्हें ऐसा करने से मना कर दिया। अनन्तर बख़्तसिंह बिना लड़े वहां से कूचकर नागोर चला गया। पांच-सात दिन बाद महाराजा ने भी बीसलपुर से कूच किया। मार्गशीर्ष मास में गांव हिलोड़ी में बख़्तसिंह महाराजा से मिला (जि० १, पृ० १४८-९)।" उपर्युक्त वर्णन से भी दोनों भाइयों के बीच मनमुटाव होना सिद्ध है।

(१) दयालदास की ख्यात में वि० सं० १७९६ का प्रारम्भ दिया है (जि० २, पत्र ६४), जो ठीक नहीं है क्योंकि उक्त संवत् के फाल्गुन मास तक तो ठाकुर भीमसिंह-(महाजन) का राज्य का पक्षपाती रहना उसी ख्यात से सिद्ध है। जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार यह चढ़ाई श्रावणादि वि० सं० १७९६ (चैत्रादि १७९७) के वैशाख मास में हुई (जि० २, पृ० १४९), जो ठीक जान पड़ता है।

के खंडहरों की तरफ़ था। अनूपसागर कुएं के पास उसकी सेना के कर्म-सोतों, देपालदासोतों एवं पृथ्वीराजोतों का मोर्चा था। दूसरा मोर्चा उसी कुएं की पूर्वी ढाल पर मनरूप जोगीदासोत तथा देवकर्ण भागचन्दोत आदि मंडलावतों का था; तीसरा मोर्चा दंगल्या (दंगली साधुओं के अखाड़े) के स्थान पर कूंपावत रघुनाथ (रामसिंहोत) और जोधा शिवसिंह (जूनियां) का था तथा दूसरी तरफ़ पीपल के वृक्षों के नीचे तोपें, पैदल सेना, रिसाला, भाटी हठीसिंह उरजनोत, पाता जोगीदास मुकुन्ददासोत, मेड़तिया जैमलोत, सांवलदास एवं पंचोली लाला आदि थे। अन्य जोधपुर के सरदार भी उपयुक्त स्थानों पर नियुक्त थे। सूरसागर पूर्णरूप से आक्रमणकारियों के हाथ में था एवं गिन्नाणी तालाब पर भाद्रा का विद्रोही ठाकुर लालसिंह तथा अनेक राठोड़ एवं भाटी आदि थे। उधर गढ़ के भीतर सारे बीका, बीदावत व रावतोत सरदार आदि महाराजा जोरावरसिंह की सेवा में गढ़ की रक्षार्थ उपस्थित थे और सारी सेना का संचालन भूकरका के ठाकुर कुशलसिंह के हाथ में था। तोपों के गोलों की लगातार वर्षा से गढ़ का बहुत नुक़सान हो रहा था। मुख्यतः "शंभुबाण" नाम की एक तोप तो क्षण-क्षण पर अपनी भयङ्करता का परिचय दे रही थी। उसको नष्ट करना अत्यन्त आवश्यक था, अतएव कुंवर गजसिंह की आज्ञानुसार एक पड़िहार ने "रामचंगी" तोप के सहारे अंत में उसका नाश कर दिया[1], जिससे जोधपुरवालों का एक प्रबल नाशकारी शस्त्र बेकार हो गया। अनन्तर खवास अजबसिंह आनन्दरामोत तथा पड़िहार जैतसिंह भोजराजोत, भाद्रा के ठाकुर लालसिंह के पास उसे अपनी तरफ़ मिलाने के लिए गये। पीछे से महाराजा जोरावरसिंह भी गुप्त रूप से उससे मिला, परन्तु इसका कोई

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि "शंभुबाण" तोप वहां नष्ट नहीं हुई, वरन् अभयसिंह का घेरा उठाने के बाद पंचोली लाला तथा पुरोहित जगा उसको अपने साथ ले जा रहे थे, उस समय बैलों के थक जाने से उन्होंने उसे एक दूसरी तोप के साथ भूमि में गाड़ दिया। पीछे से उसे खुदवाकर मंगवाया गया (जि० २, पृ० १४०)।

बात बैठ गई और उसने तीन लाख सेना के साथ जोधपुर पर चढ़ाई कर दी[1]। जब अभयसिंह को इस चढ़ाई की सूचना मिली तो उसने उदयपुर आदमी भेजकर वहां के प्रतिष्ठित व्यक्तियों को बीकानेर के साथ सन्धि करा देने के लिये बुलाया। अभयसिंह यह चाहता था कि यदि बीकानेर वाले झुक जायं तो वह वापस चला जाय, परन्तु जब बीकानेरवालों ने उसकी अपमानजनक शर्तें स्वीकार न कीं और स्पष्ट कहला दिया कि हमारी ओर से उत्तर जयसिंह देगा तो अभयसिंह को इतने दिनों के परिश्रम के बाद भी निराश होकर लौट जाना पड़ा। इस अवसर पर लौटती हुई जोधपुर की सेना को बीकानेर की फ़ौज ने बुरी तरह लूटा[2]।

जयसिंह के साथ सन्धि होना

अभयसिंह भागा-भागा एक हज़ार सवारों के साथ जोधपुर पहुंचा, क्योंकि जयसिंह की तरफ़ से उसे पूरा-पूरा भय था, परन्तु जयसिंह उस समय तक मार्ग में ही था। उसका वास्तविक उद्देश्य जोधपुर पर अधिकार करना न था। वह तो केवल अभयसिंह को बीकानेर से हटाना और उससे कुछ धन वसूलकर स्वदेश लौट जाना चाहता था। अभयसिंह के पहुंचते ही उससे २१ लाख

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात में भी लिखा है कि जयसिंह ने यह सोचकर कि बीकानेर पर अधिकार कर लेने से अभयसिंह की शक्ति बढ़ जायगी, तत्काल उसे लिखा कि बीकानेर पर से घेरा उठा लो। जब उसने ऐसा न किया, तो उसने जोधपुर पर चढ़ाई कर दी (जि० २, पृ० १४६-५०)।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६४-६६। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ५०-१। "वीरविनोद" (भाग २, पृ० ५०२-३) में भी इस घटना का लगभग ऊपर जैसा ही वर्णन है।

जोधपुर राज्य की ख्यात में भी कहीं-कहीं कुछ अन्तर के साथ यह घटना दी है (जि० २, पृ० १४६-५१)। इससे यह निश्चित है कि अभयसिंह की चढ़ाई जिस समय बीकानेर पर हुई थी, उस समय जयसिंह ने जोधपुर पर चढ़ाई की और बख़्तसिंह भी जोरावरसिंह का सहायक हो गया, जिससे अभयसिंह को असफल होकर जोधपुर लौटना पड़ा।

रुपये वसूल कर वह वहां से लौट गया[1]। इस धन में से ११ लाख के त
वे आभूषण थे, जो जयसिंह ने अपनी पुत्री के अभयसिंह के साथ विवाह के
अवसर पर उसे दिये थे, परन्तु जयसिंह ने यह कहकर उन्हें स्वीकार कर
लिया कि अब ये जोधपुर की निजी सम्पत्ति हैं, अतएव इन्हें लेने में कोई
दोष नहीं है[2]।

अपने भाई से मेलकर बख़्तसिंह का जयसिंह पर चढ़ाई करना

महाराजा जयसिंह की जोधपुर पर की विगत चढ़ाई में बख़्तसिंह को आशा हो गई थी कि इससे उसका जोधपुर की गद्दी पर अधिकार करने का स्वार्थ भी सिद्ध होगा, परन्तु जब जयसिंह केवल धन प्राप्त कर लौट गया तो उसकी सारी आशा धूल में मिल गई। वह जयसिंह का विरोधी बन गया और उसने अपने भाई से मेल कर लिया। अनन्तर उसने ससैन्य ढूंढाड़ (जयपुर राज्य) पर चढ़ाई की। यह खबर जयसिंह को मिलने पर वह धौलपुर से फ़ौज के साथ उसका सामना करने को गया। गंगवाणा नामक स्थान में दोनों का सामना हुआ। कुछ देर की

---

(१) "वंशभास्कर" से पाया जाता है कि महाराणा जगतसिंह (दूसरा) ...०००० सेना के साथ जयसिंह की सहायतार्थ उदयपुर से रवाना होकर पुष्कर तक ...च गया था। वहां उसे यह ख़बर मिली कि अभयसिंह ने जयसिंह से सन्धि कर ली ... इसपर वह पुष्कर से ही उदयपुर लौट गया (चतुर्थ भाग, पृ० ३२६८-३३०१)। ...रवनोद" से पाया जाता है कि महाराणा ने जयसिंह-द्वारा इस अवसर पर सहायता ...ये जाने पर सलूंबर के रावत केसरीसिंह को सेना के साथ भेज दिया था (भाग २, ...२२४)। उसी पुस्तक से यह भी पाया जाता है कि जयसिंह ने अन्य कितने ही ... को भी अपनी सहायतार्थ बुलाया था, जिनसे महाराणा ने मुलाक़ात की।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६६-७। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि ...स्टेट; पृ० ४१।

...ोधपुर राज्य की ख्यात में २० लाख रुपया देना लिखा है और उससे पाया ... भंडारी रघुनाथ ने प्रयत्नकर यह सन्धि कराई थी (जि० २, पृ० १४१)। ..." (भाग २, पृ० ८४८) तथा "वंशभास्कर" (चतुर्थ भाग, पृ० ३३००ने) ...लाख रुपया ही दिया है।

दोनों भाई पुष्कर में मिले, तो इस विषय में बख़्तसिंह ने अपने भाई को बड़ा उपालम्भ दिया। कुछ समय के बाद अभयसिंह ने पुनः युद्ध की तैयारी की। जयसिंह उस समय गांव लाडपुरा में था, पर भंडारी रघुनाथ ने यह कहकर उसे ऐसा करने से रोक दिया कि इससे दोनों राज्यों की स्थिति कमज़ोर हो जायगी। उसी के प्रयत्न से जयसिंह के परवतसर, केकड़ी आदि सात परगने तथा बख़्तसिंह से छीना हुआ देव प्रतिमा का हाथी वापस देने की शर्त पर दोनों राजाओं में मेल हो गया। तब जयसिंह तो जयपुर चला गया और अभयसिंह मेड़ता, जहां उसका डेरा दूदासर तालाब पर हुआ। वहां रहते समय उसने जालोर का अधिकार बख़्तसिंह को दिया[1]।"

उपर्युक्त दोनों वर्णनों में कुछ भिन्नता अवश्य है, पर मुख्य घटना में कोई अनन्तर नहीं है। अधिक संभव तो यही जान पड़ता है कि जोधपुर का राज्य मिलने का अपना स्वार्थ सिद्ध न होने के कारण ही बख़्तसिंह ने अपने भाई से मेलकर जयसिंह पर चढ़ाई की हो। सेना थोड़ी होने पर भी पहले उसने बड़ी वीरता दिखलाई, परन्तु अन्त में उसे हारकर भागना पड़ा। "वंशभास्कर" से भी पाया जाता है कि अपनी तरफ़ के ४७०० सैनिकों के मारे जाने पर बख़्तसिंह बचे हुए २०० आदमियों के साथ नागोर चला गया। कछवाहों की सेना-द्वारा ठाकुर गिरधारी के मूर्ति के हाथी आदि के लूटे जाने का भी उसमें उल्लेख है और इस विजय का सारा श्रेय

(१) जि० २, पृ० १९२-४।

टॉड का वर्णन उपर्युक्त वर्णनों से पूर्णतया विपरीत है। वह लिखता है कि गंगवाणा नामक स्थान में बख़्तसिंह ने भीषण आक्रमणकर जयपुर की सेना का हर तरफ़ नाश करना शुरू किया। वह कई बार विपक्षी-दल के एक सिरे से दूसरे सिरे तक निकल गया, पर अन्त में उसके पास केवल ६० व्यक्ति ही रह गये। ऐसी अवस्था में गजसिंहपुरा के स्वामी ने उसे जंगल की तरफ़ चलने का इशारा किया, पर बख़्तसिंह ने आगे बढ़ने का आग्रह किया और उधर जयपुर का पंचरंगा झंडा दिखाई पड़ते ही उसने पुनः आक्रमण करने की आज्ञा दी। इस अवसर पर चतुर कुंभाणी (कुंभा के वंशज) ने जयसिंह को युद्ध न करने की राय दी और उसे युद्ध-क्षेत्र छोड़कर लौट जाने पर बाध्य किया। इस प्रकार राजवाड़ा के परम शक्तिशाली, बुद्धिमान और सदैव सफलता

शाहपुरा के उम्मेदसिंह को दिया है[1]।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि इस लड़ाई के पूर्व ही जोधपुर के कई सरदारों ने अजीतसिंह के पुत्र राजवी रत्नसिंह को, जो सलेमकोट में क़ैद था, जोधपुर का राज्य दिलाने के लिए जयसिंह को लिखा। इसपर उसने उन्हें अन्य सरदारों को फोड़कर अपने पक्ष में करने के लिए कहलाया, जिसपर उन्होंने सरदारों से मिलकर उन्हें अपनी तरफ़ मिलाने का प्रयत्न आरम्भ किया। फिर गंगवाणा की लड़ाई हुई, जिसके बाद जयसिंह का डेरा लाडपुरा में हुआ। भंडारी मनरूप उसके साथ ही था। उससे उसने कहा कि जोधपुर के कितने ही सरदार अपने पक्ष में हो गये हैं, अतएव अब तुम जाकर कार्य पूरा करो। भंडारी मनरूप ऊपर से तो विद्रोही सरदारों के शामिल हो गया था, परन्तु भीतर ही भीतर वह अभयसिंह का पक्षपाती था। गांव रीयां में, जहां अभयसिंह था, पहुंचने पर उसने षड्यन्त्र का सारा हाल उससे कह दिया और जयसिंह के सैनिकों के पहुंचने के पूर्व ही उससे जोधपुर का समस्त प्रबन्ध कर लेने को कहा[2]। महाराजा ने तत्काल विद्रोही सरदारों को गिरफ़्तार कर सब जगह अपने

जोधपुर पर क़ब्ज़ा करने का जयसिंह का विफल प्रयत्न

प्राप्त करनेवाले राजा को युद्ध-क्षेत्र छोड़कर जाने का अपमान सहन करना पड़ा। उसी समय से यह प्रसिद्धि हुई कि एक राठोड़ दस कछवाहों के बराबर है (जि० २, पृ० १०४९-५१)। टॉड का उपर्युक्त कथन विश्वसनीय नहीं है। बहुधा उसने जो कुछ लिखा है, वह केवल सुनी-सुनाई बातों के आधार पर ही है, जो अतिशयोक्तिपूर्ण होने के साथ ही काल्पनिक है। जयसिंह के पास बख़्तसिंह से कई गुना अधिक सैन्य होने पर भी उसका भागना माना नहीं जा सकता। "वीरविनोद" (भाग २, पृ० ८४८) में भी बख़्तसिंह का ही भागना लिखा है। उसमें भी लगभग ऊपर आई हुई ख्यातों जैसा ही वर्णन है। सरकार-कृत "फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर" (जि० १, पृ० २८१-२) में भी इस घटना का संक्षिप्त उल्लेख है।

(१) चतुर्थ भाग; पृ० ३३१०-११।

(२) भंडारी मनरूप ने इस षड्यन्त्र के आरम्भ में ही महाराजा को सावधान करने का प्रयत्न किया था, पर उस समय वह उससे मिला ही नहीं।

विश्वासपात्र आदमी नियुक्त कर दिये, जिससे विद्रोही सरदारों और जयसिंह का प्रयत्न विफल हो गया। मनरूप से महाराजा बहुत प्रसन्न हुआ और उसे उसने दीवान का ओहदा प्रदान किया[1]।

इस घटना के प्रायः दो वर्ष बाद वि० सं० १८०० आश्विन सुदि १४ (ई० स० १७४३ ता० २१ सितम्बर) को जयसिंह का स्वर्गवास हो गया और उसका उत्तराधिकारी उसका पुत्र ईश्वरीसिंह हुआ।

महाराजा का अजमेर पर क़ब्ज़ा करना

इसे उपयुक्त अवसर जान महाराजा अभयसिंह ने भंडारी सूरतराम को राठोड़ सूरजमल सरदारसिंहोत (आलनियावास), जोधा शिवराजसिंह, रूपनगर के राजा राजसिंह के पुत्र बहादुरसिंह एवं देवगांव, पीसांगन आदि के स्वामियों के साथ अजमेर पर भेजा। उन्होंने सर्वप्रथम सूरजमल गौड़ को निकालकर राजगढ़ पर अधिकार किया। अनन्तर भिणाय, रामसर और पुष्कर पर भी उनका क़ब्ज़ा हो गया। उसी वर्ष अभयसिंह ने भी मेड़ते से प्रस्थान किया। गांव डांगावास में पहुंचने पर बख़्तसिंह भी नागोर से चलकर उसके शामिल हो गया। वहां से चलकर दोनों के डेरे अजमेर में हुए। अनन्तर उसके छातड़ी में पहुंचने पर कोटा का भट गोविंदराम ५००० सेना के साथ उससे मिल गया। इस प्रकार उसके पास सब मिलाकर ३०००० फ़ौज हो गई। उधर जयपुर से ईश्वरीसिंह ने भी उसके मुक़ाबले के लिए प्रस्थान कर गांव ढांणी में डेरा किया। बख़्तसिंह की इच्छा तो उससे लड़ाई करने की थी, पर पुरोहित जगन्नाथ ने राजामल खत्री की मारफ़त बात ठहराकर दोनों पक्षों में मेल करा दिया। इससे नाराज़ होकर बख़्तसिंह नागोर चला गया। अनन्तर दोनों महाराजाओं में परस्पर मुलाक़ात और आनासागर के महलों में गोठ हुई। इस बीच अभयसिंह ने चांदी की तुला की। इसके बाद ईश्वरीसिंह तो जयपुर गया, पर अभयसिंह का डेरा छातड़ी में ही रहा[2]।

---

(१) जि० २, पृ० १५५-६।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १५७। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८४८-९।

वि० सं० १८०१ (ई० स० १७४४) में उदयपुर के महाराणा जगतसिंह (दूसरा) तथा कोटा के महाराव दुर्जनसाल ने जयपुर का राज्य माधोसिंह को और बूंदी उम्मेदसिंह[1] को दिलाने के इरादे से सेना-सहित प्रस्थान किया। पंडेर गांव के निकट बूंदी से दलेलसिंह और जयपुर से ईश्वरीसिंह भी मुक़ाबले के लिए गये। उस समय जयपुर के मंत्री राजामल खत्री ने महाराणा के पास जाकर उसे समझाया और पांच लाख रुपये की आय का टोंक का इलाक़ा माधोसिंह को दिलाने की शर्त कर उसे वापस लौटा दिया। इससे दुर्जनसाल बड़ा अप्रसन्न हुआ और अपने पूर्व निश्चय के अनुसार उसने बूंदी पर चढ़ाई करने की तैयारी की एवं अपने सेनापति नागर ब्राह्मण गोविंदराम को पत्र देकर जोधपुर के महाराजा अभयसिंह के पास से सहायता लाने के लिए भेजा। वह वहां बहुत समय तक रहा, पर जब महाराजा की तरफ़ से कोई उत्तर न मिला और वह सेना भेजने में टाल-टूल करता रहा, तो वह (गोविंदराम) वहां से लौटा। मार्ग में अजमेर में उसकी गुजरात के सूबेदार फ़खरुद्दौला से मुलाक़ात हुई, जिसे एक लाख रुपया देना ठहराकर उसने अपनी सहायता के लिए राज़ी किया। फ़खरुद्दौला ने हाड़ों की सेना के साथ बूंदी जाकर वहां उम्मेदसिंह का अधिकार करा दिया, पर कुछ ही समय पीछे ईश्वरीसिंह ने उम्मेदसिंह को हटाकर बूंदी का अधिकार दलेलसिंह को दिला दिया[2]।

कोटा के महाराव दुर्जनसाल का अभयसिंह से सहायता मांगना

---

(१) महाराव बुधसिंह को बूंदी से हटाकर सवाई जयसिंह ने वहां का अधिकार करवड़ के सालमसिंह के पुत्र दलेलसिंह को दे दिया। तब बुधसिंह बेगूं (मेवाड़) जा रहा और वहीं उसकी मृत्यु हुई। उसका पुत्र उम्मेदसिंह था, जिसने पुनः बूंदी का राज्य प्राप्त करने के लिए प्रयत्न किया।

(२) वंशभास्कर; चतुर्थ भाग; पृ० ३३२९-७३। गंगासहाय; वंशप्रकाश; पृ० १६७-६।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस घटना का जो वर्णन दिया है, उसमें बूंदी का

बीकानेर के महाराजा जोरावरसिंह का निःसन्तान देहान्त हो जाने पर, उसके चाचा आनन्दसिंह के ज्येष्ठ पुत्र अमरसिंह के होते हुए भी, वहां के सरदारों ने वि० सं० १८०३ में उस(अमरसिंह)के छोटे भाई गजसिंह को, जो सब भाइयों में अधिक बुद्धिमान था, बीकानेर की गद्दी पर बैठाया। अमरसिंह इससे बड़ा नाराज़ हुआ और अजमेर में अभयसिंह के रहते समय उसके पास चला गया। महाजन का ठाकुर भीमसिंह तथा भाद्रा का लालसिंह उसके पास पहले से ही थे। उन्होंने अमरसिंह को ही बीकानेर की गद्दी दिलाने का निश्चय किया। अनन्तर अभयसिंह ने अपने बहुत से सरदारों एवं भीमसिंह, लालसिंह तथा अमरसिंह के साथ एक विशाल सेना बीकानेर पर भेजी, जो मार्ग में लूट-मार करती हुई सरूपदेसर के पास पहुंची। बीकानेरवाले जोधपुर के विगत हमलों के कारण सतर्क रहने लगे थे। इस अवसर पर बीकों, बीदावतों, रावतोतों, वणीरोतों, भाटियों, रूपावतों, कर्मसोतों आदि की सेनाएं एकत्र होकर शत्रु का सामना करने के लिए रामसर कुएं पर जा डटीं। कई मास तक सेनाएं एक दूसरी के सम्मुख पड़ी रहने पर भी छिट-पुट हमलों के अतिरिक्त जमकर युद्ध न हुआ। तब जोधपुरवालों ने कहलाया कि यदि भूमि के दो भाग कर दिये जायं तो हम लौट जाने को तैयार हैं, परन्तु गजसिंह ने यही उत्तर दिया कि हम इस तरह सूई की नोक के बराबर भूमि भी न देंगे और कल प्रातः तलवार के बल पर हमारी सन्धि की शर्तें तय होंगी। दूसरे दिन अपनी सेना को तीन भागों में विभक्त कर गजसिंह शत्रु के सामने जा

जोधपुर की सहायता से अमरसिंह की बीकानेर पर चढ़ाई

अधिकार उम्मेदसिंह को दिलाने का सारा श्रेय महाराजा अभयसिंह को दे दिया है और उसका फ़र्रुक़दौला (?फ़ख़रुद्दौला) के साथ अपनी सेना-सहित राजा किशोरसिंह (राजगढ़) तथा पंचोली बालकिशन को भेजना लिखा है (जि० २, पृ० १५७-८)। ख्यात का यह कथन विश्वसनीय नहीं है, क्योंकि "वीरविनोद" में भी बूंदी अथवा कोटा के इतिहास (भाग २, पृ० ११७ अथवा १४१) में कहीं इस लड़ाई में महाराजा अभयसिंह की सेना का भेजा जाना नहीं लिखा है।

पहुंचा। बीदावतों, रावतोतों और बीका राठोड़ों की बीच की अनी में महाराजा (गजसिंह) स्वयं विद्यमान था। दक्षिण की अनी में भाटी, रूपावत और मंडलावत तथा बाईं अनी में तारासिंह, चूरू का ठाकुर धीरजसिंह तथा मेहता बख़्तावरसिंह आदि थे। हरावल में कुशलसिंह (भूकरका), मेहता रघुनाथसिंह तथा दौलतसिंह (बाय) और चंदावल में प्रेमसिंह बाघसिंहोत बीका महाराजा के अंग रक्षकों-सहित था। सुजानदेसर कुएं के पास शत्रुपक्ष में से कुछ ने एक बुर्ज बना ली थी, परन्तु बीकानेरी सेना की दाहिनी अनी के सैनिकों ने हल्लाकर उन्हें वहां से भगा दिया और वहां क़ब्ज़ा कर लिया। इसपर जोधपुर की सेना में से भंडारी रत्नचंद अपनी सारी सेना के साथ बढ़ा। गजसिंह उस समय घोड़े पर सवार होकर लड़ रहा था। उस घोड़े के गोली लग जाने से वह मर गया तब वह दूसरे घोड़े पर सवार होकर लड़ने लगा। अमरसिंह उस समय तक यही समझ रहा था कि गजसिंह हाथी पर है, अतएव उसने हाथियों की तरफ़ ही आक्रमण किया। तारासिंह ने उधर घूमकर उसका मुक़ाबिला किया। इसी बीच गजसिंह का दूसरा घोड़ा भी मारा गया, जिससे वह फिर हाथी पर ही आरूढ़ हो गया। इतनी देर की लड़ाई में ही भंडारी (रत्नचंद), भीमसिंह तथा अमरसिंह इतने घायल हो गये कि अधिक देर तक लड़ना उनके लिए असम्भव हो गया। फिर महाराजा गजसिंह के हाथ का तीर भंडारी रत्नचन्द की आंख में लगते ही शत्रु बची हुई सेना के साथ रणक्षेत्र छोड़कर भाग गया[1]। बीकानेर के जैतपुर के ठाकुर स्वरूपसिंह ने आगे बढ़कर बरछी के एक वार से भंडारी का काम तमाम कर दिया। इस युद्ध में

(१) यह घटना वि० सं० १८०४ श्रावण वदि २ (ई० स० १७४७ ता० १३ जुलाई) सोमवार को हुई, जैसा कि बीकानेर के भांडासर नामक जैन मन्दिर के पास से मिले हुए नीचे लिखे स्मारक से पाया जाता है—

....

स्वस्ति श्रीमत्शुभसंवत्सरे संवत् १८-
०४ वर्षे शाके १६६९ प्रवर्त्तमाने

जोधपुर की बड़ी हानि हुई। बीकानेर के भी कितने ही सरदार मारे गये
जब इस पराजय का समाचार अभयसिंह के पास पहुंचा तो वह ब
दुःखित हुआ और उसने भंडारी मनरूप की अध्यक्षता में एक दूसरी से
रवाना की, जो डीडवाणा तक गई, परन्तु उसी समय बीकानेर से फ़ौज
जाने के कारण उसे वापस लौट जाना पड़ा। यह घटना वि० सं० १८०
(ई० स० १७४७) में हुई[1]।

महामांगल्यप्रदमासोत्तममासे
श्रावणमासे कृष्णपक्षे तिथौ
तृतीयायां ३ सोमवासरे श्री-
बीकानेयर मध्ये महाराजा-
धिराजमहाराजश्रीगज-
[सिं]घजीविजयराज्ये काश्यप-
गोत्रे राठोड़कांधलवंशे वणीरो-
त राजश्रीअजवसंघजीतत्पु-
त्रमोहकमसंघजीतस्यात्मज
[स]वाईसंघजी ज़ोधपुर री फो-
ज भागी ताहीरा काम आया

(मूल लेख से)

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६६-७१। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑ
दि बीकानेर स्टेट; पृ० ५५-५६।

जोधपुर राज्य की ख्यात से भी पाया जाता है कि जोरावरसिंह का निःसन्ता
देहान्त होने पर उसके चाचा आनन्दसिंह का छोटा पुत्र गजसिंह बीकानेर की गद्दी प
बैठा और बड़े अमरसिंह को गद्दी न मिली। इसपर जोधपुर की सेना ने बीकानेर प
चढ़ाई की, जिसमें अमरसिंह भी साथ था। वि० सं० १८०४ के श्रावण मास में झग
होने पर जोधपुर की तरफ़ के भंडारी रत्नसिंह, कूंपावत रघुनाथसिंह रामसिंहोत (ना
सर), चांपावत अमरसिंह धनराजोत (रयासी) आदि कई सरदार मारे गये (जि
२, पृ० १५८-६)। इस लड़ाई का परिणाम क्या हुआ यह तो उक्त ख्यात में नह

इसके बाद पठानों का उपद्रव बढ़ने पर बादशाह (मुहम्मदशाह) ने अभयसिंह तथा बख़्तसिंह को दिल्ली बुलवाया। महाराजा तो इस अवसर पर न गया, परन्तु बख़्तसिंह दिल्ली की तरफ़ रवाना हुआ। इसपर महाराजा ने भंडारी मनरूप एवं चांपावत देवीसिंह महासिंहोत को भेजकर उसे प्रस्थान करने से मना किया, परन्तु वह रुका नहीं। बादशाह ने पठानों के विरुद्ध शाहज़ादे अहमदशाह, वज़ीर कमरुद्दीनख़ां, जयपुर के राजा ईश्वरीसिंह आदि को भेजा। लड़ाई होने पर कमरुद्दीनख़ां तो गोली लगने से मर गया और ईश्वरीसिंह भाग गया। शाहज़ादा लड़ता रहा और उसने पठानों को हराकर भगा दिया[1]।

बादशाह का महाराजा और उसके भाई को दिल्ली बुलवाना

वि० सं० १८०५ (ई० स० १७४८) में बादशाह मुहम्मदशाह का देहान्त हो गया और उसका उत्तराधिकारी उसका पुत्र अहमदशाह हुआ। मुहम्मदशाह के जीवनकाल में ही अपनी सेना-सहित महाराजा अभयसिंह का भाई बख़्तसिंह दिल्ली चला गया था। अहमदशाह ने गद्दीनशीन होने के बाद उसे अपनी सेवा में बहाल रक्खा। बख़्तसिंह अपने भाई के साथ गुजरात के सूबे में रह चुका था और उधर की सूबेदारी का उसे अनुभव था। अमीरुल्उमरा सादातख़ां की मारफ़त उसने गुजरात की सूबेदारी मिलने की अर्ज़ कराई। अभयसिंह के समय मारवाड़ियों ने गुजरात

बख़्तसिंह को गुजरात की सूबेदारी मिलना

दिया है, परन्तु आगे चलकर उसमें ही भंडारी मनरूप का चांपावत देवीसिंह महासिंहोत (पोकरण), ऊदावत कल्याणसिंह (नींबाज), मेड़तिया शेरसिंह सरदारसिंहोत (रीयां) आदि के साथ पुनः बीकानेर पर भेजा जाना लिखा है (जि० २, पृ० १५-६)। इस से यह निश्चित है कि पहले भेजी हुई सेना की पराजय हुई होगी। उसमें दूसरी बार भेजी गई सेना का भी परिणाम नहीं दिया है और उसके साथ राजा बहादुरसिंह (रूपनगर) तथा अमरसिंह का भी होना लिखा है। "वीरविनोद" में भी दयालदास की ख्यात जैसा ही वर्णन मिलता है (भाग २, पृ० ८०३-४)।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १६०।

के लोगों पर जो ज़ुल्म किये थे उनका अमीरुल्उमरा को पता था, जिससे उसने गुजरात का सूबा बख़्तसिंह को दिये जाने के पूर्व उससे निम्नलिखित शर्तों का एक इक़रारनामा लिखवाया—

(१) शाही खालसे के ज़िलों पर मैं अधिकार न करूंगा और माल के अफ़सरों के काम में मदद देता रहूंगा।

(२) बादशाही अमलदारों को मैं पूर्व नियमानुसार कार्य करने दूंगा और उनके साथ अच्छा व्यवहार कर उनको प्रसन्न रखूंगा।

(३) मनसबदारों को तनख़्वाह के एवज़ में जो जागीरें गुजरात में मिली हैं, उन्हें मैं ज़ब्त नहीं करूंगा और उनकी रज़ामंदी के पत्र बादशाह की सेवा में भेजता रहूंगा।

(४) गुजरात के सूबे में रहनेवाले मुसलमानों को मैं अपने अच्छे व्यवहार से प्रसन्न रक्खूंगा और अकारण उनको कष्ट अथवा हानि न पहुंचाऊंगा।

(५) बादशाह मुहम्मदशाह के राज्यकाल में सूबेदार लोग बादशाह की सेवा में जो कुछ पेशकश भेजते थे, वह मैं भी, सूबे का बन्दोबस्त करने के बाद भेजता रहूंगा।

(६) मुसलमानी शरह के अनुसार मुक़दमों का फ़ैसला करने के लिए मैं किसी मुसलमान व्यक्ति को नियुक्त करूंगा, नहीं तो बादशाह की तरफ़ से उसकी नियुक्ति की जावे।

बादशाह-द्वारा इस मुचलके (इक़रारनामा) की मंज़ूरी होने पर हि० स० ११६१ में बादशाह की तरफ़ से महाराज बख़्तसिंह को ६ पोशाकें, सरपेच तथा रत्न-जटित मूठवाली तलवार दी गई और फ़खरुद्दौला की बदली कर अहमदाबाद की सूबेदारी पर उसे नियत किया गया। वहां से अमीरुल्उमरा के साथ, जो जोधपुर और अजमेर की व्यवस्था के लिए जा रहा था, उसको भी जाने की आज्ञा मिली। गुजरात पहुंचने से पूर्व उस सूबे और मरहटों की वास्तविक दशा का पता लगाने के लिए बख़्तसिंह ने गुप्त रूप से अपने आदमी वहां भेजे। उन्होंने लौटकर उसे बतलाया कि

गुजरात के सूबे की दशा अच्छी नहीं है और वह बिल्कुल वीरान हो रहा है। इसी बीच बख़्तसिंह को गुजरात की सूबेदारी मिलने की ख़बर पाकर जवांमर्दख़ां ने उस सूबे की सच्ची हालत के बारे में एक प्रार्थनापत्र बड़े-बड़े सैयदों, शेखों, सम्माननीय व्यक्तियों तथा हिन्दू-मुसलमान व्यापारियों के हस्ताक्षरों-सहित बादशाह की सेवा में भिजवाया[1]। उसमें अभयसिंह के समय गुजरात की जो दशा हुई थी उसका भी पूरा-पूरा वर्णन था। ऐसी हालत में बख़्तसिंह ने वहां की ज़िम्मेदारी अपने ऊपर लेना ठीक न समझा और वहां जाना मुल्तवी रक्खा[2]।

बख़्तसिंह का बीकानेर के गजसिंह को सहायतार्थ बुलाना

पठानों के ख़िलाफ़ बादशाह-द्वारा बुलाये जाने पर, जब बख़्तसिंह ने दिल्ली के लिए प्रस्थान किया तो अभयसिंह ने उसे ऐसा करने से रोका था, पर उसने इसपर कोई ध्यान न दिया[3], फलस्वरूप दोनों भाइयों में मनमुटाव हो गया। पठानों को परास्तकर लौटने पर बादशाह अहमदशाह के समय बख़्तसिंह विशाल शाही फ़ौज के साथ सांभर गया, जहां उसने गजसिंह को भी बुलाया, जिससे उसने मेल स्थापित कर लिया था। अभयसिंह को जब इसकी ख़बर मिली तो उसने मल्हारराव होल्कर को अपनी सहायता के लिए बुलाया। गजसिंह के आ जाने से बख़्तसिंह की सैनिक शक्ति बहुत बढ़ गई। इस सम्बन्ध में उसने गजसिंह से कहा भी कि आपके मिल जाने से हम एक और एक दो नहीं वरन् ग्यारह हो गये हैं। अभयसिंह ने मरहटों की सहायता के बल पर ही अपने भाई पर आक्रमण किया था, परन्तु उसी समय जयपुर के राजा ईश्वरीसिंह के भेजे हुए एक आदमी

(१) इस प्रार्थनापत्र की नक़ल "मिरात-इ-अहमदी" (जि० २, पृ० ३७६-७) में छपी है।

(२) मिर्ज़ा मुहम्मदहसन; मिरात-इ-अहमदी; जि० २, पृ० ३७४-७। कैम्पबेल-कृत "गैज़ेटियर ऑव् दि बाम्बे प्रेसिडेंसी" में भी इसका संक्षिप्त उल्लेख है (भाग १, खंड १, पृ० ३३२)।

(३) देखो ऊपर; पृ० ६६५।

के पहुंच जाने से वख़्तसिंह और मल्हारराव होल्कर की बात-चीत हो गई और उस(मल्हारराव)ने दोनों भाइयों के बीच मेल करा दिया, पर इससे आन्तरिक मनोमालिन्य दूर न हुआ[1]।

जयपुर के माधोसिंह की सहायतार्थ जाना

जयपुर की गद्दी के लिए ईश्वरीसिंह का भाई माधोसिंह प्रयत्नशील था और महाराणा जगतसिंह (दूसरा) माधोसिंह के पक्ष में था। महाराणा ने उसको वहां की गद्दी दिलाने के लिए तीन वार जयपुर पर चढ़ाई की तथा होल्कर को भी उसके पक्ष में कर लिया पर उससे कोई विशेष लाभ न हुआ। अन्तिम वार ईश्वरीसिंह ने माधोसिंह को टोड़ा देना स्वीकार कर महाराणा के साथ सन्धि की थी, पर पीछे से उसे तोड़कर उसने टोड़े पर पुनः अधिकार कर लिया[2]। इस पर माधोसिंह ने मल्हारराव होल्कर तथा रावराजा उम्मेदसिंह (बूंदी) को साथ लेकर जयपुर पर चढ़ाई की। मल्हारराव ने महाराणा से भी सहायता चाही, परन्तु उसने स्वयं न जाकर ४००० सवारों के साथ शाहपुरा के उम्मेद-सिंह, वेगूं के रावत मेघसिंह, देवगढ़ के रावत जसवन्तसिंह (सांगावत),

---

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ७१-२। वीरविनोद; भाग २, पृ० ५०४। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ५६-७।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस सम्बन्ध में लिखा है कि अहमदशाह के तख़्त-नशीन होने पर बख़्तसिंह वहां से फ़ौज ख़र्च तथा सांभर, डीडवाणा, नारनोल और गुजरात की सूबेदारी प्राप्तकर लौटा। महाराजा ने इसकी ख़बर पाकर भंडारी मनरूप एवं चांपावत देवीसिंह को भेज ग्यारह हज़ार रुपया रोज़ाना देना ठहराकर बूंदी से मल्हार-राव को बुलाया और बख़्तसिंह के सांभर में डेरे होने पर वह वहां पहुंचा। महाराजा का इरादा जालोर छुड़ा लेने का था, परन्तु बाद में परस्पर मेल हो जाने से वह अजमेर चला गया और बख़्तसिंह नागोर, परन्तु उसने जालोर नहीं छोड़ा (जि० २, पृ० १६०)। उक्त ख्यात में गजसिंह का बख़्तसिंह की सहायता को जाना नहीं लिखा है, पर अधिक संभव तो यही है कि वह उसकी सहायतार्थ गया हो, क्योंकि समय-समय पर बख़्तसिंह को बीकानेर से सहायता मिलती रही थी।

(२) विस्तृत विवरण के लिए देखो मेरा उदयपुर राज्य का इतिहास; जि० २, पृ० ६३७।

शंभुसिंह[1] और कायस्थ गुलाबराय को भेजा। जब महाराणा ने शिवसिंह[2] को महाराजा अभयसिंह के पास भेजा, तब उसने ह की सहायता करना स्वीकार कर दो हज़ार सवारों-सहित ठाकुर मेड़तिया शेरसिंह और ऊदावत कल्याणसिंह को भेजा। १८०५ भाद्रपद वदि ४ (ई० स० १७४८ ता० १ अगस्त) को गांव के पास दोनों सेनाओं का मुक़ाबला हुआ। ईश्वरीसिंह में परास्त हुआ। तब उसके मंत्री केशवदास खत्री ने एक मरहटे को लालच देकर अपनी तरफ़ मिला लिया और उसके-द्वारा होल्कर को कुछ देकर संधि कर ली। इस संधि के अनुसार सिंह ने उम्मेदसिंह को बूंदी और माधोसिंह को टोंक, टोड़ा, माल- नवाई नामक चार परगने पीछे दे दिये[3]।

राज की बीमारी और मृत्यु

वि० सं० १८०६ (ई० स० १७४६) में महाराजा अभयसिंह रोगग्रस्त उसकी बीमारी क्रमशः बढ़ती ही गई। अपना अन्तकाल निकट जान एक दिवस उसने अपने सरदारों को अपने पास बुलाया और कहा कि मेरे भाई बख़्तसिंह ने मेरे जीते जी ही जोधपुर पर अधिकार करने का किया था। मेरी मृत्यु के बाद वह केवल नागोर से ही सन्तोष न कर रामसिंह को मार जोधपुर ले लेगा। रामसिंह कपूत और निर्बुद्धि वास्ते मुझे आशंका है कि तुम सब पलट जाओगे और उसके

(१) शंभुसिंह सनवाड़ का महाराज तथा ख़ैराबादवाले भारतसिंह का भाई था।

(२) रूपाहेलीवालों का पूर्वज।

(३) वीरविनोद; भाग २, पृ० १२३८-६। वंशभास्कर; चतुर्थ भाग, पृ० ३४८३- । सर जदुनाथ सरकार; फ़ॉल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर; जि० १, पृ० २८५।
जोधपुर राज्य की ख्यात में इस घटना का विस्तृत वर्णन तो नहीं दिया है, पर की सहायता के लिए जोधपुर से सेना जाने और बाद में माधोसिंह को क और मालपुरा मिलकर परस्पर सन्धि होने का उसमें भी उल्लेख है (जि० २, ४६)। उक्त ख्यात में इस घटना का समय नहीं दिया है।

अधीन न रहोगे। इसलिए तुम्हारा इरादा यदि दूसरे (बख़्तसिंह) का साथ देने का हो, तो वैसा कह दो, ताकि मैं बख़्तसिंह को जोधपुर देकर रामसिंह का प्रबन्ध कर दूं। मुझे इस बात की विशेष चिन्ता है और यही जानने के लिए मैंने तुम लोगों को बुलाया है। तब रीयां के ऊदावत शेरसिंह ने उत्तर दिया कि हमारे जैसे वीर राजपूतों के रहते आपको ऐसे कातर वचन कहना शोभा नहीं देता। रामसिंह के कपूत होने पर भी हम उसका साथ देंगे। यह सुनकर महाराजा ने अन्य सरदारों की भी राय जाननी चाही। इसपर आऊवा के स्वामी चांपावत कुशलसिंह ने कहा कि यह तो दिखाई पड़ रहा है कि कुंवर रामसिंह नीच लोगों की संगति में रहने के कारण अनुचित आचरण कर योग्य व्यक्तियों का आदर घटा देगा। यहां तक तो हम सह लेंगे, पर यदि उसने हमारे डेरे आदि बरबाद करना और हमें दुत्कार कर निकालना प्रारम्भ किया तो हमसे रहा न जायगा[1]। अनन्तर आषाढ सुदि १५ (ई० स० १७४६ ता० १६ जून) सोमवार को अजमेर में रहते समय महाराजा अभयसिंह का देहान्त हो गया। इसकी ख़बर श्रावण बदि २ (ता० २१ जून) बुधवार को जोधपुर पहुंचने पर उसकी छः राणियां सती हुईं[2]।

महाराजा अभयसिंह की बारह राणियों के नाम ख्यात में मिलते हैं। उसके दो पुत्र हुए[3]—

राणियां तथा सन्तति

(१) रामसिंह।

(२) जोरावरसिंह (इसका बाल्यावस्था में ही स्वर्गवास हो गया)।

महाराजा को भवन इत्यादि बनवाने का बड़ा शौक था। उसने

---

(१) वंशभास्कर; चतुर्थ भाग; पृ० ३५८३-४, छन्द १६३३।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १६१। उसका दाह संस्कार पुष्कर में हुआ, जहां उसका स्मारक टूटी-फूटी दशा में अब तक विद्यमान है।

(३) वही; जि० २, पृ० १६१-२।

कितने ही नये स्थानों का निर्माण कराने के अतिरिक्त कई पुराने स्थानों का जीर्णोद्धार भी कराया था। उसके समय में जोधपुर के चांदपोल के बाहर अभयसागर नामक कुएं का बनना प्रारम्भ हुआ, पर वह उसके जीवन में पूरा न हो सका। मंडोवर में महाराजा अजीतसिंह का स्मारक भी उसने बनवाना शुरू किया, पर वह भी अधूरा ही रहा। इनके अतिरिक्त उसके समय में चारवां नामक स्थान में उद्यान, कोट, महल, अठपहलू कुआं; मंडोवर में गऊमुख से इधर की तरफ़ ड्योढ़ी के ऊपर बंगला तथा महल एवं पहाड़ के बीच का सीतारामजी का मन्दिर; जोधपुर के गढ़ का पक्का कोट, बुर्जे एवं चोकेलाव कुआं बने[1]।

महाराजा के बनवाये हुए स्थान

महाराजा अभयसिंह को काव्य और साहित्य से अनुराग था। उसकी उदारता से प्रेरित होकर कई कवि, चारण आदि उसके आश्रय में रहते थे। चारण कविया करणीदान ने उसके आश्रय में रहकर "सूरजप्रकाश"-नामक ऐतिहासिक काव्य की रचना की, जिसमें रामचन्द्र और पुंजराज तथा उससे चलनेवाली तेरह शाखाओं के विवरण के अनन्तर जयचंद से लगाकर अजीतसिंह तक का संक्षिप्त हाल और अभयसिंह का सरबुलन्दखां के साथ की लड़ाई तक का विस्तृत वर्णन है। पीछे से उसने उक्त पुस्तक से सरबुलन्दखां के साथ की लड़ाई का आशय लेकर उसे भिन्न छन्दों में काव्य-बद्धकर "विरद-शृंगार[2]"-नामक ग्रन्थ बनाया और उसे महाराजा को सुनाया। महाराजा ने उससे प्रसन्न होकर उसे लाखपसाव में आलावास गांव और कविराजा का ख़िताब देने के अतिरिक्त उसका यहां तक सम्मान किया कि वह उसको हाथी पर चढ़ाकर स्वयं अश्वारूढ़ हो मंडोर से उसके घर तक पहुंचाने

महाराजा की गुणग्राहकता

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १६०-१।

(२) यह ग्रन्थ बीकानेर के राजवी महाराज कर्नल सर भैरूंसिंह ने वि० सं० १६८८ में "भैरवविनोद" नाम से प्रकाशित किया है।

गया[1]। उपर्युक्त दोनों ग्रंथ प्रशंसात्मक दृष्टि से लिखे होने से अतिशयोक्ति-रंजित हैं। अन्य कवियों में भट्ट जगजीवन-रचित "अभयोदय"-(संस्कृत), वीरभाण-रचित "राजरूपक[2]", रसपुंज-रचित "कवित्त श्री माताजी रा[3]," एवं माधोराम-रचित "शाक्त भक्ति प्रकाश", "शंकर-पचीसी" तथा "माधवराम कुंडली[4]" के उल्लेख मिलते हैं। "बिहारी सतसई" महाराजा को अधिक प्रिय होने से कवि सुरति मिश्र ने वि० सं० १७६४ में "अमरचन्द्रिका" नाम की उसकी टीका बनाई थी। रसचंद, सेवक, प्रयाग, माईदास, सावंतसिंह, प्रेमचंद, शिवचंद, अनंदराम, गुलालचंद, भीमचंद, पृथ्वीराय आदि अन्य कितने ही कवियों को भी उसका आश्रय प्राप्त था[5]। "सूरजप्रकाश" से पाया जाता है कि महाराजा ने नरहर, आढ़ा किशन; सिंढायच हरि और मेहडू बलू को एक-एक, खेम दधिवाड़िया को २, सादूनाथ को ३ एवं आढ़ा महेश को ५ लाख पसाव दिये थे।

महाराजा का व्यक्तित्व

अभयसिंह वीर परन्तु दुर्बल-हृदय नरेश था। राज्यारंभ से ही उसने अपने सरदारों के प्रति उपेक्षा का भाव रक्खा, जिससे समय-समय पर उनके साथ उसका विरोध होता रहा। अपने सरदारों को खुश रखने के लिए उसने एक बार अपने प्रियपात्र

---

(१) इस सम्बन्ध में निम्नलिखित दोहा प्रसिद्ध है—

अस चढ़ियो राजा अभो कवि चाढ़े गजराज।
पोहर हेक जळेब में मोहर हले महाराज॥

इस ग्रन्थ का उल्लेख "एनुअल रिपोर्ट ऑन दि सर्च फ़ॉर हिंदी मैन्युस्क्रिप्ट्स" (ई० स० १६०१, पृ० ८२, संख्या १०५) में भी है।

(२) मिश्रबंधुविनोद; द्वितीय भाग, पृ० ७५१।

(३) हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण; पहला भाग, पृ० १३१।

(४) मिश्रबंधुविनोद; द्वितीय भाग, पृ० ६७४-५। श्याम बिहारी मिश्र, एम्० ए०; दि सेकन्ड ट्राइएनिएल रिपोर्ट ऑन् दि सर्च फ़ार हिन्दी मैन्युस्क्रिप्ट्स्; ई० स० १६०६, १० और ११; संख्या ३१४ पृ० ४२४।

(५) हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण; पहला भाग, पृ० ६।

भंडारियों को क़ैद में डलवाया, पर वह कार्य केवल ऊपरी दिल से होने के कारण उसका स्थायी परिणाम न निकला। बख़्तसिंह को छोड़कर वह अपने दूसरे भाइयों को मरवाना चाहता था, जिससे वे उसके सदा विरोधी रहे और जोधपुर राज्य के आस-पास उपद्रव करते रहे। उसकी अपने पिता को मरवाने से बड़ी बदनामी हुई।

अवसर विशेष पर वह छल-छिद्र करने में भी संकोच न करता था। इससे स्वयं उसका भाई बख़्तसिंह, जिसको पिता को मारने के एवज़ में नागोर की जागीर मिली थी, उसको कपटी कहा करता था[1]। वह कान का भी कच्चा था, जिससे साधारण सी झूठी शिकायतों पर उसने कई अच्छे-अच्छे राज-कर्मचारियों तथा अन्य लोगों के साथ बुरा सलूक किया।

ऐसा अनुमान होता है कि अभयसिंह के राज्य-समय में धन का अभाव ही रहा। यही कारण था कि वह अपने सरदारों और अन्य लोगों से ज़ोर-ज़ुल्म से अथवा ओहदों की एवज़ में बड़ी-बड़ी रक़में वसूल किया करता था। बादशाह-द्वारा गुजरात का सूबा मिलने पर उसने रुपये की वसूली के लिए वहां के निवासियों पर भांति-भांति के ज़ुल्म किये। वह वहां के बड़े-बड़े धनी-मानी सेठों को पकड़कर क़ैद में डाल देता और जब तक उनसे अच्छी रक़म वसूल न कर लेता उन्हें न छोड़ता। वहां रहते समय उसने गुजरात के विभिन्न ज़िलों के हाकिमों से सब मिलाकर ८५ लाख से अधिक रुपये वसूल किये[2]। उसके वहां से लौटने के बाद उसके नायब रत्नसिंह भंडारी ने भी प्रजा पर होनेवाले ज़ुल्म की परिपाटी को क़ायम रक्खा, जिसका परिणाम यह हुआ कि अहमदाबाद के कितने ही निवासी स्त्री, पुरुष वहां का वास छोड़कर अन्यत्र चले गये और वह सूबा वीरान हो गया। वह ज़माना मरहटों के उत्कर्ष का था, जिनकी जगह-जगह चौथ लगने लगी थी। अभयसिंह का गुजरात पर अधिकार

(१) बांकीदास; ऐतिहासिक बातें; संख्या ४७२।

(२) इनकी फ़ेहरिस्त जोधपुर राज्य की ख्यात में दी है (जि० २, पृ० १२७-९)।

रहते समय मरहटों की उधर कई बार चढ़ाइयां हुई और अभयसिंह को उन्हें चौथ देना स्वीकार करना पड़ा। अभयसिंह के जीते जी ही उसके भाई बख़्तसिंह ने बड़ी कोशिश और कई प्रकार के वायदे कर गुजरात का सूबा, जो अभयसिंह से छीन लिया गया था, पुनः प्राप्त किया, परन्तु वहां की बुरी दशा का पता पाकर उसने वहां की ज़िम्मेदारी अपने ऊपर लेना उचित न समझ अपना जाना मुल्तवी रक्खा।

अभयसिंह आराम का जीवन व्यतीत करना अधिक पसन्द करता था और अफ़ीम का उसे व्यसन था, जो उसकी अवस्था के साथ-साथ बढ़ता गया[1]।

रामसिंह

रामसिंह का जन्म वि० सं० १७८७ प्रथम भाद्रपद वदि १० (ई० स० १७३० ता० २८ जुलाई) मंगलवार को हुआ था। अपने पिता महाराजा अभयसिंह का देहांत होने पर वि० सं० १८०६ श्रावण सुदि १० (ई० स० १७४९ ता० १३ जुलाई) गुरुवार को वह जोधपुर की गद्दी पर बैठा। इस अवसर पर उसने अपने कृपापात्र नगारची अमिया[2] को मोती (कान का चौकड़ा), कड़ा, सिरोपाव और अपने बांधने की ढाल, तलवार एवं कटार; चाकर चांदा को सिरोपाव, मोती, कड़ा एवं गांव रोइला तथा चूड़ीगर सर्फ़ुद्दीन को सिरोपाव, मोती एवं कड़ा दिया[3]।

जन्म तथा गद्दीनशीनी

---

(१) सरकार; फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर; जि० १, पृ० २४४।

(२) ख्यात में अमिया का इतना सम्मान बढ़ाये जाने का कारण नहीं दिया है, परन्तु "वंशभास्कर" से पाया जाता है कि उस (अमिया) की सरूपा नाम की बहिन महाराजा की "पासवान" (उपपत्नी) थी, जिससे उसने उसका इतना सम्मान बढ़ाया (चतुर्थ भाग, पृ० ३२८४-५, छन्द ३६-७)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १६३। उस समय धायभाई को भी ५०००० रुपये आय की जागीर एवं अन्य राजकर्मचारी भंडारियों आदि को सिरोपाव मिले।

महाराजा अभयसिंह के स्वर्गवास की ख़बर नागोर पहुंचने पर बख़्तसिंह ने बड़ा शोक प्रकट किया और उसके उत्तराधिकारी रामसिंह के लिए पुरोहित विजयराज, धायभाई हरनाथ एवं अपनी धाय[1] के साथ टीके के हाथी, घोड़े आदि भिजवाये। महाराजा ने यह कहकर टीका स्वीकार करने से इनकार कर दिया कि पहले जालोर छोड़ो तब लूंगा। धाय ने जब राजमाता से इस बारे में कहा तो उसने उत्तर दिया कि रामसिंह बालक है, हठ कर बैठा है, अतएव अभी तो जालोर दे दो; दो एक मास बाद पीछा दिलवा दूंगी। नागोर में बख़्तसिंह के पास इसकी सूचना भिजवाने पर उसने कहलाया कि जालोर तो मेरे हिस्से में आया है, उसे मैं नहीं छोड़ सकता, अलबत्त: उसके बदले में दूसरा प्रदेश मैं महाराजा को विजय कर दिला सकता हूं, परन्तु रामसिंह ने इस बात को नामंज़ूर किया। तब धाय आदि टीका लेकर वापस नागोर चले गये[2]।

बख़्तसिंह का रामसिंह के पास टीका भेजना

महाराजा अभयसिंह की मृत्यु के समय फ़ौज तथा सरदार आदि अजमेर में ही थे। सरदारों के पुत्र जोधपुर में रामसिंह के पास उपस्थित हुए। रीयां के शेरसिंह के पुत्र ज़ालिमसिंह तथा फ़तहसिंह महाराजा के पास रहते और उनपर उसकी विशेष कृपा थी। ढोली अमिया का भी बड़ा सम्मान था, जिसके पट्टे में गांव पाल था। एक दिवस मांढा का ठाकुर कुशलसिंह कूंपावत महाराजा के पास गया। उस समय महाराजा शेरसिंह के पुत्रों के साथ ख़िलवत में था, जिन्हें देख कुशलसिंह पीछा लौटने लगा। ज़ालिमसिंह ने महाराजा से कहा कि इसे भी बुलवाइये अन्यथा यह आपकी बदनामी करेगा। महाराजा ने उसे रोकने का बहुत प्रयत्न किया, परन्तु वह रुका नहीं। अनन्तर महाराजा के आदेश से पृथ्वीसिंह फ़तहसिंहोत ने पीछा

महाराजा का अपने सरदारों के साथ दुर्व्यवहार करना और रीयां के ठाकुर से उसके चाकर को मांगना

(१) "वंशभास्कर" से पाया जाता है कि महाराजा ने इस धाय के साथ बड़ा अपमानजनक व्यवहार किया (चतुर्थ भाग, पृ० ३७८९, छन्द ४२)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १६३-४।

लौटते हुए कुशलसिंह को रोककर कहा कि राजा नादान है, तुम्हें बुलाता है तो जाते क्यों नहीं ? इसपर कुशलसिंह ने उत्तर दिया कि मैं खिलवत में नहीं रह सकता और वह चला गया। महाराजा ने पृथ्वीसिंह से कहा कि या तो कुशलसिंह को वापस लाओ या स्वयं भी चले जाओ। तब पृथ्वीसिंह भी चला गया और नागोर पहुंचा, जहां बख़्तसिंह ने उसे अपने पास रखकर उसके गुज़ारे का प्रबंध कर दिया। फिर राहण के ठाकुर बनेसिंह कनीरामोत से उसकी जागीर बिना किसी कारण हटाकर रामसिंह ने लालसिंह मुकुन्दासिंहोत को दे दी। इसपर बनेसिंह भी नागोर चला गया, जहां बख़्तसिंह ने उसे गांव बोड़वा दिया। उन्हीं दिनों मल्हारराव के पास से टीके का हाथी, घोड़ा, सिरोपाव आदि लेकर २०० व्यक्ति रामसिंह के पास गये। महाराजा ने मल्हारराव होलकर के भेजे हुए हाथी से अपना हाथी लड़ाया[1]। दुर्भाग्यवश महाराजा का हाथी हार गया। इससे क्रुद्ध होकर उसने मल्हारराव के हाथी को तोप से उड़ाने की आज्ञा दी। इसपर टीका लेकर आये हुए मरहटे मरने-मारने को तैयार हो गये। उसके इस आचरण से कई सरदार अप्रसन्न हो गये और उन्होंने महाराजा से कहा कि हाथी गणेश का प्रतीक होता है, अतएव उसे मारना अपशकुन है, यदि उसे मारना ही है तो किसी को दे डालिये। तब वह हाथी महाराजा ने खींवसर के ठाकुर जोरावरसिंह को दे दिया तथा राठोड़ देवीसिंह महासिंहोत (पोकरण), कुशलसिंह हरनाथसिंहोत[2] (आउवा), कनीराम रामसिंहोत (आसोप), शेरसिंह सरदारसिंहोत (रीयां), कल्याणसिंह अमरसिंहोत (नींवाज), प्रेमसिंह राजसिंहोत (पाली), राठोड़ देवीसिंह दौलतसिंहोत (कोसाणा) आदि १८ सरदारों को

(१) "वंशभास्कर" में भी इस घटना का उल्लेख है (चतुर्थ भाग, पृ० ३५८९ छन्द, ३९-४१)।

(२) "वंशभास्कर" से पाया जाता है कि महाराजा ने उसका भी अपमान किया था, परन्तु अभयसिंह के आदेश को स्मरण कर उसने उसको सहन कर लिया (चतुर्थ भाग, पृ० ३५८९, छन्द ४२-३)।

एक-एक हाथी दिया। रीयां के ठाकुर शेरसिंह के साथ उसका विजिया नाम का एक चाकर भी दरबार में जाया करता था। महाराजा को वह चाकर इतना पसन्द आया कि उसने शेरसिंह से उसको मांगा। उस समय तो टाला-टूली कर शेरसिंह विदा हुआ, परन्तु उसके डेरे पर पहुंचते ही महाराजा के अनुचर ने जाकर फिर विजिया को मांगा। शेरसिंह ने उत्तर दिया कि आज तो महाराजा चाकर मांगता है, कल कहेगा कि तुम्हारी स्त्री सुन्दर है उसे दे दो। मैं चाकर को नहीं दूंगा, महाराजा नाराज़ होंगे तो अपना मुल्क रक्खेंगे। यह सुनकर महाराजा बड़ा नाराज़ हुआ और उसने शेरसिंह को जोधपुर का परित्याग कर जाने की आज्ञा दी, जिसपर वह अपने ठिकाने रीयां चला गया[1]।

इस प्रकार महाराजा के मूर्खतापूर्ण व्यवहार से तंग आकर उसके कितने ही सरदार बख़्तसिंह के पास नागोर चले गये। तब रामसिंह ने अपने सरदारों को एकत्र कर नागोर पर चढ़ाई करने का इरादा किया। गांव खेडूली में डेरा होने पर उसके पास रहनेवाले लोगों ने उससे कहा कि

महाराजा के रीयां जाने पर शेरसिंह का विजिया को उसे सौंपना

आप नागोर पर चढ़ाई करने का इरादा कर रहे हैं, ऐसे अवसर पर शेरसिंह का साथ होना लाभदायक होता, क्योंकि वह बख़्तसिंह का मित्र है। तब महाराजा की आज्ञानुसार देवीसिंह दौलतसिंहोत (कोसाणा का) शेरसिंह के पास गया। शेरसिंह ने जाने के लिए उत्सुकता तो दिखलाई, परन्तु यह कहा कि महाराजा स्वयं लेने आवे तो जाऊं। साथ ही उसने महाराजा को विजिया को सौंप देने का वायदा भी किया। देवीसिंह ने लौटकर महाराजा से सब बातें कहीं, जिसपर वह स्वयं रीयां गया। शेरसिंह ने सामने जाकर उसका स्वागत किया और विजिया को उसे सौंप दिया। तब महाराजा ने विजिया को कड़ा, मोती, सिरपेच, जिनोई-

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १६४-५। "वंशभास्कर" (चतुर्थ भाग; पृ० ३२८५, ३६२५-६) में भी महाराजा के अपमानजनक व्यवहार से तंग आकर उसके सरदारों का उसका साथ छोड़ नागोर जाना लिखा है।

(सोने का आभूषण), सिरोपाव, तुर्रा और कलगी प्रदान कर पालकी में सवार कराया और सवारी में अपने आगे रख अपने साथ ले गया। फिर शेरसिंह को साथ लेकर महाराजा खेडूली पहुंचा। रीयां और खेडूली के बीच शेरसिंह के घोड़ों के थकने पर उसने उसे चार बार नये घोड़े प्रदान किये[1]।

बख़्तसिंह और रामसिंह के बीच लड़ाई होना

अपने ऊपर चढ़ाई करने के महाराजा रामसिंह के इरादे का पता पाकर बख़्तसिंह ने आदमी भेज बीकानेर से सहायता मंगवाई। इसपर महाराजा गजसिंह १८००० सेना के साथ रवाना होकर गांव सरणवास में बख़्तसिंह के शामिल हो गया। अनन्तर बख़्तसागर होते हुए दोनों के डेरे गांव हीलोड़ी में हुए। वहां रहते समय यह पता लगने पर कि महाराजा रामसिंह रूण में है बख़्तसिंह उधर रवाना हुआ। वहां पहुंचने पर उसने भंडारी मनरूप को दग़ा से मरवा डाला[2], परन्तु कोई बड़ी लड़ाई नहीं हुई। इसी बीच रिणी (बीकानेर) में तारासिंह को मारकर अमरसिंह ने वहां अधिकार कर लिया। इस समाचार के मिलने पर भी गजसिंह ने बख़्तसिंह का साथ न छोड़ा और अपने कई सरदारों को सेना देकर उधर भेज दिया। पीछे से ऊंट-सवारों के साथ मेहता मनरूप को भी बख़्तसिंह ने पहले भेजे गये सरदारों की सहायता के लिए भेजा। रामसिंह की सेना में जयपुर के महाराजा ईश्वरीसिंह का भेजा हुआ राजावत दलेलसिंह निर्भयसिंहोत (धूला का) ४००० सवारों के साथ था। उसने बख़्तावरसिंह से बातकर बख़्तसिंह के जालोर छोड़ देने एवं बदले में तीन लाख

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १६५-६।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात में भी इसका उल्लेख है। उसमें लिखा है कि बख़्तसिंह के इशारे से उसके ड्योढ़ीदार गोयनदास के एक सेवक पातावत ने वि० सं० १८०६ कार्तिक सुदि २ (ई० स० १७४९ ता० १ नवम्बर) को मनरूप को, जब वह अपने डेरे पर पालकी से उतर रहा था, मार डाला (जि० २, पृ० १६८)।

रुपये तथा अजमेर लेने की शर्त पर दोनों में सन्धि करा दी[1]। रुपया चुकाने की अवधि छः मास निश्चित हुई। अनन्तर रामसिंह वहां से लौट गया तथा गजसिंह भी दलेलसिंह से बात-चीत कर बीकानेर गया[2]।

इसके कुछ ही समय बाद बख़्तसिंह सहायता के लिये बादशाह के बख़्शी सलाबतख़ां को लेने गया[3]। उस समय गजसिंह रिणी इलाक़े के गांव

---

(१) इसके विपरीत जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि ईश्वरीसिंह के पास से राजावत दलेलसिंह उसकी पुत्री के विवाह का नारियल लेकर रामसिंह के पास गया हुआ था। उसका इस सन्धि में कोई हाथ नहीं रहा। थोड़ी लड़ाई के बाद बख़्तसिंह ने जालोर छोड़ देने की शर्त कर सन्धि कर ली, परन्तु वहां से उसने अपना अधिकार लड़ाई बन्द होने पर भी नहीं हटाया (जि० २, पृ० १६८-६)। उक्त ख्यात से इस लड़ाई में गजसिंह का बख़्तसिंह के पक्ष में होना नहीं पाया जाता, परन्तु बख़्तसिंह का बीकानेरवालों से इससे बहुत पूर्व ही मेल हो गया था। ऐसी दशा में बख़्तसिंह का गजसिंह को सहायतार्थ बुलाना तथा उसका उसी समय जाना अविश्वसनीय नहीं है।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ७२-३। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ५७-८।

जोधपुर राज्य की ख्यात में भी कहीं-कहीं कुछ अन्तर के साथ इस घटना का वर्णन दिया है। उसके अनुसार सन्धि के पश्चात् रामसिंह मेड़ते तथा बख़्तसिंह नागोर गया (जि० २, पृ० १६७-६)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि सलाबतख़ां को बादशाह की तरफ़ से अजमेर का सूबा मिला हुआ था। आसोपा हरनाथसिंह ने, जो बख़्तसिंह की तरफ़ से दिल्ली में रहता था, उससे बात-चीत की। पीछे से बख़्तसिंह दंतेला-भंभोरा में जाकर उससे मिला। उसी समय के लगभग महाराजा ने बिना किसी कारण के दिल्लगी में ही आसोप का ठिकाना कूंपावत खींवजी (धणला) को दे दिया। उसके इस व्यवहार से अप्रसन्न होकर ऊदावत केसरीसिंह (रास), कूंपावत कनीराम रामसिंहोत (आसोप), चांपावत कुशलसिंह हरनाथसिंहोत (आउवा), मुकनसिंह किशनसिंहोत (गांव नारनंडी), लालसिंह सहसमलोत (बगाड़) आदि उसके चांपावत, कूंपावत और ऊदावत सरदार नागोर चले गये। उन दिनों बख़्तसिंह तो नवाब को लेने के लिए गया था और उसका कुंवर विजयसिंह नागोर में था। उक्त ठाकुर आदि उसके शामिल होकर जोधपुर के ख़ालसे के गांवों को लूटने लगे तथा उन्होंने बीसलपुर, काकेलाव, बगाड़ आदि बहुत से गांव लूट लिए। इसके थोड़े समय बाद ही हंसपुर कोटड़ी (शेखावाटी) में महाराजा

मुसलमानों की सहायता से वख़्तसिंह का जोधपुर पर चढ़ाई करना

मोड़ी में ठहरा हुआ था। वख़्तसिंह ने उसे भी शीघ्र पहुंचने को लिखा। सलावतख़ां के पास से सहायता लेकर वख़्तसिंह के जोधपुर पहुंचने पर गजसिंह भी अपने राज्य का समुचित प्रबंध कर उससे जा मिला[1]। महाराजा रामसिंह ने इस अवसर पर जयपुर के राजा ईश्वरीसिंह को बुलाया। गांव सूरियावास में विपक्षी दलों में तोपों की भीषण लड़ाई हुई, जिसमें दोनों तरफ़ के बहुसंख्यक लोग मारे गये। अनन्तर पीपाड़ में भी बड़ा युद्ध हुआ, जिसमें अमरसिंह, ठाकुर शंभुसिंह (पीसांगण) आदि रामसिंह के कई सरदार मारे गये, परन्तु कुछ निर्णय न हुआ। युद्ध से होनेवाली भयंकर हानि देखकर ईश्वरीसिंह मुसलमान सेनापति से मिल गया और वे दोनों युद्धक्षेत्र का परित्याग कर अपने-अपने स्थानों को चले गये। प्रधान सहायकों के अभाव में युद्ध जारी रखना हानिकारक ही सिद्ध होता, अतएव गजसिंह, वख़्तसिंह, रामसिंह आदि भी अपने-अपने स्थानों को लौट गये[2]।

रामसिंह ईश्वरीसिंह के शामिल हुआ। वहां देवीसिंह महासिंहोत (पोकरण) ने, जो राज्य का प्रधान मंत्री था, पहले ईश्वरीसिंह से मिलना चाहा तो रामसिंह ने उसे हाथ से धक्का देकर हटा दिया और खींवकरण को आगे किया। इसके बाद अक्षय तृतीया की गोठ (दावत) के अवसर पर भी देवीसिंह के सामने का थाल हटाकर खींवकरण के आगे रक्खा गया। तब वह बिना भोजन किये ही अपने डेरे पर लौट गया। इस प्रकार दो बार अपमानित होने पर देवीसिंह महासिंहोत (पोकरण), प्रेमसिंह राजसिंहोत (पाली) तथा अन्य कई सरदार महाराजा का साथ छोड़ नागोर में कुंवर विजयसिंह के पास चले गये (जि० २, पृ० १६६-७१)।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि इस अवसर पर रूपनगर (किशनगढ़) का राजा बहादुरसिंह भी वख़्तसिंह के शामिल हो गया था (जि० २, पृ० १७१)।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ७४। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ५८। जोधपुर राज्य की ख्यात में भी कुछ अन्तर के साथ इस घटना का लगभग ऐसा ही वर्णन मिलता है। उससे इतना अधिक पाया जाता है कि रामसिंह ने अपनी सहायता के लिए दक्षिणी सतवाजी को महाराजा ईश्वरीसिंह की मारफ़त

सय्यद् ग़ुलामहुसेनख़ां-कृत "सैरुलमुताख़िरीन" में इस घटना का भिन्न वर्णन मिलता है। उससे पाया जाता है कि हि० स० ११६१ (वि० सं० १८०५ = ई० स० १७४८) में वख़्तसिंह ने जोधपुर का राज्य प्राप्त करने का उद्योग किया। बादशाह के पास उपस्थित होकर उसने सआदतख़ां[1] को अपनी सहायता के लिये तैयार किया। उसके नागोर लौटने के कुछ दिनों पश्चात् सआदतख़ां भी फ़ौज के साथ रवाना हुआ। मार्ग में सूरजमल जाट के साथ की लड़ाई में उसकी पराजय हुई। उससे मेलकर सआदतख़ां के नारनोल के निकट पहुंचने पर वख़्तसिंह उसके पास पहुंचा। उधर रामसिंह ने जयपुर के महाराजा ईश्वरीसिंह की सहायता प्राप्त की। अजमेर, बूरीगढ़, शेरसिंह का गढ़ और मेड़ता होता हुआ सआदतख़ां पीपाड़ पहुंचा। वख़्तसिंह ने उससे कहा कि इस मार्ग में रामसिंह की तोपें लगी हैं, अतएव इधर से जाना ठीक नहीं; परन्तु सआदतख़ां ने इसपर ध्यान न देते हुए कहा कि एक बार किसी तरफ़ मुख कर लेने पर पुरुष उसे मोड़ते नहीं। उसकी ज़िद को देखकर वख़्तसिंह ने उसका साथ छोड़ दिया। सआदतख़ां की फ़ौज के रामसिंह की तोपों के निकट पहुंचते ही राठोड़ों ने उसपर आक्रमण कर दिया, जिससे मुसलमानी सेना का बहुत नुक़सान हुआ। सआदतख़ां की सारी फ़ौज बिखर गई और धूप की तीव्रता के कारण मुसलमान सिपाही प्यास से व्याकुल हो गये। उनकी

बुलवाया। गांव सूरियावास में परस्पर गोलों की लड़ाई होने पर रामसिंह के पक्ष के अमरसिंह (बीकानेर के महाराजा गजसिंह का बड़ा भाई) और पीसांगण का जोधा शंभुसिंह फ़तहसिंहोत मारे गये। दोनों पक्षों के और भी बहुतसे आदमी काम आये। सतवाजी को सात हज़ार रुपया रोज़ाना देना तय हुआ। पीछे से कछवाहों की मारफ़त बात तय होकर सन्धि हो गई। उसके अनुसार एक लाख रुपया बादशाह की नज़र का नवाब को और पचास हज़ार नवाब के दीवान को दिया गया तथा बादशाह की तरफ़ से लाया गया टीका, हाथी, घोड़ा वग़ैरह नवाब ने महाराजा रामसिंह को दिया (जि० २, पृ० १७१-२)।

(१) ख्यातों में सलायतख़ां नाम दिया है और यही नाम सरकार-कृत "फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर" में भी मिलता है।

यह दशा देख राठोड़ों ने लड़ाई बन्द कर दी और उनके लिए जल की व्यवस्था कर उन्हें विदा किया। ऐसी भीषण परिस्थिति और वर्षा ऋतु निकट देख तथा लड़ाई के विशेष व्यय पर विचार कर सश्रादतखां कुछ इक़रार कर जाने के लिये तैयार हो गया। वख़्तसिंह ने इसके विपरीत उसे बहुत समझाया, पर उसपर उसकी बातों का असर न हुआ और वह तीन लाख रुपये (रामसिंह से) नक़द लेकर तथा शेष के लिए क़िस्तें मुक़र्रर कर पीपाड़ से अजमेर लौट गया[1]।

(१) आर० कैम्ब्रे एण्ड कंपनी-द्वारा प्रकाशित अंग्रेज़ी अनुवाद; जि० ३, पृ० ३११-८।

सर जदुनाथ सरकार-कृत "फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर" में भी इस घटना का विस्तृत वर्णन दिया है। उससे पाया जाता है कि सलावतख़ां वख़्तसिंह का विश्वास नहीं करता था। वह युद्ध करने को भी तैयार न था, क्योंकि वख़्तसिंह ने उसे भरोसा दिलाया था कि उसके रामसिंह की सेना के निकट पहुंचते ही उसके बहुतसे सरदार उस(सलावतख़ां)से आ मिलेंगे और जब ऐसा न हुआ तो उसने ईश्वरीसिंह को एक पत्र लिखा, जिसमें उसने युद्ध के प्रति अपनी अनिच्छा प्रकट की। फिर जल की तंगी होने से उसके सिपाहियों की हालत ख़राब होने लगी। इससे उसका क्रोध बढ़ गया और उसने अपने डेरों के चारों ओर तोपख़ाना लगा दिया। इसपर बीकानेर के महाराजा गजसिंह ने २००० व्यक्तियों के साथ ता० ६ अप्रेल को बख़्शी (सलावतख़ां) के डेरे पर जाकर उसे शान्त किया। ईश्वरीसिंह ने भी उसके पास इस बारे में पत्र लिखा। तब सलावतख़ां कुछ रुपये आदि लेकर मेल करने को राज़ी हुआ, पर कई दिनों तक जब कुछ भी तय न हुआ तो विपत्ती दलों में लड़ाई हुई, जिसमें दोनों तरफ़ के कुछ आदमी मारे गये। अनन्तर ता० १६ अप्रेल को सन्धि की शर्तें तय हुईं। ईश्वरीसिंह स्वयं जाकर बख़्तसिंह की मारफ़त सलावतख़ां से मिला और उसने आगरा की नायब-नाज़िमी के एवज़ २७ लाख रुपया देना तय किया। रामसिंह ने तीन लाख रुपया नक़द दिया और शेष चार लाख के लिए क़िस्तें ठहरा लीं। बख़्तसिंह को इस सन्धि से कोई लाभ न हुआ, जिससे वह नाराज़ होकर नागोर चला गया। इसके बाद ईश्वरीसिंह जयपुर, रामसिंह मेड़ता और बख़्शी अजमेर गया (जि० १, पृ० ३०६-१७। सिलेक्शन्स फ़्राम पेशवाज़ दफ़्तर; जि० २, पृ० १६, जिल्द २१, पृ० २७, ३४-५)।

इससे निश्चित है कि रामसिंह को सन्धि के समय सलाबतख़ां को धन देना पड़ा था। "वंशभास्कर" में इस घटना का बिल्कुल भिन्न वर्णन मिलता है, पर उससे भी रामसिंह का बहुतसा धन देना स्पष्ट है (चतुर्थ भाग; पृ० ३५६६)।

वि० सं० १८०७ (ई० स० १७५०) में महाराजा ईश्वरीसिंह ज़हर खाकर मर गया और जयपुर की गद्दी पर उसका भाई माधोसिंह बैठा। ईश्वरीसिंह के मरने से रामसिंह का एक प्रधान सहायक जाता रहा। तब मारवाड़ के प्रमुख सरदारों ने, जो बख़्तसिंह के शामिल हो गये थे, उससे जाकर कहा कि रामसिंह इस समय केवल थोड़े से साथियों-सहित मेड़ता में है, अतएव चढ़ाई करने का उपयुक्त अवसर है। बख़्तसिंह को भी यह बात जंच गई। बीकानेर से महाराजा गजसिंह इसके पूर्व ही उसके पास पहुंच गया था। दोनों की सम्मिलित सेना ने खेडूली होते हुए दूदासर तालाव पर पहुंच वि० सं० १८०७ मार्गशीर्ष वदि ६ (ई० स० १७५० ता० ११ नवम्बर) को मेड़तियों को हराकर रामसिंह के डेरे आदि लूट लिए। वहां से गजसिंह तथा बख़्तसिंह ने बीलाड़ा जाकर एक लाख रुपये पेशकशी के वसूल किये। पीछे जब वे सोजत में थे रामसिंह ने सेना एकत्र कर उनपर आक्रमण किया, परन्तु उसे हारकर भागना पड़ा[1]। विजयी सेना ने उसके खेमे लूटकर उनमें आग लगा दी। इस अवसर पर ज़ालिमसिंह किशोरसिंहोत-(मेड़तिया) ने शत्रु को रोकने का प्रयत्न किया, पर विपक्षी सेना के अधिक होने के कारण उसे अपने प्राण गंवाने पड़े। अनन्तर युद्ध करने में कोई लाभ न देख रामसिंह समझौता कर जोधपुर चला गया तथा गजसिंह और बख़्तसिंह नागोर गये[2]।

बख़्तसिंह की मेड़ता पर चढ़ाई

(१) सरकार-कृत "फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर" से पाया जाता है कि रामसिंह-द्वारा अपमानित होने पर चांपावत कुशलसिंह बख़्तसिंह से जा मिला। अनन्तर दोनों की सम्मिलित सेना ने लूणियावास में ई० स० १७५० ता० २७ नवंबर (वि० सं० १८०७ मार्गशीर्ष सुदि १०) को रामसिंह की सेना पर आक्रमण किया, जिसमें रामसिंह की तरफ़ का शेरसिंह मेड़तिया और अन्य कई व्यक्ति तथा बख़्तसिंह के सहायक बीकानेर के ६-७ सरदार काम आये। स्वयं बख़्तसिंह के भी कई घाव आये और उसे चार मील पीछा हटना पड़ा, लेकिन अन्त में रामसिंह की पराजय हुई और वह राजधानी में भाग गया (जि० १, पृ० ३१६-२०)।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ७४-५। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि

बख़्तसिंह आदि के नागोर की तरफ़ प्रस्थान करते ही रामसिंह पुनः मेड़ते जा रहा[1], जिसकी खबर लगते ही गजसिंह तथा बख़्तसिंह ने वि० सं० १८०८ आषाढ सुदि ६ (ई० स० १७५१ ता० २१ जून) को सीधे जोधपुर पर चढ़ाई कर वहां चार पहर तक खूब लूट मचाई। गढ़ के भीतर भाटी सुजानसिंह तथा पोकरण के देवीसिंह के श्वसुर थे, जिन्होंने बख़्तसिंह की सेवा में उपस्थित हो गढ़ उसके सुपुर्द कर दिया[2]। तब क़िले

बख़्तसिंह का जोधपुर पर अधिकार होना

बीकानेर स्टेट; पृ० ५८-६।

जोधपुर राज्य की ख्यात में भी सरदारों के कहने से बख़्तसिंह का मेड़ता पर चढ़ाई करना और उस समय उसके साथ बीकानेर के गजसिंह तथा रूपनगर-(किशनगढ़) के बहादुरसिंह का होना लिखा है। बख़्तसिंह ने सरदारों के कहने से प्रस्थान तो कर दिया, पर वह हमला करने में हीला-हवाला करता रहा। फिर दूदासर के निकट वि० सं० १८०७ कार्तिक सुदि ६ (ई० स० १७५० ता० २८ अक्टोबर) को लड़ाई होने पर रामसिंह की तरफ़ के शेरसिंह सरदारसिंहोत (रीयां), सूरजमल सरदारसिंहोत (आलनियावास), श्यामसिंह अभयसिंहोत (बलूंदा), डूंगरसिंह श्यामसिंहोत (बीखरणया), सुरताणसिंह फ़तहसिंहोत (सेवरिया) आदि कई सरदार मारे गये तथा बख़्तसिंह की फ़ौज के भी अनेक व्यक्ति काम आये। इसके बाद और कई लड़ाइयां हुईं, जिनमें दुतरफ़ा बहुत से आदमी मारे गये, पर कोई परिणाम न निकला। युद्ध से होनेवाली हानि को देखकर बख़्तसिंह ने पोकरण के देवीसिंह (महासिंहोत) और कुचामण के ज़ालिमसिंह को बुलाकर कहा कि मुझे मेड़ता वापस दिया जाय तो मैं लड़ाई बन्द कर दूं, पर वे इसके लिए राज़ी न हुए। फिर श्रावणादि वि० सं० १८०७ (चैत्रादि १८०८) वैशाख वदि ६ (ई० स० १७५१ ता० ६ अप्रेल) की लड़ाई के बाद, जिसमें रामसिंह की तरफ़ का राठोड़ ज़ालिमसिंह किशोरसिंहोत (कुचामण) अपने दो कुंवरों चैनसिंह और सुरताणसिंह एवं ७० व्यक्तियों-सहित मारा गया, वह-(रामसिंह) शीघ्रता से प्रस्थान कर जोधपुर चला गया (जि० २, पृ० १७३-७)।

(१) सरकार-कृत "फ़ाल आव् दि मुग़ल एम्पायर" से पाया जाता है कि जोधपुर पर आक्रमण होने पर जब रामसिंह उसकी रक्षा न कर सका तो वह जयपुर चला गया (जि० १, पृ० ३२०)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि महाराजा रामसिंह के जोधपुर जाते ही बख़्तसिंह ने पुनः मेड़ते की तरफ़ प्रस्थान किया। इसकी ख़बर पाकर

में प्रवेशकर गजसिंह ने वख़्तसिंह को गद्दी पर बैठाया और इसकी बधाई दी। वख़्तसिंह ने इसके उत्तर में कहा कि यह आपकी समयोचित सहायता

रामसिंह के सरदारों ने उसे समझाया कि मेड़ता पर बख़्तसिंह का अधिकार होना अच्छा न होगा, अतएव आप शीघ्र उधर प्रस्थान करें। महाराजा ने ऐसा ही किया और वह मेड़ते जा रहा। इसकी ख़बर हरकारों ने बख़्तसिंह को देकर उससे कहा कि रामसिंह का तोपख़ाना अभी गंगराणे में ही अटका हुआ है। इसपर बख़्तसिंह गंगराणे गया, पर उसके वहां पहुंचने के पूर्व ही तोपख़ाना मेड़ते में दाख़िल हो गया। अनन्तर बख़्तसिंह ने रास के ठाकुर केसरीसिंह के कहने पर जैतारण होते हुए बलूंदा पर चढ़ाई की, जहां के स्वामी फ़तहसिंह ने गांव वांजाकुड़ी में उपस्थित हो उसकी अधीनता स्वीकार की। वहां से बख़्तसिंह नींबाज गया, जहां कल्याणसिंह ने उसका अच्छा आदर-सत्कार किया और वहां पड़ा हुआ महाराजा का तोपख़ाना उसको दिया। फिर रायपुर से भाखरसिंह के पुत्र पद्मसिंह को साथ ले वह जोधपुर की ओर अग्रसर हुआ। मार्ग में उसने बीलाड़ा और पाल गांवों को लूटा और श्रावणादि वि० सं० १८०७ (चैत्रादि १८०८) आषाढ सुदि ६ (ई० स० १७५१ ता० २१ जून) को वह रातानाडा पहुंचा। उस समय गढ़ के प्रबन्ध के लिए क़िलेदार भाटी सुजानसिंह (लवेरा) तथा चौहान राव मोहकमसिंह (सांचोर) और नगर के इन्तज़ाम के लिए राठोड़ दौलतसिंह, जोधा सूरजमल दुर्जनसिंहोत (पाटोदी), भाटी महेशदास नाथावत (कीटणोद), जैतकरण मेहकरणोत (वागावास) आदि नियुक्त थे। जोधपुर के सिंधी सिपाही बख़्तसिंह से मिल गये और उसके सिवांची दरवाज़े पर पहुंचने पर उन्होंने द्वार खोल दिया। इसपर धायभाई देवकरण आदि, जो शहरपनाह के मोर्चे पर थे, भागकर गढ़ में चले गये और बख़्तसिंह, गजसिंह और राजा बहादुरसिंह तलहटी के महलों में प्रविष्ट हुए। गजसिंह ने शहर लूटने की राय दी, परन्तु बख़्तसिंह ने इसे स्वीकार न किया। भाटी सुजानसिंह एवं धायभाई देवकरण ने ज़नानी ड्योढ़ी पर जाकर राणी नरूकी (रामसिंह की माता) से कहलाया कि आपके पुत्र से सरदारों का नियन्त्रण नहीं होता। आप कहें तो रत्नसिंह और रूपसिंह (अजीतसिंह के पुत्र) को, जो क़ैद में हैं, मुक्तकर गढ़ सौंप दें। इससे बख़्तसिंह के पक्ष में गये हुए कितने ही सरदार अपनी तरफ़ आ जायंगे; परन्तु नरूकी ने इसकी स्वीकृति नहीं दी। फिर चांपावत सूरजमल रामसिंहोत (समाडिया) तथा जोधा उदयसिंह हिन्दूसिंहोत (देधाणा) ने नरूकी को भाटी सुजाणसिंह एवं चौहान मोहकमसिंह को मरवाने और गढ़ न छोड़ने की राय दी; क्योंकि उनके कथनानुसार वे दोनों बख़्तसिंह से मिले हुए थे, पर इसका भेद प्रकट हो गया, जिससे काम सधा नहीं। फिर बख़्तसिंह ने पोकरण के ठाकुर को सुजानसिंह आदि से बात करने को भेजा। उसने वहां जाकर

के बल पर ही संभव हो सका है। अनन्तर गजसिंह वहां से विदा हो बीकानेर चला गया[1]।

उन्नीस वर्ष की अपरिपक्क आयु में रामसिंह जोधपुर की गद्दी पर बैठा। वह अल्पबुद्धि, अदूरदर्शी, अभिमानी, स्वार्थपरायण और उग्र-प्रकृति का शासक था। प्रारंभ से ही कुसंगति में पड़ जाने के कारण वह दुराचारी और स्वभाव का बड़ा ज़िद्दी हो गया था। अमिया ढोली जैसे दो-चार नीच

महाराजा रामसिंह का व्यक्तित्व

उन्हें समझाया कि बख़्तसिंह तो पीछा नागोर चला जायगा और राज्य विजयसिंह का रहेगा, जिसपर सुजानसिंह, चौहान मोहकमसिंह, महेचा सरदारसिंह आदि गढ़ सौंपने को राज़ी हो गये (जि० २, पृ० १७७-६)। ख्यात के इस कथन में कुछ भिन्नता है और इससे प्रकट होता है कि बख़्तसिंह के मेड़ते पर चढ़ाई करने की वजह से रामसिंह को उधर जाना पड़ा था, पर अधिक संगत तो मूल में दिया हुआ कथन ही प्रतीत होता है।

"फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर" में जोधपुर पर अधिकार होने की तारीख़ ई० स० १७५१ ता० ८ जुलाई (वि० सं० १८०८ श्रावण वदि १२) दी है (जि० १, पृ० ३२०)।

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ७५। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ५६। वंशभास्कर; चतुर्थ भाग, पृ० ३६२५-३२, छन्द ८-४०।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि वि० सं० १८०८ श्रावण वदि २ (ई० स० १७५१ ता० २६ जून) शनिवार को रात्रि के समय बख़्तसिंह के कहने पर चौहान मुहकमसिंह, महेचा सरदारसिंह और धायभाई देवकरण ने उस (बख़्तसिंह) का हाथ पकड़ कर गढ़ के भीतर ले जाने के लिए उसे उठाया। अनन्तर हाथी पर सवार होकर बख़्तसिंह ने गढ़ में प्रवेश किया। उस समय पोकरण का ठाकुर उसकी ख़वासी में हाथी पर विद्यमान था। इसके दूसरे दिन दरबार के अवसर पर बख़्तसिंह ने अपने तलवार बांधने की आज्ञा दी। सरदारों को यह बात अखरी, क्योंकि उनसे तो विजयसिंह को राज्य देने की बात कही गई थी और आसोप के ठाकुर कनीराम के पुत्र दलजी ने कुछ कहना चाहा तो बख़्तसिंह नाराज़ हो गया। इसपर कनीराम ने उसके तलवार बांध दी। अनन्तर सरदारों ने उसकी नज़र-निछरावल करी। दरबार के समय बीकानेर का महाराजा गजसिंह और रूपनगर का राजा बहादुरसिंह भी उपस्थित थे। इस अवसर पर बख़्तसिंह ने ख़रबूज़ी की पट्टी वापस बीकानेरवालों को दे दी (जि० २, पृ० १७६-८०)।

प्रकृति के व्यक्ति उसके प्रीतिभाजन थे, जिनके संसर्ग में उसका अधिक समय बीतता था। सरदारों के प्रति उसका व्यवहार अच्छा नहीं था। अपने ओछे स्वभाव के कारण वह उनके सम्मान का ध्यान नहीं रखता था। अपनी मृत्यु से पूर्व ही अभयसिंह को ज्ञात हो गया था कि उसका निर्बुद्धि पुत्र रामसिंह अपने सरदारों को नाराज़ कर अधिक समय तक राज्य-सुख न भोग सकेगा। इसलिए अपने अन्तिम समय में उसने अपने सरदारों को अपने निकट बुलाकर उनसे सदा रामसिंह का पक्ष लेने का अनुरोध किया था। सरदारों ने जहां तक संभव था, अभयसिंह के अंतिम अनुरोध की रक्षा की और रामसिंह के दुर्व्यवहार को सहन किया, परन्तु जब उसका आचरण सीमा को पार कर गया तो उन्हें अपनी सम्मान-रक्षार्थ उसका साथ छोड़ बख़्तसिंह का पक्ष ग्रहण करना पड़ा। इसका परिणाम यह हुआ कि राज्य-प्राप्ति के केवल दो वर्ष बाद ही उसे जोधपुर के सिंहासन से हाथ धोना पड़ा। उसके समय में राज्य और प्रजा दोनों की दशा बुरी रही।

बख़्तसिंह

महाराजा बख़्तसिंह का जन्म वि० सं० १७६३ भाद्रपद वदि ८ (ई० स० १७०६ ता० २० अगस्त) को हुआ था। वि० सं० १८०८ आषाढ सुदि १० (ई० स० १७५१ ता० २२ जून) को अपने भतीजे रामसिंह की सेना को परास्त कर उसने जोधपुर नगर पर क़ब्ज़ा कर लिया। उसी वर्ष श्रावण वदि २ (ता० २६ जून) शनिवार को उसने जोधपुर के गढ़ में प्रवेश किया और श्रावण वदि १२ (ता० ८ जुलाई) को उसका वहां कब्ज़ा हो गया। फिर उसने नागोर आदमी भेजकर अपने परिवार को जोधपुर बुलवा लिया[1]।

जन्म तथा जोधपुर पर अधिकार होना

उन दिनों भाद्राजूण का ठाकुर विद्रोही हो रहा था। उसका दमन

(1) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १८०।

करने के लिए महाराजा ने अपने पुत्र विजयसिंह को पांच हज़ार फ़ौज के साथ भेजा। उसने वहां जाकर राज्य का थाना स्थापित किया। महाराजा ने चौरासी गांवों के साथ भाद्राजूण का ठिकाना पाली के ठाकुर प्रेमसिंह के नाम लिख दिया। अनन्तर बख़्तसिंह ने अपने टीके का मुहूर्त निकलवाया।

ठाकुरों के ठिकानों में परिवर्तन करना

एक दिन जब वह अकेला राजकीय भंडारों का निरीक्षण कर रहा था, दौलतखाने में देवीसिंह, केसरीसिंह, कल्याणसिंह, प्रेमसिंह, दलजी आदि सरदार जमा थे। दलजी ने उनसे कहा कि बख़्तसिंह ने हमसे अभयसिंह की गद्दी पर विजयसिंह को बैठाने का वायदा किया था, परन्तु अब वह अपने लिए मुहूर्त निकलवा रहा है। यदि सलाह हो तो उसे भंडार के भीतर ही बन्द कर दिया जाय। इसपर सरदारों ने उत्तर दिया कि इसकी जल्दी क्या है, अभी तो बहुत समय है। पोकरण के ठाकुर देवीसिंह तथा रास के ठाकुर केसरीसिंह ने इस मंत्रणा की सूचना गुप्त रूप से सिंघवी फ़तेहचन्द को देदी। उसने बख़्तसिंह से जाकर सारा हाल कहा, जिसपर वह भंडार के बाहर निकल आया। इसके कुछ ही समय बाद बख़्तसिंह ने राजा बहादुर किशोरसिंह को हटाकर ४४ गांवों के साथ राजगढ़ की जागीर रास के ठाकुर ऊदावत केसरीसिंह के नाम, बलूंदा की जागीर फ़तहसिंह के छोड़ जाने पर चांदावत ज़ालिमसिंह उदयसिंहोत के नाम और कोसाणा की जागीर चांदावत बहादुरसिंह सबलसिंहोत के नाम कर दी। भाटी किशनसिंह के नाम ५०००० का पट्टा किया गया और आउवा के चांदावत जैतसिंह के पट्टे में वृद्धि की गई। पोकरण के ठाकुर देवीसिंह को भी बख़्तसिंह नया पट्टा देता था, परन्तु उसने लेना स्वीकार न किया। इस अवसर पर बख़्तसिंह ने कोतवाल आदि अधिकारियों की भी नये सिरे से नियुक्ति की[1]।

उन्हीं दिनों महाराजा बख़्तसिंह ने अपने भाइयों रत्नसिंह और रूपसिंह को, जो क़ैद में थे, नागोर के क़िले में भिजवाया। फिर जब उसने उनके

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १८०-१।

अन्य विरोधियों को सज़ा देना

अन्धे किये जाने की आज्ञा निकाली तो उन्होंने आत्मघात कर लिया। अनन्तर बख़्तसिंह ने रामसिंह की माता नरूकी को गढ़ से उतारकर उसकी सारी संपत्ति छीन ली। बख़्तसिंह के अन्य विरोधी भंडारी, पंचोली, मेहता, व्यास आदि क़ैद किये गये। उनमें से पंचोली लालजी का पुत्र मेहकरण हाथ-पैर काटकर मार डाला गया और जोशी हरकिशन ने आत्महत्या कर ली[1]।

बादशाह की तरफ़ से टीका मिलना

उसी वर्ष दिल्ली से बादशाह अहमदशाह की तरफ़ से टीके का हाथी, सिरोपाव आदि लेकर व्यास हरनाथ जोधपुर गया। हरनाथ को महाराजा ने अपनी ओर से हाथी देकर विदा किया[2]।

मरहटों की सहायता से रामसिंह का अजमेर पर क़ब्ज़ा करना

जोधपुर से अधिकार हटने के बाद रामसिंह मेड़ता से मारोठ चला गया, जहां परवतसर तथा सांभर के परगनों पर उसका अधिकार बना रहा[3]। कुछ समय बाद उसकी तरफ़ से पुरोहित जगू, भंडारी सवाईराम, जोरावरसिंह (खींवसर), इंद्रसिंह (खेरवा), कूंपावत खींवजी तथा चांपावत देवीसिंह मल्हारराव के पास गये[4], जो उन दिनों कुमाऊं के पहाड़ों पर

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १८३।

(२) वही; जि० २, पृ० १८३।

(३) वही; जि० २, पृ० १८०।

(४) सर जदुनाथ सरकार-कृत "फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर" से पाया जाता है कि राज्य खोने पर रामसिंह ने पुरोहित जगु को भेजकर मरहटों की सहायता प्राप्त की (जि० २, पृ० १७२)। "वंशभास्कर" से पाया जाता है कि पुरोहित जगु एवं खींवसर के ठाकुर के साथ स्वयं रामसिंह मरहटों के पास गया। जयआपा सिंधिया तथा मल्हारराव होल्कर ने उसका स्वागत किया और जयआपा ने उसके साथ अपनी पगड़ी बदली एवं उसे शीघ्र जोधपुर का राज्य दिलाने का आश्वासन दिया (चतुर्थ भाग, पृ० ३६३०-३१, छन्द, ४३, ४४)।

गया हुआ था। वह उनको साथ लेकर आपा (जयआपा) के पास गया, जिसने रामसिंह से भाईचारा स्थापित कर उसकी मदद करने का वचन दिया। इसी समय दक्षिण से लिखा आने पर, उसे अचानक उधर जाना पड़ा, परन्तु जोधपुर के सरदारों के प्रार्थना करने पर उसने साहबां पटेल[1] को दस हज़ार फ़ौज-सहित उनके साथ कर दिया। उनके मारोठ पहुंचने पर रामसिंह उन्हें तथा मेड़तियों को साथ ले अजमेर गया और उसने वहां क़ब्ज़ा कर लिया[2]। इसके बाद ही फलोधी पर भी रामसिंह का क़ब्ज़ा हो गया। जब बख़्तसिंह को यह खबर मिली तो उसने बीकानेर से महाराजा गजसिंह को सहायता के लिए बुलाया और स्वयं सेना-सहित अजमेर की तरफ़ बढ़ा। लाडपुरा में दोनों एकत्र हो गये। वहां से चलकर दोनों पुष्कर में ठहरे। उनका आगमन सुनते ही रामसिंह और मरहटे बिना लड़े चले गये[3]।

(१) टॉड-कृत "राजस्थान" में इसके स्थान में महादजी पटेल का नाम दिया है (जि० २, पृ० १०५८)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १८३-४।

(३) इस सम्बन्ध में जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा मिलता है कि बख़्तसिंह ने इस अवसर पर एक चाल चली। उसने रामसिंह के सरदारों के नाम इस आशय की चिट्ठियां तैयार कीं कि तुम्हारी अर्ज़ी आई, हमारा नगारा बजते ही तुम रामसिंह को गिरफ़्तार कर लेना। दक्षिणियों को तो मैं मार लूंगा। इस सेवा के बदले में मैं तुम्हें एक-एक लाख का पट्टा दूंगा। ये पत्र उसने क़ासिद के हाथ दक्षिणियों की चौकी की तरफ़ भिजवाये। क़ासिद से वह पत्र छीनकर दक्षिणियों ने साहबां पटेल को दिया। उसको पढ़ते ही उसे रामसिंह के सरदारों की तरफ़ से सन्देह हो गया और वह उसे लेकर रामसर चला गया। तब सब सरदार भी अपने-अपने ठिकानों को लौट गये। पीछे से जब साहबां पर इस कपट का भेद खुला तो उसने बड़ा खेद प्रकट किया और उसी समय लड़ने की तैयारी की, परन्तु सारी फ़ौज बिखर जाने के कारण क्या हो सकता था। अनन्तर रामसिंह मंदसोर चला गया (जि० २, पृ० १८४-५)।

इसके विपरीत सरकार ने "तारीख़-इ-आलमगीरसानी" के आधार पर "फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर" में लिखा है कि ई० स० १७५२ (वि० सं० १८०९) के मई मास के अन्तिम दिनों में जयआपा सिन्धिया की अध्यक्षता में पांच हज़ार मरहटी सेना रामसिंह के भेजे हुए आदमियों के साथ बख़्तसिंह के साथ युद्ध करने के लिए अजमेर

तब गजसिंह भी बीकानेर लौट गया[1]।

चांदावतों को अजमेर में रखकर बख़्तसिंह गांव गूगरे में ठहरा, जहां शाहपुरा के स्वामी उम्मेदसिंह ने उसके पास उपस्थित होकर उसे एक हाथी नज़र किया। अनन्तर बख़्तसिंह ने अपने आदमी भेजकर जयपुर के महाराजा माधोसिंह से कहलाया कि आपका मल्हारराव से वैर है और मेरा आपा (जयआपा) से, अतएव हम और आप मिलकर नरबदा पार मरहटों पर कर लगा दें और मालवे को आपस में आधा-आधा बांट लें। महाराजा माधोसिंह ने उस समय इसका यह उत्तर भिजवाया कि अभी तो चौमासा (वर्षा ऋतु) है, चढ़ाई कैसे की जाय। इसपर बख़्तसिंह ने उससे मिलने के लिए जयपुर की तरफ़ प्रस्थान किया। उसके सोनौली पहुंचने की ख़बर वकीलों-द्वारा प्राप्त होने पर माधोसिंह मेंह बरसते में वहां जाकर उससे मिला। दूसरे दिन दोनों में इस विषय पर बात-चीत हुई कि मरहटों को नरबदा के उस पार ही रोकने का क्या उपाय करना चाहिये। वहां से लौटते ही अचानक बख़्तसिंह की तबियत ख़राब हो गई, जो फिर न सुधरी[2]। बहुत कुछ

बख़्तसिंह की मृत्यु

पहुंची। उन्होंने नगर में लूट मचाकर कई घर जला दिये और विरोध करनेवालों को मार डाला। यह समाचार सुनकर बख़्तसिंह अपनी पूरी सेना के साथ अजमेर से लगभग आठ मील दूर जाकर ठहरा। कुछ समय तक वह बिना युद्ध किये वहीं ठहरा रहा। जुलाई में उसने आक्रमण किया। एक पहाड़ी पर तोपख़ाना लगाया और जगह-जगह नाकेबन्दी कर उसने मरहटी सेना पर गोलाबारी की, जिससे उधर के कई व्यक्ति और एक सेनापति मारा गया। इससे मरहटे निराश हो रामसिंह के साथ दक्षिण की तरफ़ भाग गये (जि० २, पृ० १७३)।

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ७६। वीरविनोद; भाग २, पृ० ५०५। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ६०।

(२) मुन्शी देवीप्रसाद ने "जोधपुर राज्य के महाराजाओं, राणियों, राजकुंवरों, कुंवरियों की नामावली" नामक पुस्तक में लिखा है कि उसे माधोसिंह ने ज़हर दे दिया था, जिससे उसकी मृत्यु हो गई (पृ० ६५)। टॉड उसका माधोसिंह की राठोड़ राणी द्वारा ज़हरीली पोशाक दिये जाने पर मरना लिखता है (राजस्थान; जि० २, पृ० ८६७)।

इलाज होने पर भी बख़्तसिंह अच्छा न हुआ और सोनोली गांव में ही वि० सं० १८०६ भाद्रपद सुदि १३ (ई० स० १७५२ ता० २२ सितम्बर) गुरुवार को उसकी मृत्यु हो गई[1]।

ख्यातों आदि में कहीं बख़्तसिंह की राणियों और सन्तति के नाम एक स्थल पर नहीं मिलते। एक जगह उसकी मृत्यु होने पर उसकी पांच राणियों का उसके साथ सती होना लिखा है। उसका एक पुत्र विजयसिंह था[2]।

राणियां तथा सन्तति

महाराजा बख़्तसिंह का राज्य-काल एक वर्ष के क़रीब रहा, परन्तु उसने इसी बीच कई नवीन स्थान आदि बनवाये। जगह-जगह चौक बनवाने के लिए उसने पहले के बने हुए कई मकानों आदि को तुड़वा दिया। आनंदघन का मन्दिर उसके समय में ही बना था[3]।

महाराजा के बनवाये हुए स्थान

जैसा कि ऊपर लिखा गया है बख़्तसिंह लगभग एक वर्ष गद्दी पर रहा, परन्तु इतनी अल्प अवधि में ही उसने जिस नृशंसता का परिचय दिया, उसका उदाहरण इतिहास में दूसरा नहीं मिलता। वीर वह था और राजनीतिज्ञ भी, इसमें सन्देह नहीं। अपनी वीरता और चातुर्य्य के बल पर ही जोधपुर का बड़ा राज्य उसने अपने अधिकार में कर लिया था। जोधपुर का स्वामित्व प्राप्त

महाराजा का व्यक्तित्व

सर जदुनाथ सरकार लिखता है कि वह हैज़े की बीमारी से मरा (फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर; जि० २, पृ० १७४)।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १८५-६।

दयालदास की ख्यात में बख़्तसिंह की मृत्यु की तिथि भाद्रपद वदि १३ दी है (जि० २, पत्र ७६), जो ठीक नहीं है। "वीरविनोद" में भी भाद्रपद सुदि १३ ही दी है (द्वितीय भाग, पृ० ८०५)। मिलान करने से उस दिन गुरुवार आता है, अतएव वही तिथि ठीक जान पड़ती है।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० १८६ और १८०।

(३) वही; जि० २, पृ० १८२।

होने के पूर्व और उसके बाद भी उसने युद्ध से कभी मुख न मोड़ा। सच्चे राजपूत के समान ही उसका जीवन सदैव लड़ाई में ही बीता, परन्तु उसने अपने उसी वीरतापूर्ण काल में कई ऐसे कार्य किये, जिससे उसका नाम सदा के लिए कलंक-कालिमा से मंडित हो गया। उसकी न्यायशीलता की कई बातें प्रसिद्ध हैं, जिनसे पाया जाता है कि उसका अपनी प्रजा के साथ उदार व्यवहार रहा। चारण कवियों ने उसके द्वारा अजीतसिंह की मृत्यु होने से उसकी बदनामी की। इसपर नाराज़ होकर उसने उनकी जीविका छीन ली थी। जब महाराजा मरण शय्या पर पड़ा हुआ था और उसको होश नहीं था, उस समय पोकरण के ठाकुर देवीसिंह चांपावत ने चारणों की जीविका पुनः बहाल करने का संकल्प महाराजा के हाथ से करवा कर संकल्प का जल अपने हाथ पर झेल लिया, जिससे पीछी उनकी जीविकाएं उनको मिल गईं। उसने अपने आश्रितों के साथ बड़ा बुरा व्यवहार किया। पिता को मारकर वह अपने हाथ पहले ही रंग चुका था। फिर राजा होते ही उसने और भी बुरे काम किये, जिनका ख्यातों आदि में जगह-जगह उल्लेख मिलता है। महामहोपाध्याय कविराजा श्यामलदास उसके संबन्ध में अपनी पुस्तक "वीरविनोद" में लिखता है—"यह महाराजा अव्वल दर्जे के बहादुर, सख़्त-मिज़ाज, ज़मीन के लोभी, ज़ालिम, फैयाज़ और दगाबाज़ थे। क़ौल का क़याम अपने मतलब के साथ रखते थे। इनके थोड़े से राज्य करने से ही मारवाड़ी लोगों के नाक में दम आ गया था। इसने कई लोगों के हाथ पैर कटवाये और अक्सर को मरवा डाला। ईश्वर ऐसे बेरहम राजा के हाथों में लाखों मनुष्यों का इन्तज़ाम ज्यादह नहीं रखता[1]।"

---

(१) भाग २; पृ० ८२१।

बारहवां अध्याय

महाराजा विजयसिंह से महाराजा मानसिंह तक

विजयसिंह

जन्म तथा गद्दीनशीनी

महाराजा विजयसिंह का जन्म वि० सं० १७८६ मार्गशीर्ष वदि ११ (ई० स० १७२६ ता० ६ नवम्बर) गुरुवार को हुआ था। वि० सं० १८०६ (ई० स० १७५२) में पिता का देहान्त होने पर वह मारोठ में उसका उत्तराधिकारी हुआ। अनन्तर उसी वर्ष माघ वदि १२ (ई० स० १७५३ ता० ३० जनवरी) मंगलवार को जोधपुर जाकर वह वहां की गद्दी पर बैठा[1]।

उन्हीं दिनों राजा किशोरसिंह (महाराजा अजीतसिंह का छोटा पुत्र) ने बनेड़ा के पहाड़ों से सेना एकत्रकर भिणाय पर क़ब्ज़ा कर लिया।

राजा किशोरसिंह का मारा जाना

मारोठ में रहते समय महाराजा बख़्तसिंह ने राठोड़ केसरीसिंह बख़्तसिंहोत (ऊदावत, रास) को राजगढ़ का ठिकाना देकर भाटी किशनसिंह (हठीसिंहोत) आदि कई सरदारों के साथ उधर भेजा था। उनके अजमेर के गांव न्याडावाघ में पहुंचने पर और लोग तो भाग गये, पर किशोरसिंह अपने साथियों के सहित खड़ा रहा, जिससे वह केसरीसिंह के हाथ से मारा गया[2]।

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १। टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०६०। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८४१-२।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १।

बख़्तसिंह के मरने के बाद रामसिंह ने एक बार फिर गया हुआ राज्य हस्तगत करने का उद्योग किया। इस कार्य की पूर्ति के लिए उसने मन्दसोर से वि० सं० १८१० में कूंपावत खींवकरण फ़तहसिंहोत और सिंघवी जोरावरमल को चमारगूंदा (इंदौर) में आपाजी सिंधिया के पास भेजा। उन्होंने उसे अपना सहायक बनाया और साथ ले मारवाड़ की तरफ़ प्रस्थान किया। मन्दसोर में पहुंचकर उन्होंने रामसिंह को अपने साथ ले लिया। इसकी सूचना मिलने पर विजयसिंह ने अपनी राणी शेखावत तथा कुंवरों फ़तहसिंह, भीमसिंह, सरदारसिंह आदि को जैसलमेर एवं राणी राणावत और कुंवर ज़ालिमसिंह आदि को उदयपुर भिजवा दिया। वि० सं० १८११ (ई० स० १७५४) में आपा के साथ रामसिंह ने जाकर कृष्णगढ़ को लूटा और वहां का अधिकार सावंतसिंह के पुत्र सरदारसिंह को सौंपा। वहां से पुष्कर होते हुए वे आलणियावास पहुंचे और उसको लूटा। फिर उनका डेरा गंगारडा में हुआ। इस बीच महाराजा विजयसिंह के सैनिक मरहटों को यदा कदा तंग करते रहे[1]।

विजयसिंह का रामसिंह के विरुद्ध गजसिंह को सहायतार्थ बुलाना

उन दिनों बीकानेर का महाराजा गजसिंह अपनी सेना तथा जोधपुर के सरदारों के साथ हिसार में था। रामसिंह के मरहटों से मिलकर जोधपुर में उत्पात करने पर विजयसिंह ने गजसिंह को कहलाया कि आप शीघ्र सहायता को आवें। इसपर उस (गजसिंह) ने खींवसर के ठाकुर जोरावरसिंह (उदयसिंहोत) आदि कई सरदारों को ४००० सेना के साथ उसी समय रवाना कर दिया और कुछ समय बाद वह स्वयं भी विजयसिंह से जा मिला। इसी बीच मरहटों की सेना के व्रज की ओर जाने का समाचार मिला। तब गजसिंह ने अपनी अनुपस्थिति में हिसार के परगने में उपद्रव होने की आशंका देख कुछ समय के लिए उधर जाना चाहा; परन्तु जोधपुर का उपद्रव शांत होने तक विजयसिंह ने उससे वहीं रहने

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १-२। सरकार; फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर; जि० २, पृ० १७९।

का आग्रह किया और कहा कि इधर से निवृत्त होकर हिसार पर फिर अधिकार कर लेंगे। इसपर गजसिंह वहीं ठहर गया और हिसार से बीकानेर का थाना उठा लिया गया[1]।

विजयसिंह की पराजय होना

अनन्तर गजसिंह ने बीकानेर से और सेना बुलाली। अब सब मिलाकर उसके पास ४०००० सेना हो गई। इसके अतिरिक्त ७०००० फ़ौज विजयसिंह की थी तथा ५००० सेना के साथ किशनगढ़ का राजा बहादुरसिंह भी सहायतार्थ आया हुआ था। रामसिंह के पास इसके दूने से भी अधिक सेना थी। गजसिंह, विजयसिंह तथा बहादुरसिंह ने गंगारडा में ठहरी हुई शत्रु सेना पर तीन बार आक्रमण कर तोपों के गोलों की वर्षा की, जिससे शत्रु वहां से हटकर सात कोस दूर चौरासण गांव में चला गया। अपने सरदारों के परामर्शानुसार[2] वि० सं० १८११ आश्विन सुदि १३[3] (ई० स० १७५४ ता० २६ सितम्बर) को फिर विजयसिंह ने अपने सहायकों के साथ शत्रु-सेना पर पहले से प्रबल आक्रमण किया। सदा की भांति ही जोधपुर की तरफ़ के राठोड़ों ने इस बार भी बड़ी वीरता का परिचय दिया, परन्तु शत्रु-सेना अधिक होने से उन्हें हारकर पीछा मेड़ता लौटना पड़ा। इस लड़ाई में

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ७७-८। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ६१। जोधपुर राज्य की ख्यात से भी पाया जाता है कि बीकानेर का महाराजा इस अवसर पर विजयसिंह के साथ था (जि० ३, पृ० १-२)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि इस लड़ाई के समय कई शकुनियों आदि तथा बहादुरसिंह, प्रेमसिंह (पाली), छत्रसिंह, दौलतसिंह आदि सरदारों ने देवीसिंह की मारफ़त महाराजा को युद्ध करने से रोका था, पर उसने लड़ाई कर ही दी (जि० ३, पृ० २-३)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात में आश्विन वदि १३ (ता० १४ सेप्टेम्बर) शनिवार दिया है (जि० ३, पृ० ५)। पंचांग से मिलान करने पर यह वार मिल जाता है।

संभव है दयालदास की ख्यात में लेखक दोष से वदि के स्थान में सुदि हो गया हो। "वीरविनोद" में भी आश्विन वदि १३ ही दी है (भाग २, पृ० ८४१)।

विजयसिंह की तरफ़ के बहुत से सरदार काम आये[1]। बहादुरसिंह अपनी सारी सेना के कट जाने से कृष्णगढ़ लौट गया। सैन्य बहुत कम हो जाने से उस स्थल पर लड़ाई जारी रखना उचित न समझ विजयसिंह तथा गजसिंह भी नागोर चले गये[2]।

---

(१) सरकार-कृत "फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर" (जि० २, पृ० १७५-७६) में भी इस लड़ाई का वृत्तान्त दिया है, परन्तु उसमें दी हुई तारीखें भिन्न हैं।

जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार उसकी तरफ़ के मारे जानेवाले प्रमुख सरदारों के नाम नीचे लिखे अनुसार हैं—

(१) राठोड़ प्रेमसिंह राजसिंहोत—पाली (२) राठोड़ मोहकमसिंह पद्म-सिंहोत—सरवाड़ (३) राठोड़ लालसिंह सहसमलोत—सथलाणा (४) राठोड़ उम्मेदसिंह सूरजमलोत—धांधिया (५) राठोड़ जैतसिंह केसरीसिंहोत—मंडावा (६) राठोड़ बहादुरसिंह कनकसिंहोत—खाटू (७) राठोड़ लखधीर मुकन्दसिंहोत—वरणेल (८) राठोड़ भोमसिंह मुकुंदसिंहोत—वरणेल (९) राठोड़ कीरतसिंह गोपी-नाथोत—हेबतसर (१०) राठोड़ सवाईसिंह किशोरसिंहोत—मेरवास (११) राठोड़ नवासिंह पद्मसिंहोत—धांमली (१२) राठोड़ जोरावरसिंह कूंपोत—समाडिया (१३) राठोड़ शुभकरण ज्ञानसिंहोत—गेठिया (१४) राठोड़ जोरावरसिंह नाहरखानोत—जैतपुर (१५) राठोड़ रायसिंह दुरजनसिंहोत—लूणावा (१६) राठोड़ सूरसिंह सांवतसिंहोत—मारोठ (१७) राठोड़ मोतीसिंह जोधसिंहोत—मारोठ (१८) राठोड़ जुझारसिंह दीपसिंहोत—खारिया (१९) महेचा सरदारसिंह करणसिंहोत—थोब (२०) भाटी शुभकरण सूरसिंहोत—रामपुरा (२१) भाटी बख़्तसिंह लाखावत—कंटालिया (२२) भाटी कीरतसिंह लाखावत—खारिया (२३) भाटी प्रेमसिंह मुकन्दसिंहोत—मोडावास (२४) भाटी महेशदास नाथावत—कीटणोद (२५) भाटी जैतसिंह डूंगरसिंहोत—पातां का बाड़ा।

(जि० ३, पृ० ५-६)

दयालदास की ख्यात के अनुसार इस लड़ाई में गजसिंह की तरफ़ के बीदावत इन्द्रभाण मोहकमसिंहोत (कक्कू), बीका कीरतसिंह किशनसिंहोत, नींबावत अखैसिंह नारायणदासोत आदि कई प्रमुख सरदार मारे गये (जि० २, पत्र ७९)।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ७८-९। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८५२-३।

टॉड ने अपने ग्रन्थ "राजस्थान" में इस लड़ाई का विस्तृत वर्णन दिया है, जो

नागोर पहुंचने पर विजयसिंह ने वहां के गढ़ की मज़बूती कर उसमें

इस प्रकार है—

"रामसिंह के जयआपा के साथ मारवाड़ में प्रवेश करने पर विजयसिंह दो लाख सेना एकत्र कर शत्रु का सामना करने के लिए अग्रसर हुआ। पहले दिन केवल तोपों की लड़ाई हुई। दूसरा दिन भी ऐसे ही बीता और राठोड़ सेना की टुकड़ियों ने मरहटों का कई बार बिगाड़ किया। इसी बीच राठोड़ सेना ने मरहटों को परास्तकर लौटते हुए अपने ही सिलेपोशों को रामसिंह के सैनिक समझकर धोके में तोपों में गोलियां भरकर मौत के घाट उतार दिया। साथ ही एक घटना और हुई, जिससे राठोड़ों की जीत पराजय में परिणत हो गई। रूपनगर (कृष्णगढ़) के राज्य-वंचित स्वामी ने, जो मरहटों की तरफ़ था, दूसरी ओर लड़ती हुई राठोड़ सेना में अपना एक सवार भेजा, जिसने यह प्रसिद्ध किया कि विजयसिंह तोप का गोला लगने से मर गया है, अतएव अब लड़ाई करना व्यर्थ है। यह सुनते ही राठोड़ों के हाथ-पैर ढीले पड़ गये और वे भाग निकले। इन दो घटनाओं से विजयसिंह का पक्ष कमज़ोर हो गया और उसने तथा उसके साथियों ने वहां से प्रयाण करना ही उचित समझा। गजसिंह और किशनगढ़ का राजा अपने-अपने स्थानों को लौट गये। विजयसिंह भी नागोर की तरफ़ चला, पर वह मार्ग भूल गया, जिससे उसने लालसिंह (रीयां) को ठीक मार्ग तलाश करने को कहा, परन्तु वह इसकी उपेक्षा कर पूर्ववत् ही चलता रहा। खजवाना होता हुआ विजयसिंह देसवाल पहुंचा। चूंकि घोड़े थक गये थे और नागोर सोलह मील दूर था, अतएव विजयसिंह ने बिना अपना परिचय दिये एक जाट से पांच रुपये में नागोर पहुंचा देना तय किया। जाट ने उसे बैलगाड़ी में बैठाकर पूरे वेग से अपने बैल दौड़ाये, पर इससे भी महाराजा को सन्तोष न हुआ और वह उससे बराबर अधिक वेग से हांकने का आग्रह करता रहा। कई बार इन शब्दों के दुहराये जाने पर खीझकर अन्त में जब जाट से चुप न रहा गया तो उसने बिगड़कर उत्तर दिया—'क्या हांक-हांक लगाई है? तुम कौन हो जो ऐसे भागे जा रहे हो? ऐसी मज़बूत बैलगाड़ी तो विजयसिंह के साथ मेड़ता में होनी चाहिये थी न कि इस प्रकार नागोर जाते हुए। ऐसा जान पड़ता है जैसे तुम्हारे पीछे दक्षिणी लगे हुए हों। अब चुप बैठना, क्योंकि मैं इससे तेज़ गाड़ी न चलाऊंगा।' सुबह होने पर जब गाड़ीवान ने भीतर बैठी हुई सवारी को देखा तो वह महाराजा को पहचानकर अपने रात्रि के आचरण पर बड़ा लज्जित हुआ। नागोर पहुंचने पर पांच रुपये देने के साथ ही विजयसिंह ने भविष्य में उसे और इनाम देने की प्रतिज्ञा की (राजस्थान; जि० २, पृ० ८६८-७० तथा १०६१-२)।" कुछ अन्तर के साथ जाट की बैलगाड़ी पर सवार हो महाराजा के नागोर जाने की कथा जोधपुर राज्य की ख्यात में भी मिलती है (जि० ३, पृ० ९-७)।

शरण ली[1]। तब रामसिंह तथा जयआपा[2] ने वहां पहुंचकर ताऊसर में डेरा किया। अनन्तर मरहटों ने मोर्चाबन्दी कर वि० सं० १८११ कार्तिक सुदि १५ (ई० स० १७५४ ता० ३१ अक्टोबर) गुरुवार को नागोर घेर लिया

रामसिंह आदि का नागोर को घेरना

तथा ५०००० फ़ौज के साथ जयआपा के पुत्र जनकू ने जोधपुर पर आक्रमण किया। उसका डेरा अभयसागर के पास हुआ। गढ़ में उस समय हरसोलाव का ठाकुर चांपावत सूरतसिंह, शोभावत गोयन्ददास, खींची सुन्दर आदि थे। जनकूजी के साथ की फ़ौज ने कई बार आक्रमण किया, पर उसको भीतर प्रवेश करने का अवसर न मिला। इसी प्रकार जालोर तथा फलोधी पर भी आक्रमण हुए[3]। विजयसिंह ने नागोर में रहकर शत्रु का

टॉड ने आगे चलकर (राजस्थान; जि० २, पृ० १०६४ में) तीनों राजाओं (जोधपुर, बीकानेर एवं किशनगढ़) की पराजय के सम्बन्ध में निम्नलिखित प्राचीन दोहा उद्धृत किया है:—

याद घणा दिन आवसी, आपावाली हेल।
भागा तीनों भूपती, माल खज़ाना मेल॥

(१) नागोर के निकट पहुंचने पर वहां के हाकिम प्रतापमल ने आगे जाकर महाराजा का स्वागत किया। अनन्तर सरदारों ने विजयसिंह से हाथी पर सवार होकर चलने की प्रार्थना की, परन्तु महाराजा ने उत्तर दिया कि मैं कौनसी विजयकर आया हूं, जो हाथी पर चढ़ूं। अन्त में सरदारों के विशेष अनुरोध करने पर महाराजा हाथी पर आरूढ़ हुआ और देवीसिंह (पोकरण) उसकी ख़वासी में रहा (जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ७)।

(२) सरकार-कृत "फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर" से पाया जाता है कि पेशवा ने जयआपा को चतुराई का आश्रय लेकर मारवाड़ का मामला शीघ्र निपटाने को कहा था। वह चाहता था कि विजयसिंह और रामसिंह में राज्य बांटकर वह मामला बिना अधिक लड़ाई के तय कर दिया जाय, पर जयआपा ने इसके विरुद्ध विजयसिंह को हराने का निश्चय स्थिर रक्खा (जि० २, पृ० १७६-७८)।

(३) "फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर" में ई० स० १७५५ ता० २१ फ़रवरी को मरहटों की एक टुकड़ी का अजमेर पर भी आक्रमण करना लिखा है (सरकार-कृत; जि० २, पृ० १७८)।

वीरतापूर्वक सामना किया, पर व्यर्थ होनेवाले धन-जन की हानि को रोकने के लिए अन्त में उसने महाराणा राजसिंह (द्वितीय) को लिखकर सन्धि कराने के लिए उदयपुर से चूंडावत रावत जैतसिंह कुबेरसिंहोत (सलूंबर) को बुलाया। जैतसिंह ने नागोर जाकर जयआपा से समझौते के संबंध में बातचीत की, परन्तु कोई परिणाम न निकला[1]।

जयआपा का मारा जाना

मरहटों का नागोर के चारों ओर बड़ा कड़ा घेरा था। वे रसद पहुंचानेवालों के नाक-हाथ काट लेते थे। इससे महाराजा को बड़ा दुःख होता था। ऐसी स्थिति में खोखर केसरखां तथा एक गहलोत सरदार ने व्यर्थ प्राण गवाने से आपा को मारकर मरना अच्छा समझा और उसके लिए महाराजा की अनुमति मांगी। महाराजा ने भी इस कार्य के एवज़ में उन्हें दस-दस हज़ार का पट्टा देना स्वीकार किया। तब दोनों ने मेल करानेवालों के साथ जाकर दक्षिणियों की छावनी में दुकान लगाई। एक दिन उपयुक्त अवसर पाकर आपस में लड़ते हुए उन्होंने आपा के निकट जाकर उसे मार डाला[2], पर

---

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ७६। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८५३। जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ७-८। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ६२।

"फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर" से पाया जाता है कि ई० स० १७५५ के मार्च में ही नागोर में जल का अभाव और अकाल के कारण खाद्य पदार्थों की मंहगाई के सबब लोग नागोर छोड़कर जाने लगे। तब महाराजा ने गुसाईं विजयभारती को भेजकर मरहटों के साथ सन्धि करना चाहा, लेकिन जयआपा ने ५० लाख की रक़म मांगी, जिससे वह चर्चा स्थगित रही। इस बीच जयआपा के दल में भी जल का अभाव होने पर वह ताऊसर में जा ठहरा। फ़रवरी मास के अन्त में मल्हार और सखाराम बापू तथा मार्च के प्रारम्भ में रघुनाथराव ने उसकी मदद को जाना चाहा तो उसने इसे अनावश्यक बता उन्हें लौटा दिया (सरकार-कृत; जि० २, पृ० १७८-६)।

(२) जयआपा की स्मारक छत्री नागोर से ३ मील दक्षिण में विद्यमान है।

जयआपा के मारे जाने के सम्बन्ध में भिन्न-भिन्न पुस्तकों में भिन्न-भिन्न वर्णन मिलते हैं। साथ ही उनमें आपा को मारनेवालों के नाम भी भिन्न-भिन्न दिये हैं। "तवारीख़-

वे भी जीवित न बचे और मारे गये। यह ख़बर फैलते ही मरहटे बड़े क्रुद्ध हुए और उन्होंने बड़े भीषण वेग से विजयसिंह के राजपूतों पर आक्रमण किया। इसी लड़ाई में सलूंबर का रावत जैतसिंह एवं चौहान राजसिंह अपनी सेना-सहित वीरतापूर्वक लड़ते हुए व्यर्थ मारे गये। उधर जयपुर का महाराजा माधोसिंह भी इस उद्योग में था कि जोधपुर का राज्य रामसिंह को मिले तो अपने यश में वृद्धि हो, परन्तु इसी बीच विजयसिंह के पास से आदमी आ जाने से उसने उसकी सहायता करना निश्चयकर बीकानेर से भी सेना मंगवाई, जो मेहता बख़्तावरसिंह की अध्यक्षता में डीडवाणे में जयपुर की सेना के शामिल हो गई। मरहटों ने इसकी सूचना पाते ही उस फ़ौज को घेरकर उसका आगे बढ़ना रोक दिया। इस प्रकार उधर से आई हुई सेना की सहायता से भी विजयसिंह को वंचित रहना पड़ा। अब चौदह मास तक भी घेरा न उठा तो अपने सरदारों से सलाहकर विजयसिंह एक रात्रि को एक हज़ार सवारों के साथ गढ़ छोड़कर बीकानेर की ओर रवाना हो गया और ३६ घंटे में देशणोक जा पहुंचा[1]।

इ-आलमगीर सानी" एवं हरिचरणदास-कृत "चहार गुलज़ार शुजाअत" के आधार पर सरकार ने अपनी पुस्तक "फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर" में मेल करानेवाले व्यक्तियों के साथ गये हुए राठोड़ों (राजपूतों) के साथ कहासुनी हो जाने पर जयआपा के महाराजा के प्रति अपशब्द व्यवहार करने से क्रुद्ध होकर उनका उसको मार डालना लिखा है (जि० २, पृ० १८०-१) परन्तु फ़ारसी तवारीख़ों का कथन सन्दिग्ध ही है। "चहार गुलज़ार" में जयआपा का सिर काटकर बचे हुए तीन राजपूतों का उसे लेकर बख़्तसिंह के पास जाना लिखा है (इलियट; हिस्ट्री ऑव् इंडिया; जि० ८, पृ० २१०), पर उस समय तो जोधपुर का शासक विजयसिंह था। सरकार ने मारनेवालों को राठोड़, फ़ारसी तवारीख़ों में राजपूत और "वंशभास्कर" में इंदा (पड़िहार) लिखा है। इस सम्बन्ध में मूल में दिया हुआ कथन ही अधिक माननीय है।

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ७६। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८०५-६। जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० २, पृ० ८-१०। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ६२।

सरकार-कृत "फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर" से पाया जाता है कि जयपुर तथा

विजयसिंह का बीकानेर से गजसिंह के साथ जयपुर जाना

विजयसिंह के आगमन का समाचार बीकानेर पहुंचने पर गजसिंह ने उसके आदर-सत्कार का समुचित प्रबंध किया और मेहता रघुनाथसिंह आदि कई व्यक्तियों को उसका स्वागत करने के लिए भेजा। अनन्तर परस्पर मिलकर शत्रु पर आक्रमण करने के पूर्व माधोसिंह की सहायता पाना आवश्यक समझ गजसिंह तथा विजयसिंह जयपुर गये। वहां करौली के महाराजा गोपालसिंह तथा बूंदी के रावराजा कृष्णसिंह से उनकी भेंट हुई। कुछ ही समय बाद माधोसिंह के यहां पुत्र उत्पन्न होने से उत्सव आदि के कारण उनके रहने की अवधि बढ़ती गई और जिस कार्य के लिए वे गये थे उसके संबंध में कोई बात न हुई। एक दिन उपयुक्त अवसर देखकर विजयसिंह की सहायता की चर्चा गजसिंह ने माधोसिंह के आगे की, पर उसने कोई ध्यान न दिया। फिर जब उसने मेहता भीमसिंह आदि को इस संबंध में स्पष्ट उत्तर मांगने के लिए भेजा तो माधोसिंह की इच्छानुसार हरिहर बंगाली ने कहा कि यदि विजयसिंह को सहायता दी गई तो जयपुर को मरहटों से लोहा लेना पड़ेगा, जिसमें एक करोड़ रुपया खर्च होगा। इतना रुपया विजयसिंह दे तो उसे सहायता दी जा सकती है। यह उत्तर पाकर गजसिंह तथा विजयसिंह वहां व्यर्थ समय गंवाना उचित न समझ माधोसिंह से विदा प्राप्त करने गये। उस समय माधोसिंह ने गजसिंह को एकान्त में ले जाकर, दोनों राज्यों की पारस्परिक मैत्री का स्मरण दिलाते हुए कहा कि आपके राज्य के फलोधी आदि के ८४ गांव, जो

अन्य पड़ोसी राज्यों से सहायता मंगवाने के अतिरिक्त महाराजा ने दिल्ली में बादशाह के पास भी सहायतार्थ अपने आदमी भेजे और मरहटों को निकालने के एवज़ में दस हज़ार रुपया प्रति दिवस लड़ाई के समय देने का इक़रार किया, परन्तु वहां से कोई सहायता न आई। इधर इसी बीच जयसलमेर, पोकरण और जोधपुर तथा जयपुर के सरदारों के साथ आई हुई सेनाओं को मरहटों ने हराया। साथ ही पेशवा ने भी और सहायक सेना भिजवाई। इन सब कारणों एवं अकाल पड़ जाने के कारण जब गढ़ में अधिक टिक सकना कठिन हो गया तो ई० स० १७५५ ता० १२ नवंबर को विजयसिंह अपने चार सौ अनुयायियों-सहित नागोर से निकल गया (जि० २, पृ० १८२-७)।

अजीतसिंह ने जोधपुर राज्य में मिला लिये थे वे सब मैं रामसिंह से कह-कर वापस दिला दूंगा। रहा विजयसिंह उसका प्रबंध यहां कर दिया जायगा (मरवाया या क़ैद कर दिया जायगा), परन्तु गजसिंह ने यह घृणित प्रस्ताव स्वीकार करने से इनकार कर दिया। माधोसिंह ने फिर भी बहुत ज़ोर दिया, पर वह अपने निश्चय पर स्थिर रहा। तब माधोसिंह ने उसका विवाह करने के बहाने उसे वहां रोकना चाहा, पर उसने यही उत्तर दिया कि पहले विजयसिंह को अपने राज्य की सीमा तक पहुंचा दूं, तब लौट सकता हूं। फिर माधोसिंह ने गजसिंह से कहा कि आप पधारें, मैं विजयसिंह से बातें करलूं। गजसिंह के मन में उसकी बातों से शंका तो पैदा हो ही गई थी, उसने उसी समय प्रेमसिंह किशनसिंहोत बीका तथा हठीसिंह वणीरोत को विजयसिंह की रक्षा पर नियुक्त कर दिया[1]।

माधोसिंह का विजयसिंह पर चूक करने का निष्फल प्रयत्न

विजयसिंह के पक्ष का रीयां का ठाकुर जवानसिंह सूरजमलोत, जयपुर के नाथावतों के यहां ब्याहा था। उसकी स्त्री ने जवानसिंह को उसके स्वामी (विजयसिंह) पर चूक होने की सूचना ठीक समय पर देदी। इसपर वह विजय-सिंह को, जो उस समय माधोसिंह से बातें कर रहा था, सावधान करने के लिए गया। माधोसिंह ने लघुशंका करने के बहाने वहां से हटना चाहा, परन्तु उसी समय बीकानेर के पूर्वोक्त ठाकुरों ने उसकी कमर में हाथ डालकर उसे बैठा दिया और कहा कि हमें

---

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ७९-८१। वीरविनोद; भाग २, पृ० ५०६। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ६२-३।

जोधपुर राज्य की ख्यात से भी पाया जाता है कि पहले विजयसिंह का पक्ष ग्रहण कर माधोसिंह दक्षिणियों से लड़ा था; पर बाद में सरदारों के यह समझाने पर कि रामसिंह को जयपुर की कुंवरी ब्याही है, अतएव उसका साथ देने से उसपर एहसान ही रहेगा वह दक्षिणियों का पक्षपाती हो गया। उसने उनसे कहा कि यदि मेरे साथ तीन हज़ार फ़ौज दी जाय तो मैं विजयसिंह को गिरफ़्तार करने अथवा मार डालने का ज़िम्मा लेने को तैयार हूं (जि० ३, पृ० ११)।

आशंका है, अतएव आप न जावें। इसपर जयपुर के ठाकुर उनपर आक्रमण करने को उद्यत हुए, परन्तु माधोसिंह के मना करने से वे रुक गये। विजयसिंह भी पूर्वोक्त ठाकुरों के कहने पर गजसिंह के पास चला गया। अनन्तर उन ठाकुरों ने माधोसिंह से अपने आचरण की क्षमा मांग ली। गजसिंह ने भी मेहता बख़्तावरसिंह को उसके पास भेजकर उसे प्रसन्न कर लिया। फिर अपने जयपुर लौट आने तक के लिए मेहता भीमसिंह आदि को वहां छोड़कर गजसिंह ने विजयसिंह के साथ प्रस्थान किया[1]।

पाटण, पंचेरी और लोहारू होते हुए वे दोनों रिणी पहुंचे, जहां नागोर से समाचार पहुंचा कि वि० सं० १८१२ माघ सुदि २ (ई० स०

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ८१-२। वीरविनोद; भाग २, पृ० ५०६। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ६३-४।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इस घटना का कुछ भिन्नता के साथ वर्णन मिलता है, जो इस प्रकार है—

"एक दिन महाराजा विजयसिंह माधोसिंह से मिलने गया। वहां बाई (एजनकुंवर किशनगढ़ के राजा की पुत्री थी, जो माधोसिंह को ब्याही थी) ने उससे कहा कि अब यहां आही गये हो तो कछवाहों से सतर्क रहना; क्योंकि इनकी नीयत साफ़ नहीं दिखाई पड़ती। पीछे जब रीयां के ठाकुर जवानसिंह को धोखे की ख़बर मिली तो वह माधोसिंह के पास जा बैठा और उसने महाराजा (विजयसिंह) से डेरे पर जाने के लिए कहा। महाराजा ने जब अपने डेरे पर पहुंच जाने की ख़बर उसके पास भिजवाई तो वह भी उठकर उसके पास चला गया। अनन्तर दोनों दूसरे राजपूतों सहित माधोसिंह के घोड़ों पर चढ़ वहां से रवाना हो गये। उन्होंने गजसिंह से भी आने को कहा, परन्तु वह विवाह करने के लालच से वहीं ठहरा रहा। तंवरों की पाटण होता हुआ विजयसिंह झूंझणू पहुंचा, जहां भोपालसिंह ने उसका अच्छा सत्कार किया। वहां से वह सोनोर पहुंचा। कछवाहों की पीछे आती हुई सेना डीडवाणा से वापस चली गई (जि० ३, पृ० ११-२)। टॉड में भी ख्यात जैसा ही इस घटना का वर्णन दिया है (राजस्थान; जि० २, पृ० ८७२-३)।

इस संबंध में ऊपर आया हुआ दयालदास का कथन ही अधिक माननीय है। जोधपुर राज्य की ख्यात में गजसिंह-द्वारा विजयसिंह की प्राण-रक्षा होने की बात छिपाई गई जान पड़ती है।

मरहटों के साथ संधि स्थापित होना

१७५६ ता० २ फ़रवरी) को मरहटों से संधि हो जाने के कारण उन्होंने अपना घेरा उठा लिया है[1]।

जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि मरहटों से सन्धि जोधपुर के दो सरदारों—सिंघवी फ़तहचंद तथा देवीसिंह महासिंहोत—के उद्योग से हुई थी। इसके अनुसार जोधपुर, नागोर, मेड़ता आदि मारवाड़ का आधा राज्य विजयसिंह को तथा जालोर, मारोठ, सोजत आदि आधा राज्य रामसिंह को मिला एवं लड़ाई बन्द करने के एवज़ में ५१००००० रुपये[2] तथा अजमेर का इलाक़ा मरहटों को देना तय हुआ[3]। इस समाचार से बड़ी प्रसन्नता हुई तथा गजसिंह ने बहुत सा सामान भेंट में देकर विजयसिंह को जोधपुर भेजा, जहां पहुंचने पर उसने बख्तसिंह-द्वारा जागीर किये हुए ५२ गांवों की सनद तथा सवा लाख रुपये नक़द भेजे, जैसी कि उसने बीकानेर में रहते समय प्रतिज्ञा की थी[4]।

इसके कुछ समय बाद वि० सं० १८१३ (ई० स० १७५६) में

---

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ८२। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ६७।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार इसमें से कुछ रुपये तो उसी समय दे दिये गये और शेष के एवज़ में फ़तहचंद का भाई सिंघवी बुधमल तथा अन्य कई व्यक्ति ओल में दिये गये (जि० ३, पृ० १२)। दयालदास की ख्यात के अनुसार यह रक़म २०००००० रुपये थी (जि० २, पत्र ८१)। सरकार ५०००००० लिखता है। उसके अनुसार इस रक़म का आधा एक साल में और शेष आधा अगले दो वर्षों में देना तय हुआ (फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर; जि० २, पृ० १८८)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १२। सरकार; फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर; जि० २, पृ० १८८। इसी पुस्तक से पाया जाता है कि ऊपर दी हुई अन्तिम शर्त के अतिरिक्त दूसरी दो शर्तों का पालन नहीं हुआ। मरहटों को दी जाने वाली रक़म बहुत अधिक होने से ई० स० १७६७ के जून मास में जब मरहटों की तरफ़ से रघुनाथ राजपूताने में गया तो जोधपुर के मंत्रियों ने उसके पास उपस्थित हो शर्तों में कुछ कमी करने की प्रार्थना की, परन्तु उसने सिंधिया के मामले में हस्तक्षेप करना उचित न समझा (जि० २, पृ० १६३-४)।

(४) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ८१।

जोधपुर राज्य में बड़ा भीषण अकाल पड़ा। रामसिंह अपनी सुसराल झलाय(जयपुर) चला गया। उसकी अनुपस्थिति में जोधपुर के सरदारों ने जालोर, सोजत, मेड़ता आदि रामसिंह को दिये हुए परगनों पर अधिकार करने का इरादा प्रकट किया। पोकरण के ठाकुर देवीसिंह ने यह कहकर इसका विरोध किया कि हमने मरहटों से एक वर्ष का वादा किया है, जिसमें अभी पांच मास और शेष हैं, अतएव इतनी अवधि तक हमें शांत रहना चाहिये; परन्तु अकाल की तकलीफ़ों के कारण जोधपुर के सरदारों की हालत दिन-दिन बिगड़ रही थी, जिससे उन्होंने महाराजा की आज्ञा प्राप्तकर आक्रमण कर ही दिया और वहां उनका अधिकार हो गया। इसकी खबर पाकर मरहटे बड़े अप्रसन्न हुए तथा जनकोजी ने स्वयं चढ़ाई करने का विचार किया, परन्तु पीछे से खानूजी जादव (यादव) उसकी आज्ञा पाकर अपनी एवं रामसिंह की सम्मिलित फ़ौज के साथ मेड़ते गया। इस अवसर पर पोकरण के देवीसिंह ने उसका विरोध न किया। इस तरह जोधपुर के सरदारों के दो दल हो-गये—एक महाराजा के पक्षमें और दूसरा उसके विपक्ष में। ऐसी दशा में राज्यभक्त सरदारों ने महाराजा को आने को लिखा। उसने सरदारसिंह-(दुगोली), रघुनाथ नरसिंहोत आदि के साथ ससैन्य जाकर कई जगह विरोधी सरदारों एवं मरहटों की सेनाओं को परास्त किया तथा पीसांगण आदि से पेशकशी वसूल की। कुछ दिनों बाद जब उसने देखा कि उसकी तरफ़ लोगों की कमी है और जितने व्यक्ति उसके साथ हैं, उनकी व्यर्थ जानें गंवाना भी ठीक नहीं हैं, तो उसने आसोप में रहते समय रघुनाथसिंह, सुरताणसिंह आदि कई व्यक्तियों को भेजकर मरहटों से सन्धि की बात की। जनकूजी, दत्तूजी आदि ने बात तयकर रामसिंह को जितनी भूमि दिलाई थी वह उसे वापस दिलवाई गई, जिसके

विजयसिंह के मेड़ता आदि पर अधिकार करने के कारण मरहटों की पुनः चढ़ाई

दि बीकानेर स्टेट; पृ० ६४ (इसमें केवल ४२ गांवों की सनद भेजना लिखा है)।

जोधपुर राज्य की ख्यात में इसका उल्लेख नहीं है।

अनुसार जालोर, मेड़ता आदि विजयसिंह को खाली कर देने पड़े[1]।

इसी बीच जोधपुर में कुछ सरदार मनमानी करने लगे। इसकी सूचना पाकर, मरहटों के साथ पुनः सन्धि स्थापित होने के बाद महाराजा ने जोधपुर की तरफ़ प्रस्थान किया। उन दिनों बावरियों के झुंड धाड़े मारकर बड़ा नुक़्सान करते थे। उनमें नींबाज के बावरी मुख्य थे। बावरी पांचिया के झुंड के गांव कुडछीधणा को लूटकर बाघोरिया के पहाड़ में छिप जाने की ख़बर पाने और उस संबंध में फ़रियाद होने पर ड्योढ़ीदार अणदू, कछवाहा जैसा आदि को नागोर के आसामियों के साथ उनका प्रबंध करने के लिए भेजा। वे उन्हें समझा-बुझाकर उनके मुखियों को साथ ले आये, जिन्हें इशारा पाते ही सिलेपोशों ने मार डाला। इस प्रकार उस दिन से देश में बावरियों का उत्पात बंद हुआ। यह समाचार जब नींबाज के कल्याणसिंह के पास पहुंचा तो वह बहुत नाराज़ हुआ[2]।

महाराजा का उपद्रवी बावरियों को मरवाना

वि० सं० १८१४ (ई० स० १७५७) के फाल्गुन मास में विजयसिंह जोधपुर पहुंचा। उस समय कुछ सरदारों ने जाने की आज्ञा मांगी, जिसके न मिलने पर भी ठाकुर देवीसिंह (पोकरण), ठाकुर कल्याणसिंह (नींबाज), ठाकुर छतरसिंह (पाली), जगतसिंह तथा भाटी दौलतसिंह अपने-अपने ठिकानों को चले गये[3]।

कुछ सरदारों का बिना आज्ञा जोधपुर से चले जाना

इन्हीं दिनों मारवाड़ के कितने एक सरदार उपद्रवी हो गये। छोटी खाटू का ज़ालिमसिंह, मगरासर का नारणोत हठीसिंह तथा डीडवाणा के पास शेखावत और आथूणी की तरफ़ करमसोत लूट-मार करने लगे। इसपर उनका दमन करने के लिए नागोर से सेना भेजी गई।

उपद्रवी सरदारों से दंड वसूल करना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १३-१६।

(२) वही; जि० ३, पृ० १६।

(३) वही; जि० ३, पृ० १६-१७।

इससे भी जब सरदारों का उपद्रव शांत न हुआ तो धायभाई जगू इस कार्य के लिए नियुक्त किया गया। अन्य सरदारों ने जब उसके साथ जाना स्वीकार नहीं किया तब अकेले ही पांच हज़ार फ़ौज एकत्र कर उसने कुछ सरदारों पर चढ़ाई की और बड़ी खाटू, झाड़ोद, मगरासर आदि ठिकानों और शेखावतों, लाडखानियों आदि से दंड वसूल किया। इसके बाद वह जोधपुर लौट गया[1]।

महाराजा का विरोधी सरदारों को राजी करना

मरहटों के साथ की हुई सन्धि के विपरीत महाराजा की अनुमति से उसके सरदारों ने रामसिंह की अनुपस्थिति में उसको मिले हुए इलाक़ों पर क़ब्ज़ा कर लिया था। इससे पोकरण का ठाकुर देवीसिंह नाराज़ होकर अपने ठिकाने में बैठ रहा था। वि० सं० १८१५ में महाराजा ने दो बार अपना आदमी भेजकर उसे बुलाया, पर वह गया नहीं और उसने कहला दिया कि महाराजा को तो रास का ठाकुर केसरीसिंह प्रिय है, उसको मेरी क्य आवश्यकता? तब महाराजा ने केसरीसिंह को उसे लाने के लिए भेजा, पर वह भी नाकामयाब रहा। इसी बीच ठाकुर कल्याणसिंह (नींबाज) का देहांत हो जाने पर बिना महाराजा की आज्ञा के ही केसरीसिंह का पुत्र दलसिंह वहां गोद चला गया। इससे महाराजा को बड़ा असन्तोष हुआ, जिससे केसरीसिंह (रास), ठाकुर मदनसिंह (जावला) और हाड़ा दलसिंह भी उसका साथ छोड़कर चले गये और मंडोवर में ठहरे। इसकी खबर मिलने पर महाराजा ने सिंघवी फ़तहचंद तथा पीपाड़ का ठिकाना देकर गोयन्ददास को उधर भेजा। कुछ समय बाद जगतसिंह (पाली), छत्रसिंह (आसोप), उदयसिंह (भाद्राजूण) तथा भाटी दौलतसिंह-(लवेरा) भी महाराजा से विदा मांग नींबाज में केसरीसिंह के शामिल हो गये और उन्होंने रामसिंह से पत्रव्यवहार किया। यह समाचार पाकर महाराजा ने सिंघवी फ़तहचंद को नींबाज भेजा, जो वि० सं० १८१६ (ई० स० १७५९) में विरोधी सरदारों को अपने साथ ले जोधपुर के बख़्तसागर

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १७-२०।

पर आया। महाराजा ने उनसे अपनी-अपनी हवेलियों में डेरा करने के लिए कहलाया तो उन्होंने उत्तर दिया कि आजकल धायभाई की बात मानी जाती है, यदि उसका वचन दिलाया जाय तो हम सब हवेलियों में आकर ठहरें। इसपर कह-सुनकर महाराजा ने धायभाई जगा को सरदारों के पास भेजा, जो देवीसिंह के डेरे पर बैठे थे, पर उचित आदर-सत्कार न होने से वह नाराज़ होकर वापस लौट गया। सरदार वहां से कूचकर गांव बणाड़ चले गये। तब जोधा रघुनाथसिंह, चांपावत सूरतसिंह और सिंघवी फ़तहचंद पुनः उनके पास भेजे गये। उन्होंने उन्हें समझाने का प्रयत्न किया, पर सरदारों का क्रोध शान्त न हुआ। सरदारों ने कहा कि महाराजा की भूमि तो स्वामी आत्माराम रक्खेगा और उसे तो धायभाई की ज़रूरत है हमारी नहीं। अनन्तर वे वहां से कूचकर वीसलपुर गये। तब महाराजा ने स्वयं जाकर उनसे बात की और वह उनका समाधान कर उन्हें अपने साथ जोधपुर ले गया, जहां वे अपनी-अपनी हवेलियों में ही ठहरे[1]।

उपद्रवी सरदारों में से कुछ का छल से क़ैद किया जाना

उसी वर्ष फाल्गुन वदि १ (ई० स० १७६० ता० २ फ़रवरी) को महाराजा के गुरु स्वामी आत्माराम का देहान्त हो गया, जिसका महाराजा को बड़ा दुःख हुआ, क्योंकि वह उसकी बड़ी भक्ति करता था। इसपर खींची गोवर्द्धन ने सरदारों को कहलाया कि महाराजा बड़ा उदास है, आप मिट्टी देने को आवें। तब देवीसिंह (पोकरण), केसरीसिंह (रास), छत्रसिंह (आसोप), भगवंतसिंह, रघुनाथसिंह तथा जवानसिंह वहां गये। उनके साथ के आदमी बाहर ही रोक दिये गये और फिर राणियों के आत्माराम की मृत देह का आखिरी दर्शन करने के लिए आने के बहाने फाटक का द्वार बन्द कर दिया गया। इतने में नींबाज का ठाकुर दलजी आया, जो इमरती पोल की खिड़की के मार्ग से भीतर गया, पर आगे लोहापोल के बन्द होने से वह वहीं बैठ गया। महाराजा सूरजपोल तक आत्माराम की अर्थी के साथ गया, इसके बाद सरदारों ने उसे सान्त्वना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० २०-२२।

देकर पीछा भेज दिया, जिसपर वह शृंगार चौकी पर जाकर खड़ा हो गया। वहां एकान्त देख धायभाई ने उससे निवेदन किया कि इस समय सरदारों को गिरफ़्तार करने का अच्छा मौक़ा है, क्योंकि वे अकेले ही हैं। खींची गोवर्द्धन ने भी जब इस बात का अनुमोदन किया तो महाराजा ने यह कह कर एक प्रकार से अपनी सम्मति दे दी कि जो अच्छा समझो करो। तब उनके कहने से ड्योढ़ीदार गोयन्ददास महाराजा को ढाढ़स देने के बहाने उन्हें बुलाने गया। रघुनाथसिंह (नाहरसिंहोत) और जवानसिंह (सूरजमलोत) तो कुछ आगे रवाना हो गये। पीछे से देवीसिंह, केसरीसिंह तथा छत्रसिंह ने भी, भगवन्तसिंह को आने के लिए कहकर प्रस्थान किया। नगारखाने की पोल से जाते समय जब उन्होंने लवापोल को बन्द देखा तो देवीसिंह ने कहा कि आज का दिन तो बड़ा भयावना प्रतीत होता है। केसरीसिंह ने उत्तर दिया कि कुछ नहीं केवल तुम्हारा भ्रम है। इसके बाद वे ज़नानी ड्योढ़ी से आगे बढ़े ही थे कि उन्हें वहां छिपे हुए राज्य के आदमियों ने निकलकर पकड़ लिया। गोयन्ददास ने, जो कुछ पीछे आ रहा था, जब बीच-बचाव करने की कोशिश की तो धायभाई के इशारे से वह भी पकड़ लिया गया। रास के ठाकुर केसरीसिंह का पुत्र दौलतसिंह, जो नींबाज गोद गया था, पीछे से पहुंचा था और लवापोल बन्द देख बाहर ही बैठ गया था। भीतर हल्ला सुनकर वह बाहर चला तो भावसिंह ने उसे रोका, जिसपर दोनों ने एक दूसरे के घाव किये। अनन्तर दोनों द्वार खोल अन्दर ले लिये गये, जहां महाराजा ने दौलतसिंह की मरहमपट्टी करने की आज्ञा दी। अनन्तर उसका प्रबन्ध (क़ैद) किया गया। देवीसिंह, केसरीसिंह और छत्रसिंह भी क़ैद में डाल दिये गये। देवीसिंह ने क़ैदखाने में अन्न-जल ग्रहण करना छोड़ दिया। क़ैद की ही हालत में तीनों क्रमशः छः दिवस, तीन साल तथा एक मास बाद मर गये। दौलतसिंह पीछे से मुक्त कर दिया गया। अनन्तर महाराजा ने बीकानेर से राठोड़ कनीराम रामसिंहोत को बुलाकर आसोप और बड़लू का पट्टा उसके नाम लिख दिया[1]।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० २३-२६। वीरविनोद; भाग २,

देवीसिंह की मृत्यु का उसके पुत्र सबलसिंह को बड़ा दुःख हुआ और वह फ़ौज-सहित पाली गया, जहां उसके पास चांपावतों, कूंपावतों, ऊदावतों, भाटियों आदि की दस हज़ार सेना एकत्र हुई। तब उनके विरुद्ध जोधपुर से पांच हज़ार फ़ौज के साथ धायभाई जगा रवाना हुआ। नागोर से दो हज़ार फ़ौज आसोप क़ायम कर बड़लू पहुंची, जहां के स्वामी ने कुछ दिनों तक तो उसका सामना किया, परन्तु इसके बाद एक रोज़ रात्रि के समय वह वहां से निकल गया। फिर वह फ़ौज पीपाड़ गई। धायभाई के प्रस्थान करने का समाचार सुनकर सबलसिंह ने लड़ाई करने की इच्छा प्रकट की, पर पीछे से पाली के जगतसिंह ने इस कार्य की हानि दिखलाकर उसको लड़ने से मना किया, जिससे उस समय लड़ाई न हुई[1]।

विरोध करने के लिए एकत्र हुए सरदारों पर सेना भेजना

उन्हीं दिनों जोधपुर में भाखरसिंह (रायपुर) ने महाराजा से कहा कि यदि पीपाड़ की फ़ौज मेरे साथ की जाय तथा दो भारी तोपें दी जायं तो मैं नींबाज खाली करालूं। इसपर फ़ौज तथा बागण, नागण एवं अडगबाण नाम की तीन तोपों के साथ वह उधर रवाना हुआ। वहां पहुंचकर उसने एक तरफ़ मोर्चा लगाया। उसका पुत्र केसरीसिंह भी सात सौ फ़ौज के साथ उसके शामिल हो गया और सारा प्रबंध करने लगा। इस बीच वालू जोशी, जो जयपुर गया हुआ था, वहां से लौटता हुआ मेड़ते पहुंचा। जब उसने उस स्थान को खाली देखा तो जाकर इसकी सूचना महाराजा को दी और यह कहकर उसे मेड़ते पर अधिकार करने की सलाह दी कि रामसिंह को लेकर सरदार उधर आरहे हैं, जिनका वहां

महाराजा का सेना भेजकर मेड़ता पर क़ब्ज़ा करना

पृ० ८२४। इस सम्बन्ध में यह दोहा प्रसिद्ध है:—

केहर देवो छत्रसल, दौलो राजकुमार।
मरते मोड़े मारिया, चोटीवाला चार॥

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० २६।

क़ब्ज़ा होना अपने लिए हानिकर होगा। इसपर महाराजा ने उसे ही उधर जाने की अनुमति दी। नींबाज पहुंचकर उसने पंचोली रामकरण एवं खींची शिवदान से सलाह कर वहां से घेरा हटवा दिया। अनंतर जैतारण में कुछ तोपें रखता हुआ वह कालू पहुंचा। वहां रहनेवाले फ़तहसिंह रामसिंहोत को जब निश्चय हो गया कि जोधपुर की सेना मेड़ता जा रही है तो उसने इसकी सूचना तत्काल पंडित के पास, जो एक सौ दक्षिणी सवारों के साथ वहां रहता था, भिजवाई, पर इतनी शीघ्रता में फ़ौज एकत्र करना असंभव था। इतने में तो जोधपुर की सेना वहां जा पहुंची और सफ़ील के ऊपर चढ़कर भीतर घुस गई। ऐसी स्थिति में पंडित भागकर मालकोट में चला गया। अनन्तर देराणी दरवाज़ा खोल-कर सारी सेना भीतर घुस गई और उसने एक पहर तक मेड़ता में खूब लूट मचाई। फिर जगह-जगह सरदारों के पास परवाने भेजे जाने पर राठोड़ सरदारसिंह (नींबड़ी), राठोड़ बख्शीराम (नोखा), राठोड़ सुलतानसिंह (कूंपड़ावास) आदि मेड़ता में उपस्थित हो गये[1]।

रामसिंह उस समय हरसोर में था। मेड़ते पर जोधपुर का क़ब्ज़ा होने की खबर पाकर उसने मेड़तियों, चांदावतों, चांपावतों, ऊदावतों आदि

रामसिंह का मेड़ते पर अधि-कार करने का विफल प्रयत्न

की सत्रह हज़ार सेना एकत्र कर वहां से कूच किया और मेड़ता पहुंचकर मालकोट में ठहरा। मेड़ते को घेरकर उसने कई बार आक्रमण कर भीतर प्रवेश करने का प्रयत्न किया, परन्तु गढ़ के भीतर के लोगों के सतर्क रहने के कारण उसे सफलता न मिली। अनन्तर गढ़ के रक्षकों ने धाय-भाई के पास रामसिंह के घेरे की सूचना भेजकर उससे सहायता चाही। धायभाई उस समय चांपावतों के प्रबन्ध में व्यग्र था। उन्हें जालोर में भगाकर वह मेड़ता की ओर चला। उसके साथ तोपख़ाना होने की भी खबर थी, जिससे रामसिंह के साथ के सरदारों ने उस समय उसे वहां से

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० २६-७। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८५४।

हट जाने की सलाह दी। इसपर प्रातःकाल के समय कूचकर रामसिंह भैरूंदा चला गया तथा उसके सहायक सरदार अपने-अपने ठिकानों को लौट गये। तब धायभाई परबतसर गया, जहां के कई सरदार उसकी सेवा में उपस्थित हो गये। रामसिंह परबतसर होता हुआ रूपनगर चला गया। इस बीच खैरवा, बोरूंदा, राहण आदि के विद्रोही सरदारों ने महाराजा की अधीनता स्वीकार करली, जिनकी जागीरों में राज्य की तरफ़ से वृद्धि की गई[1]।

उन्हीं दिनों अन्य विद्रोही चांपावत सरदार राज्य में उपद्रव करते-करते सोजत तक पहुंच गये। इसपर धायभाई ने परबतसर से पंचोली

पंचोली रामकरण का विरोधी सरदारों का दमन करना

रामकरण को राठोड़ पृथ्वीसिंह (फ़तहसिंहोत, चंडावल का), राठोड़ पहाड़सिंह (जेतावत, बगड़ी का), राठोड़ भूरासिंह (कूंपावत, चांदेलाव का), राठोड़ फ़तहसिंह (श्यामसिंहोत, बलूंदा का), राठोड़ लालसिंह (रायमलोत, राहण का), साहबसिंह (विशनसिंहोत, बोरूंदा का), केसरीसिंह (भाखरसिंहोत, रायपुर का), जैतसिंह (भवानीसिंहोत, छीपिया का) तथा कई दूसरे छोटे-मोटे सरदारों के साथ उनका दमन करने के लिए रवाना किया। कुछ झगड़े के बाद राज्य के सरदारों ने चांपावतों का अच्छी तरह से दमन कर दिया, पर इसमें रामकरण ज़ख़्मी हुआ और पृथ्वीसिंह (चंडावल का) मारा गया। अनन्तर रामकरण ने कूंपावतों से बात की। जगराम ने कहा कि आसोप का पट्टा दिया जाय तो मैं चाकरी स्वीकार करूं, परन्तु आसोप का ठिकाना इससे पूर्व ही कनीराम को दिया जा चुका था, अतएव उसे गजसिंहपुरा, रडोद, रतकुडिया तथा जालपुरा का २०००० का नया पट्टा और आसोप के बराबर कुरब दिया गया। इसी प्रकार दूसरे कई सरदारों को भी नये पट्टे दिये गये, जिसपर उन्होंने राज्य की सेवा स्वीकार कर ली। चांपावतों का उस समय भी थोड़ा-थोड़ा उपद्रव जारी

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० २७-२६। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८५४-५।

था, अतएव रामकरण पुनः उनके विरुद्ध गया। गांव अटवड़ा में उसका डेरा होने पर धायभाई भी उसके शामिल हो गया। चांपावत सोजत के निकट थे। जब उन्हें यह समाचार मिला तो वे रात्रि के समय वहां से निकल गये। तब जोधपुर की सेना का सोजत पर अधिकार हो गया। अनन्तर रामकरण ने जालोर से दक्षिणियों को निकालकर वहां भी जोधपुर का अधिकार स्थापित किया। वहां से वह सांचोर गया[1]।

जोशी वालू का कई ठिकानों से पेशकशी वसूल करना

मेड़ते में रहते समय धायभाई ने वि० सं० १८१८ (ई० स० १७६१) में जोशी वालू को तीन हज़ार सेना के साथ दूसरे कुछ विरोधी सरदारों के विरुद्ध भेजा। उसने पीसांगण, गोविन्दगढ़, खरवा, मसूदा, देवलिया, टांटोटी, भिणाय (अजमेर-मेरवाड़ा के ठिकाने) आदि से पेशकशी वसूल की। वड़ली के ठाकुर ने रुपया दिया नहीं, जिसपर वालू ने धायभाई को लिखा कि मैं वड़ली और केकड़ी पर आक्रमण करूंगा, अतएव आप चार बड़े सरदारों को मेरे पास भेज दें। इसपर जोधपुर में रहते समय धायभाई ने राठोड़ ज़ालिमसिंह (शेरसिंहोत), राठोड़ फ़तहसिंह (श्यामसिंहोत), राठोड़ दलेलसिंह (अभयसिंहोत) एवं राठोड़ सालमसिंह (लखधीरोत, सरनावड़ा का) को जाने की आज्ञा दी, परन्तु वे इसमें ढील-ढाल करते रहे। इस बीच वालू जोशी ने वड़ली, जूनिया, सावर, गुलगांव, पारा (अजमेर मेरवाड़ा के अन्य ठिकाने) आदि से पेशकशी ठहराई और राजगढ़ पर अधिकार कर लिया[2]।

राठोड़ सेना का अजमेर पर अधिकार करने का विफल प्रयत्न

अनन्तर वालू ने ससैन्य अजमेर पहुंचकर उसे घेर लिया। तीन दिन तक तो दक्षिणियों ने राठोड़-सेना का सामना किया, पर जब तोपों की मार से नगरकोट की सफ़ील का कंगूरा गिर गया तो वे गढ़ के भीतर चले गये। तब नगर में विजयसिंह का अधिकार स्थापित हो गया। राठोड़-सेना का डेरा वीसला तालाब पर था। उसने फिर गढ़

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० २६-३२।

(२) वही; जि० ३, पृ० ३२-४।

घींटली (तारागढ़) पर घेरा डाला। दक्षिणी सरदारों ने माधवजी (महादजी) सिंधिया को लिखा कि गढ़ राठोड़ों ने घेर लिया है और सामान की कमी है, अतएव आप सहायता को जल्द आवें, अन्यथा गढ़ छूट जायगा और तीनों मुल्कों (मेवाड़, जयपुर और मारवाड़) से हमारा अधिकार हट जायगा। इसपर महादजी सिंधिया ने अजमेर की तरफ़ प्रस्थान किया और वहां (अजमेर) के अपने सैनिकों को कहला दिया कि एक सप्ताह तक डटे रहना तब तक मैं आता हूं। उसके आने का समाचार सुनकर जोधपुरवालों ने घेरे में सख़्ती की। श्रावणादि वि० सं० १८१८ (चैत्रादि १८१९) ज्येष्ठ सुदि १० (ई० स० १७६२ ता० १ जून) को, जब जोधपुर के सैनिक असावधान थे, दक्षिणियों ने गढ़ से बाहर निकलकर उनपर आक्रमण कर दिया, जिसमें दोनों तरफ़ के कई व्यक्ति मारे गये। इतने में जोधपुर के और सरदार सावधान हो गये और उन्होंने गोली चलाकर दक्षिणियों को पीछा गढ़ में घुसने पर बाध्य किया। इसी बीच दक्षिणियों की सहायक सेना निकट आ गई, जिसकी सूचना मिलने पर बालू घेरा उठाकर भांवता चला गया, जहां उसने गांव के पास डेरा कर अपनी रक्षा का समुचित प्रबन्ध किया। दक्षिणी सेना अजमेर पहुंची। धायभाई उन दिनों मेड़ते में था। उसने वहां से गुलाबराय आसोपा को दक्षिणियों से बात करने के लिए भेजा। महादजी ससैन्य अजमेर से कूचकर बुधवाड़ा और वहां से चलकर दूसरे दिन बालू की सेना के निकट जा पहुंचा। इस अर्से में जोधपुर की सेना के ऊदावत, मेड़तिये आदि कितने ही सरदार महादजी से मिल गये और उन्होंने उससे जोशी को पकड़वा देने का वायदा किया। जोशी को इसकी खबर मिलने पर उसने उन्हें रोकना चाहा, पर वे रुके नहीं। तब उसने उनका पीछा करने का इरादा किया, परन्तु इसकी हानि बतलाकर जवानसिंह ने उसे ऐसा करने से रोक दिया। सरदारों के चले जाने से जोधपुर की सेना में खलबली मच गई और लोग जोशी का साथ छोड़कर मेड़ता की तरफ़ चले गये। कुछ वहां रह गये, जिनमें देवलिया (अजमेर ज़िला) का ठाकुर रघुनाथसिंह भी था। उन्हें साथ लेकर बलूंदा होता

हुआ जोशी मेड़ता पहुंचा। धायभाई को जब सारा हाल मालूम हुआ तो अपने सरदारों पर से उसका विश्वास उठ गया और उसने जोधपुर जाना चाहा। जोरावरसिंह (खींवसर का) तथा इन्द्रसिंह (खैरवा का) ने उसे आश्वासन देकर रोका और मेड़ते की मज़बूती की। इसी बीच गुलावराय आसोपा के पास से दूत ने आकर खबर दी कि नौ लाख रुपया पेशकशी का ठहराकर उसने महादजी को पीछा लौटा दिया है[1]।

धायभाई का विद्रोही चांपावतों आदि का दमन करना

महादजी के लौटते ही चांपावत आदि विद्रोही सरदार रायपुर के केसरीसिंह के साथ मारवाड़ में घुस वहां उपद्रव करने लगे। इस पर धायभाई ने गांव मजल और दुनाड़ा तक उनका पीछा किया, जिसपर सारे ऊदावत तो अपने-अपने घर लौट गये और चांपावत चौरासी की तरफ़ गये। तब धायभाई ने प्रथम पाली पर आक्रमण कर कुछ दिनों की लड़ाई के बाद विद्रोहियों को निकाल वहां राज्य का अधिकार स्थापित किया। अनन्तर उसने रायपुर और नींबाज के विद्रोही सरदारों को भी अधीन बनाया। चांपावत और भंडारी सवाईराम उन दिनों हरसोर में थे, जहां से वे नागोर में प्रवेश करना चाहते थे। जब उन्हें पाली के अधीन हो जाने की सूचना मिली तो वे रूपनगर चले गये। इसके कुछ समय बाद ही राजकीय सेना ने जावला, गूलर आदि के विद्रोहियों का प्रबंध किया[2]।

धायभाई जगन्नाथ का देहांत

इस बीच जोशी बालू ने धायभाई की इस बात की शिकायत की कि वह राज्य के धन को बरबाद कर रहा है और उसने अपना खर्च भी बहुत बढ़ा लिया है। इसपर महाराजा ने उसे जोधपुर बुलाकर उसका रिसाला आदि वापस ले लिया। इसका धायभाई को बड़ा दुःख हुआ। अनन्तर महाराजा ने मुंहणोत सूरतराम को अपना प्रधान मंत्री नियतकर

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ३४-७। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८५५।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ३७-६।

वालू जोशी को क़ैद किया। इसके बाद ही वि० सं० १८२१ के श्रावण मास (ई० स० १७६४ जुलाई) में धायभाई का देहांत हो गया[1]।

उन्हीं दिनों महाराजा ने मेड़ते में रहते समय जावला के ठाकुर वदनसिंह को क़ैद कर उसके ठिकाने पर राजकीय सेना भेज दी, जिसने वहां अधिकार कर लिया। फिर जैतसिंह के कहने पर वदनसिंह छोड़ दिया गया तो वह रूपनगर होता हुआ जयपुर चला गया[2]।

जावला के ठाकुर का क़ैद किया जाना

वि० सं० १८२२ (ई० स० १७६५) में उज्जैन की तरफ़ से महादजी सिंधिया ने पुनः मारवाड़ पर चढ़ाई की। इसकी सूचना मिलने पर महाराजा ने एक व्यक्ति को उससे बात करने के लिए भेजा। उसने मन्दसोर पहुंच तीन लाख रुपया देना ठहराकर उसे वापस लौटाया। इस अवसर पर खानूजी (मरहटा सरदार) सन्धिवार्ता से अलग रहा। महादजी के प्रस्थान करते ही विद्रोही चांपावतों ने खानूजी को साथ ले मारवाड़ की तरफ़ कूच किया। इसकी खबर मिलने पर जोधपुर से मुंहणोत (मेहता) सूरतराम की अध्यक्षता में सेना रवाना हुई और मेड़ता वगैरह से भी फ़ौजें गईं। लड़ाई होने पर दक्षिणी तथा चांपावत हारकर भाग गये। खानूजी तथा चांपावतों के लौट जाने पर सूरतराम ने पीह के ऊदावतों से पेशकशी ठहराई तथा सिंघवी भीमराज ने वसी की गढ़ी को घेरकर मोहनसिंह से दंड ठहराया[3]।

दक्षिणियों के साथ पुनः लड़ाई होना

उसी वर्ष से राज्य में 'रेख बाब' नामक कर लगना शुरू हुआ। वि० सं० १८२३ के वैशाख (ई० स० १७६६ मई) में महाराजा ने नाथद्वारा जाकर

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ३६-४०। "वीरविनोद" में भी इसका उल्लेख है (भाग २, पृ० ८५५)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ४०। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८५५।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ४०-४१।

महाराजा का वैष्णव धर्म स्वीकार करना

वैष्णव धर्म स्वीकार किया और अपने राज्य भर में मद्य और मांस की बिक्री बन्द करवा दी। उसी वर्ष कार्तिक मास (नवम्बर) में वह अन्नकूट के उत्सव पर फिर नाथद्वारा गया[1]।

उन्हीं दिनों खींची गोवर्द्धन ने, जो अपनी तीर्थ-यात्रा के समय जाटों का प्रभुत्व देख चुका था, महाराजा से निवेदन किया कि यदि राठोड़ और

महाराजा का जाटों से मेल करना

जाट एकत्र हो जायं तो दक्षिणियों को नर्मदा नदी के उस पार ही रोका जा सकता है। इसपर महाराजा ने पंचोली परसादीराम तथा छत्रसाल रघुनाथसिंहोत जोधा को इस संबंध में बातें तय करने के लिए भेजा। उन्होंने डीग में भरतपुर के स्वामी जवाहरसिंह से बात कर उसे इस कार्य के लिए राज़ी किया। फिर वि० सं० १८२४ (ई० स० १७६७) में प्रस्थान कर वे पुष्कर गये। उस समय उन्होंने मार्ग में पड़नेवाले जयपुर के गांवों को लूटा। इस से महाराजा माधोसिंह बड़ा नाराज़ हुआ। पुष्कर में जवाहरमल के डेरे होने पर महाराजा विजयसिंह वहां जाकर उससे मिला[2]। ई० स० १७६७ ता० ६ नवंबर (वि० सं० १८२४ कार्तिक सुदि १५) को पुष्कर के किनारे जवाहरसिंह और विजयसिंह पगड़ीबदल भाई बने और राजपूतों एवं जाटों के एकत्र होकर मरहटों और नजीबखां (रुहेला) को दबाने के संबंध में परस्पर प्रतिज्ञाएं हुईं। विजयसिंह ने माधोसिंह को भी इस ऐक्य को दृढ़ करने के लिए पुष्कर में आने को लिखा, पर उस अभिमानी कछवाहे ने जाने से इनकार कर यह उत्तर दिया कि आपने जाट के साथ, जो हमारा खिराजगुज़ार है और हमारा परवाना प्राप्त होते ही सदा हमारी सेवा में उपस्थित हो जाया करता है, बराबरी का आसन ग्रहणकर अपनी प्रतिष्ठा गिरा दी है। केवल महाराणा (उदयपुर का), रावराजा (बूंदी का) और आप हमारी बराबरी के राजाओं में हैं। इस उत्तर से

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ४१-२। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८५५।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ४३।

जवाहरसिंह का क्रोध माधोसिंह पर अत्यंत ही बढ़ गया[1]। जब अपने आचरण के लिए विजयसिंह ने खेद प्रकट किया तो माधोसिंह ने अपनी बीमारी का कारण बतलाकर उपस्थित होने में विवशता प्रकट की। इसी बीच जवाहरसिंह ने आक्रमण करने का भय दिखलाकर माधोसिंह से कुछ भूमि मांगी, जिसपर उसने उदयपुर से फ़ौज मंगवाने के अतिरिक्त ज़ाब्ते के लिए दक्षिणियों की सेना भी बुलवाली। इस अवसर पर उसके पास अपनी ५०००० सेना के अतिरिक्त उदयपुर की ३०००, कोटा की ३००० और दक्षिणियों की १०००० सेना हो गई। विजयसिंह की ओर से जवाहिरसिंह से छेड़ छाड़ न करने के लिए कहलाने पर उस (माधोसिंह)-ने अपना वकील भेज विश्वास दिलाया तब महाराजा ने जाटों को विदा किया और कुछ दूर तक वह स्वयं उनके साथ गया। अनन्तर वह अपनी कुछ सेना उनके साथ देकर सांभर होता हुआ मारोठ लौट गया। अपनी प्रतिज्ञा के विपरीत कछवाहों की सेना ने लौटती हुई जाटों की सेना पर आक्रमण कर दिया। गांव मावड़ा (जयपुर राज्य) में दोनों दलों में तोपों की भीषण लड़ाई हुई, जिसमें कछवाहों की तरफ़ के राजा हरसहाय और उसका भाई गुरुसहाय खत्री तथा धूला का राजावत दलेलसिंह एवं उसका पुत्र लक्ष्मणसिंह आदि मारे गये[2] तथा जाटों के साथ की राठोड़-सेना के सूरतसिंह पद्मसिंहोत

---

(१) सरकार; फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर; जि० २, पृ० ५२३। सूर्यमल; वंशभास्कर; चतुर्थ भाग; पृ० ३७२०, छन्द २१-४। सिलेक्शंस फ्रॉम दि पेशवाज़ दफ़्तर; जि० २९, पृ० १९२, १९४-५।

(२) इन चारों की स्मारक छतरियां मावड़े के विशाल रणक्षेत्र में बनी हुई हैं। उनके अतिरिक्त और भी बीसों चबूतरे, वीर पुरुषों के स्मारक और छतरियां वहां विद्यमान हैं, जो मावड़ा के भीषण युद्ध की स्मृति दिलाती हैं। हरसहाय की छतरी पर वि० सं० १८२५ (ई० स० १७६८) का लेख है। दलेलसिंह और उसके पुत्र लक्ष्मणसिंह की छतरियों पर वि० सं० १८२७ (ई० स० १७७०) के लेख हैं। ये छतरियां यहां पीछे से बनाई गई हैं। दोनों पिता-पुत्र की मृत्यु तो मावड़ा में ही हुई थी, पर उनका दाह संस्कार उनके अधीनस्थ गांव बवाई

तथा चांपावत, पातावत, मेड़तिया आदि सरदार काम आये। इस लड़ाई के समय फ्रांसीसी समरू भी जाटों की तरफ़ था[1]। अन्त में जाटों के पक्ष के मुसलमान सैनिकों के पैर उखड़ जाने के कारण उनकी फ़ौज के दूसरे विभागों में भी भगदड़ मच गई। कुछ जाटों ने जयपुर पर आक्रमण करने का विचार किया था, परन्तु जब उन्होंने अपनी सेना के हारने का समाचार सुना तो वे भी लौट गये। महाराजा विजयसिंह को जब इस

में हुआ, जो पपुरना नामक स्थान से चार मील दूर है वहां उनकी छतरियां बनी हुई हैं, जिनपर वि० सं० १८२४ पौष वदि ६ (ई० स० १७६७ ता० १४ दिसंबर) के लेख हैं। दलेलसिंह की छतरी के गुम्बज के भीतरी भाग में नाचती हुई स्त्रियों (अप्सराओं) के चित्र बने हैं। उसके पुत्र लक्ष्मणसिंह की छतरी के गुम्बज के भीतरी भाग में तीन वृत्त हैं, जिनमें सुन्दर चित्र बने हैं। सबसे नीचे के वृत्त में समुद्र-मंथन तथा अवतारों आदि के चित्र हैं। उसके ऊपर के वृत्त में मावण्डे की लड़ाई का चित्र है, जिसमें सैकड़ों सवार लड़ते हुए दिखाये गये हैं। एक स्थल पर हाथी पर बैठे हुए जवाहरसिंह पर अश्वारूढ़ दलेलसिंह को भाला मारते हुए बतलाया गया है। उसके घोड़े के दोनों अगले पैर हाथी की सूंड पर लगे हुए हैं। ऊपर के वृत्त में राम-रावण युद्ध के चित्र हैं।

(१) समरू का मूल नाम वाल्टर रैनहार्ड था। उसका जन्म ई० स० १७२० (वि० सं० १७७७) में हुआ था। वह फ्रांस से एक फ्रांसीसी जहाज़ में खलासी होकर यहां आया था। पांडीचेरी में जहाज़ को छोड़कर सोमर्स नाम से वह सेना में भर्ती हुआ, जिससे अन्य लोग उसको सोम्ब्रे कहते थे और हिन्दुस्तानी समरू। फिर वहां से भागकर वह ढाका में ईस्ट इंडिया कम्पनी की सेना में भर्ती हुआ, परन्तु १८ दिन बाद नौकरी छोड़कर चन्द्रनगर चला गया। तदनंतर अवध के नवाब सफ़दरजंग के यहाँ वह नौकर हुआ। वहां से भी काम छोड़कर वह सिराजुद्दौला और मीर क़ासिम की सेवा में रहा। उस समय पटना में उसने छल से कई अंग्रेज़ों को मार डाला। वहां से भागकर वह ई० स० १७६३ (वि० सं० १८२०) में अवध के नवाब वज़ीर के पास जा रहा। वहां भी स्थिर न रहकर भरतपुर और जयपुर राज्यों की सेवा में रहने के बाद वह बादशाह शाहआलम के वज़ीर नजफ़ख़ां की सेवा में चला गया, जहां उसे सरधना का इलाक़ा जागीर में मिला। उसने कश्मीर की रहनेवाली जार्जियन ज़ेबुन्निसा से विवाह किया, जो बेगम समरू के नाम से प्रसिद्ध हुई। समरू का देहांत आगरे में ई० स० १७७८ (वि० सं० १८३५) में हुआ (बकलैंड; डिक्शनरी ऑव् इण्डियन बायग्राफ़ी; पृ० ३७२। एच्० काम्प्टन; यूरोपियन मिलिटरी एड्वेंचरर्स ऑव् हिन्दुस्तान; पृ० ४००-४०५)।

घटना की सूचना मिली तो उसने जयपुर के वकील को बड़ा उपालम्भ दिया[1]।

उसी वर्ष फाल्गुन मास में जयपुर के महाराजा माधोसिंह का देहांत हो गया। तब जाटों के पीछे गई हुई कछवाहों की सेना वापस जयपुर चली गई। उधर महाराजा विजयसिंह की सेना भी, जो जाटों की सहायतार्थ गई हुई थी, वापस नागोर की तरफ़ लौटी। कछवाहों ने इस अवसर पर दक्षिणियों को कहलाया कि राठोड़ जाटों से धन लेकर जा रहे हैं, जो उनसे छीनने का बड़ा अच्छा मौक़ा है। यह जानते ही दक्षिणी प्रस्थान कर राठोड़ों के पीछे परवतसर तक गये। मेहता सूरतराम ने जब मेड़ते जाकर महाराजा को इसकी खबर दी तो उसने चालकर दक्षिणियों को वापस लौटा दिया। तब नागोर की फ़ौज मेड़ता लौट गई[2]।

दक्षिणियों का महाराजा की सेना का पीछा करना

उदयपुर के महाराणा राजसिंह (दूसरा) की मृत्यु के समय उसकी झाली राणी गर्भवती थी, परन्तु अन्तःपुर से अरिसिंह (राजसिंह का चाचा और महाराणा जगतसिंह (द्वितीय) का दूसरा पुत्र) के भय से सरदारों के पूछने पर कहला दिया गया कि उसके गर्भ नहीं है। इसपर सरदारों ने अरिसिंह को ही, जो हक़दार था, वि० सं० १८१७ चैत्र वदि १३ (ई० स० १७६१ ता० ३ अप्रेल) को मेवाड़ की गद्दी पर बिठाया। अरिसिंह स्वभाव का बहुत उग्र और क्रोधी था। उसने गद्दी पर बैठते ही सरदारों का अपमान करना शुरू किया, जिससे वे उसके विरोधी हो गये। इसी बीच झाली राणी के गर्भवती होने का समाचार कुछ-कुछ प्रकट हो गया। कुछ समय बाद उसके एक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम रत्नसिंह रक्खा गया। उसकी परवरिश उसके मामा जसवन्तसिंह (गोगूंदा का स्वामी)

महाराजा का गोड़वाड़ पर अधिकार होना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ४४-६। वंशभास्कर; पृ० ३७२१-७, छन्द संख्या १-२२।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ४६-७।

के यहां हुई[1]। सरदार महाराणा से अप्रसन्न तो थे ही, अब वे उसे पदच्युत करने तथा उसके स्थान में रत्नसिंह को गद्दी पर बैठाने का उद्योग करने लगे। महाराणा ने ऐसी अवस्था देख दमन नीति से कार्य लिया, पर उसका परिणाम उलटा ही हुआ[2]। बीच में सरदारों को नाराज़ करने की

---

(१) पसूंद गांव के निवासी आसिया वख़्तराम-कृत "कीरति प्रकाश" से पाया जाता है कि रत्नसिंह को जोधपुर के महाराजा विजयसिंह के पास भी ले गये थे—

पूत राजसी पहल, कढ़े नग मात तोत कर।
जा पहुंचे जोधाण, दीह वह प्रछन रहे दुर।
सुताज गढ़ यक्क समय, पूछ सिसु कवण कहो पत।
भण नृप तुझ्झ भतीज, सही रतनो राजड़ सुत।
यम वजा वयण सुण राण उत, दीधा खत वध वूदसी।
पेदास हुओ बावल प्रकट, खबर रखण वन खूचसी॥
यसड़ा खत उणवार, आय प्रछन उदयापुर।
राय गुलाव करग्ग, चढत वंचे कथ चातुर।
सुण जालि कथ सरव, राण हूंता किय जाहर।
बहन रतन सुण बयण, अधप अरसीह धखे उर।
कर तोल खाग यम बयण कह, जरेहु संघर जंगरी।
भरलेऊं झेल मयणाग भुज, अठे बेल इकलिंगरी॥

हमारे संग्रह की हस्तलिखित प्रति से।

(२) इस अवसर पर अरिसिंह ने जोधपुर के महाराजा विजयसिंह को अपनी तरफ़ मिलाने का प्रयत्न किया। जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि अरिसिंह की तरफ़ से उक्त महाराजा के पास वकील पहुंचने पर उसने सेना व्यय देने के इक़रार पर सिंघवी फ़तहचंद और भीमराज को अपनी सेना के साथ भेजा और उनके साथ नागोर की सेना भी करदी, जिसने जाकर भांडेसर में मुक़ाम किया। वहां कुंभलगढ़ से रत्नसिंह के वकील भी पहुंचे और उन्होंने उनसे कहा कि जितना रुपया अरिसिंह देगा, उतना हम दे देंगे, तुम रत्नसिंह की मदद करो। फिर रत्नसिंह की तरफ़ से रुपये मिल जाने पर भांडेसर से सेना बिखेर दी गई और जोधपुर के दोनों मुत्सद्दी वापस चले गये। रत्नसिंह की तरफ़ से खींवसर के ठाकुर जोरावरसिंह के पास सहायता देने के लिए रक़म भेजी गई,

कई और भी घटनाएं हुईं, जिससे विरोध बढ़ता ही गया। रत्नसिंह अधिक समय तक जीवित न रहा और सात वर्ष की अवस्था में उसकी मृत्यु हो गई। इसपर सरदारों ने उसी अवस्था के एक दूसरे बालक को रत्नसिंह घोषितकर महाराणा को राज्यच्युत करने का अपना प्रयत्न जारी रक्खा। माधवराव सिंधिया ने रत्नसिंह का पक्ष लेकर वि० सं० १८२५ (ई० स० १७६८) में क्षिप्रा नदी के निकट महाराणा की सेना को हराया और उदयपुर को घेर लिया। नगर का समुचित प्रबन्ध होने के कारण छः मास तक घेरा रहने पर भी वह वहां अधिकार न कर सका। उधर उदय-पुर में खाद्य-सामग्री का धीरे-धीरे अभाव होने लगा। तब उदयपुरवालों ने संधि की चर्चा शुरू की। माधवराव भी यही चाहता था। अन्त में ६३½ लाख रुपये मिलने की शर्त पर उसने घेरा उठा लिया। उस समय किये गये शर्तनामे के अनुसार फ़र्ज़ी रत्नसिंह का मन्दसोर में रहना निश्चित होकर महाराणा ने उसके लिए ७५००० रुपये आय की जागीर निकाल दी। पर वह मन्दसोर जाकर न रहा और विद्रोही सरदारों एवं महापुरुषों[1] की फ़ौज के साथ मेवाड़ में लूट-मार करने लगा। महाराणा को जब यह ख़बर मिली तो उसने विद्रोहियों को हराकर भगा दिया। एक साल तक शान्त रहने के अनन्तर विद्रोही सरदार पुनः उपद्रव करने लगे। रत्नसिंह का कुंभलगढ़ पर अधिकार था, जहां रहकर वह मेवाड़ के गोड़वाड़ ज़िले पर भी अधि-

---

जिससे वह अपने राजपूतों-सहित रत्नसिंह के शामिल हो गया। रत्नसिंह दो वर्ष तक तो जवाहरसिंह को तन्ख़्वाह देता रहा, उसके बाद सेरा (सायरा) का परगना देना स्थिर हुआ (जि० ३, पृ० ४७)। दयालदास लिखता है कि मेवाड़ का गृहकलह बढ़ाने में विजयसिंह का लाभ था और वह गोड़वाड़ को अपने राज्य में मिलाना चाहता था (दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६२)।

(१) ये दादूपंथी साधु थे, जो जयपुर की सेना में बड़ी संख्या में रहते थे और वहीं से रत्नसिंह के पक्षवाले इन्हें मेवाड़ में लाये थे। इनको महापुरुष भी कहते थे। अबतक ये जयपुर की सेना में किसी क़दर विद्यमान हैं। ये विवाह नहीं करते हैं।

कार करने का प्रयत्न करने लगा। इसपर महाराणा ने अपने काका महाराज बाघसिंह को दूसरे कई सरदारों एवं सेना के साथ विद्रोहियों के विरुद्ध भेजा। उन्होंने विद्रोहियों पर विजय तो प्राप्त की, पर कुंभलगढ़ पर रत्नसिंह का ही अधिकार बना रहा। महाराज बाघसिंह ने गोड़वाड़ का प्रबंध करने के पीछे उदयपुर लौटकर महाराणा से निवेदन किया कि गोड़वाड़ पर अधिकार रखने के लिए वहां यथेष्ट सेना का होना ज़रूरी है। इसपर महाराणा ने जोधपुर के महाराजा विजयसिंह को लिखा कि रत्नसिंह को दबाने के लिए वह अपनी तीन हज़ार सेना कुछ समय के लिए नाथद्वारे में रखे और जब तक वह सेना वहां रहे, तब तक उसके वेतन के लिए गोड़वाड़ की आय लेता रहे; परन्तु वहां के सरदार हमारे ही अधीन रहेंगे। इसपर महाराजा ने उत्तर भिजवाया कि आम तौर से २०० सवार तथा ५०० सिपाही रहेंगे, और लड़ाई के समय तीन हज़ार सेना कर दी जायगी[1]। तदनुसार महाराजा

---

(१) इस संबंध के पत्र-व्यवहार के सिलसिले में विजयसिंह ने जो वायदा किया था उसका उल्लेख महाराणा के प्रधान और मुसाहिब कायस्थ जसवंतराय के नाम के वि० सं० १८२७ पौष सुदि १३ (ई० स० १७७१ ता० ३० दिसम्बर) के मेहता श्रीचंद के लिखे पत्र में हुआ है, जिसका आशय इस प्रकार है—

"गोड़वाड़ के लिए रावत अर्जुनसिंह (कुराबड़ का) का पत्र आया, जिसमें यह बात लिखी है कि वहां के सरदार महाराणा के आधीन रहेंगे और ख़ालसा होगा वह महाराजा (विजयसिंह) को दिया जायगा। इस पत्र को महाराजा के सामने पेश करने पर हुक्म हुआ कि ठीक है, सरदारों पर महाराणा प्रसन्नता से अपना अधिकार रक्खें और ख़ालसा हमको दें, परंतु इतनी सेना वहां नहीं रह सकती। दो सौ सवार तथा पांच सौ पैदल महाराणा की सेवा में उपस्थित रहेंगे और जब कभी सेना की चढ़ाई होगी उस समय ३००० सवारों की सेना प्रस्तुत करदी जायगी। .... उदयपुर के सलाहकार (भांजगड़वाले) तरह-तरह के वहम पैदा करते हैं, परन्तु यहां वहम जैसी बात नहीं है।......उनको साफ़-साफ़ लिखा दिया जावे कि किसी बात का वहम न करें। दीवान (महाराणा) जितने दिन हमारी सेना रक्खेंगे, उतने दिन गोड़वाड़ के परगने पर हमारा अमल रहेगा और जिस दिन महाराणा हमारी सेना को रुख़सत दे देगें, उसी दिन गोड़वाड़ के परगने पर हम पीछा उनका अधिकार करा देगें ......।"

वीरविनोद; भाग २, पृ० १५७२।

ने सेना नाथद्वारे में भेजकर गोड़वाड़ के परगने पर अधिकार कर लिया, परन्तु रत्नसिंह को कुंभलमेर से निकालने का प्रयत्न न किया। महाराणा के कई बार लिखने पर भी जब महाराजा ने कोई ध्यान न दिया तो उस-(महाराणा) ने उसको गोड़वाड़ का परगना छोड़ देने को लिखा, परन्तु विजयसिंह ने लालच में आकर उस समय इसे टाल दिया। वि० सं० १८२८ के माघ (ई० स० १७७२ के फ़रवरी) मास में महाराजा विजयसिंह, महाराजा गजसिंह (बीकानेर का) तथा राजा बहादुरसिंह (कृष्णगढ़) तीनों नाथद्वारा गये और महाराणा भी वहां पहुंचा। गोड़वाड़ के संबंध में चर्चा छिड़ने पर नाथद्वारा के गोस्वामी और महाराजा गजसिंह ने महाराजा विजयसिंह को गोड़वाड़ का परगना छोड़ देने के लिए बहुत समझाया, परन्तु महाराजा ने स्पष्ट रूप से कोई बात स्वीकार न की[1]। उस समय करमसोत ठाकुर जोरावरसिंह (खींवसर का) ने महाराजा विजयसिंह पर गोड़वाड़ के लिए अधिक दबाव देख उत्तर दिया कि विजयसिंह हमारे मालिक हैं, पर ज़मीन देना इनके अधिकार की बात नहीं है। जब तक पचास हज़ार राठोड़ों के धड़ पर सिर हैं, गोड़वाड़ नहीं दी जावेगी। इससे यह चर्चा बंद हो गई और परस्पर विवाद बढ़ता देख खिन्नचित्त हो महाराणा उदयपुर को और तीनों राजा अपने-अपने देश की तरफ़ रवाना हुए। मार्ग में गजसिंह ने विजयसिंह के कहने पर रीयां के ठाकुर ज़ालिमसिंह से, जो बहुत बिगाड़ करता था, उसका समझौता करा दिया और फिर वह बीकानेर को लौटा[2]।

वि० सं० १८२९ (ई० स० १७७२) में राज्यच्युत महाराजा रामसिंह का देहांत हो गया[3]। इस घटना से जो गड़बड़ी पैदा हो गई उससे लाभ उठाकर

(१) मेरा; राजपूताने का इतिहास; जि० २, पृ० ६७० ।

(२) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६२-३ । पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ७० । जोशी तिलोकसी की ख्यात; पृ० १४, १०१ ।

(३) वीरविनोद से पाया जाता है कि इसकी मृत्यु जयपुर में हुई (भाग २, पृ० ८४४)।

रामसिंह के मरने पर महाराजा की सेना का उसके हिस्से के सांभर पर क़ब्ज़ा करना

केशोदासोत, सुरताणोत, रघुनाथसिंहोत आदि मेड़तियों की २००० सेना के साथ जाकर नांवा के हाकिम मनरूप उपाध्याय ने सांभर पर क़ब्ज़ा कर लिया। इसकी सूचना महाराजा को मिलने पर वह उस (मनरूप) से बड़ा प्रसन्न हुआ और उसने उसे ही वहां का हाकिम नियत किया[1]।

इसके बाद महाराजा ने राज्य की अवज्ञा करनेवाले सरदारों के प्रबंध की ओर ध्यान दिया। चांपावत जैतसिंह (आउवा) का अन्य सरदारों के साथ ठीक व्यवहार नहीं था, जिसकी महाराजा के पास कई बार शिकायत हो चुकी थी। वि० सं० १८३१ के भाद्रपद मास में महाराजा ने इंद्रसिंह (खैरवा), सवाईसिंह (पोकरण), कर्णसिंह (खींवसर), जैतसिंह आदि अपने बड़े-बड़े सरदारों को गढ़ में बुलवाया। जैसे ही जैतसिंह महाराजा के पास उपस्थित हो मुजरा करने के लिए झुका, वैसे ही सिंघवी खूबचंद ने कटारी के दो वार कर उसे मार डाला। अनन्तर आउवा पर क़ब्ज़ा करने के लिए आज्ञा होने पर सिंघवी बनेचंद ने ५०० सवारों के साथ वहां जाकर राज्य का अधिकार स्थापित किया। उन्हीं दिनों सिंघवी भीमराज पर महाराजा की कृपा बढ़ी। उसके पुत्र को परबतसर का हाकिम बनाने के साथ महाराजा ने उस (भीमराज) को बख़्शी के पद पर नियुक्त किया[2]।

आउवा के ठाकुर को छल से मरवाना

वि० सं० १८३४ (ई० स० १७७७) में दक्षिणी आंबाजी इंगलिया अपनी सेना सहित ढूंढाड़ की तरफ़ आया। उस समय महाराजा के वकीलों ने महाराजा को लिखा कि वह उसे ख़िराज न दें। इसपर महाराजा ने सिंघवी भीमराज के साथ १५ हज़ार सेना रवाना की। इसकी निश्चित सूचना मिलने पर आंबाजी मेवाड़ चला गया[3]।

दक्षिणी आंबाजी के विरुद्ध सेना भेजना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ४८।

(२) वही; जि० ३, पृ० ५१-२। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८५५-६।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ५५।

उसी वर्ष कार्तिक मास में महाराजकुमार फ़तहसिंह बीमार पड़ा। बहुत कुछ चिकित्सा होने पर भी उसकी हालत न सुधरी और कार्तिक सुदि २ (ई० स० १७७७ ता० ३ नवंबर) को उसका देहांत हो गया[1]।

कुंवर फतहसिंह का देहांत

इसके कुछ ही समय बाद बीकानेर के महाराजा गजसिंह और उसके कुंवर राजसिंह के बीच किसी कारणवश विरोध उत्पन्न हुआ। इसपर महाराजा ने मुंहणोत सवाईराम को उधर जाने की आज्ञा दी। उसने नागोर पहुंचकर सेना एकत्र की, पर इसी बीच पिता और पुत्र के बीच का झगड़ा शांत हो गया, जिससे सवाईराम का उधर जाना स्थगित रहा[2]।

बीकानेर के महाराजा गजसिंह और उसके कुंवर में विरोध की उत्पत्ति

अनंतर सवाईराम को मसूदा की तरफ़ जाने और रायपुर के विद्रोही ठाकुर को समझाने की आज्ञा दी गई। इसपर नागोर से प्रस्थान कर वह मेड़ता पहुंचा, जहां से उसने शंभूदान चौहान को रायपुर के ठाकुर के पास बातचीत करने के लिए भेजा। इस बीच कुछ फ़ौज ने जाकर मसूदा से धन वसूल किया। शंभुदान ने जाकर रायपुर के ठाकुर केसरीसिंह को आश्वासन देने का प्रयत्न किया, परन्तु वह महाराजा की तरफ़ से छल होने के सन्देह के कारण दरबार में जाकर चाकरी करने के लिए तैयार न हुआ। तब सवाईराम के कहलाने पर दौलतसिंह (नींबाज का), जवानसिंह (रास का), भारतसिंह (लांबिया का) तथा जैतसिंह (छीपिया का) आदि रायपुर के स्वामी का दमन करने के लिए भेजे गये। जोधपुर की सेना का बहुत समय तक तो केसरीसिंह ने बड़ी वीरता के साथ सामना किया, परन्तु अन्त में उसे हारकर मेवाड़ में शरण लेनी पड़ी। इस प्रकार रायपुर पर जोधपुर राज्य का अधिकार हो गया। पीछे से महाराजा

विरोधी सरदारों का दमन करना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ५४।

(२) वही; जि० ३, पृ० ५५।

ने रायपुर की जागीर केसरीसिंह के पुत्र फ़तहसिंह के नाम कर दी[1]।

सिंध के हैदराबाद और उमरकोट[2] का स्वामी मियां गुलामअलीखां कलोड़ा था। लीखी ताजा तथा सावटिया ताजा उसके दीवान एवं टालपुरिया बीजड़ फ़ौजदार था। क्रमशः बीजड़ ने बड़ी शक्ति प्राप्त कर ली, यहां तक कि उसने मियां को एक प्रकार से बन्दीकर लीखियों तथा सावटियों को वहां से निकाल दिया[3]। हैदराबाद का क़िला गुलामअली की माता के

महाराजा विजयसिंह का उमरकोट पर क़ब्ज़ा होना

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ५५-७।

(२) उमरकोट सुमरा जाति के उमर नाम के सरदार ने बसाया था, जिससे उसका नाम उमरकोट पड़ा, परन्तु उसके बसाये जाने के समय का पता नहीं चलता (इम्पीरियल गैज़ेटियर; जि० २४, पृ० ११८)।

टॉड लिखता है कि मुसलमानों का आधिपत्य उमरकोट पर स्थापित होने से पूर्व वहां सोढ़ा (परमार) राजपूतों का अधिकार था और वह उनकी राजधानी थी। क्रमशः राठोड़ों एवं उमरकोट के वर्तमान शासक वंश के पूर्वजों ने वहां से उनका प्रभुत्व हटाया। महाराजा विजयसिंह के राज्यकाल में कलोड़ा जाति का मियां नूरमोहम्मद सिंध का शासक था। जब कन्दहार की सेना ने उसे वहां से निकाला तो वह जैसलमेर जा रहा और वहीं उसकी मृत्यु हुई। उसके ज्येष्ठ पुत्र अंतरखां तथा उसके भाइयों ने बहादुरखां खइरानी की शरण ली। इसी बीच उनका एक अनौरस भाई गुलामशाह हैदराबाद की गद्दी का मालिक बन बैठा। दाउदपोतों ने अंतरखां आदि का पक्ष ग्रहण किया और गुलामशाह को हटाने के लिए खइरानी जाति के सरदारों तथा अंतरखां के साथ उन्होंने हैदराबाद की तरफ़ प्रस्थान किया। गुलामशाह उनका सामना करने को आगे बढ़ा। उबौरा नामक स्थान में विरोधी दलों का सामना होने पर गुलामशाह की विजय हुई। अंतरखां क़ैद कर सिंधु नदी के द्वीप गज-का-कोट में भेज दिया गया। उसका उत्तराधिकारी उसका पुत्र सरफ़राज़ हुआ (राजस्थान; जि० ३, पृ० १२८७-८)।

(३) टॉड-कृत "राजस्थान" से पाया जाता है कि गुलामशाह के उत्तराधिकारी सरफ़राज़ ने बीजड़ की बहिन से शादी करनी चाही थी, जो उस (बीजड़) के पिता ने मंजूर न की। इसका परिणाम यह हुआ कि सरफ़राज़ ने तमाम टालपुरियों को मरवाना शुरू किया। बीजड़ किसी प्रकार बच गया और उसने गुलामशाह के वंशजों से बदला लेना शुरू किया (जि० ३, पृ० १२८८-९)।

अधिकार में रहा। वह उसने टालपुरियों को नहीं सौंपा। बीजड़ के पास प्रचुर संपत्ति थी और वह बड़ा शक्तिशाली था। वह मियां के पास जाता तो उससे सदा यही कहता कि मैं तो आपका सेवक हूं, पर एक प्रकार से वही स्वामी था। टालपुरियों को केवल इतने से ही संतोष न हुआ। उन्होंने मारवाड़ और सिन्ध की सीमा पर गिराब के निकट पराऊ की गढ़ियां गिराईं। अनन्तर ५०००० सेना के साथ जाकर टालपुरियों ने पोकरण, फलोधी और कोटड़ा को दवाने का विचार किया। जब इसकी खबर महाराजा विजयसिंह के पास पहुंची तो उसे बड़ी चिन्ता हुई और उसने मुंहणोत सवाईराम एवं सिंघवी भीमराज आदि से सलाह की। उन्होंने कहा कि राज्य की तरफ़ से टालपुरियों का दमन करने के लिए सेना भेजनी चाहिये। अनन्तर महाराजा ने सोजत से सिंघवी खूबचंद को बुलाकर उससे भी इस संबंध में राय की। उसने कहा कि निश्चित रूपसे कुछ भी करने के पूर्व वकील भेजकर उधर की परिस्थिति समझना आवश्यक है। महाराजा ने इसपर यह कार्य उसे ही सौंप दिया। उसने सोजत के एक चतुर कार्यकर्ता सेवक (भोजक) थानजी एवं नोदिया के भाटी प्रतापसिंह को सिंध की तरफ़ भेजा। उनके बीजड़ के पास पहुंचने पर उसने दोनों की बड़ी खातिर की और कहा कि मैं तो महाराजा का सेवक हूं, परन्तु उसके मन में उन्हें कपट ही जान पड़ा। वहां से लौटते समय उन्होंने बीजड़ के वकील शेख रहमतअली को अपने साथ ले लिया और जोधपुर पहुंचकर बीजड़ के कपट की बात महाराजा से कही। इसपर महाराजा ने उसका अन्त करने का निश्चय किया। सिंघवी खूबचन्द ने स्वयं इस कार्य के लिए जाने की इच्छा प्रकट की, पर महाराजा ने उसे जाने न दिया। तब मांडणोत हरनाथसिंह एवं पाता मुहकमसिंह ने बीजड़ को मारने का कार्य अपने ऊपर लिया। थानजी को साथ लेकर वे जोधपुर के वकीलों की हैसियत से बीजड़ के पास पहुंचे। थानजी को तो उन्होंने वहां से लौटा दिया और बीजड़ से कहलाया कि जोधपुर से पत्र आया है जो आपको एकान्त में दिखलाना है। इसपर बीजड़ ने उन्हें अपने पास बुलाया। इस अवसर से

लाभ उठाकर उन्होंने बीजड़ का खात्मा कर दिया और स्वयं भी बारहट जोगीदास आदि कई व्यक्तियों के साथ मारे गये। यह घटना वि० सं० १८३६ कार्तिक वदि १२ (ई० स० १७७६ ता० ५ नवंबर) को हुई। इस कार्य को अंजाम देनेवाले व्यक्तियों के वंशजों को महाराजा ने गांव, कुएं आदि दिये।

ग़ुलामअलीख़ां इस घटना के पूर्व ही डेरा ग़ाज़ीख़ां में चला गया था। उसने काबुल के पठानों को सहायतार्थ बुलाया और जोधपुर के महाराजा विजयसिंह को लिखा कि उमरकोट सदैव से ही भारतवर्ष का एक भाग रहा है, अतएव वह मैं आपको देता हूं। इसपर महाराजा ने भी उसे अपना पगड़ी-बदल भाई बनाया। उन्हीं दिनों सिंघवी खूबचंद ने हैदराबाद (सिंध) के क़िले को अधीन करने का विचार प्रकट किया। उसी समय मियां (अब्दुलनबीख़ां—ग़ुलामअलीख़ां का पुत्र) ने जोधपुर से फ़ौज भेजने को लिखा। ताजा सावटिया आदि, जो बीजड़ के भय से भुज की तरफ़ चले गये थे, उन्हीं दिनों जोधपुर आकर रातानाड़ा में ठहरे। ताजा लीखी चतुर व्यक्ति था। उसने महाराजा से मिलकर उमरकोट दिये जाने के संबंध में पक्की बात-चीत की। उधर बीजड़ के मारे जाते ही उसके पुत्र अब्दुल्ला, भाई फ़तहख़ां तथा साले मिर्ज़ा ने महाराजा के पास कहलाया कि बीजड़ को मारा तो क्या मारा, हम सब बीजड़ ही बीजड़ हैं और उन्होंने पचास हज़ार फ़ौज एकत्र कर ली। इधर जोधपुर की तरफ़ से पोकरण, आसोप वग़ैरह की आठों मिसलें तैयार हुई और सिंघवी शिवचंद, बनेचंद तथा भीनमाल से लोढ़ा साहामल आकर उक्त सेना के साथ शामिल हो गये। इस प्रकार जोधपुर की सात-आठ हज़ार सेना एकत्र हुई और सांचोर, भाटकी तथा बीराबाव होती हुई सिंध की ओर अग्रसर हुई। चोबारी में उक्त सेना के डेरे होने पर टालपुरियों की फ़ौज अधिक होने के कारण, रक्षा के लिए चारों ओर खाइयां आदि खोदकर मोर्चाबन्दी की गई। वि० सं० १८३७ माघ सुदि १० (ई० स० १७८१ ता० ४ फ़रवरी) को विरोधी दलों में सामना होने पर अल्पसंख्यक राठोड़ बड़ी वीरता से लड़े। इस लड़ाई में दोनों ओर से खूब

गोलियां चलीं और पोकरण के ७२ आदमियों में से ७१ रणक्षेत्र में जूझते हुए मारे गये। केवल एक जीवित डेरों को लौटा। धीरे-धीरे राठोड़-सेना में गोली-बारूद की कमी हो गई। दिन भर तो किसी प्रकार युद्ध जारी रक्खा गया, पर रात्रि होने पर जोधपुर के सरदारों ने युद्धक्षेत्र से हट जाने का निश्चय किया। तदनुसार एक-एक कर सब सरदार वहां से निकल गये। आसोप का ठाकुर महेशदान तथा सिंघवी खूबचंद सबके निकल जाने पर गये। इसके दूसरे दिन बचे हुए राठोड़ों से चोवारी में टालपुरियों ने फिर लड़ाई की, जिसके बाद वे सिंध को लौट गये। महाराजा को यह समाचार मिलने पर वह खूबचंद से अप्रसन्न नहीं हुआ, क्योंकि लड़ने के सामान की कमी तथा फ़ौज थोड़ी होने से युद्ध जारी रखने में व्यर्थ जन-हानि होने के अतिरिक्त लाभ नहीं होता। इस युद्ध में पोकरण के ठाकुर सवाईसिंह ने बड़ी वीरता दिखलाई थी। खूबचंद के इस संबंध में निवेदन करने पर महाराजा ने वि० सं० १८३९ में उस (सवाईसिंह) को प्रधान मंत्री का पद प्रदान करने के साथ पालकी, मोतियों की कंठी, सिरपेच, तलवार, कटार आदि दी। पीछे से काबुल के टोपीवाले पठानों ने मियां की मदद को जाकर उमरकोट को घेर लिया। गढ़ के भीतर उस समय फ़तहखां था, जो गिरफ़्तार कर लिया गया, पर वह वहां से किसी प्रकार निकल गया। मियां के पास उन दिनों जोधपुर की तरफ़ से सेवग थानजी वकील था। उसने टालपुरियों तथा मियां में बात ठहराकर उन्हें उसका अधीन बना दिया। जब टालपुरिये मीठा मेहराण (सिन्धु नदी) के उस पार ठहरे थे वहां से बीजड़ के संबंधी अब्दुल, फ़तहखां तथा मिर्ज़ा ५०० व्यक्तियों के साथ मियां के पास उपस्थित हो गये, जिन्हें उसने पीछे से दग़ा से मरवा डाला। अनन्तर मियां ने उमरकोट महाराजा को सौंप दिया, जहां सेवग थानजी ने जाकर दरबार का अधिकार स्थापित किया। उन दिनों भंडारी गंगाराम गिराव में था। उसने बीजड़-द्वारा वहां बनाई हुई पिराऊ की गढ़ी नष्ट कर दी। हैदराबाद पर पूर्वानुसार मियां की माता का ही अधिकार रहा। इन झगड़ों में यद्यपि टालपुरियों

के बहुत से आदमी मारे जा चुके थे तथापि उनकी शक्ति बहुत बढ़ी हुई थी। उन्होंने फ़तहअली की अध्यक्षता में पुनः सिर उठाया और पठानों के जाते ही सिंध में जाकर मियां से लड़ाई की। इस लड़ाई में मियां की फ़ौज का फ़ौजदार ताजा सावटिया काम आया तथा मियां डेरा ग़ाज़ीखां एवं ताजा लीखी भुज की तरफ़ चले गये। ऐसी परिस्थिति में महाराजा ने सिंघवी भीमराज तथा कई अन्य व्यक्तियों को उमरकोट के प्रबंध के लिए जाने को कहा, पर उन्होंने यह कहकर जाने से इनकार कर दिया कि जिसने उमरकोट लिया है वही भेजा जाय। इसपर खूबचंद को जाने की आज्ञा हुई, परन्तु उसके संबंधियों ने उसे जाने न दिया। तब उसकी बहन का पुत्र लोढ़ा साहामल भेजा गया, जिसने जाकर उमरकोट पर क़ब्ज़ा किया। यह खबर टालपुरियों को मिलने पर उन्होंने तत्काल उमरकोट को घेर लिया। क़िले के भीतर खाद्य-सामग्री की बहुत कमी थी, लोगों को नपा-तुला अन्न मिला करता था, लेकिन इतना होने पर भी साहामल बड़ी वीरता से टालपुरियों का सामना कर रहा था। यह समाचार जोधपुर पहुंचने पर महाराजा को बड़ी चिन्ता हुई। तब जोधा शिवदानसिंह भारतसिंहोत, जिसे खूबचन्द ने लाडणू का पट्टा दिलवाया था, अपने सम्बन्धियों एवं ८०० आदमियों के साथ महाराजा के पास गया और उसने टालपुरियों से युद्ध करने के लिए जाने की इच्छा प्रकट की। महाराजा ने अपनी स्वीकृति देने के साथ ही मेहता लालचन्द बागरेचा, सिंघवी चैनमल बाघमलोत (कोलियावाला), पातावत सरदारों, सिलेपोशों आदि को उसके साथ कर दिया। गिराब में जाकर सिंघवी बनेचन्द भी उक्त सेना के साथ मिल गया। उनके उमरकोट की तरफ़ बढ़ने का समाचार पाकर टालपुरियों ने दो कोस सामने आकर उनपर आक्रमण किया। वि० सं० १८३९ के माघ मास (ई० स० १७८३ फ़रवरी) में दोनों दलों में खूब लड़ाई हुई। पातावतों ने रसद की रक्षा का भार अपने ऊपर लिया और जोधा राठोड़ों ने टालपुरियों से लोहा लिया। इस लड़ाई में दोनों तरफ़ के बहुत से आदमी मारे गये। फिर जब टालपुरियों ने पातावतों पर

के बहुत से आदमी मारे जा चुके थे तथापि उनकी शक्ति
थी। उन्होंने फ़तहअली की अध्यक्षता में पुनः सिर उठाया
जाते ही सिंध में जाकर मियां से लड़ाई की। इस लड़ाई में
का फ़ौजदार ताजा सावटिया काम आया तथा मियां डेरा
ताजा लीखी भुज की तरफ़ चले गये। ऐसी परिस्थिति में
सिंघवी भीमराज तथा कई अन्य व्यक्तियों को उमरकोट के
जाने को कहा, पर उन्होंने यह कहकर जाने से इनकार
जिसने उमरकोट लिया है वही भेजा जाय। इसपर खूबचंद
आज्ञा हुई, परन्तु उसके संबंधियों ने उसे जाने न दिया। तब
का पुत्र लोढ़ा साहामल भेजा गया, जिसने जाकर उमरकोट
किया। यह खबर टालपुरियों को मिलने पर उन्होंने तत्का
को घेर लिया। क़िले के भीतर खाद्य-सामग्री की बहुत कमी
नपा-तुला अन्न मिला करता था, लेकिन इतना होने पर भी
वीरता से टालपुरियों का सामना कर रहा था।
पहुंचने पर महाराजा को बड़ी चिन्ता हुई।
सिंहोत, जिसे खूबचन्द ने लाडणू का
एवं ८०० आदमियों के
पुरियों से युद्ध करने के लि
स्वीकृति देने के साथ ही मेह
मलोत (कोलियावाला), पात
साथ कर दिया। गिराव में जा
मिल गया। उनके उमरकोट
टालपुरियों ने दो कोस सामने
सं० १८३६ के माघ मास (ई०
में खूब लड़ाई हुई। पातावतों ने रसद
और जोधा राठोड़ों ने टालपुरियों से लां
[illegible] से [illegible] मारे गये।

राजसिंह के बीकानेर का स्वामी होने पर उसके छोटे भाइयों का जोधपुर जाना

की दग्ध क्रिया होने के बाद ही देवीकुंड से उस-(राजसिंह) के भाई सुलतानसिंह[1], मोहकमसिंह[2] तथा अजबसिंह[3] जोधपुर चले गये[4]।

वि० सं० १८४४ (ई० स० १७८७) में जब माधोजी सिंधिया ने जयपुर पर चढ़ाई की[5] तो वहां के महाराजा प्रतापसिंह ने महाराजा विजयसिंह से

---

(१) दयालदास की ख्यात में सुलतानसिंह को महाराजा गजसिंह का पन्द्रहवां पुत्र लिखा है, परन्तु पाउलेट के "गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट", "ताज़ीमी राजवी, ठाकुर और ख़वासवालों की पुस्तक" तथा अन्य जगह उसे गजसिंह का दूसरा पुत्र लिखा है। सुलतानसिंह बीकानेर से जोधपुर और वहां से उदयपुर गया, जहां महाराणा भीमसिंह ने उसे जागीर देकर अपने पास रक्खा। मेवाड़ में रहते समय उसने अपनी पुत्री पद्मकुंवरी का विवाह महाराणा भीमसिंह से किया, जिसने पीछोला तालाब के तट पर भीमपद्मेश्वर नाम का शिवालय बनवाया। उक्त शिवालय की प्रशस्ति में उसके पितृपक्ष की महाराजा रायसिंह से लगाकर गजसिंह तक वंशावली दी है। उसमें उसको सूरतसिंह का कनिष्ठ भ्राता लिखा है—

तस्माच्छ्रीगजसिंहभूपतिमहाराजान्ववायोभ्यभू-
त्तस्मात् सूरतसिंहइंद्रविभवो राठोडवंशैकभूः ।
तद्भ्राता सुरतानसिंह इति यः···कनिष्ठोभवत्-
तज्जा पद्मकुमारिकेयमतुला श्रीभीमसिंहप्रिया ॥ २४ ॥

सुलतानसिंह के पुत्र गुमानसिंह और अखैसिंह के बीकानेर जाने पर महाराजा रत्नसिंह ने गुमानसिंह को बणेसर और अखैसिंह को आलसर की जागीर दी।

(२) मोहकमसिंह के वंशजों के पास सांईसर का ठिकाना है।

(३) जोधपुर में अजबसिंह को लोहावट की जागीर मिली थी। वहां से वह जयपुर गया, जहां भी उसे जागीर मिली।

(४) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६४।

(५) जयपुर के महाराजा पृथ्वीसिंह की मृत्यु होने पर प्रतापसिंह वहां का स्वामी हुआ। पृथ्वीसिंह का एक पुत्र मानसिंह था, जो उस समय उसकी ननिहाल भेज दिया गया। कुछ वर्षों पश्चात् उसके सिंधिया के पास पहुंचने पर उसने उसको जयपुर की गद्दी दिलाने के लिए चढ़ाई की। इस चढ़ाई के समय अलवर राज्य का संस्थापक माचेड़ी का राव प्रतापसिंह मरहटों की तरफ़ था।

इस विजय की सूचना और लड़ाई का पूरा विवरण महाराजा को लिखने के अनन्तर राठोड़ों की सेना इस्माइलबेग एवं महाराजा प्रतापसिंह के साथ दक्षिणियों के पीछे गई। उस सेना ने आगरा पहुंचकर उसपर क़ब्ज़ा कर लिया। अनन्तर जोधपुर की सेना के सिंघवी धनराज ने मेड़ता से अजमेर जाकर शहर पर घेरा डाला। वहां पर रहनेवाली दक्षिणियों की सेना गढ़ बीटली (तारागढ़) में चली गई। इसपर राठोड़-सेना ने उसे भी घेर लिया। नागोर, जालोर आदि में राजकीय आज्ञा पहुंचने पर वहां से सहायक सेनाएं तथा तोपख़ाना आ गया। दो मास तक लड़ने के बाद जब गढ़ में रसद की कमी हो गई तो अजमेर से मरहटों ने सिंधिया के पास सहायता भेजने के लिए लिखा, जिसपर उसने किशनगढ़ के वकील से सलाहकर आंबाजी को ससैन्य भेजा। मार्ग में किशनगढ़ की सहायता भी उसे प्राप्त हो गई। राठोड़ों की सेना के साथ उनकी कई बार लड़ाइयां हुई और राठोड़ों की सेना के गुमानसिंह (ख़वास का) आदि कई प्रमुख व्यक्ति मारे गये, परन्तु अन्त में विजयश्री राठोड़ों के ही हाथ रही और उन्होंने दक्षिणियों को भगाने में सफलता पाई। फिर राजकीय सेना श्रीनगर ख़ाली कराकर रामसर गई। वहां के चांदावत स्वामी ने क़रीब दस दिन तक तो मुक़ाबला किया, इसके बाद वह सुलह कर वहां से हट गया। चांदावतों को अधीन कर राजकीय सेना अजमेर गई। बीटली में मियां मिर्ज़ा लड़ रहा था। उसने जब देखा कि आंबाजी तो चला गया और अब युद्ध करना हानिकारक ही है तो वह भी बात ठहराकर २० हज़ार

अजमेर पर राठोड़ों का अधिकार होना

इस वाक्यबाण का बहुत बुरा असर कछवाहों पर हुआ, जैसा कि आगे बतलाया जायगा।

लालसोट की कछवाहों तथा राठोड़ों के साथ की मरहटों की लड़ाई का विवरण सिंधिया की तरफ़ के एक अंग्रेज़ के लिखे हुए ई० स० १७८७ ता० २८ जुलाई (वि० सं० १८४४ प्रथम श्रावण सुदि प्रथम १४) के दो पत्रों में भी मिलता है (देखो; पूना रेज़िडेंसी करेसपांडेंस; जि० १, पृ० २११ तथा २१४ (पत्र संख्या १३९ तथा १३७)।

रुपया लेना तय कर वहां से चला गया। महाराजा ने उसे घटियाली तक पहुंचाया[1]।

उसी वर्ष महाराजा विजयसिंह ने करकेड़ी के राजा अमरसिंह के नाम रूपनगर की जागीर लिख दी और अपनी सेना को लिखा कि रूपनगर और कृष्णगढ़, दोनों खाली कराले। तदनुसार दोनों स्थानों पर घेरा डाला गया, परन्तु जब इस में व्यय विशेष होने लगा, तो यह कार्य स्थगित रक्खा गया[2]।

रूपनगर तथा कृष्णगढ़ के विरुद्ध सेना भेजना

बीकानेर के महाराजा गजसिंह का देहांत होने पर उसका पुत्र राजसिंह वि० सं० १८४४ वैशाख वदि २ (ई० स० १७८७ ता० ४ अप्रेल) को वहां की गद्दीपर बैठा[3], परन्तु २१ दिन राज्य करने के बाद ही उसकी भी मृत्यु हो गई[4]। उसका एक पुत्र प्रतापसिंह था। पिता की मृत्यु होने पर वह सूरतसिंह की संरक्षकता में बीकानेर की गद्दी पर बैठाया गया। राज-कार्य

बीकानेर के महाराजा सूरतसिंह के लिए टीका भेजना

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ६६-७०। टॉड-कृत "राजस्थान" में भी इस घटना का उल्लेख है (जि० २, पृ० ८७६)।

डब्ल्यू० पामर ने सी० डब्ल्यू० मेलेट के नाम सिंधिया की छावनी से ई० स० १७८७ ता० २६ दिसंबर (वि० स० १८४४ पौष वदि २) को एक पत्र लिखा था। उसमें उसने लिखा था कि जोधपुर के राजा ने अजमेर पर अधिकार कर लिया है (पूना रेज़िडेंसी कलेक्शन्स; जि० १, पृ० २७४, पत्र संख्या १६३)। इसके बाद के ता० २६ दिसंबर (पौष वदि ५) के अर्ल कार्नवालिस के नाम के पत्र में डब्ल्यू० पामर लिखता है कि अजमेर के विषय में कोई ख़बर नहीं मिली, पर हमारी छावनी में इसका विरोध किया जाता है (वही; जि० १, पृ० २७४); परन्तु ऊपर आये हुए ख्यात के कथन से निश्चित है कि अजमेर पर विजयसिंह का क़ब्ज़ा हो गया था।

सरकार भी अजमेर पर विजयसिंह का अधिकार होना लिखता है (फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर; जि० ३, पृ० ४१२ और टिप्पण)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ७०। वीरविनोद; भाग २, पृ० ५३३-४।

(३) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ६४।

(४) महाराजा राजसिंह का बीकानेर का मृत्यु स्मारक लेख।

सारा उसका चाचा सूरतसिंह ही करता था। धीरे-धीरे जब सरदारों पर उसका प्रभाव जम गया, तो उसने प्रतापसिंह का अन्त करने का निश्चय किया, परन्तु इस कार्य में उस (प्रतापसिंह) की बड़ी बहिन ने बाधा डाली। तब सूरतसिंह ने उसका विवाह नरवर में कर दिया। उसके विदा होने के बाद ही प्रतापसिंह अपने महलों में मरा हुआ पाया गया। कहा जाता है कि सूरतसिंह ने अपने हाथों से गला घोटकर उसे मारा था[1]। जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि सूरतसिंह के गद्दी बैठने के कुछ समय बाद ही महाराजा विजयसिंह ने उससे कहलाया कि तुम राजसिंह के पुत्र प्रतापसिंह को मारकर बीकानेर के स्वामी हुए हो, अतएव कुछ रुपये भरो नहीं तो सुख से राज्य नहीं करने पाओगे। तब सूरतसिंह ने उत्तर दिया कि मेरे लिए टीका भेजो (अर्थात् मुझे राजा स्वीकार करो) तो मैं तीन लाख रुपये दूं। अनन्तर जोधपुर से टीका जाने पर सूरतसिंह ने रुपये भेज दिये[2]।

अनन्तर माधोजी सिंधिया ने अलवर का परित्याग कर आगरे की तरफ़ प्रस्थान किया। यह ख़बर पाकर इस्माइलबेग ने राठोड़ों के पास

---

(१) टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० ११३८-४०।

बीकानेर राज्य की ख्यातों आदि में प्रतापसिंह का उल्लेख तो अवश्य आया है, पर उसका गद्दी बैठना नहीं लिखा है; परन्तु ठाकुर बहादुरसिंह लिखित "बीदावतों की ख्यात" से इसकी पुष्टि होती है (जि० २, पृ० २३९)। मरहटों (सिंधिया) के जोधपुर के ख़बरनवीस कृष्णाजी ने अपने स्वामी के नाम ता० ५ जून ई० स० १७८७ (आषाढ बदि ४ वि० सं० १८४४) को एक पत्र लिखा था। उसमें भी लिखा है कि राजसिंह का क्रिया-कर्म हो जाने पर प्रतिष्ठित सरदारों ने सूरतसिंह को राजा बनाना चाहा, परन्तु उसके यह कहने पर कि जिस राज्य के लिए मेरे बड़े भाई की ऐसी दशा हुई वह मुझे नहीं चाहिये, उन्होंने राजसिंह के पुत्र प्रतापसिंह को गद्दी पर बैठाया और शासक की बाल्यावस्था होने के कारण सब राजकार्य सूरतसिंह करता रहा।

(२) जि० ३, पृ० ७०। दयालदास की ख्यात तथा बीकानेर राज्य के इतिहास से संबंध रखनेवाली अन्य पुस्तकों में बीकानेर राज्य से रुपये दिये जाने का उल्लेख नहीं है।

इस्माइलबेग की दक्षिणियों से लड़ाई

सहायता के लिए लिखा। भीमराज ने तो राठोड़ों को उधर जाने की आज्ञा दे दी, परन्तु इसी बीच जयपुर का महाराजा प्रतापसिंह उन्हें अपने विवाह में तंवरों की पाटण में ले गया, जिससे इस्माइलबेग को अकेले ही दक्षिणियों से लोहा लेना पड़ा। तीसरे आक्रमण में उसने उन्हें हराकर भगा दिया और धौलपुर पर भी क़ब्ज़ा कर लिया[1]।

बादशाह को झूठी हुंडियां देना

इसके कुछ ही समय बाद बादशाह (शाहआलम, दूसरा) दिल्ली से प्रस्थान कर रेवाड़ी पहुंचा। वहां कछवाहों तथा राठोड़ों की सेनाएं भी उसके शामिल हो गईं। महाराजा प्रतापसिंह तथा अन्य लोगों ने बादशाह को नज़रें पेश कीं और बादशाह की तरफ़ से उन्हें भी सिरोपाव आदि दिये गये। राठोड़ों और कछवाहों दोनों ने बादशाह से निवेदन किया कि आप यदि कूच करें तो दक्षिणियों को नर्मदा पार भगा दें। बादशाह ने उत्तर दिया कि दक्षिणी मुझे पांच हज़ार रुपये रोज़ देते हैं, यदि इतना ही तुम लोग देना मंजूर करो तो जहां चाहें वहां कूच किया जा सकता है। इसपर राठोड़ों और कछवाहों ने परस्पर सलाह कर बादशाह को दो लाख रुपयों की झूठी हुंडियां दीं और उसका वहां से दिल्ली की तरफ़ कूच कराया। उन्हीं दिनों बीमारी फैल जाने के कारण जोधपुर की सेना के रीयां, बगडी आदि कई ठिकानों के ठाकुरों की मृत्यु हो गई[2]।

कुछ सरदारों का महाराजा से भीमराज की शिकायत करना

इसके बाद जोधपुर की सारी सेना भी अपने-अपने ठिकानों को लौट गई। सिंघवी भीमराज मेड़ता होता हुआ जोधपुर पहुंचा। उसकी अच्छी कारगुज़ारी के कारण महाराजा ने उसका बड़ा सम्मान किया और उसकी इज्ज़त औरों से अधिक बढ़ाई। यह देख कितने ही सरदार उससे जलने लगे। उन्होंने महाराजा से उसकी झूठी शिकायत की

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ७०-१।

(२) वही; जि० ३, पृ० ७१-७३।

कि दक्षिणियों से एक लाख रुपया ले लेने के कारण ही उसने उनका पीछा न किया। इसपर महाराजा भीमराज से अप्रसन्न हो गया, परन्तु पीछे से सारी बातें ठीक-ठीक मालूम हो जाने पर उसकी नाराज़गी दूर हो गई[1]।

किशनगढ़ के स्वामी से दंड लेना

उसी वर्ष पौष मास में जोधपुर की सेना ने किशनगढ़ पर घेरा डाला था। सात मास के घेरे के बाद क्रमशः रूपनगर एवं किशनगढ़ पर राज्य का अधिकार हो गया। तब वहां के स्वामी प्रतापसिंह ने तीन लाख रुपया देना ठहराकर सुलह कर ली। इस रक़म में से दो लाख तो उसने नक़द दिये और पचास हज़ार के गहने तथा शेष पचास हज़ार दो किश्तों में देना तय किया। अनन्तर प्रतापसिंह के महाराजा के पास उपस्थित होने पर उसने उसका उचित सत्कार किया[2]।

इस्माइलबेग पर मरहटों की चढ़ाई

वि० सं० १८४६ (ई० स० १७८९) में महादजी ने सेना एकत्र कर धौलपुर की तरफ़ प्रस्थान किया। इस अवसर पर मरहटी सेना के एक बड़े भाग का संचालन एवं तोपख़ाना डी बोइने के हाथ में था। यह देखकर इस्माइलबेग ने जयपुर और जोधपुर के शासकों को लिखा कि आप दस हज़ार फ़ौज भेज दें तो मैं दक्षिणियों को निकाल दूं। फ़ौज तो दोनों में से किसी ने न भेजी, परन्तु जोधपुर से महाराजा विजयसिंह ने अपने कार्यकर्त्ताओं से रायकर तीस हज़ार रुपयों की हुंडी अपने दिल्ली के वकील के नाम भेज दी। इस बीच ग़ुलामक़ादिर रुहेला[3] ने सोलह हज़ार फ़ौज के साथ जाकर डीग को लूटा और फिर वह इस्माइलबेग के शामिल हो गया, जिसने मरहटों से जीते हुए मुल्क में से आधा उसे देना स्वीकार किया। दूसरे दिन सुबह जब सिंधिया ने उनपर

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ७४।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ७४-५। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८३४।

(३) यह रुहेला सरदार नजीबुद्दौला का पौत्र एवं अमीरुलउमरा ज़ाबिताख़ां का पुत्र था। इसका इतिहास यथास्थान आगे दिया जायगा।

आक्रमण किया तो ग़ुलामक़ादिर की फ़ौज के पैर उखड़ गये और वह दिल्ली की तरफ़ भाग गया। इस्माइलबेग ने इसके बाद भी एक पहर तक दक्षिणियों का मुक़ाबला किया, पर अन्त में उसे भी रणक्षेत्र छोड़ना पड़ा। दक्षिणियों ने उसका पीछा किया, तब वह जमुना पार कर दिल्ली पहुंचा। ग़ुलामक़ादिर ने दिल्ली पहुंचते ही बादशाह (शाहआलम) को क़ैद कर उसकी आखें फोड़ दीं और उसके दो शाहज़ादों को मार डाला। इस घटना की ख़बर मिलने पर सिंधिया ने आगरे से प्रस्थान किया और इस्माइलबेग के पास अपने आदमी भेजकर उसे अपने पक्ष में कर लिया। अनन्तर उन्होंने वहां से धन आदि ले जाते हुए ग़ुलामक़ादिर पर आक्रमण कर दिया। इस लड़ाई में ग़ुलामक़ादिर की पराजय हुई और उसने भागने की कोशिश की, परन्तु एक ब्राह्मण के घर से जहां वह छिपा हुआ था, वह क़ैद कर लिया गया। सिंधिया ने उसकी आंखें निकलवाकर उसे मरवा दिया[1] और इस्माइलबेग को, नजमक़ुली के अधिकार में जो भूमि थी उसपर क़ब्ज़ा करने को कहा। इसपर इस्माइलबेग दस हज़ार फ़ौज के साथ कूचकर रेवाड़ी पहुंचा, जहां अधिकार कर उसने गोकुलगढ़ छीन लिया। अनंतर नजमक़ुली के साथ उसकी लड़ाई शुरू हुई। इसी समय मारवाड़ के वकीलों, तंवर कर्णसिंह तथा भंडारी विरधीचंद ने समझा-बुझाकर एका करा दोनों में भूमि विभाजित करा दी[2]।

महाराजा विजयसिंह का मरहटों के साथ विरोध पहले से ही चला आता था। उनकी प्रभुता का अन्त करने के लिए वह सतत प्रयत्नशील

---

(१) सरकार-कृत "फ़ाल ऑव् दि मुग़ल एम्पायर" में इन घटनाओं का विस्तृत विवरण मिलता है (जि० ३, पृ० ३६३-४७०)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ७६-८। दत्तात्रय बळवंत पारसनीस-संगृहीत "जोधपुर येथील राजकारणें" (लेखांक ८, पृ० २५) में भी नजमक़ुली और इस्माइलबेग की लड़ाई के समय जोधपुर के उपर्युक्त वकीलों का वहां होना लिखा है। यह पुस्तक मराठी भाषा में है और इसमें जोधपुर में रहनेवाले पेशवा के वकील कृष्णाजी जगन्नाथ के अपने स्वामी को लिखे गये जोधपुर आदि कई राज्यों के सम्बन्ध के ३३ पत्रों का संग्रह है।

महाराजा का अंग्रेज़ सरकार के साथ पत्रव्यवहार

रहता था। उन दिनों अंग्रेज़ों का प्रभुत्व भारतवर्ष के पूर्वी भाग पर स्थापित हो चुका था। उनकी शक्ति को दूसरे लोग भी स्वीकार करने लगे थे। उससे लाभ उठाने के लिए महाराजा विजयसिंह ने लॉर्ड कॉर्नवालिस से पत्र व्यवहार किया, पर उसका कोई परिणाम न निकला। उसने लॉर्ड कॉर्नवालिस को कई पत्र लिखे थे, जिनमें से एक पेशवा के अंग्रेज़ी दफ़्तर में अब तक विद्यमान है, जिसका आशय नीचे दिया जाता है—

"श्रीमान्! आपके दो मित्रतापूर्ण पत्रों का, जो मुझे लगभग एक ही समय में मिले थे और जिनको पढ़कर मुझे बड़ा आनन्द प्राप्त हुआ था, उत्तर दिया जा चुका है। मुझे विश्वास है कि मेरे उत्तर देख लिए गये होंगे। मेरे मित्र, अंग्रेज़ जाति के पूर्वी देशों में प्रवेश करने के दिन से ही उनके अच्छे स्वभाव की—जो उन देशों के शासकों एवं ज़मींदारों को कष्ट पहुंचाने अथवा उन्हें उनके स्थानों से हटाने के विरुद्ध है—महिमा सूर्य और चन्द्रमा के प्रकाश की तरह फैल गई है। इसी गुण के कारण इस जाति का वैभव दिन-दिन बढ़ रहा है। यह जानकर हिन्दुस्तान के राजाओं और ज़मींदारों की भावनाएं भी बदल गई हैं। उनके दिलों में इस बात का विश्वास जम गया है कि हिन्दुस्तान की सल्तनत—जो अत्याचारियों के ज़ुल्म की आंधी से झुलस गई है और जिसने हर नवागत जाति के हाथों दुःख पाया है और जहां के अत्याचारी मरहटे यह चाहते हैं कि उनके राज्य-प्रसार में कोई शक्ति बाधक न हो—अंग्रेज़ों की सहायता प्राप्त होने से पुनः उन्नत हो सकती है। यह उन्नति ऐसी होगी, जिसका कभी अवसान न होगा और स्वयं अंग्रेज़ों की सफलता भी इतनी प्रभावशाली हो जायगी कि उसका कभी नाश न होगा। भाग्य के अपरिवर्तनशील विधान के कारण भारत विनाश की ओर बढ़ा और अनेक बड़े तथा सम्माननीय घरानों का नाश निश्चित सा हो गया, क्योंकि सिंधिया ने अचानक अवतीर्ण होकर हिन्दुस्तानियों के साथ दग़ा करना एवं उनके घरों का नाश करना शुरू किया। जिस किसी के साथ भी उसने इक़रारनामा किया उसके

साथ ही उसने असत्यतापूर्ण व्यवहार किया। प्रथम उसने अंग्रेज़ी सेना पर आक्रमण किया। फिर उस सेना के अध्यक्ष को सिन्धिया ने वादे कर तब तक धोखे में रक्खा जब तक कि उसका ग्वालियर के क़िले पर अधिकार न हो गया। दूसरी बार उसने अमीरुल्उमरा नवाब अफ़ासियाबखां को मित्रता का वचन देकर निमंत्रित किया और धर्म की अनेक क़समें खाकर वह उसके शामिल हो गया। ज्योंही उसको अपने इस कार्य में सफलता मिली उसने उसको धोखे से मार डाला। उसके वंशजों के साथ उसने कैसा व्यवहार किया, वह दुनिया जानती है। स्वयं आपको भी वह सब ज्ञात है। इस समय मरहटों का सब से पहला इरादा यह है कि वे अंग्रेज़ों के शत्रु बनकर उन्हें धोखा दें और उधर युद्ध की अग्नि प्रज्वलित करें। लेकिन जब तक सिन्धिया इधर के राजाओं (जोधपुर तथा जयपुर) की तरफ़ से निश्चित नहीं हो जाता, तब तक वह अंग्रेज़ों के साथ मित्रता करने के लिए झूठे वायदे करता रहेगा। यदि आज ही हमारे साथ उसका समझौता हो जाय तो वह अंग्रेज़ों के साथ युद्ध करने में देर न करेगा। लेकिन हमको इस जाति के वचनों पर बिल्कुल भरोसा नहीं है। ईश्वर की कृपा से आपको सारी बातों और परिस्थिति का पूरा-पूरा ज्ञान है तथा आप सच-झूठ को पहचानने में समर्थ हैं। मुझे विश्वास है कि आप मरहटों से बात करने के पूर्व प्रत्येक बात का पूरा-पूरा विचार करेंगे।

"मैंने सुना है कि कुछ स्वार्थी लोग आपको झूठी खबरें देते हैं। फिर भी मुझे विश्वास है कि आप उनकी छलपूर्ण बातों पर कान न देंगे और न उनके धोखे में फंसेंगे। सृष्टि के आरंभ से ही हम भारतवर्ष के ज़मींदार रहे हैं और इस देश की समृद्धि तथा निर्धनता, इसकी सफलता, इसकी भलाई बुराई हम पर ही निर्भर है। आप सदा अपने वायदों पर स्थिर रहे हैं, इसलिए हम आपकी वैभव-वृद्धि तथा सफलता की कामना करते हैं। आपका हमारे साथ सन्धि कर लेना कई प्रकार से लाभप्रद सिद्ध होगा। हम अपने किये हुए वायदों से कभी पीछे न हटेंगे। मैंने

सेठ रामसिंह को आपके पास अपनी आन्तरिक अभिलाषा प्रकट करने के लिए भेजा है। मैं चाहता हूं कि जो कुछ वह आपके समक्ष प्रकट करे उसे आप सत्य और छल-छिद्र-रहित समझें। ईश्वर की कृपा से आपकी दृढ़ सरकार भारत के पूर्वी भाग में क़ायम हो गई है। यदि ईश्वर की कृपा से हम दो राजाओं (जोधपुर तथा जयपुर) तथा अंग्रेज़ों के बीच सन्धि स्थापित हो जाय तो आवश्यकता पड़ने पर राजपूत आपकी और आप राजपूतों की मदद करेंगे। आपकी सरकार सदैव के लिए स्थापित हो जायगी और सारे हिन्दुस्तान के मामले तय करने का हम सम्मिलित प्रयत्न करेंगे। इस प्रकार अंग्रेज़ों की अभिलाषा पूर्ण हो जायगी। यदि मरहटे विजयी हो गये तो एक न एक दिन अंग्रेज़ों को उनकी शक्ति के दुष्प्रभाव का अनुभव करना पड़ेगा। मैंने यह सब केवल सूचनार्थ लिखा है[1]।"

इस्माइलबेग और महादजी सिंधिया में वैर तो पहले से ही चला आता था। कई बार उसे माधोजी सिंधिया की विशाल वाहिनी के हाथों हार खानी पड़ी थी।

पाटण और मेड़ते की लड़ाइयां

वि० सं० १८४७ (ई० स० १७९०) में जयपुर तथा जोधपुर के राजाओं की सहायता प्राप्त कर वह (इस्माइलबेग) अजमेर जा पहुंचा। सिन्धिया ने सर्वप्रथम उसकी सेना के लोगों में फूट डालने का प्रयत्न किया, परन्तु जब इससे कोई लाभ न हुआ तो उसने मथुरा से लकवा दादा[2]

(१) पूना रेज़िडेंसी करेसपॉन्डेंस; जि० १ (सर जदुनाथ सरकार-सम्पादित) पृ० ३६१-२, पत्र संख्या २४८।

(२) लकवा दादा लाड, सारस्वत (शेणवी) ब्राह्मण था। उसके पूर्वजों ने सावंतवाड़ी राज्य के पारखा और आरोवा के देसाइयों को बीजापुर के सुलतान से सरदारी दिलाई थी। इसी कृतज्ञता के कारण उन्होंने लकवा के पूर्वजों को आरोवा व चीखली गांवों में जागीरें दीं थीं, जो अब तक उनके वंश में चली आती हैं। युवा होने पर लकवा सिंधिया के मुख्य मुत्सद्दी वालोवा तात्या पागनीस के पास चला गया और वहां प्रारम्भ में अहलकार तथा पीछे से सिंधिया के ५२ रिसालों का अफ़सर बना। सेनापति जिवबा दादा की अध्यक्षता में वह अपने अधीनस्थ रिसाले के साथ कई लड़ा-

और डी बोइने[1] की अध्यक्षता में अपनी सेना विद्रोही को दंड देने तथा राजपूत राजाओं का दमन करने के लिए भेजी। ई० स० १७६० ता० २० जून (वि० सं० १८४७ प्रथम आषाढ सुदि ८) को तवरों की पाटण (जयपुर राज्य) में उनका शत्रु दल से सामना हुआ। कहा जाता है कि इस लड़ाई के समय जयपुर का महाराजा प्रतापसिंह अपने राज्य को नष्ट न करने का वचन मरहटों से लेकर लड़ाई से अलग हट गया, जिससे राठोड़ों की पराजय हो गई। इस युद्ध के संबंध का विस्तृत वर्णन डी बोइने ने अपने ता० २४ के पत्र में किया था, जो संक्षेप में इस प्रकार है—

इयां लड़ा, जिससे उसकी प्रसिद्धि हुई। इस्माइलबेग के साथ आगरा के युद्ध में उसने बहुत वीरता दिखाई, जिसपर उसे "शमशेर जंगबहादुर" की उपाधि मिली। फिर वह पाटण के युद्ध में इस्माइलबेग से, लाखोरी के युद्ध में होल्कर की सेना से और अजमेर की लड़ाइयों में राठोड़ों से भी लड़ा। इन लड़ाइयों से उसका प्रभाव बहुत बढ़ गया। दौलतराव सिंधिया के समय वह राजपूताने का सूबेदार नियत हुआ। फिर वह उदयपुर गया, जहां जॉर्ज टामस से उसकी लड़ाई होती रही। वि० सं० १८५६ माघ सुदि ५ (ई० स० १८०३ ता० २७ जनवरी) को सलूंबर में ज्वर से उसका देहांत हुआ (नरहर व्यंकाजी राजाध्यक्ष; जिवबा दादा बक्षी यांचे जीवनचरित्र [मराठी]; पृ० १२४-३२, १३६-४० और २६७)।

(१) उसका पूरा नाम बेनोइ ला बॉर्न था और जन्म ई० स० १७५१ ता० ८ मार्च (वि० सं० १८०७ चैत्र वदि ७) को फ्रांस के कैम्बरी नगर में हुआ था। ई० स० १७७८ (वि० सं० १८३५) में २७ वर्ष की अवस्था में वह भारतवर्ष पहुंचा। कुछ समय तक उसने मद्रास की देशी फ़ौज के साथ कार्य किया, पर वहां उन्नति के लिए विशेष संभावना न देखकर वह इस्तीफ़ा देकर कलकत्ता गया। ई० स० १७८३ (वि० सं० १८४०) के प्रारंभ में वह लखनऊ और फिर वहां से दिल्ली गया, परन्तु बादशाह शाहआलम से उसकी मुलाक़ात न हो सकी। फिर आगरे में मिर्ज़ा शफ़ी (बादशाह का वज़ीर) की तरफ़ से भी निराश हो उसने माधोजी सिंधिया की सेवा स्वीकार कर ली। उसकी तरफ़ से उसने कई बड़ी लड़ाइयां लड़ीं और जीतीं, जिनमें से कुछ का उल्लेख ऊपर किया गया है। दौलतराव सिंधिया के समय ई० स० १७६५ (वि० सं० १८५२) में उसने स्वास्थ्य बिगड़ जाने के कारण वहां से भी इस्तीफ़ा दे दिया और वह इंग्लैंड लौट गया। वहां से वह अपनी जन्मभूमि कैम्बरी (Chambary) गया, जहां उसका ई० स० १८३० ता० २१ जून (वि० सं० १८८७ आषाढ सुदि १) को देहान्त हो गया।

"ता० ८ और ९ रमज़ान (ता० २३ और २४ मई) की भीषण गोलाबारी के बाद जो हमारी छोटी-बड़ी लड़ाइयां हुईं, उनका आपको ज्ञान होगा। मैंने दुश्मन को तंग करने का बड़ा प्रयत्न किया, परन्तु उसकी सैनिक शक्ति तथा तोपखाने की अधिकता के कारण उसमें सफलता नहीं मिली। अन्त में मैंने अपनी सेना को तीन भागों में विभाजित करने का इरादा किया। इस प्रकार जब मैं शत्रु से थोड़ी दूर पर जा पहुंचा तो मैंने मरहटे सवारों को अपनी सेना के चंदावल (पीछे) तथा दोनों पार्श्व में रक्खा। दो पहर तक इस्माइलबेग की तरफ़ से आक्रमण होने की व्यर्थ आशा देखी गई। तीन बजे के लगभग कहीं शत्रु की दाहिनी अनी के सवारों के साथ मरहटे सवारों की मुठभेड़ हुई। शत्रु की संख्या धीरे-धीरे ५-६ हज़ार हो गई, पर वे मारकर भगा दिये गये। इससे मेरा उत्साह बढ़ा। शत्रु को उस सुरक्षित स्थान से हटाने के लिए एक घंटे तक दोनों तरफ़ से भीषण गोलाबारी होने के बाद मैंने अपनी सेना को आगे बढ़ने की आज्ञा दी। शत्रु के अधिक निकट पहुंचने पर तोपों के मुंह में बन्दूकों की गोलियां भरकर चलाई गईं। संध्या निकट थी। शत्रु हम पर आक्रमण करने के लिए व्यग्र थे। हमारी तरफ़ के बहुत से देशी बरक़-दाज़ मारे जा चुके थे। ऐसी दशा देख मैंने अपने सैनिकों को तुरन्त आक्रमण करने की आज्ञा दे दी, जिसका उसी समय पालन किया गया। इस हाथोंहाथ की लड़ाई से घबराकर शत्रु एक दम भाग गये और उनकी बंदूकें, हाथी, घोड़े आदि सामान हमारे हाथ लगा। शत्रु की घुड़सवार सेना तो दो हज़ार आदमी और घोड़े कटाकर उसी समय भाग गई और पैदल सेना ने पाटण नगर में शरण ली। सुबह होने पर उसे भी आत्म-समर्पण करना पड़ा। इस समय मेरे पास १२००० व्यक्ति क़ैद में हैं, जिन्हें मैंने सुरक्षित रूप से जमुना के उस पार पहुंचा देने का वचन दिया है। शत्रु सेना में १२००० राठोड़, ६००० कछवाहे, ७००० मुग़ल, इस्माइलबेग तथा अल्लाह्यारबेगखां की अध्यक्षता में, १२००० पैदल, १०० तोपें, ५००० तैलंगे, ४००० रोहिले, ५००० साधु एवं बहुतसी तोपें थीं। मेरी फ़ौज केवल

१०००० थी।......हमारी विजय सचमुच आश्चर्यप्रद है, क्योंकि केवल मुट्ठी भर सेना के सहारे हमने इतनी बड़ी सेना पर विजय प्राप्त करने में सफलता पाई है। ईश्वर को अनेक धन्यवाद है कि मैं सिंधिया की आशा पूर्ण करने में समर्थ हुआ[1]।"

'कलकत्ता गज़ट' में प्रकाशित इसी लड़ाई के एक दूसरे वृत्तान्त से कुछ नई बातें ज्ञात होती हैं, जिनका उल्लेख करना भी आवश्यक है। उससे पाया जाता है कि यह लड़ाई ता० २३ मई को प्रारम्भ हुई थी, परन्तु शुरू-शुरू में शत्रु की संख्या बहुत अधिक होने के कारण कोई विशेष लाभ न हुआ[2]। फिर शत्रु का ता० २० जून को युद्ध करने का इरादा जानकर

(१) हर्बर्ट कॉम्प्टन; यूरोपियन मिलिटरी एड्वेंचरर्स ऑव् हिन्दुस्तान; पृ० ५१-२।

आगरे से लिखे हुए ता० २३ जून, २६ जून और ११ जुलाई ई० स० १७९० के डब्ल्यू० पामर के और लगभग उसी समय के महादजी सिंधिया के अर्ल ऑव् कार्नवालिस के नाम के पत्रों में भी पाटण में राठोड़ों की पराजय होने का उल्लेख है (पूना रेज़िडेंसी कॉरेसपांडेन्स; जि० १, पृ० २६९-७०, पत्र संख्या २६०-२)। गोविंद सखाराम सरदेसाई-द्वारा संपादित "महादजी शिंदे ह्यांचीं कागदपत्रें" में भी इसका उल्लेख है (पत्र संख्या २७४)। डब्ल्यू० पामर के ता० ११ अगस्त ई० स० १७९० के अर्ल ऑव् कार्नवालिस के नाम के पत्र से पाया जाता है कि इसी लड़ाई के बाद विजयसिंह बीमार पड़ गया (पूना रेज़िडेंसी कॉरेसपांडेंस; जि० १, पृ० २७०-१, पत्र संख्या २६४)।

टॉड के अनुसार तुंगा नामक स्थान की लड़ाई में जो अपमान कछवाहों का राठोड़-चारण के हाथ हुआ था (देखो ऊपर पृ० ७३५-७) उसका ध्यान उन्हें बना रहा और पाटण की लड़ाई में वे राठोड़ों को नीचा दिखाने की ग़रज़ से मरहटों से मिलकर युद्धक्षेत्र छोड़ गये। फिर भी सदैव की भांति राठोड़ बड़ी वीरता से लड़े और डी बोइने की तोपों के मुंह तक जा पहुंचे, पर अन्त में उनकी पराजय हुई और उन्हें भागना पड़ा। इस प्रकार अपना बदला लेकर जयपुर के कछवाहों को यह दोहा कहने का अवसर प्राप्त हुआ—

घोड़ा जोड़ा पागड़ी, मुछवालीर मरोड़।
पाटण में पधरायगा, रकम पांच राठोड़॥

राजस्थान; जि० २, पृ० ८७६-७।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात में श्रावणादि

डी बोइने आगे बढ़ा और मुठभेड़ होने पर केवल तीन घंटे की लड़ाई के बाद उसने इस्मालवेग को पूरी तरह हरा दिया। सिंधिया को जब अपनी सेना की विजय का समाचार ज्ञात हुआ तो राजपूत राजाओं का पूर्णरूप से दमन करने के लिए उसने डी बोइने को जोधपुर पर आक्रमण करने की आज्ञा भिजवाई। इस आज्ञा के प्राप्त होते ही डी बोइने ने सर्वप्रथम अजमेर पर अधिकार करने का इरादा किया, क्योंकि जयपुर तथा जोधपुर के बीच में होने से उस समय उसका बड़ा महत्वपूर्ण स्थान था। वह वहां ता० १५ अगस्त को पहुंचा। घेरा डाला गया, परन्तु शीघ्र उसका कोई लाभदायक परिणाम होता दिखाई न दिया। अतएव दो हज़ार सवार एवं पर्याप्त पैदल सेना वहां छोड़कर शेष सेना के साथ उसने जोधपुर की तरफ़ प्रस्थान किया[1]। उसकी सेना के एक अफ़सर ने अपने

१८४७) ज्येष्ठ सुदि ११ (ई० स० १७९० ता० २४ मई) को दक्षिणियों की सेना का पाटण पहुंचना लिखा है। उसके अनुसार प्रारम्भ में डी बोइने की पराजय हुई, जिसपर सिंधिया ने धन का लालच देकर राठोड़ों की तरफ़ के कितने ही प्रमुख व्यक्तियों—बनेचंद, साहामल, सूरजमल (कुचामन) आदि—को रणक्षेत्र से हटा दिया। साथ ही इस्माइलबेग भी चला गया, जिससे राठोड़ों की सेना को वहां से हटना पड़ा (जि० ३, पृ० ८०-१)।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि अजमेर पर अधिकार करने के पूर्व दक्षिणियों की सेना ने क्रमशः सांभर एवं परबतसर पर क़ब्ज़ा किया था (जि० ३, पृ० ८४)।

टॉड लिखता है कि इस चढ़ाई के समय किशनगढ़ का बहादुरसिंह (?) डी बोइने से जा मिला और उसका पथप्रदर्शक बन गया (जि० २, पृ० ८७८)। टॉड के ग्रन्थ में दिया हुआ बहादुरसिंह नाम ग़लत है, क्योंकि उसका तो वि० सं० १८३८ (ई० स० १७८१) में ही देहांत हो गया था। वस्तुतः यह नाम प्रतापसिंह (बहादुरसिंह का पौत्र) होना चाहिये, जो उस समय वहां का राजा था। "वीर-विनोद" से पाया जाता है कि करकेड़ी के स्वामी अमरसिंह पर महाराजा विजयसिंह की विशेष कृपा होने तथा उसको रूपनगर दे देने के कारण मन ही मन प्रतापसिंह विजयसिंह से वैर रखता था (भाग २, पृ० ५३२-४)। इसीलिए मरहटों का जोधपुर पर आक्रमण होने पर वह उनके शरीक हो गया होगा।

ई० स० १७६० ता० १ सितम्बर (वि० सं० १८४७ भाद्रपद वदि ७) के प
में इस घटना का इस प्रकार वर्णन किया है—

"यद्यपि इस गढ़ को घेरे हुए हमें १५ दिन हो गये हैं, लेकिन अभ
तक हमारे घेरे का कोई असर नहीं हुआ है। हमारी तोपें भी बेकार स
हैं। क़िले तक पहुंचने का तंग मार्ग प्राकृतिक रूप से ही इतना सुरक्षि
है कि ऊपर से कुछ बड़े पत्थरों को लुढ़काकर ही हमें सहज में रोका ज
सकता है। उन पत्थरों से उत्पन्न होनेवाली आवाज़ की समता मैं वज्र
करता हूं। मुझे आशंका है कि घेरे की अवधि बढ़ानी पड़ेगी, क्योंकि
गढ़ के भीतर लोगों के पास ६ मास तक के लिए जल और साल भर के
लिए भोजन-सामग्री मौजूद है। मैं समझता हूं कि हमें अपनी सेना के
भाग कर एक यहां रखना और दूसरा मेड़ते में भेजना पड़ेगा, जहां श
के होने का समाचार मिला है। विजयसिंह ने डी बोइने को सिंधिया क
साथ छोड़ने के एवज़ में अजमेर और उसके आस-पास की पचास को
तक की भूमि देने को कहा, परन्तु उसने उत्तर दिया कि जयपुर और जोध
पुर तो पहले से ही सिंधिया ने मेरे नाम कर दिये हैं'।"

मेड़ते की डी बोइने की सेना की लड़ाई का हाल उसके ही ए
दूसरे अफ़सर ने अपने ई० स० १७६० ता० १३ सितम्बर (वि० सं० १८४
भाद्रपद सुदि ५) के पत्र में इस प्रकार किया है—

"सत्रह दिनों तक अजमेर पर घेरा रहने के बाद जब मेड़ते में श
की तैयारी का पता लगा तो दो हज़ार सवारों को वहां छोड़कर हम
जेनरल (डी बोइने) ने शेष सेना के साथ मेड़ते की तरफ़ प्रस्थान किया[2]

(१) हर्बर्ट कॉम्प्टन; यूरोपियन मिलिटरी एड्वेंचरर्स ऑव् हिन्दुस्तान; पृ० ५

(२) टॉड-कृत "राजस्थान" से पाया जाता है कि मार्ग में लूणी के थल
डी बोइने का तोपख़ाना फंस जाने की ख़बर मिलने पर आउवा के शिवसिंह एवं आस
के महीदास (? महेशदास) ने उसी समय उसपर आक्रमण करने की राय दी। अ
सरदारों ने भी यही सलाह दी, परन्तु ख़ूबचंद ने इस्माइलबेग के आ जाने तक
स्थगित रखने की राय दी, जिससे एक उपयुक्त अवसर राठोड़ों ने हाथ से खो दि
(जि० २, पृ० ८७८-६)।

अकाल के कारण हर जगह पानी की बड़ी कमी थी, जिससे हमें लंबे मार्ग का अनुसरण करना पड़ा। हम लोग ता० ८ को रीयां पहुंचे। आधीरात को वहां से प्रस्थान कर जब हम शत्रु सेना के निकट पहुंचे तो हमने उसपर भीषण गोला-बारी की। हमारे साथ का मरहटा सरदार उसी समय शत्रु पर आक्रमण करना चाहता था, परन्तु जेनरल डी बोइने ने अपनी सेना के थकी होने तथा समय की अनुपयुक्तता के कारण उसे ऐसा करने से रोक दिया। शत्रु के पास ३०००० सवार, १००००० पैदल तथा २५ तोपें थीं[1]। हम लोगों के पास सवार तो लगभग उतने ही थे, परन्तु पैदल सेना कम और तोपें ८० थीं। ता० १० को प्रातःकाल ही हमें शत्रु की ओर बढ़ने की आज्ञा हुई। उसी समय भीषण गोलाबारी शुरू हुई और कुछ ही देर बाद हमारी तरफ़ की तोपों के मुंह में बन्दूकों की गोलियां भरकर छोड़ी गईं। तोपों की अधिकता होने से हमने शीघ्र ही शत्रु को वहां से हटा दिया। उसी समय सिंधिया के एक फ्रांसीसी अफ़सर ने इस प्रारंभिक सफलता से उत्साहित होकर बिना किसी प्रकार की आज्ञा के ही अपनी सेना की तीन टुकड़ियों के साथ शत्रु पर आक्रमण कर दिया। इस मौक़े से लाभ उठाकर राठोड़ों ने उसपर ऐसा प्रबल आक्रमण किया कि उसे पीछे हटना पड़ा। अनन्तर उन्होंने हमारी प्रधान सेना पर भी चारों तरफ़ से आक्रमण किया। उस समय जेनरल डी बोइने की दूरदर्शिता एवं समयानुकूल युद्धचातुरी के कारण ही हमारी रक्षा हुई। उस फ्रांसीसी अफ़सर की ग़लती का पता लगते ही उस (जेनरल डी बोइने) ने हमारी सेना को एक खोखले वर्ग के रूप में सुसज्जित कर दिया, जिससे शत्रु को निकट पहुंचने पर हर तरफ़ हमारी सेना से लोहा लेना पड़े। इस प्रकार उनकी गति रुक गई और नौ बजते-बजते उन्हें वहां से पीछे हटना पड़ा। दस बजे के क़रीब हमारा शत्रु के डेरों पर अधिकार हो गया और तीन बजे के लगभग हमने आक्रमण

(१) टॉड के अनुसार इस अवसर पर बीकानेर की सेना भी राठोड़ों की सहायतार्थ गई थी, पर युद्ध आरंभ होने के पूर्व ही अपने देश की रक्षा के हेतु वह लौट गई (जि० २, पृ० ८७६)।

कर मेड़ता पर अधिकार कर लिया। तीन दिवस तक वहां ऐसी लूट मची कि जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। इस लड़ाई में हमारी तरफ़ के छः-सात सौ व्यक्ति काम आये। राठोड़ों का सेनाध्यक्ष भंडारी गंगाराम वहां से भागता हुआ पकड़ा गया। केसरिया वस्त्र धारणकर लड़नेवाले राठोड़ों की वीरता का वर्णन नहीं किया जा सकता। मैंने स्वयं देखा कि उनके दस-दस, बीस-बीस के जत्थे हमारी हज़ारों की तादाद की सेना पर आक्रमण करते और वीरतापूर्वक लड़ते हुए मारे जाते थे। राठोड़ों की तरफ़ के पांच सरदार मारे गये, जिनमें राजा का भतीजा और सेना का बख़्शी भी शामिल थे। जब उन पांचों ने देखा कि भाग निकलना असंभव है तो वे अपने ग्यारह साथियों सहित घोड़ों से उतर पड़े और लड़ते हुए मारे गये। इस विजय का सारा श्रेय हमारे जेनरल को है[1]। इस्माइलबेग लड़ाई के दूसरे दिन नागोर पहुंचा[2]।"

इस लड़ाई के बाद शीघ्रता से एकत्रित किये हुए अपने आदमियों के साथ इस्माइलबेग महाराजा विजयसिंह से जाकर मिला। उसने महाराजा

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार इस लड़ाई में राठोड़ों की तरफ़ के ठाकुर बिसनसिंह (चाणोद), ठाकुर शिवसिंह (देवली), शेखावत ज़ालिमसिंह (बलाड़ा), ठाकुर महेशदास (आसोप), ठाकुर मालुमसिंह (नाडसर), ठाकुर जगतसिंह (पाली), ठाकुर सूरजमल (हरियाडाणा), ठाकुर भारतसिंह अर्जुनसिंहोत (सुदणी) आदि कितने ही सरदार काम आये एवं आउवा का शिवसिंह आदि घायल हुए (जि० ३, पृ० ६०-१)। टॉड-कृत "राजस्थान" से भी इसकी पुष्टि होती है (जि० २, पृ० ८८०)।

ऐसी प्रसिद्धि है कि आसोप के ठाकुर महेशदास के मेड़ता के युद्ध में मारे जाने पर भी महाराजा ने आसोप की जागीर जगरामसिंह छत्रसिंहोत (गजसिंहपुरा) के नाम, जो किसी लड़ाई से भाग आया था, करदी थी; परन्तु उसी समय किसी चारण के निम्नलिखित दोहा कहने पर वह उसने पीछी महेशदास के वंशजों के नाम करदी—

मरज्यो मती महेश ज्यों, राड़ विचै पग रोप।
झगड़ा में भागो जगो, उण पाई आसोप॥

ठाकुर भूरसिंह शेखावत; विविध संग्रह; पृ० ११७।

(२) हर्बर्ट कॉम्प्टन; यूरोपियन मिलिटरी एड्वेंचरर्स ऑव् हिन्दुस्तान; पृ० ६०-१।

से युद्ध जारी रखने का बहुत आग्रह किया और फ़ौज एकत्र करने का भी प्रयत्न किया, परन्तु अन्त में दिसंबर मास में महाराजा ने कोआपुर (Koapur) में डी बोइने के पास अपना वकील भेजकर संधि की बातचीत की। एक बड़ी रक़म और अजमेर का सूबा दिये जाने की शर्त पर सुलह हो गई[1]। अजमेर लकवा दादा को दे दिया गया। सन्धि हो जाने पर डी बोइने ने वापस मथुरा की तरफ़ प्रस्थान किया। ई० स० १७९१ ता० १ जनवरी (वि० सं० १८४७ पौष वदि १२) को वहां पहुंचने पर उसका बड़ा स्वागत हुआ और माधोजी सिंधिया ने इनाम-इकराम देकर उसे सम्मानित किया। इस विजय के कारण डी बोइने की सेना "चेरी (उड़ाकू) फ़ौज" के नाम से प्रसिद्ध हुई[2]।

कुछ सरदारों का विरोधी होना

महाराजा के गुलाबराय नाम की जाट जाति की एक पासवान थी, जिसपर उसकी विशेष कृपा थी। वह उसके कहने में चलता था तथा एक प्रकार से राज्य-कार्य का संचालन उसके इशारे से ही होता था[3]। वि० सं० १८४८ (ई० स० १७९१) में महाराजा ने जालोर का पट्टा उसके नाम

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार साठ लाख रुपया मिलने की शर्त पर मरहटी सेना ने लौट जाना स्वीकार किया। इस रक़म का आधा हिस्सा तो उसी समय दे दिया गया और शेष आधे के चुकाये जाने तक के लिए सांभर, नांवा, परबतसर, मारोठ तथा मेड़ता दक्षिणियों के कब्ज़े में रख दिये गये और कुछ व्यक्ति ओल में सौंपे गये। पीछे से ख़ास आज्ञापत्र पहुंचने पर सिंघवी धनराज ने अजमेर का गढ़ ख़ाली कर दक्षिणियों को सौंप दिया (जि० ३, पृ० ९८-९)। टॉड भी केवल ६० लाख रुपया ही देना लिखता है (राजस्थान, जि० २, पृ० १०७४)। "वीरविनोद" में भी ६० लाख ही दिया है (जि० २, पृ० ८५६)।

(२) हर्बर्ट कॉम्पटन; यूरोपियन मिलिटरी एडवेंचरर्स ऑव् हिंदुस्तान; पृ० ६२। गोविंद सखाराम सरदेसाई-द्वारा संपादित "महादजी शिंदे ह्यांचीं कागदपत्रें" में भी सांभर, अजमेर और मेड़ता में दक्षिणियों की विजय होने का उल्लेख है (पत्र संख्या ५७६)।

(३) दत्तात्रेय बलवंत पारसनीस-संगृहीत "जोधपुर येथील राजकारणें" (लेखांक २०, पृ० ५८) में लिखा है कि इसी पासवान के कारण राज्य में ख़राबी होती गई।

कर दिया, जिसपर उसने अपने कार्यकर्ता वहां भेज दिये। गुलावराय की महाराजा की शेखावत राणी से नहीं बनती थी, क्योंकि बचपन में उस-(शेखावत) का पौत्र भीमसिंह, गुलावराय के पुत्र तेजसिंह से लड़ा करता था। इस वजह से अपने पुत्र तेजसिंह की मृत्यु हो जाने पर गुलावराय की कृपा देवड़ी राणी के पुत्रों पर बढ़ गई और वह कुंवर गुमानसिंह के पुत्र मानसिंह को गोद लिए हुए पुत्र के समान रखती थी। उसके कहने पर अधिकांश सरदारों का विरोध होते हुए भी महाराजा ने शेरसिंह (देवड़ी राणी के पुत्र) को अपना युवराज नियत किया[1]। फलस्वरूप कितने ही चांपावत, कूंपावत, ऊदावत और मेड़तिये सरदार महाराजा से अप्रसन्न हो देश में लूट-मार एवं बिगाड़ करने लगे और मालकोसणी में एकत्र हुए[2]। ऐसी दशा देख गुलावराय ने शेरसिंह तथा मानसिंह को जालोर भिजवा दिया। इसी बीच गढ़ के अन्य सरदार भी महाराजा का साथ छोड़कर चले गये और गांव डूंगली में ठहरे। तब फाल्गुन बदि १२ (ई० स० १७९२ ता० १९ फ़रवरी) को रात्रि के समय महाराजा ने विरोधी सरदारों को मनाने के लिए प्रस्थान किया और डीगाडी, बीसलपुर एवं भावी होता हुआ वह मालकोसणी पहुंचा, जहां सारे सरदार उसके पास उपस्थित हो गये। उन्हीं दिनों महाराजा ने सीसोदणी राणी से उत्पन्न कुंवर ज़ालिमसिंह से उसका पट्टा नांवा हटाकर शेरसिंह के नाम कर दिया। इसपर ज़ालिमसिंह अप्रसन्न होकर बगड़ी में लूट-मार करता हुआ बीलाड़ा पहुंचा, जहां महाराजा की तरफ़ से चांपावत जेतमाल (बामणी का) उसको

(१) "जोधपुर येथील राजकारणें" में लिखा है कि पासवान ने सब सरदारों से कहा कि बड़ा सरदार एक हाथी और छोटा सरदार एक घोड़ा नज़र कर शेरसिंह को राजा स्वीकार करे। इसपर सब सरदार बड़े नाराज़ हुए और रास के ठाकुर जवानसिंह ने कहा कि हम जिसको राजा बनावेंगे वही राजा होगा (लेखांक २०, पृ० ६४)।

(२) "जोधपुर येथील राजकारणें" से पाया जाता है कि पासवान सरदारों के साथ बड़ा बुरा व्यवहार करती थी। उसने जवानसिंह आदि सरदारों के गांव ज़ब्त कर लिये, जिससे वे एकत्र होकर उसके नाश का उद्योग करने लगे (लेखांक २०, पृ० ६४)।

समझाने के लिए गया। अनन्तर सरदारों आदि के समझाने और विश्वास दिलाने पर श्रावणादि वि० सं० १८४८ (चैत्रादि १८४६) वैशाख वदि ७ (ई० स० १७६२ ता० १३ अप्रेल) को ज़ालिमसिंह महाराजा के पास उपस्थित हो गया, जिसे उसने गोड़वाड़ का इलाक़ा देने के साथ ही देसूरी की बहाली का ख़ास रुक्का लिखकर दे दिया[1]।

महाराजा की पासवान गुलाबराय के असद्व्यवहार और प्रभाव से प्रायः सब सरदार उससे अप्रसन्न रहते थे। जैसा ऊपर लिखा गया है गुलाबराय मानसिंह के पक्ष में थी और सरदार भीमसिंह के, जो वास्तविक हक़दार था। भीमसिंह का बढ़ता हुआ प्रभुत्व देखकर और नगर में उसका बन्दोबस्त हो जाने पर गुलाबराय ने महाराजा को लिखा कि भीमसिंह मुझे मरवा देगा। तब महाराजा की तरफ़ से पोकरण का ठाकुर सवाईसिंह और रास का ठाकुर जवानसिंह उसके पास गये और उन्होंने झूठा आश्वासन देकर उसे गढ़ में चलने पर राज़ी किया। जैसे ही वह पालकी में बैठने लगी, सरदारों के आदमियों ने उसे चूककर मार डाला और उसका सामान आदि लूट लिया[2]। यह घटना वैशाख वदि १०

सरदारों का चूककर पासवान गुलाबराय को मरवाना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ९९-१०१। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८४६। टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०७७।

(२) "जोधपुर येथील राजकारणें" से पाया जाता है कि सरदारों ने पहले जो प्रयत्न पासवान को मारने का किया, उसमें उन्हें सफलता नहीं मिली। उसमें लिखा है कि जब विजयसिंह भंडारी को पासवान ने दीवान नियुक्त किया तो सरदारों को बहुत बुरा लगा और उन्होंने आपस में राय की कि अब क्या करना चाहिये, क्योंकि सब राजपूतों की इज़्ज़त जाती है, राज्य भ्रष्ट हो रहा है और राजा पराधीन (पासवान के अधीन) हो गया है। अनन्तर सरदारों ने एक होकर रत्नसिंह(कूंपावत) को, जिसके पास २०००० राजपूत थे, अपनी ओर मिलाने की सलाह की। जवानसिंह (रास) और सवाईसिंह अर्द्धरात्रि के समय रत्नसिंह के पास गये और उन्होंने उसे अपनी तरफ़ मिलाया। दूसरे दिन बाग़ में जाकर पासवान को क़ैद करने का निश्चय हुआ। सरदारों में से एक खींवसरवाले भोमसिंह ने बदलकर पासवान को षडयंत्र की सूचना दे दी। फलस्वरूप वि० सं० १८४८ पौष सुदि ८ (ई० स० १७६२ ता० १ जनवरी) रविवार को, जिस दिन सरदार

ता० १६ अप्रेल) सोमवार को हुई और इस कार्य को करने में पाली का ठाकुर रूपावत सरदारसिंह मुख्य था। गुलाबराय पर चूक होने की ख़बर बहुत समय तक महाराजा को नहीं हुई[1]।

सरदारों का समझाकर भीमसिंह को गढ़ से हटाना

अनन्तर ज़ालिमसिंह को मालकोसणी में ही रख सरदारों ने महाराजा को लेकर प्रस्थान किया और वैशाख वदि १४ (ता० २० अप्रेल) को चैनपुरा में डेरे कर वे वैशाख सुदि ६ (ता० २७ अप्रेल) को वालसमंद पहुंचे। उस समय महाराजा के साथ सूरजमल शोभासिंहोत (कुचामण), रिड़मलसिंह (मीठड़ी), फ़तहसिंह श्यामसिंहोत (वलूंदा), विड़दसिंह बख़्तावरसिंहोत (रीयां) एवं हरिसिंह शेरसिंहोत (चंडावल) थे, जो भीमसिंह के षड्यन्त्र में शरीक नहीं थे। उन्हीं दिनों सरदारों से प्रोत्साहन पाकर भीमसिंह ने जोधपुर के गढ़ और नगर पर क़ब्ज़ा कर लिया। इसकी सूचना मिलने पर महाराजा ने लोढ़ा साहामल एवं मेहकरण को लिखा कि भीमसिंह के पक्ष के सरदारों का विगाड़ करो। इसपर साहामल ने उन सरदारों का विगाड़ करना शुरू किया और उनका बहुत सा मुल्क लूट लिया। अनन्तर भाद्रपद वदि १२ (ता० १४ अगस्त) मंगलवार को महाराजा का डेरा डीगाड़ी में हुआ। इस प्रकार महाराजा को बाहर रहते जब दस मास हो गये तो सवाईसिंह आदि सरदारों ने जाकर भीमसिंह को गढ़ छोड़ने के लिए समझाया, जिसपर सिवाणा का अधिकार

बाग़ में पहुंचे, पासवान वहां नहीं मिली, जिससे उनका इरादा सफल नहीं हुआ। वह इससे पूर्व ही महाराजा के पास चली गई थी (लेखांक २०, पृ० ६४-५)।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १०२। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८२६। टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०७६। सूर्यमल मिश्रण; वंशभास्कर; चतुर्थ भाग; पृ० ३९२०,।

गुलाबराय ने गुलाबसागर तालाब, नगर के भीतर का उद्यान एवं उसका कुंड, जालोर के गढ़ के महल, सोजत का कोट और कुंजविहारी का मंदिर बनवाया था (जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १०९)।

समझाने के लिए गया। अनन्तर सरदारों आदि के समझाने और विश्वास दिलाने पर श्रावणादि वि० सं० १८४८ (चैत्रादि १८४९) वैशाख वदि ७ (ई० स० १७९२ ता० १३ अप्रेल) को ज़ालिमसिंह महाराजा के पास उपस्थित हो गया, जिसे उसने गोड़वाड़ का इलाक़ा देने के साथ ही देसूरी की बहाली का ख़ास रुक़्क़ा लिखकर दे दिया[1]।

महाराजा की पासवान गुलाबराय के असद्व्यवहार और प्रभाव से प्रायः सब सरदार उससे अप्रसन्न रहते थे। जैसा ऊपर लिखा गया है

सरदारों का चूककर पासवान गुलाबराय को मरवाना

गुलाबराय मानसिंह के पक्ष में थी और सरदार भीमसिंह के, जो वास्तविक हक़दार था। भीमसिंह का बढ़ता हुआ प्रभुत्व देखकर और नगर में उसका बन्दोवस्त हो जाने पर गुलाबराय ने महाराजा को लिखा कि भीमसिंह मुझे मरवा देगा। तब महाराजा की तरफ़ से पोकरण का ठाकुर सवाईसिंह और रास का ठाकुर जवानसिंह उसके पास गये और उन्होंने झूठा आश्वासन देकर उसे गढ़ में चलने पर राज़ी किया। जैसे ही वह पालकी में बैठने लगी, सरदारों के आदमियों ने उसे चूककर मार डाला और उसका सामान आदि लूट लिया[2]। यह घटना वैशाख वदि १०

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ९९-१०१। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८५६। टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०७७।

(२) "जोधपुर येथील राजकारणें" से पाया जाता है कि सरदारों ने पहले जो प्रयत्न पासवान को मारने का किया, उसमें उन्हें सफलता नहीं मिली। उसमें लिखा है कि जब विजयसिंह भंडारी को पासवान ने दीवान नियुक्त किया तो सरदारों को बहुत बुरा लगा और उन्होंने आपस में राय की कि अब क्या करना चाहिये, क्योंकि सब राजपूतों की इज़्ज़त जाती है, राज्य भ्रष्ट हो रहा है और राजा पराधीन (पासवान के अधीन) हो गया है। अनन्तर सरदारों ने एक होकर रत्नसिंह(कूंपावत) को, जिसके पास २०००० राजपूत थे, अपनी ओर मिलाने की सलाह की। जवानसिंह (रास) और सवाईसिंह अर्द्धरात्रि के समय रत्नसिंह के पास गये और उन्होंने उसे अपनी तरफ़ मिलाया। दूसरे दिन बाग़ में जाकर पासवान को क़ैद करने का निश्चय हुआ। सरदारों में से एक खींवसरवाले भोमसिंह ने बदलकर पासवान को षडयंत्र की सूचना दे दी। फलस्वरूप वि० सं० १८४८ पौष सुदि ८ (ई० स० १७९२ ता० १ जनवरी) रविवार को, जिस दिन सरदार

ता० १६ अप्रेल) सोमवार को हुई और इस कार्य को करने में पाली का ठाकुर रूपावत सरदारसिंह मुख्य था। गुलाबराय पर चूक होने की खबर बहुत समय तक महाराजा को नहीं हुई[1]।

अनन्तर ज़ालिमसिंह को मालकोसणी में ही रख सरदारों ने महाराजा को लेकर प्रस्थान किया और वैशाख वदि १४ (ता० २० अप्रेल) को चैनपुरा में डेरे कर वे वैशाख सुदि ६ (ता० २७ अप्रेल) को बालसमंद पहुंचे। उस समय महाराजा के साथ सूरजमल शोभासिंहोत (कुचामण), रिड़मलसिंह (मीठड़ी), फ़तहसिंह श्यामसिंहोत (बलूंदा), बिड़दसिंह बख़्तावरसिंहोत (रीयां) एवं हरिसिंह शेरसिंहोत (चंडावल) थे, जो भीमसिंह के षड्यन्त्र में शरीक नहीं थे। उन्हीं दिनों सरदारों से प्रोत्साहन पाकर भीमसिंह ने जोधपुर के गढ़ और नगर पर क़ब्ज़ा कर लिया। इसकी सूचना मिलने पर महाराजा ने लोढ़ा साहामल एवं मेहकरण को लिखा कि भीमसिंह के पक्ष के सरदारों का बिगाड़ करो। इसपर साहामल ने उन सरदारों का बिगाड़ करना शुरू किया और उनका बहुत सा मुल्क लूट लिया। अनन्तर भाद्रपद वदि १२ (ता० १४ अगस्त) मंगलवार को महाराजा का डेरा डीगाड़ी में हुआ। इस प्रकार महाराजा को बाहर रहते जब दस मास हो गये तो सवाईसिंह आदि सरदारों ने जाकर भीमसिंह को गढ़ छोड़ने के लिए समझाया, जिसपर सिवाणा का अधिकार

सरदारों का समझाकर भीमसिंह को गढ़ से हटाना

बाग़ में पहुंचे, पासवान वहां नहीं मिली, जिससे उनका इरादा सफल नहीं हुआ। वह इससे पूर्व ही महाराजा के पास चली गई थी (लेखांक २०, पृ० ६४-५)।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १०२। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८२६। टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०७६। सूर्यमल मिश्रण; वंशभास्कर; चतुर्थ भाग; पृ० ३९२०,।

गुलाबराय ने गुलाबसागर तालाब, नगर के भीतर का उद्यान एवं उसका कुंड, जालोर के गढ़ के महल, सोजत का कोट और कुंजविहारी का मंदिर बनवाया था (जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १०९)।

प्राप्तकर वह श्रावणादि वि० सं० १८४९ (चैत्रादि १८५०) चैत्र सुदि ८ (ई० स० १७९३ ता० २० मार्च) को गढ़ का परित्याग कर चला गया। उसी रात महाराजा ने गढ़ में प्रवेश किया[1]।

गढ़ में प्रवेश करने के बाद महाराजा ने पहला कार्य यह किया कि सिंघवी अखैराज को इसमाइलबेग की सेना के साथ भीमसिंह को पकड़ लाने के लिए भेजा। दिन निकलते-निकलते वह झंवर गांव में जा पहुंचा, जहां भीमसिंह ठहरा हुआ था। वहां दोनों दलों में सामना होने पर भीमसिंह को सकुशल सिवाणा तक पहुंचाने के लिए गये हुए सरदारों में से कुछ तो राजकीय सेना का सामना करने के लिए रुक गये और सवाईसिंह भीमसिंह को साथ ले पोकरण चला गया। इधर शाम तक लड़ाई होती रही, जिसमें हरीसिंह (चंडावल), सूरजमल (कुचामण), दानसिंह (सेव-रिया) आदि काम आये तथा फ़तहसिंह (बलूंदा) घायल हुआ। फिर भीमसिंह के निकल जाने की ख़बर पाकर महाराजा ने ख़ास रुक़्क़ा लिख अपनी सेना को वापस बुला लिया। साथ ही मृत सरदारों के यहां जाकर महाराजा ने उनकी तसल्ली की और उनके उत्तराधिकारियों को जागीरें आदि दीं[2]।

महाराजा का भीमसिंह के पीछे सेना भेजना

गौड़ाटी (गौड़ों की चौरासी) और मेड़ता वग़ैरह के सरदार भीम-सिंह के षड्यंत्र में शामिल थे, अतएव महाराजा ने बख़्शी अखैराज सिंघवी को उधर भेजा। उसने वहां पहुंचकर गूलर, जावला, भखरी, बडू, बोरावड़, खालड़, बूडस, मोरेड़ और चिंदियाद से पेशकशी वसूल की। इनके

अखैराज सिंघवी को भेज-कर विरोधी ठिकानों से दंड लेना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १०२-३। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८४६। टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०७६।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १०३-४। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८४६-७। सूर्यमल मिश्रण; वंशभास्कर; चतुर्थ भाग; पृ० ३९२१-२। टॉड; राज-स्थान, जि० २, पृ० १०७६-७।

अतिरिक्त उसने ऊदावतों के ठिकाने बंवाल का गढ़ गिरा दिया, जहां अजीतसिंह ऊदावत लड़कर मारा गया[1]।

कुंवर ज़ालिमसिंह को परबतसर का परगना देना

उन्हीं दिनों के आस-पास महाराजा ने परबतसर का परगना ज़ालिमसिंह के नाम कर दिया। वहां कुंवर ने अपनी तरफ़ से उदयपुर के मुत्सद्दी पीतांबरदास को भेजा। उसने वहां इतना अच्छा प्रबंध किया कि परबतसर अब तक "पीतांबरबारा" कहलाता है[2]।

महाराजा की बीमारी और मृत्यु

महाराजा की वृद्धावस्था तो थी ही। ऐसे में वायु का प्रकोप हो जाने से उसका सारा शरीर रह गया। वि० सं० १८५० आषाढ वदि १० (ता० ३ जुलाई) बुधवार को उसकी तबियत अधिक खराब हुई। इसके चार दिन बाद आषाढ वदि १४ (ता० ७ जुलाई) को अर्द्धरात्रि के समय उसका स्वर्गवास हो गया[3]।

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १०४।

(२) वही; जि० ३, पृ० १०५।

(३) वही; जि० ३, पृ० १०५। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८२७। टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०७७। दत्तात्रेय बलवंत पारसनीस-संगृहीत "जोधपुर येथील राजकारणें" से भी इसकी पुष्टि होती है (लेखांक २३, पृ० ८०)।

उसी पुस्तक में आगे चलकर लिखा है कि अपनी मृत्यु से तीन दिन पूर्व महाराजा विजयसिंह ने पद्मसिंह बारहट, गढमल वैद्य तथा शंभुदान धायभाई को अपने पास बुलाकर कहा कि मेरी गद्दी को एक रूप से चलाने के लिए दस वर्षीय सूरसिंह- (सामन्तसिंह का पुत्र) को राज्य देना। भीमसिंह को तो सर्वथा गद्दी पर बैठाया न जाय, क्योंकि उससे बखेड़ा मिटेगा नहीं। कदाचित् उसको बैठाया तो देश में फ़ितर होगा और मैं तुम्हारा दामनगीर रहूंगा। महाराजा की मृत्यु होने पर उपर्युक्त व्यक्तियों ने समस्त मुत्सद्दियों को उसकी अंतिम इच्छा की सूचना तो दी, परन्तु उससे अधिक वे कुछ न कर सके और भीमसिंह जैसलमेर से जाकर जोधपुर का स्वामी बन गया (जोधपुर येथील राजकारणें; लेखांक २६, पृ० ८३-४)।

राणियां तथा संतति

महाराजा विजयसिंह के सात राणियां थीं, जिनसे उसके निम्न-लिखित सात पुत्र हुए[1]—(१) फ़तहसिंह,[2] (२) भीमसिंह[3], (३) ज़ालिमसिंह[4], (४) सरदारसिंह[5], (५) शेरसिंह, (६) गुमानसिंह[6], और (७) सांवतसिंह[7]।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १०७-६। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८५७-८। टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०७५।

(२) जन्म वि० सं० १८०४ श्रावण वदि ४ (ई० स० १७४७ ता० १४ जुलाई)। वि० सं० १८३४ कार्तिक सुदी ८ (ई० स० १७७७ ता० ८ नवंबर) को इसकी निस्सन्तान मृत्यु हो गई।

(३) जन्म वि० सं० १८०६ द्वितीय भाद्रपद सुदि १० (ई० स० १७४६ ता० १० सितंबर)। मृत्यु श्रावणादि वि० सं० १८२५ (चैत्रादि १८२६) वैशाख वदि १३ (ई० स० १७६६ ता० ४ मई)। इसका पुत्र भीमसिंह, फ़तहसिंह को गोद गया और विजयसिंह की मृत्यु के बाद जोधपुर राज्य का स्वामी हुआ।

(४) जन्म श्रावणादि वि० सं० १८०६ (चैत्रादि १८०७) आषाढ सुदि ६ (ई० स० १७५० ता० २८ जून। मृत्यु श्रावणादि वि० सं० १८५४ (चैत्रादि १८५५) में सिरियारे के घाटे पर काछवली गांव में हुई। इसे क्रमशः नावां, गोड़वाड़ और परबतसर के इलाक़े जागीर में मिले थे।

(५) जन्म श्रावणादि वि० सं० १८०८ (चैत्रादि १८०६) ज्येष्ठ सुदि १३ (ई० स० १७५२ ता० १४ मई)। मृत्यु श्रावणादि वि० सं० १८२५ (चैत्रादि १८२६) वैशाख वदि ७ (ई० स० १७६६ ता० २८ अप्रेल)।

(६) जन्म वि० सं० १८१८ कार्तिक सुदि ६ (ई० स० १७६१ ता० ६ नवंबर)। मृत्यु वि० सं० १८४८ आश्विन वदि १३ (ई० स० १७६१ ता० २६ सितंबर)। इसका पुत्र मानसिंह, भीमसिंह के पीछे जोधपुर राज्य का स्वामी हुआ। दत्तात्रेय बलवंत पार्सनीस-संगृहीत "जोधपुर येथील राजकरणें" में पासवान गुलाबराय का गुमानसिंह को विष देकर मरवाना लिखा है (लेखांक २०, पृ० ६३)।

(७) जन्म वि० सं० १८२५ फाल्गुन सुदि ८ (ई० स० १७६६ ता० १५ मार्च)। इसको तथा इसके पुत्र सूरसिंह को, जिसका जन्म वि० सं० १८४१ कार्तिक सुदि ३ (ई० स० १७८४ ता० १७ अक्टोबर) को हुआ था, भीमसिंह ने वि० सं० १८५१ (ई० स० १७६४) में चूक कर मरवाया।

महाराजा विजयसिंह ने पूरे चालीस वर्षों तक जोधपुर पर राज्य किया, पर उसके इस दीर्घ शासनकाल में राज्य में कभी पूर्ण शान्ति का निवास न रहा। उसके राज्य का प्रारम्भिक समय अपने चचेरे भाई रामसिंह (राज्यच्युत) के साथ के बखेड़ों में बीता। सरदारों के झगड़े तो न्यूनाधिक अंत तक बने ही रहे। इसका कारण उसका सरदारों के प्रति अनुचित व्यवहार और छोटे लोगों की तरफ़ विशेष झुकाव था।

महाराजा का व्यक्तित्व

अपने शत्रु अथवा विरोधी का अंत करने में छल का प्रश्रय लेने में वह अपने पूर्वजों से कम न था। जयआपा सिंधिया के कठिन घेरे के अवसर पर जब उसको हराने में वह समर्थ न हुआ तो उसने उसे छल से मरवा दिया। यही नहीं जिन सरदारों पर राज्य का अस्तित्व क़ायम रहता है, उनमें से भी कई को उसने दग़ा से मरवाया। राजपूत जाति के इतिहास में शत्रु से दग़ा करने के उदाहरण बहुत कम देखने में आते हैं और इस दृष्टि से उसके ये कार्य प्रशंसनीय नहीं कहे जा सकते। इसका परिणाम भी जोधपुर राज्य के लिए बुरा हुआ, क्योंकि इससे मरहटों का रोष बढ़ गया और सरदार भी विरोधाचरण करने लगे। इससे उनके मारवाड़ पर कई आक्रमण हुए, जिनसे राज्य के धन-जन की प्रत्येक बार बड़ी क्षति हुई। इससे राज्य की आर्थिक स्थिति भी गिरी और प्रजा भी दुःखी रही। मरहटों के इस बढ़े हुए प्रभुत्व का वह अन्त करना चाहता था। इसके लिए उसने राजपूताना के विभिन्न राजाओं को एक करने का उद्योग भी किया, पर उसमें वह सफल न हो सका। पीछे से अंग्रेज़ों के पैर भारतवर्ष में जमने पर उसने उनसे भी इस संबंध में पत्रव्यवहार किया, पर उसका भी कोई परिणाम न निकला।

वह सदैव अपने कुछ विशेष प्रियपात्रों के कहने का अनुसरण किया करता था और अपनी बुद्धि का बिलकुल उपयोग नहीं करता था। सरदारों और उसके बीच निरंतर विरोध रहने का एक प्रमुख कारण यह भी था कि अपने ज्येष्ठ पुत्र फ़तहसिंह की मृत्यु के बाद उसने अपनी पासवान

गुलाबराय की मर्ज़ी के अनुसार कभी एक कभी दूसरे (शेरसिंह और ज़ालिमसिंह) पुत्र को अपना उत्तराधिकारी नियत किया। यही नहीं, अपनी मृत्यु के कुछ समय पूर्व उसने अपने छोटे पुत्रों में से सावंतसिंह के पुत्र सूरसिंह को गद्दी दिलाने के लिए अपने कर्मचारियों से अनुरोध किया था। इससे स्पष्ट है कि वह दृढ़चित्त न था। इसके जीते जी ही उसके पौत्र भीमसिंह ने राज्य पर अधिकार कर लिया था, जिसे उसने क्षमा प्रदान करने पर भी पीछे से सेना भेजकर गिरफ़्तार करना चाहा। उसके इस अविवेकपूर्ण आचरण का परिणाम यह हुआ कि उसकी मृत्यु के बाद शेरसिंह, सावंतसिंह और सूरसिंह निरपराध मारे गये। गोड़वाड़ के संबंध में भी महाराणा से की हुई अपनी प्रतिज्ञा का उसने पालन नहीं किया। यह इलाक़ा उसे कुछ शर्तों के साथ रत्नसिंह को कुंभलगढ़ से निकालने के एवज़ में मिला था, पर रत्नसिंह को निकालना तो दूर वह सारा का सारा इलाक़ा स्वयं हज़म कर गया।

उसकी पासवान गुलाबराय का उसके ऊपर विशेष प्रभुत्व था। वह उसके कहने में इतना हो गया था कि एक प्रकार से सारा राज्यकार्य उसके इशारे से ही होता था। वह जो कहती वही होता था। कविराजा श्यामलदास के शब्दों में—"इन(महाराजा)को जहांगीर और (पासवान को) नूरजहां का नमूना कहना चाहिये।" पासवान का बढ़ता हुआ प्रभुत्व और दुर्व्यवहार सरदारों को बड़ा असह्य था, जिससे उन्होंने साज़िश कर अन्त में उसे छल से मरवा दिया।

उसने स्वयं कभी किसी युद्ध में वीरता का परिचय नहीं दिया और ऐसे अवसरों पर सदा पीठ ही दिखाई। वस्तुतः उसके वीर, स्वामीभक्त और कर्मनिष्ठ सरदारों और कर्मचारियों के बल पर ही उसका राज्य क़ायम रहा था।

इन सब बुराइयों के होते हुए भी विजयसिंह में कई गुण थे। वह अच्छी सेवा करनेवाले व्यक्तियों का उचित आदर-सत्कार करता और उनको जागीरें आदि देकर सम्मानित करता था। वह धार्मिक वृत्ति का

नरेश था और मदिरा आदि दुर्व्यसनों से मुक्त था। उसने अपने राज्य में मांस और मदिरा की बिक्री बन्द करवा दी थी। उसके समय में राज्य का विस्तार ही हुआ, जिसका कारण उसकी कूट नीति-युक्त चालें ही थीं।

उसके समय की रचनाओं में एक पुस्तक का पता चलता है। बारहट बिशनसिंह नामक कवि ने महाराजा विजयसिंह के नाम पर "विजयविलास[1]" नामक काव्य-ग्रंथ की रचना की थी। उसके समय में कई तालाब और अन्य स्थान आदि बनने का भी उल्लेख मिलता है।

महाराजा भीमसिंह

महाराजा भीमसिंह का जन्म श्रावणादि वि० सं० १८२२ (चैत्रादि १८२३) आषाढ सुदि १२ (ई० स० १७६६ ता० १९ जुलाई) को हुआ था।

जन्म तथा गद्दीनशीनी

महाराजा विजयसिंह की मृत्यु के समय वह जैसलमेर में था, जहां वह विवाह करने के निमित्त गया था। विजयसिंह के देहांत की खबर मिलते ही वह तत्काल वहां से प्रस्थान कर पोकरण पहुंचा, जहां से सवाईसिंह को साथ ले श्रावणादि वि० सं० १८४९ (चैत्रादि १८५०) आषाढ सुदि ९ (ई० स० १७९३ ता० १७ जुलाई) को रात्रि के समय वह लखणापोल (जोधपुर) पहुंचा। उस समय धायभाई शंभूदान, दीवान भंडारी भानीदास, बख़्शी सिंघवी अखैराज, ओझा रामदत्त आदि ने उसके पास उपस्थित हो उससे महाराजा विजयसिंह के कुंवरों—शेरसिंह, सावंतसिंह आदि—तथा महाराजा अजीतसिंह के पुत्र प्रतापसिंह और छोटे-मोटे कार्यकर्ताओं को हानि न पहुंचाने का वचन

(१) इस ग्रन्थ के प्रारम्भ में राव जोधा से लगाकर महाराजा अजीतसिंह तक वंशावली और फिर बख़्तसिंह और विजयसिंह का हाल है। बख़्तसिंह का हाल कुछ अधिक विस्तार से है। विजयसिंह के वर्णन में केवल उसकी गद्दीनशीनी और आपाजी सिंधिया के साथ की उसकी लड़ाई का हाल है। उक्त ग्रंथ की जो प्रतिलिपि हमारे देखने में आई उसमें पिछला भाग नहीं है, जिससे उसके निर्माणकाल का परिचय देना कठिन है।

मांगा। भीमसिंह ने उसी समय वचन दे दिया और पोकरण के ठाकुर सवाईसिंह ने भी उसकी पुष्टि कर दी। तब उपर्युक्त व्यक्तियों ने गढ़ के द्वार खोल उसे भीतर लिया और सलामी की तोपें दागी गईं, जिनकी आवाज़ सुनकर मृत महाराजा के पुत्र ज़ालिमसिंह तथा पौत्र मानसिंह, जो जोधपुर जाकर उस समय वहां हीरो खावत के तालाब पर लोढ़ा साहामल, आसोप के ठाकुर कूंपावत रत्नसिंह, जसूरी के ठाकुर मेड़तिया पहाड़सिंह आदि के साथ ठहरे हुए थे, राज्य मिलने की आशा न देख प्रातःकाल के समय वहां से रवाना हो गये और मुल्क में लूटमार करने लगे[1]। आषाढ सुदि १२ (ता० २० जुलाई) को भीमसिंह ने सिंहासनासीन होने के पश्चात् सिंघवी बनराज को मेड़ता भेजा। उसने वहां पहुंचकर समुचित प्रबंध किया और लोढ़ा साहामल के चढ़ आने पर उसे हराया[2]।

(१) टॉड-कृत "राजस्थान में भी इसका उल्लेख है। उससे यह भी पाया जाता है कि ज़ालिमसिंह को भीमसिंह की सेना ने पीछा कर हराया, जिसपर वह उदयपुर चला गया, जहां राणा ने उसके नाम जागीर निकाल दी। वहां पर ही उसका जीवन व्यतीत हुआ (जि० २, पृ० १०७७)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ११६-२०। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८२८।

महाराजा विजयसिंह के जीवनकाल में तथा उसकी मृत्यु के पीछे भी राज्याधिकार प्राप्त करने के लिए भीमसिंह और ज़ालिमसिंह ने बखेड़े किये थे। इस संबंध में अधिक प्रकाश डालने के लिए नीचे विजयसिंह का वंशवृक्ष दिया जाता है—
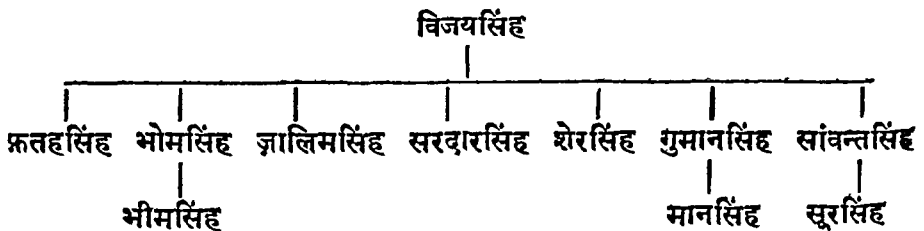
उपर्युक्त वंशवृक्ष से प्रकट है कि महाराजा विजयसिंह का ज्येष्ठ कुंवर फ़तहसिंह था, जिसकी वि० सं० १८३४ में निस्संतान मृत्यु हो गई। फ़तहसिंह से छोटा भोमसिंह था।

लोढ़ा साहामल का वलूंदा के ठाकुर चांदावत फ़तहसिंह श्यामसिंहोत से, जो जोधपुर में रहता था, वैर था। वि० सं० १८५० भाद्रपद सुदि ४ (ई० स० १७९३ ता० ९ सितंबर) को साहामल ने वलूंदा पर चढ़ाई कर वहां बड़ा नुक़सान किया। अनन्तर वह जैतारण होता हुआ बीलाड़े चला गया। वहां वह अपने भाई मेहकरण के शामिल रहने लगा। मानसिंह पीछा जालोर और ज़ालिमसिंह गांव सिरियारी (मेरवाड़ा) जा रहा। महाराजा भीमसिंह ने जोधपुर से सर्वप्रथम बख़्शी सिंघवी अखैराज को लोढ़ा साहामल एवं मेहकरण के विरुद्ध भेजा। उसके पहुंचने पर साहामल तो किसी प्रकार निकल गया, परन्तु मेहकरण ने केसरिया धारणकर युद्ध किया और लड़ता हुआ कार्तिक वदि १ (ता० २० अक्टोबर) को मारा गया। इस लड़ाई में चंडावल के ठाकुर विशनसिंह ने अच्छी वीरता बतलाई। इस प्रकार बीलाड़े पर राजकीय अधिकार स्थापित हुआ। साहामल और आसोप का ठाकुर रत्नसिंह आदि सोजत, गोड़वाड़ आदि परगनों में होते हुए मेवाड़ में गये। उन दिनों साहामल का पुत्र कल्याणमल इस्माइलवेग की फ़ौज के साथ डीडवाणे में था। मारोठ के हाकिम सिंघवी हिन्दूमल ने गोड़ावाटी एवं चौरासी के सरदारों-सहित जाकर उससे झगड़ा किया, जिसपर वह भाग गया और उसकी फ़ौज को

साहामल का दमन करना

उसकी भी पहले ही मृत्यु हो गई थी, जिससे उसका पुत्र भीमसिंह राजपूताने में प्रचलित प्रथा के अनुसार वास्तविक हक़दार था। किंतु उदयपुर की राजकुमारी से विवाह होने के समय विजयसिंह ने यह इक़रार किया था कि उससे जो पुत्र उत्पन्न होगा, वही हक़दार माना जायगा। इस कारण से ज़ालिमसिंह भी अपने को हक़दार समझता था। उसको विजयसिंह ने भी अपना उत्तराधिकारी मान लिया था। पीछे से अपनी पासवान गुलाबराय के कहने से उसने शेरसिंह को युवराज बनाया। फिर अपनी मृत्यु से कुछ पूर्व उसने अपने सबसे छोटे पुत्र सांमतसिंह के पुत्र सूरसिंह को राज्याधिकारी बनाने की इच्छा अपने कर्मचारियों के सामने प्रकट की। इन सब बातों का परिणाम यह हुआ कि उसके पिछले समय में राज्य के लिए कलह का सूत्रपात हो गया।

राजकीय सेना ने लूट लिया[1]।

अनन्तर सेना के साथ जाकर सिंघवी अखैराज ने देसूरी पर क़ब्ज़ा किया। इस लड़ाई में अखैराज के भाई इन्द्रराज के गोली लगी। फिर उस-(अखैराज)ने जालोर, गोड़वाड़ आदि परगनों में समुचित प्रबन्ध किया। इससे आमदनी में पर्याप्त वृद्धि हुई। लगभग उसी समय महाराजा ने पोकरण के ठाकुर के साथ अपने अन्य कृपापात्र व्यक्तियों को अतिरिक्त जागीरें आदि दीं[2]।

सिंघवी अखैराज का उपद्रव के स्थानों का प्रबंध करना

भीमसिंह को अपने भाइयों की तरफ़ से सदैव खटका बना रहता था, अतएव उसने अवसर प्राप्त होते ही शेरसिंह एवं सावंतसिंह तथा उसके पुत्र सूरसिंह को मरवा डाला और इस प्रकार निरपराध व्यक्तियों की हिंसा का पाप उठाकर उसने अपना मार्ग निष्कंटक किया[3]।

महाराजा का अपने भाइयों को मरवाना

राज्य के बखेड़ों में प्रारम्भ से ही उलझे रहने पर भी महाराजा का अपने सरदारों की तरफ़ पूरा-पूरा ध्यान था। उसने पुराने सरदारों के पट्टे पूर्ववत् बहाल रखने के साथ ही उनमें से कई को नये गांव प्रदान किये थे[4]। पोकरण का सवाईसिंह फलोधी का इलाक़ा अपने नाम लिखाना चाहता था, परन्तु सिंघवी जोधराज ने समझा-बुझाकर महाराजा को ऐसा

लकवा दादा की मारवाड़ पर चढ़ाई

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १२०।

(२) वही; जि० ३, पृ० १२०।

(३) वीरविनोद; भाग २, पृ० ८४८। जोधपुर राज्य की ख्यात में भी शेरसिंह, सांवन्तसिंह एवं सूरसिंह को मरवाने का उल्लेख है (जि० ३, पृ० १०८-९)। टॉड के अनुसार भीमसिंह ने सरदारसिंह को भी मरवा दिया। शेरसिंह की उसने आंखें निकलवाई थीं। पीछे से उसने आत्महत्या कर ली (जि० १, पृ० १०७७-८)।

(४) ख्यात के अनुसार महाराजा ने कुचामण के ठाकुर मेड़तिया शिवनाथसिंह को परबतसर परगने का गांव गंगावा, बलूंदा के ठाकुर फ़तहसिंह चांदावत को गांव बग्गाड एवं केकींदड़ा तथा चंडावल के ठाकुर कूंपावत बिशनसिंह को गांव खटावड़ा और सवालिया दिये।

करने से रोक दिया, क्योंकि इससे दूसरे सरदारों की नाराज़गी के बढ़ जाने की आशंका थी। इससे सवाईसिंह बड़ा अप्रसन्न हुआ। कुछ समय बाद जब वह गंगास्नान के लिए रवाना हुआ तो मार्ग में दिल्ली जाकर दक्षिणियों से मिला। इसके बाद वि० सं० १८५१ (ई० स० १७९४) में लकवा दादा ने मारवाड़ पर चढ़ाई की। उस समय महाराजा ने सवाईसिंह की ही मारफ़त बात कर कुछ रुपया देना ठहराकर उसे वहां से वापस लौटाया। अनन्तर महाराजा ने सवाईसिंह को अतिरिक्त पट्टा दिया[1]।

भंडारी शोभाचंद का घाणेराव पर भेजा जाना

वि० सं० १८५२ (ई० स० १७९५) में महाराजा ने राज्य के कार्यकर्त्ताओं में हेर-फेर किये। उसी वर्ष सेना-सहित भंडारी शोभाचंद घाणेराव पर गया, परन्तु वहां उसका अधिकार न हो सका[2]।

जालोर पर सेना भेजना

वि० सं० १८५३ (ई० स० १७९६) में भंडारी भानीदास के स्थान में सिंघवी जोधराज का पुत्र दीवान हुआ। कार्य सारा जोधराज करता था, परन्तु वह किसी सरदार की भी ख़ातिरदारी नहीं करता था, जिससे वे सब उससे अप्रसन्न रहते थे। उन दिनों मानसिंह जालोर में रहकर अपने को स्वतन्त्र राजा मानता था[3]। महाराजा भीमसिंह की बहुत समय से यह अभिलाषा थी कि किसी प्रकार वहां अपना कब्ज़ा हो जाय। वि० सं० १८५४ (ई० स० १७९७) में महाराजा ने फ़ौज देकर बख़्शी सिंघवी अखैराज को जालोर पर भेजा। उसने वहां जाकर घेरा डाला, परन्तु जालोर परगने में राजकीय अधिकार स्थापित हो

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १२०-२१।

(२) वही; जि० ३, पृ० १२१।

(३) श्रावणादि वि० सं० १८५४ (चैत्रादि १८५५) वैशाख वदि १ (ई० स० १७९८ ता० १ अप्रेल) रविवार के जालोर से मानसिंह के भेजे हुए उदयपुर के महाराणा भीमसिंह के नाम के पत्र से स्पष्ट है कि मानसिंह अपने को एक राज्य का स्वामी समझता था और अपनी उपाधि "राजराजेश्वर महाराजाधिराज महाराज श्री" लिखता था (वीरविनोद; भाग २, पृ० १२७४)।

जाने पर भी जब कई मास तक घेरा रहने पर गढ़ और नगर पर क़ब्ज़ा करने में वह समर्थ न हुआ तो महाराजा की आज्ञा से वह क़ैद कर लिया गया। कई मास तक क़ैद में रहने के बाद ६०००० रुपया देने की शर्त पर वह मुक्त किया जाकर पुनः बख़्शी के पद पर नियुक्त किया गया[1]। इस चढ़ाई के समय मानसिंह ने उदयपुर के महाराणा भीमसिंह के नाम इस आशय का पत्र भेजा कि यहां कार्य उत्पन्न हुआ है, इसलिये आंबाजी की सेना सहित कूचकर अविलंब घाटा उतरकर आ जावें; इधर से मैं आपके शामिल होकर गोड़वाड़ आपको दिला दूंगा[2]। महाराजा विजयसिंह की उदयपुर की राणी से उत्पन्न उसके पुत्र ज़ालिमसिंह को महराणा जोधपुर की गद्दी दिलाना चाहता था, अतएव वह स्वयं तो न गया; परन्तु यह अवसर ज़ालिमसिंह के लिए उपयुक्त समझ उसने अपनी सेना के साथ उसको रवाना किया। महाराजा भीमसिंह को इसकी सूचना मिलने पर उसने ज़ालिमसिंह को रोकने के लिए सिंघवी बनराज को भेजा, जिसने उस-(ज़ालिमसिंह) के पहुंचने के पूर्व ही सिरियारी गांव में डेरा डाला और उधर का मार्ग बन्द कर दिया। ज़ालिमसिंह आंबाजी की सेना के साथ काछबली (मेरवाड़ा) गांव में ठहरा रहा। उस समय उसके भाग्य ने साथ न दिया और कुछ समय बाद ही श्रावणादि वि० सं० १८५४ (चैत्रादि १८५५) आषाढ वदि ५ (ई० स० १७९८ ता० ३ जून) को उसकी वहीं मृत्यु हो गई, जिससे भीमसिंह को ज़ालिमसिंह की तरफ़ का खुटका जाता रहा[3]।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १२१-२।

(२) वीरविनोद; भाग २, पृ० १५७४।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १०८। "जोधपुर येथील राज कारणें" से पाया जाता है कि महाराणा भीमसिंह ने सिंधिया को ज़ालिमसिंह का मददगार बनाकर उसके मारफ़त नागोर और मारवाड़ का आधा राज्य उस(ज़ालिमसिंह)को दिला यह झगड़ा मिटाने की बातचीत चलाई थी (लेखांक २६); परन्तु भीमसिंह के राज्य का वास्तविक हक़दार होने से मारवाड़ के अधिकांश सरदार उसके पक्ष में थे और ज़ालिमसिंह का पक्ष कमज़ोर था, जिससे झगड़ा तय न हुआ और विरोध चार वर्ष तक चलता रहा।

यह ऊपर लिखा जा चुका है कि जालोर के घेरे में सफलता न मिलने के कारण, अखैराज क़ैद कर लिया गया था, परन्तु उक्त परगने में सिंघवी बनराज तथा चैनकरण फ़ौज के साथ थे। मानसिंह की तरफ़ से सिंघवी शंभूमल पालनपुर आकर अरबों (मुसलमानों) की फ़ौज ले आया। जालोर परगने के गांव मांडोली में उसका जोधपुर की फ़ौज से सामना हुआ, जिसमें पहले तो शंभूमल और अरबों की हार हुई, परन्तु पीछे से वर्षा आ जाने के कारण जोधपुर की सेना बिखर गई और सिंघवी बनराज तथा चंडावल का विशनसिंह घायल हुए[1]।

मानसिंह की फ़ौज से जोधपुर की सेना की लड़ाई

महाराजा भीमसिंह की सगाई जयपुर के महाराजा प्रतापसिंह की बहिन से और उस (प्रतापसिंह) की सगाई महाराजा विजयसिंह की पौत्री (कुंवर फ़तहसिंह की पुत्री) अभयकुंवरबाई से हुई थी। श्रावणादि वि० सं० १८५७ (चैत्रादि १८५८) के आषाढ मास में दोनों नरेश पुष्कर गये, जहां दोनों विवाह बड़े समारोह के साथ सम्पन्न हुए। इस अवसर पर महाराजा भीमसिंह की बारात के साथ सवाईसिंह (पोकरण), माधोसिंह (आउवा), विशनसिंह (चंडावल), करणीदान (काणाणा), शंभूसिंह (नींबाज) आदि अनेक चांपावत, कूंपावत, ऊदावत, करणोत, मेड़तिया और जोधा सरदार थे। विवाह के पश्चात् जैतारण, बीलाड़ा, सोजत तथा पाली होता हुआ महाराजा जोधपुर लौटा[2]।

महाराजा का पुष्कर जाकर जयपुर के महाराजा की बहिन से विवाह करना

महाराजा के विवाह के लिए पुष्कर चले जाने पर, मानसिंह ने उसकी अनुपस्थिति में अपने आदमियों सहित जाकर पाली को लूटा और वहां के कुछ लोगों को पकड़ लिया। यह समाचार जालोर परगने में महाराजा की तरफ़ के सिंघवी चैनकरण एवं चांदावत बहादुरसिंह को मिलने पर वे सेना सहित साक-

मानसिंह का पाली लूटना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १२२।

(२) वही; जि० ३, पृ० १२३-७।

दड़ा गांव में पहुंचे। पहले उन्होंने शांति के साथ मानसिंह को समझाने का प्रयत्न किया, परन्तु जब उसने कोई ध्यान न दिया तो लड़ाई हुई और मानसिंह को वाध्य होकर वह स्थान छोड़ना पड़ा[1]। इस लड़ाई में महाराजा की तरफ़ का रामा का ठाकुर अमरसिंह जोधा और मानसिंह के पक्ष का खेजडला के ठाकुर जसवंतसिंह का भाई मारा गया। अन्य कितने ही

(१) इस लड़ाई के विषय में ऐसी प्रसिद्धि है कि मानसिंह के पक्ष के सरदारों में से हरसोलाव ठिकाने के छोटे भाइयों में से चांपावत कर्णसिंह (सालावास) ने मानसिंह के चारों तरफ़ से घिर जाने पर उससे कहा कि आप यहां से चले जांय अन्यथा मारे जांयगे। इसपर मानसिंह वहां से निकलकर जालोर चला गया और उसके स्थान में कर्णसिंह ने जोधपुर की सेना का वीरतापूर्वक मुक़ाबिला किया, जिससे मानसिंह की प्राण-रक्षा हुई। महाराजा भीमसिंह का देहांत होने पर जब मानसिंह गद्दी पर बैठा तब भीमसिंह की मृत्यु के बाद उत्पन्न धौंकलसिंह का अधिकांश सरदारों ने पक्ष लिया। उस समय कर्णसिंह ने भी धौंकलसिंह का पक्ष ग्रहण किया। इससे नाराज़ होकर मानसिंह ने कर्णसिंह की सालावास की जागीर ज़ब्त कर ली। कर्णसिंह की तरफ़ से अपनी पूर्व सेवा का स्मरण दिलाये जाने पर महाराजा मानसिंह ने उसके पास यह दोहा लिख भेजा—

पिंडरी गई प्रतीत, गाढ़ रिजक दोनों गया।
चांपा हवे नचीत, कनक उडावो करणसी ॥

भावार्थ—तुम्हारे शरीर का विश्वास जाता रहा और साथ में तुम्हारी दृढ़ता और रिज़क (निर्वाह का साधन) दोनों चले गये। हे चांपावत कर्णसिंह! अब निश्चिंत होकर कनक (काग अथवा पतंग) उड़ाओ।

इसके उत्तर में कर्णसिंह ने महाराजा की सेवामें नीचे लिखा दोहा कहलाया—

पिंडरी हुती प्रतीत, साकदड़े देखी सही।
इण घर आही रीत, दुरगो सफरां दागियो ॥

भावार्थ—मेरे शरीर का विश्वास साकदड़े में भली प्रकार देखा गया है, परन्तु इस घर में ऐसी ही रीति है कि दुर्गा का भी दाह संस्कार क्षिप्रा के तट पर हुआ अर्थात् अपनी मृत्यु के समय वह अपनी जन्मभूमि तक न देख सका।

टॉड-कृत "राजस्थान" से पाया जाता है कि इस लड़ाई में मानसिंह अवश्य पकड़ा जाता; परन्तु आहोर का ठाकुर उसे बचाकर निकाल ले गया (जि० २, पृ० १०७९)।

व्यक्ति भी काम आये। इस विजय का समाचार पुष्कर में महाराजा भीम- सिंह के पास पहुंचने पर उसने चैनकरण आदि को गांव आदि देकर सम्मानित किया[1]।

अनन्तर महाराजा की आज्ञानुसार सिंघवी बनराज ने पुनः ससैन्य आकर जालोर पर घेरा डाला। उन्हीं दिनों भंडारी धीरजमल ने फ़ौजकशी कर गांव भड़या, गेंडा, सनावड़ा आदि से धन वसूल किया। चौरासी के ठाकुर भी उपद्रवी हो रहे थे। धीरजमल ने परबतसर परगने में आकर बडू के ठाकुर अजीतसिंह से पचीस हज़ार रुपये लिये और गांव मोटड़े में बनवाई हुई उसकी गढ़ी को गिरा दिया। तब पोकरण के ठाकुर सवाईसिंह का पुत्र सालिमसिंह, आउवा का ठाकुर माधोसिंह, रोहट का ठाकुर कल्याणसिंह, आसोप का ठाकुर केसरीसिंह, चंडावल का ठाकुर बिशनसिंह, रास का ठाकुर जवानसिंह, नींबाज का ठाकुर शंभूसिंह, रीयां का ठाकुर विड़दसिंह एवं अन्य कितने ही छोटे-बड़े सरदार गांव कालू में एकत्र होकर उपद्रव करने लगे। धीरजमल ने ससैन्य जाकर उन्हें भी परास्त किया, जिससे उपद्रवी सरदार अपने-अपने ठिकानों को लौट गये। अनन्तर धीरजमल ने गांव धनेरिया एवं रास की गढ़ियां गिराईं और लांबिया पर क़ब्ज़ा किया। फिर नींबाज जाकर वह छः मास तक लड़ा। उसके घेरे के समय ही वहां का ठाकुर शंभुसिंह मर गया। तब उसके पुत्र सुलतानसिंह के अधीनता स्वीकार कर लेने पर नींबाज, बराटिया एवं सोगावास का २५००० का पट्टा उसके नाम कर दिया गया। अनंतर धीरजमल परबतसर की तरफ़ गया, जिसके बाद उसने दक्षिणियों को रुपया दे सांभर से उनका क़ब्ज़ा हटाया और अजमेर के संबंध में भी उनसे बात ठहराई[2]।

राजकीय सेना का उपद्रवी सरदारों का दमन करना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १२७-८।

(२) वही; जि० ३; पृ० १२८-९।

जालोर पर सिंघवी वनराज का घेरा था। उसके पास कुछ छोटे-मोटे सरदार तथा मुसलमानों की सेना थी। पीछे से भंडारी धीरजमल भी अपनी सेना के साथ उसके शरीक हो गया और मोर्चा अधिक दृढ़ किया गया। इसपर निकाले हुए सरदारों ने नींवाज में रहते समय सिंघवी जोधराज को, जो दीवान का कार्य करता था, मारने की मंत्रणा की। आउवा के ठाकुर के यहां कार्य करनेवाले गांव सानेई के भाटी साहबसिंह ने यह कार्य करने का ज़िम्मा अपने ऊपर लिया। तदनुसार जोधपुर पहुंच खेजड़ला के कामदार मेहता मलूकचंद को साथ ले वह जोधराज की हवेली पर गया, जहां जाकर उसने भेद गुप्त रखने की दृष्टि से उस (जोधराज) से सरदारों की खातिरी का रुक्का लिखवाया। फिर वि० सं० १८५६ भाद्रपद वदि २ (ई० स० १८०२ ता० १५ अगस्त) को रात्रि के समय सीढ़ी के सहारे उसके शयनागर में प्रवेशकर भाटी साहबसिंह ने जोधराज को सोते समय मार डाला। इसका पता लगने पर मलूकचंद मार डाला गया और आउवा, आसोप, चंडावल, रोहट, रास तथा नींवाज के पट्टे ज़ब्त कर लिये गये। साथ ही सिंघवी इन्द्रराज ने ससैन्य विरोधी सरदारों पर चढ़ाई की और उनके शामिल रहनेवाले लोगों से धन वसूल किया। उसके चढ़ आने से सरदार मेवाड़ में होकर कोटा चले गये[1]।

उपद्रवी सरदारों का चूक-कर जोधराज को छल से मरवाना

विरोधी सरदारों को राज्य से बाहर निकाल इन्द्रराज भी जालोर पहुंचा। अनन्तर वि० सं० १८६० श्रावण सुदि ७ (ई० स० १८०३ ता० २५ जुलाई) को इन्द्रराज, वनराज और गुलराज तीनों भाइयों तथा भंडारी गंगाराम ने एक साथ चार तरफ़ से जालोर पर आक्रमण कर दिया। एक बड़ी लड़ाई के बाद नगर पर उनका अधिकार हो गया और वहां के लोग गढ़ में घुस गये। इस लड़ाई में सिंघवी बनराज गोली लगने से मर गया। इसकी सूचना मिलने पर महाराजा ने इन्द्रराज के पुत्र फ़तहराज को आभूषण

महाराजा की सेना का जालोर पर क़ब्जा करना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १२६।

आदि प्रदान किये[1]।

जालोर पर घेरा पड़ा हुआ था, उन्हीं दिनों महाराजा को अदीठ की बीमारी हुई और उसीसे कार्तिक सुदि ४ (ता० १९ अक्टोबर) को उसका देहांत हो गया[2]। महाराजा के कोई सन्तान न होने से उस समय गढ़ में उपस्थित कार्यकर्ताओं ने तत्काल राजकीय कोठारों में मोहर लगा दी। महाराजा की ग्यारह राणियों के नाम मिलते हैं, जिनमें से आठ उसके साथ सती हुई[3]।

महाराजा की मृत्यु

महाराजा भीमसिंह ने केवल दस वर्ष तक ही शासन किया, पर इतने थोड़े समय में ही उसने जिस क्रूर और उग्र स्वभाव का परिचय दिया, वह एक शासक के लिए सर्वथा अनुपयुक्त था। गद्दी बैठते ही उसने अपने उन भाइयों आदि के खून से अपने हाथ रंगे, जिनकी तरफ़ से उसे बाधा पहुंचने का खतरा था। उसने यह कार्य करके एक प्रकार से शाहजहां, औरंगज़ेब आदि मुसलमान बादशाहों का ही अनुसरण किया। उसका बस चलता तो वह मानसिंह को भी जीवित न छोड़ता, पर इसी बीच उसका देहांत हो गया, जिससे उसकी इच्छा मन में ही रह गई। उसका राज्य के सरदारों से भी अच्छा व्यवहार नहीं था, जिससे अधिकांश सरदार उसके विरोधी ही रहे और उनसे उसका अंत तक झगड़ा बना रहा। उसकी सारी शक्तियां उधर लगी रहने से वह कोई लोक-हित का कार्य न कर सका। फिर भी ईमानदारी से सेवा करनेवाले लोगों का वह पूरा आदर करता था। ओझा रामदत्त के नाम के वि० सं० १८५० श्रावण सुदि ४ (ई० स० १७९३ ता० ११ अगस्त के परवाने में महाराजा ने उसकी सेवा की बड़ी प्रशंसा की थी।

महाराजा का व्यक्तित्व

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १३०।

(२) टॉड लिखता है कि जालोर पर जोधपुर का इतनी लम्बी अवधि तक घेरा पड़ा रहने से क्रमशः गढ़ के भीतर का सामान ख़त्म होने लगा और स्वयं मानसिंह भी घबरा गया। संभव था कि इस बार उसका अंत हो जाता, परन्तु इसी बीच महाराजा भीमसिंह का देहांत हो जाने से स्थिति बदल गई (जि० २, पृ० १०७९-८०)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १३०-१।

जोधपुर में रहनेवाला मरहटों का वकील कृष्णाजी जगन्नाथ अपने स्वामी के नाम के अपने एक पत्र में भीमसिंह के बारे में लिखता है कि वह खुशामद-पसंद, शराबी एवं कामुक नरेश है। राज्य कार्य सवाईसिंह के सुपुर्दकर वह दिन-रात स्त्रियों में निमग्न रहता है और नगर की स्त्रियों तक को पकड़वा मंगाता है[1]।

महाराजा भीमसिंह के वर्णन का बीस सर्गों का "भीमप्रबंध" नाम का एक संस्कृत काव्य मिला है, जिसको महाराजा भीमसिंह की आज्ञा से भट्ट हरिवंश ने बनाया था[2]। इस काव्य का रचयिता हरिवंश, भट्ट लाल का पुत्र और महाराजा अजीतसिंह के पौराणिक शिव भट्ट का पौत्र एवं श्रीमाली ब्राह्मण था। इस काव्य में क्रमशः भीमसिंह और उसके पूर्वजों का इतिहास विशेष रूप से नहीं, किन्तु भीमसिंह के भिन्न-भिन्न स्थानों की वसंत क्रीड़ा, वंश वर्णन, भ्रातृवर्ग संबंध, विवाह वर्णन, वसंत वर्णन, अमात्यादि राजप्रकृति वर्णन, राई का बाग़ में वसंत क्रीड़ा वर्णन, बालसमंद के बाग़ में वसंत क्रीड़ा वर्णन, सूरसागर के बाग़ में वसंत क्रीड़ा वर्णन, मंडोवर के बाग़ में वसन्त क्रीड़ा वर्णन, मंडोवर पंचकुंड आदि की यात्रा का वर्णन, मोतीमहल में वसन्त क्रीड़ा वर्णन, वसंत क्रीड़ा वर्णन में जातकोत्सव वर्णन, विज्ञप्ति प्रस्ताव वर्णन, मृगया विहार, सकल सामन्त वर्णन, मंत्रिवर्ग वर्णन, कोष्ठरक्षक वर्णन, कार्याधिकारियों का वर्णन, सब महलों का वर्णन और क़िले का वर्णन है[3]। इस काव्य से पाया जाता है कि वह संस्कृत-प्रेमी और

(१) जोधपुर येथील राजकारणें; लेखांक २६, पृ० ८४।

(२) पौराणिकोऽजीतनराधिपस्य भट्टः शिवस्तस्य सुतो हि लालः ॥
तदात्मजोऽहं हरिवंशभट्टो नृपाज्ञया काव्यमिदं चकार ॥

भीमप्रबन्ध; सर्ग २०, श्लोक ११०।

इति श्रीभीमप्रबंधे महाकाव्ये श्रीमालिब्राह्मणकुलजातभट्टहरिवंशकृतौ दुर्गादिवर्णनोनामविंशतितमः सर्गः समाप्तश्चायं ग्रंथः।

(३) इति श्री········कृतौ वंशवर्णने राज्यलाभः, भ्रातृवर्गसंबंधिवर्गवर्णनं, विवाहवर्णनं, वसंतवर्णनं, अमात्यादिराजप्रकृतिवर्णनं,

विलास-प्रिय राजा था। यह भी सुना जाता है कि उसके समय में कवि रामकर्ण ने "अलंकारसमुच्चय" नामक पुस्तक की रचना की थी।

उसकी मुहर में निम्नलिखित लेख नागरी अक्षरों में खुदा हुआ मिलता है—

"श्रीकृष्णचरणशरणराजराजेश्वरमहाराजाधिराजमहाराजश्रीभीवसिंघजीकस्य मुद्रिका"

इससे स्पष्ट है कि वह कृष्ण का भक्त था।

मानसिंह

महाराजा का जन्म और गद्दीनशीनी

महाराजा मानसिंह का जन्म वि० सं० १८३८ माघ सुदि द्वितीय ११ (ई० स० १७८२ ता० १३ फ़रवरी) गुरुवार को हुआ था। ऊपर भीमसिंह के वृत्तांत में जालोर के घेरे का वर्णन आ गया है। जोधपुर राज्य की सेना ने जालोर के गढ़ का घेरा इतना कठिन कर दिया था कि रसद आदि की तंगी हो जाने के कारण मानसिंह ने गढ़ खाली कर देने का इरादा किया और इस सम्बन्ध में उसने सिंघवी इन्द्रराज से बात चलाई। यह बात वि० सं० १८६० आश्विन सुदि १ (ई० स० १८०३ ता० १६ सितंबर) को हुई। इन्द्रराज भी इसके लिए तैयार हो गया एवं दीवाली के दिन गढ़ खाली कर देने की बात तय हुई। गढ़ के भीतर जलन्धरनाथ का एक

राजिकोद्याने वसंतक्रीडावर्णनं, बालसिंघूद्याने वसन्तक्रीडावर्णनं, सूरसागरोद्याने वसन्तक्रीडावर्णनं, मंडोवरोद्याने वसंतक्रीडावर्णनं, मंडोवरपंचकुण्डवैजनाथमंडलेश्वरभोगशैलनागनदीवर्णनं, नागनदीयात्रावर्णनं, मुक्ताफलहर्म्ये लक्ष्मीगृहे वसन्तक्रीडावर्णनं, वसन्तक्रीडावर्णने जातकोत्सववर्णनं, गौरीयात्रावर्णनं, विज्ञप्तिप्रस्ताववर्णनं, मृगयाविहारः, सकलसामन्तवर्णनं, मंत्रिवर्गवर्णनं, कोष्टरक्षकादिवर्णनं, अधिकारादिवर्णनं, सकलहर्म्यवर्णनं, दुर्गादिवर्णनं······

(इसी प्रकार भिन्न-भिन्न सर्गों के अन्त में लिखा मिलता है)

होगा? तब महाराजा ने इस बात का रुक्का लिख दिया कि यदि उक्त महाराणी के पुत्र हुआ तो वही जोधपुर का शासक होगा तथा मैं जालोर चला जाऊंगा और यदि पुत्री हुई तो उसका विवाह जयपुर अथवा उदयपुर कर दिया जायगा[1]। वह रुक्का चोपासणी के गुसाईं विट्ठलराय को सौंप दिया गया[1]। पीछे चोपासणी से राणियों ने प्रस्थान किया और वे सवाईसिंह आदि सरदारों की राय के अनुसार जोधपुर पहुंचकर तलहटी के महलों में ही ठहर गईं; जहां महाराजा की तरफ़ से चौकी पहरे का पूरा-पूरा प्रबंध कर दिया गया[2]।

महाराजा का जोधपुर में गद्दी बैठना

इसके बाद माघ सुदि ५ (ई० स० १८०४ ता० १७ जनवरी) को मानसिंह जोधपुर की गद्दी पर बैठा। इस अवसर पर उसने पोकरण के ठाकुर सवाईसिंह को अपना प्रधान मंत्री नियतकर भंडारी गंगाराम को दीवान, सिंघवी मेघराज अखैराजोत को बख़्शी, सिंघवी इन्द्रराज को मुसाहिब तथा सिंघवी कुशलराज और उसके भाई सुखराज को क्रमशः जालोर एवं सोजत का हाकिम बनाया[3]।

महाराजा का सिंघवी जोरावरमल के पुत्रों को बुलाना

मानसिंह के जालोर में रहते समय सिंघवी जोरावरमल के पुत्र उसका साथ छोड़कर भीमसिंह के शामिल हो गये थे। जोधपुर का राज्य प्राप्त करने के बाद महाराजा ने उन्हें हाज़िर होने को कहलाया तो जीतमल और सूरजमल तो आ गये, परन्तु फ़तहमल एवं शंभूमल नहीं आये और क्रमशः सिरोही तथा आउवा में बने रहे[4]।

(१) टॉड लिखता है कि महाराजा ने पुत्र होने पर उसे नागोर और सिवाणा की जागीर एवं पुत्री होने पर उसका विवाह ढूंढाड़ (जयपुर) में कर देने का वचन दिया (राजस्थान; जि० २, पृ० १०८१)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ५। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६०। दयालदास की ख्यात में भी कुछ अन्तर के साथ इस घटना का ऐसा ही उल्लेख मिलता है (जि० २, पत्र ६७)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ६।

(४) वही; जि० ४, पृ० ६।

कुछ समय बाद यह संवाद प्रसिद्ध हुआ कि तलहटी के महलों में, जहां महाराजा भीमसिंह की राणियां रहती थीं, देरावरी राणी के गर्भ से पुत्र उत्पन्न हुआ है और वह भाटी छत्रसिंह के साथ ठाकुर सवाईसिंह आदि की सहायता से खेतड़ी पहुंचा दिया गया है[1]। उसका नाम धोकलसिंह रक्खा गया। इस बात की खबर महाराजा को होने पर वह सवाईसिंह से नाराज़ हो गया। पीछे से महाराजा की मर्ज़ी न होने पर भी सवाईसिंह अपने पांच-सात सौ आदमियों के साथ पोकरण चला गया[2]। भीमसिंह के पुत्र होने की कथा को महाराजा अपने विरोधियों का प्रपंच मानने लगा।

धोकलसिंह का जन्म

ई० स० १८०३ (वि० सं० १८६०) में लॉर्ड वेलेज़ली के समय अंग्रेज़ों की ईस्ट इंडिया कम्पनी ने, जिसका उत्तरी भारत में काफ़ी प्रभुत्व बढ़ गया था, महाराजा मानसिंह के साथ संधि की बातचीत की। दोनों पक्षों में परस्पर मैत्री रखने, जोधपुर राज्य के ख़िराज से मुक्त रहने, अवसर उपस्थित होने पर सहायता देने और अपनी सेवा में अंग्रेज़ों अथवा

अंग्रेज़ों के साथ सन्धि की बातचीत होना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात से तो यही पाया जाता है कि महाराजा पुत्रोत्पत्ति की बात को विरोधियों का प्रपन्च मानता था, परन्तु जोधपुर के कई प्रतिष्ठित व्यक्तियों के मुख से सुना गया कि महाराजा भीमसिंह की मृत्यु के बाद उसकी एक राणी से पुत्र अवश्य उत्पन्न हुआ था। उसके वास्तविक हक़दार होने के कारण ही पोकरण का ठाकुर सवाईसिंह उसके पक्ष में हो गया था। पुत्रोत्पत्ति की पुष्टि एक बात से और होती है। पोकरण के ठाकुर की अनुपस्थिति में ही जो पत्र जोधपुर के अधिकारियों ने सिंघवी इन्द्रराज के पास जालोर लिखा था उसमें उन्होंने स्पष्ट लिखा था कि मृत महाराजा की राणी के गर्भ है (जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० २)। ऐसी दशा में पीछे से पुत्र होना अचरज की बात नहीं है। राजपूताने की कई रियासतों—उदयपुर, जयपुर आदि—में ऐसी घटनायें होने के उदाहरण पाये जाते हैं।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १४। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६१।

दयालदास की ख्यात में भी लगभग ऐसा ही उल्लेख है (जि० २, पत्र ६७)।

फ़्रांसीसियों को नौकर रखने के पूर्व कम्पनी की राय लेने आदि के संबंध का एक अहदनामा तैयार हुआ, जिसपर वि० सं० १८६० पौष सुदि ६ (ई० स० १८०३ ता० २२ दिसंबर) को कम्पनी की तरफ़ से माननीय जेनरल जेराई लेक का हस्ताक्षर अकबराबाद सूबे के सरहिन्द नामक स्थान में हुआ। ई० स० १८०४ ता० १५ जनवरी (वि० सं० १८६० माघ सुदि ३) को गवर्नर जेनरल ने भी उसके विषय में अपनी स्वीकृति दे दी, पर महाराजा ने एक दूसरा ही संधिपत्र अपनी तरफ़ से पेश किया। साथ ही उसने अंग्रेज़ों के शत्रु जसवंतराव होल्कर से मेल कर लिया, जिससे उपर्युक्त अहदनामा पीछे से रद्द कर दिया गया[1]।

जसवंतराव होल्कर का मारवाड़ में जाना

उसी वर्ष चैत्र मास में जसवन्तराव होल्कर अंग्रेज़ों के मुक़ाबले में डीग की लड़ाई में हारकर मारवाड़ में गया और अजमेर के गांव हरमाड़े में ठहरा। महाराजा ने उसके मुक़ाबले के लिए मेड़तियों की सेना के साथ सिंघवी गुलराज, भंडारी धीरजमल और बलूंदे के ठाकुर शिवनाथसिंह को भेजा। युद्ध आरंभ होने के पूर्व ही लोढ़ा कल्याणमल ने वकील भेजकर होल्कर से बात ठहरा ली, जिससे महाराजा और उसके बीच भाईचारा स्थापित हो गया। अनन्तर जसवन्तराव वहां से प्रस्थान कर मालवा चला गया[2]।

महाराजा का पंचोली गोपालदास पर दंड लगाना

उन्हीं दिनों सिंघवी जोधराज का पुत्र विजयराज भागकर बगड़ी जा रहा। उसी समय के आसपास पंचोली गोपालदास को क़ैद कर उसपर पचास हज़ार रुपया दंड लगाया गया, जिसमें से केवल बाइस हज़ार ही वसूल हुए। अनन्तर वह सांभर का कार्यकर्ता नियुक्त हुआ[3]।

(१) एचिसन; ट्रीटीज़, एंगेज्मेंट्स एण्ड सनद्ज़; जि० ३, पृ० ११४ तथा १२६-७।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १४। वीरविनोद; भाग ३, पृ० ८६१।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १४-५।

जालोर के घेरे के समय आयस[1] देवनाथ ने जैसी भविष्यवाणी की थी, वैसी ही घटित होने के कारण महाराजा की उसपर आस्था इतनी बढ़ गई कि उसने सोड़ सरूप को उसे लाने के लिए भेजा। वह बड़े सम्मान के साथ उसे जोधपुर लाया। महाराजा ने एक कोस आगे जाकर उसकी अगवानी की और उसे ही अपना गुरू बनाया। आयस देवनाथ के साथ उसके अन्य चार भाई भी आये थे। गुलाबसागर के ऊपर मन्दिर बनाकर वहां की सेवा का कार्य सूरतनाथ को सौंपा गया। धीरे-धीरे राज्य-कार्य में देवनाथ की सलाह प्रधान मानी जाने लगी[2]।

महाराजा का आयस देवनाथ को बुलाकर अपना गुरू बनाना

महाराजा भीमसिंह ने सिंहासनारूढ़ होते ही शेरसिंह, सूरसिंह आदि को चूक कर मरवा दिया था, जिसका उल्लेख ऊपर आ गया है[3]। महाराजा मानसिंह ने जोधपुर का राज्य मिलने पर उनको मारने में जिन-जिन का हाथ था, उनको बड़ी बुरी तरह मरवाया। अहीर नगा माथे में कील ठोक कर मारा गया और एक दूसरा व्यक्ति हाथी के पैरों में बंधवाकर मारा गया। इसके कुछ समय बाद ही भंडारी शिवचंद शोभाचंदोत, धायभाई शंभूदान, रामकिशन, सिंघवी ज्ञानमल और अन्य कई व्यक्ति क़ैद किये गये[4]।

शेरसिंह आदि को मारनेवालों को मरवाना

उन्हीं दिनों मारोठ के ठाकुर महेशदान ने अपनी पुत्री की सगाई खेतड़ी के राजा अभयसिंह के पुत्र के साथ की। महाराजा ने जब उसे ऐसा करने से रोका तो वह उसकी बात पर ध्यान न दे अपने ठिकाने मारोठ जा रहा। पीछे जब मेहता साहबचंद फ़ौज लेकर गौड़ाटी में गया तो

कुछ सरदारों से दंड वसूल करना

(१) कंनफड़ा साधू।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १५। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६१।

(३) देखो ऊपर; पृ० ७६६।

(४) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १५-६। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६१।

महेशदान ने खेतड़ी में विवाह न करने का वचन दे अपनी सफ़ाई कर ली। अनन्तर खाचरियावास (जयपुर राज्य) तथा दूसरे छोटे-मोटे ठिकानों से उसने दंड के रुपये वसूल किये[1]।

महाराजा भीमसिंह के समय राज्य छोड़कर चले जानेवाले सरदारों को पीछा बुलाना

महाराजा भीमसिंह के समय उसके बुरे व्यवहार से तंग आकर कितने ही प्रतिष्ठित सरदार उसका साथ छोड़कर दूसरे राज्यों में चले गये थे। मानसिंह ने उन्हें वापिस बुलाकर उनके पट्टे आदि पूर्ववत् बहाल कर दिये। उनमें माधोसिंह चांपावत (आउवा का), केसरीसिंह (आसोप का), जवानसिंह (रास का), सुलतानसिंह (नींबाज का) आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। उसी समय उसने आसिया चारण वांकीदास[2]

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १६।

(२) कविराजा वांकीदास जोधपुर राज्य के पचपद्रा परगने के भांडियावास गांव का निवासी आशिया कुल का चारण था। वि० सं० १८२८ (ई० स० १७७१) में उसका जन्म हुआ। कविता का सामान्य ज्ञान प्राप्त करने के अनन्तर वह वि० सं० १८५४ (ई० स० १७६७) में जोधपुर गया और वहां उसने भाषा काव्य और संस्कृत साहित्य का अध्ययन किया, जिससे उसकी बड़ी ख्याति हुई तथा उसकी रचनाएं भी प्रसाद गुणयुक्त होने लगीं। वि० सं० १८६० (ई० स० १८०३) में जालोर से जाकर महाराजा मानसिंह जोधपुर की गद्दी पर बैठा, उस समय उसने अपने राज्याभिषेक के अवसर पर उसको लाख पसाव दिया और फिर उसको कविराजा की उपाधि से विभूषित कर अपना दरबारी कवि बनाया। वांकीदास बड़ा सत्यवादी और निर्भीक व्यक्ति था। राजा हो अथवा राणी, प्रत्येक के संबंध में वह सत्य बात कहने में कभी संकोच न करता था। महाराजा उसका बड़ा आदर करता था, परन्तु एक बार जब बांकीदास ने नाथों के विरुद्ध एक छन्द कहा तो वह उससे नाराज़ हो गया और उसने उसको बंदी करना चाहा। यह देख वह शीघ्रगामी ऊंट पर सवार होकर मारवाड़ छोड़ उदयपुर चला गया। वहां के स्वामी महाराणा भीमसिंह ने, जो बड़ा दानी और काव्यप्रेमी नरेश था तथा उसको आग्रहपूर्वक अपने यहां बुलाना चाहता था, उसे अपने यहां रक्खा। महाराजा मानसिंह भी काव्य का ज्ञाता, मर्मज्ञ, विद्यानुरागी और गुणग्राहक नरेश था, अतएव उसको बांकीदास की अविद्यमानता खटकने लगी। निदान उसने आग्रहपूर्वक उसको उदयपुर से जोधपुर बुलवा लिया। इतिहास और अन्य भाषाओं का बांकीदास को समुचित ज्ञान था। एक बार महाराजा मानसिंह के समय जोधपुर में ईरान से कोई एलची आया।

(गांव भांडियावास का रहनेवाला) को लाख पसाव[1], दूसरे दो-एक चारणों को कड़े तथा मोती एवं उत्तम सेवा बजा लाने के एवज़ में मेड़तिया रत्नसिंह पहाड़सिंहोत आदि कई व्यक्तियों को गांव आदि दिये[2]।

महाराजा का वीकानेर के गांव लाखासर के बख़्तावरसिंह की पुत्री से विवाह होना

उसी वर्ष (वि० सं० १८६१ में) महाराजा का विवाह वीकानेर राज्य के गांव लाखासर के स्वामी तंवर बख़्तावरसिंह की पुत्री के साथ हुआ, जिसके नाम दस हज़ार का पट्टा किया गया[3]।

महाराजा भीमसिंह के जालोर के घेरे के समय मानसिंह ने हिफ़ाज़त की दृष्टि से अपने ज़नाने एवं कुंवर छत्रसिंह को महाराव वैरीशाल

उसने महाराजा से किसी इतिहास के जानकार व्यक्ति को बुलवाया। तब महाराजा ने बांकीदास को उक्त एलची के पास भेजा। बातचीत होने पर ईरानी एलची बांकीदास के केवल भारतवर्ष ही नहीं, सुदूरवर्ती देशों के इतिहास की भी जानकारी से बड़ा प्रभावित हुआ। वि० सं० १८७० (ई० स० १८१३) में महाराजा मानसिंह की राजकुमारी सिरेकुंवर का विवाह रूपनगर में जयपुर के महाराजा जगतसिंह से और जगतसिंह की बहिन का विवाह मानसिंह से हुआ। उस समय हिंदी भाषा के महाकवि पद्माकर से उस (बांकीदास) की काव्य-चर्चा हुई, जिसमें बांकीदास का पक्ष प्रबल रहा। बांकीदास की ६२ वर्ष की आयु में वि० सं० १८९० (ई० स० १७३३) में मृत्यु हुई, जिसका महाराजा मानसिंह को पूरा दुःख हुआ तथा स्वयं उसने उसकी प्रशंसा में कुछ दोहे बनाये और उन्हें अपने मुख से कहकर खेद प्रकट किया। कविराजा बांकीदास-रचित कोई बड़ा ग्रंथ तो नहीं मिलता, परन्तु कई छोटे-छोटे काव्य मिले हैं, जिनमें से काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने "बांकीदास ग्रंथावली" के पहले भाग में ७, दूसरे भाग में १० और तीसरे भाग में १० काव्य बालाबख़्श राजपूत चारण पुस्तकमाला में प्रकाशित किये हैं। उसकी वीर रस की कविताएं बड़ी प्रभावशालिनी होती थीं। उसने अपने जीवन काल में लगभग तीन हज़ार ऐतिहासिक बातों का संग्रह किया था, जो बड़ा महत्त्वपूर्ण है। उससे कई स्थलों पर इतिहास की गुत्थियां सुलझाने में बड़ी मदद मिलती है।

(१) लाख पसाव में महाराजा जसवन्तसिंह (प्रथम) के समय से केवल १५०० रुपये ही दिये जाते थे (देखो मेरा राजपूताने का इतिहास; जि० ४, प्रथम खंड, पृ० ४७० टि० ३)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १६-८। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६१।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १८।

महाराजा का सिरोही पर सेना भेजना

के पास सिरोही भेजा था, परन्तु उसने महाराजा भीमसिंह के साथ की अपनी मैत्री में अन्तर आने के भय से उनको अपने यहां रखने से इनकार कर दिया, जिससे उनको लौटना पड़ा। लौटते समय कुंवर छत्रसिंह की आंख एक दरख़्त की शाख़ लगने से जाती रही[1]। महाराव के इस बर्ताव से मानसिंह उससे नाराज़ हो गया। उसका बदला लेने के लिए वि० सं० १८६० में महाराजा मानसिंह ने मुंहणोत ज्ञानमल एवं मेहता अखैचंद की सलाह के अनुसार नवलमल (ज्ञानमल का पुत्र) तथा सूरजमल जालोरी को आसोप, नींबाज, रास, लांबिया, रीयां, बलूंदा, रायण आदि के सरदारों, १०००० फ़ौज और तोपख़ाने के साथ सिरोही पर भेजा। उनके सिरोही राज्य में प्रवेश करते ही वहां के भोमिये भील, मीने आदि पहाड़ों में चले गये। अनन्तर सिरोही के पाड़ीव, कालिंद्री, बुवाड़ा आदि के उमरावों पर दंड निर्धारित कर वि० सं० १८६१ के प्रारम्भ में जोधपुर की सेना ने सिरोही नगर पर आक्रमण कर वहां अधिकार कर लिया। इसपर महाराव सिरोही छोड़कर भीतरोट परगने में चला गया। इस समाचार के जोधपुर पहुंचने पर महाराजा ने बड़ी खुशी मनाई[2]।

महाराजा का घाणेराव पर सेना भेजना

उसी अवसर पर महाराजा ने घाणेराव के ठाकुर मेड़तिया दुर्जनसिंह पर, जिसपर वह पहले से ही नाराज़ था, मेहता साहबचंद को फ़ौज देकर भेजा। उसकी सेना में कई छोटे-मोटे सरदारों के अतिरिक्त उदयपुर से आई हुई नागों की फ़ौज भी थी। घाणेराव में लड़ाई चल रही थी उन्हीं दिनों दुर्जनसिंह मर गया। उसके संबंधियों ने जोधपुर की सेना के साथ लड़ाई की, जिससे दो बार हमला करने पर भी जोधपुर की सेना वहां अधिकार करने में समर्थ न हुई। अन्त में जब अत्यंत कड़ा मोर्चा लगाया गया, तो खाद्य सामग्री की कमी हो जाने के कारण लाचार हो गढ़वालों ने बात

(१) मेरा; सिरोही राज्य का इतिहास; पृ० २७६-७।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० २१। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६१।

ठहराकर गढ़ खाली कर दिया। इस प्रकार घाणेराव पर जोधपुर का अधिकार स्थापित हुआ और वहां का कोट नष्ट कर दिया गया। इस समाचार के मिलने पर महाराजा को बड़ी प्रसन्नता हुई और मेहता साहबचंद का छोटा भाई माणकचंद वहां का हाकिम नियत हुआ[1]।

सिरोही नगर पर जोधपुर राज्य का क़ब्ज़ा हो जाने पर वहां का राव भीतरोट परगने में जा रहा था, जिसका उल्लेख ऊपर आ गया है। वह वहां रहते हुए मुल्क में बिगाड़ करने लगा। साथ ही भील, मीणे आदि भी उपद्रव करते थे। इधर खालसा किये हुए घाणेराव, चाणोद एवं नारलाई ठिकानों के सरदार भी पर्वतों का आश्रय लेकर नित्य बिगाड़ करते थे, जिससे उधर का प्रबन्ध करने में भी बड़ी कठिनता होती थी। महाराजा को इस सम्बन्ध में पूरी चिन्ता थी। इसपर ड्योढ़ीदार नथकरण ने महाराजा को उपर्युक्त स्थानों के प्रबन्ध में हेर-फेर करने की राय दी, जिसे महाराजा ने भी स्वीकार किया। तदनुसार सिंघवी गुलराज और भंडारी गंगाराम सिरोही तथा सिंघवी फ़तहराज घाणेराव के प्रबन्ध के लिए भेजे गये। भंडारी मानमल तथा उसका भाई बख़्तावरमल फ़तहराज के साथ गये। गुलराज तथा गंगाराम ने सिरोही पहुंचकर उचित स्थान पर थाना स्थापित किया और जगह-जगह उपद्रवी मीणों आदि तथा महाराव की सेना से लड़ाई कर उन्हें हराया। उधर घाणेराव में भेजे हुए हाकिमों ने भी वहां उत्तम प्रबन्ध कर अराजकता मिटाई। इसी बीच छागांणी कचरदास के ताल्लुक़े के गांव मुरडावा में बिगाड़ होने का समाचार मिलने पर इस सम्बन्ध में सिंघवी इन्द्रराज को लिखा गया, जिसने गांव कैलवाद में थाना स्थापित किया और वहां पंचोली अखैमल को रख समुचित व्यवस्था की[2]।

महाराजा का सिरोही एवं घाणेराव के प्रबन्ध के लिए आदमी भेजना

सिंघवी जोरावरमल के पुत्र जालोर से ही मानसिंह का साथ छोड़कर भीमसिंह के पास चले गये थे। उनमें से जीतमल नींबाज जा रहा था।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० २१-२। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८९१।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० २४-५।

सिंघवी जीतमल, सूरजमल, इन्द्रमल आदि का क़ैद होना

मानसिंह ने सिंहासनारूढ़ होने के पश्चात् उन्हें बुलाया तो जीतमल तथा सूरजमल तो उपस्थित हो गये, परन्तु फ़तहमल तथा शंभुमल नहीं आये थे। उनमें अपनी तरफ़ से विश्वास उत्पन्न कराने के लिए मानसिंह ने जीतमल को नागोर का हाकिम नियुक्त किया। वि० सं० १८६१ के माघ मास में जीतमल ने अपने पुत्र इन्द्रमल का विवाह स्थिर किया। उसमें फ़तहमल और शंभूमल के शरीक होने की संभावना थी। महाराजा उनसे अप्रसन्न तो था ही उसने उन्हें गिरफ़्तार करने के लिए मूंडवा के मेले का प्रबंध करने के बहाने धांधल उदयराम को पचास सवारों के साथ उधर भेज दिया। शंभूमल तथा फ़तहमल तो उक्त विवाह में शरीक न हुए, परन्तु उनके पुत्र गंभीरमल तथा धीरजमल गये, जिन्हें विवाह समाप्त होते ही सपरिवार उदयराम ने पकड़ लिया। स्त्रियां तो नागोर के क़िले में रक्खी गईं और पुरुष—जीतमल, सूरजमल, इन्द्रमल आदि—सलेमकोट (जोधपुर) में रक्खे गये। अनन्तर देवनाथ के उद्योग से रुपये देने पर अन्य सब तो छोड़ दिये गये, केवल जीतमल क़ैद में बना रहा[1]।

नाथ संप्रदाय के महामन्दिर नामक विशाल मन्दिर के निर्माण का कार्य मानसिंह की राज्य-प्राप्ति के समय ही शुरू कर दिया गया था। उसके सम्पूर्ण

महामन्दिर की प्रतिष्ठा होना

हो जाने पर वि० सं० १८६१ माघ सुदि ५ (ई० स० १८०५ ता० ४ फ़रवरी) को उसकी प्रतिष्ठा हुई और देवनाथ वहां का अधिकारी नियत किया गया[2]।

श्रावणादि वि० सं० १८६१ (चैत्रादि १८६२) के आषाढ मास में खेतड़ी, झूंझणू, नवलगढ़, सीकर आदि के समस्त शेखावतों को साथ ले

धोकलसिंह के पक्षपाती सरदारों का डीडवाणे में उपद्रव करना

भाटी छत्रसिंह तथा तंवर मदनसिंह ने धोकलसिंह के नाम से डीडवाणे पर अधिकार कर लिया और वहां खूब लूट-मार की, जिससे वहां का

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० २५।

(२) वही; जि० ४, पृ० २६।

हाकिम भागकर दौलतपुर चला गया। यह खबर जोधपुर पहुंचने पर मुहणोत ज्ञानमल फ़ौज के साथ उधर गया। अन्य सरदारों और हाकिमों को भी डीडवाणा जाने की आज्ञा हुई, जिसपर कुचामण, मीठड़ी, मारोठ आदि के सरदार भी ज्ञानमल की सेना के शामिल हो गये। इस फ़ौज के निकट पहुंचते ही विद्रोही डीडवाणे का परित्याग कर चले गये। तब जोधपुर की सेना ने उनका छोड़ा हुआ सामान लूट लिया और डीडवाणे पर राज्य का अधिकार स्थापित हुआ[1]।

महाराजा अभयसिंह का एक विवाह शाहपुरा (शेखावाटी का) में हुआ था। शेखावतों से नाराज़गी और झाड़ोद के गांव दयालपुर के मोहनसिंह पर कृपा होने के कारण महाराजा ने ज्ञानमल को लिखा कि वह जाकर शाहपुरे पर मोहनसिंह का अधिकार करा दे। तदनुसार डीडवाणा से चलकर जोधपुर की सेना ने शाहपुरे पर आक्रमण किया। दस दिन की लड़ाई के पश्चात् वहां जोधपुर की सेना का अधिकार हो गया और वह इलाक़ा मोहनसिंह को दे दिया गया। इस लड़ाई में क़िले की एक बुर्ज गिर जाने से फ़ौज के बहुत से आदमी मारे गये[2]।

महाराजा का सेना भेज शाहपुरा मोहनसिंह को दिलाना

भूतपूर्व महाराजा भीमसिंह का संबंध उदयपुर के महाराणा भीमसिंह की पुत्री कृष्णकुमारी से हुआ था; परन्तु वि० सं० १८६० (ई० स० १८०३) में महाराजा भीमसिंह का देहांत हो गया तब महाराणा ने अपनी पुत्री की सगाई जयपुर के महाराजा जगतसिंह के साथ कर दी। पोकरण के ठाकुर सवाईसिंह की पौत्री की सगाई भी जयसिंह के साथ हुई थी। उस समय वैवाहिक कार्य जयपुर में होना तय हुआ था। तदनुसार सवाईसिंह ने अपनी पौत्री को

उदयपुर की राजकुमारी कृष्णकुमारी के विवाह के लिए जयपुर और जोधपुर के राजाओं के बीच विवाद होना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० २६। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६१।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० २६-७।

पोकरण से जयपुर ले जाना चाहा। इसकी खबर मिलने पर महाराजा मानसिंह ने सवाईसिंह से कहलाया कि ऐसा करना उचित नहीं है, यदि विवाह ही करना है तो पोकरण बारात बुलाकर विवाह करो। इसके उत्तर में सवाईसिंह ने पीछा निवेदन कराया कि आपका कहना ठीक है, पर मेरा भाई उम्मेदसिंह जयपुर में रहता है; जिसकी हवेली से विवाह होगा। इसमें कोई अपमान की बात नहीं है। हां, आपके लिए एक बात विचारणीय है। उदयपुर के महाराणा की पुत्री का संबंध महाराजा भीमसिंह के साथ तय हुआ था, अब उसका ही संबंध जयपुर हो रहा है, यह कैसे ठीक कहा जा सकता है? इसपर महाराजा ने अपने सेवकों से इस विषय में पूछा तो उन्होंने उत्तर दिया कि सगाई तो अवश्य हुई थी, परन्तु टीका नहीं आया और इसी बीच महाराजा (भीमसिंह) का देहांत हो गया। तब महाराजा ने जयपुर के पंचोली सताबराय को इस संबंध में महाराजा से कहने के लिए लिखा। साथ ही उसने उदयपुर भी कहलाया कि आप यह संबंध अब जयपुर कैसे कर रहे हैं, परन्तु उदयपुरवालों ने इसपर किंचित् ध्यान न दिया और टीका जयपुर रवाना कर दिया। यह समाचार महाराजा को मिलते ही वह बिना विशेष सोच-विचार किये ही वि० सं० १८६२ माघ वदि अमावास्या (ई० स० १८०६ ता० १९ जनवरी) को शीघ्रतापूर्वक कूचकर मेड़ते पहुंचा। वहां से उसने शेखावाटी में रक्खी हुई अपनी सेना को बुलवाया और सिरोही की अपनी सेना को भी शीघ्र आने को लिखा। इसके साथ ही जसवंतराव होल्कर को भी उसने सहायतार्थ आने को लिखा और मारवाड़ के अन्य छोटे-मोटे सरदारों के पास भी आने के लिए आज्ञापत्र भेजे। इस तरह मेड़ते में १५ दिन में लग-भग ५०००० फ़ौज उसके पास एकत्र हो गई। उदयपुर से टीका ले आनेवालों के खारी के ढावे में ठहरने का पता पाकर, महाराजा ने स्वयं उनपर जाने का इरादा प्रकट किया, परन्तु इस कार्य का अनौचित्य बतलाकर सिंघवी इन्द्रराज ने अपने जाने की आज्ञा प्राप्त की। आउवा, आसोप आदि के सरदारों की २०००० सेना के साथ इन्द्रराज के टीका रोकने के लिए प्रस्थान करने की सूचना

पाकर उदयपुर से टीका ले जानेवाले व्यक्ति शाहपुरा (मेवाड़) चले गये। तब वह(इन्द्रराज) शाहपुरे पर सेना लेकर गया, जिसपर शाहपुरावालों ने टीका वापस उदयपुर भिजवाने की शर्त कर उसे लौटाया। इस बीच अपनी तथा परदेसियों की मिलाकर एक लाख फ़ौज महाराजा के पास जमा हो गई। जसवन्तराव ने भी कहलाया कि मेरे पहुंचने में अब देर नहीं है। उधर जयपुर के महाराजा जगतसिंह ने भी जयपुर के बाहर जाकर सेना एकत्र करना शुरू किया। उस समय उसके दीवान रायचंद ने उसे समझाया कि राठोड़ों के पास विशाल फ़ौज है और होल्कर भी शीघ्र उनसे मिल जायगा। तब जगतसिंह ने आगे कूच न किया। इस बीच महाराजा मेड़ते से प्रस्थान कर आलणियावास पहुंचा, जहां सवाईसिंह का पुत्र हिम्मतसिंह उसके पास उपस्थित हो गया। सेनाओं का दोनों ओर जमाव हो गया था और संभव था कि परस्पर लड़ाई भी हो जाती, परन्तु सिंघवी इन्द्रराज ने ललवाणी अमरचंद को जयपुर के दीवान रायचंद के पास भेजकर कहलाया कि हम आप तो सदा एक रहे हैं, हमारा आपस में विरोध करना ठीक नहीं। सीसोदिये तो सदा हमसे अलग रहे हैं। अंत में यह तय हुआ कि उदयपुर की पुत्री के साथ दोनों महाराजाओं में से कोई भी विवाह न करे और महाराजा जगतसिंह की बहिन का विवाह महाराजा मानसिंह के साथ और मानसिंह की पुत्री सिरेकंवरबाई का विवाह जगतसिंह के साथ हो। इस संबंध में परस्पर लिखा-पढ़ी हो जाने पर जोधपुर की तरफ़ से टीका लेकर व्यास चतुर्भुज तथा आसोप, नींबाज आदि के सरदार जयपुर और जयपुर से टीका लेकर हलदिया चतुर्भुज तथा अन्य व्यक्ति जोधपुर गये। इसके बाद गांव नांद के नाके पर महाराजा का जसवंतराव से मिलना हुआ, पर उसके साथ बराबरी का व्यवहार न होने से वह मन ही मन महाराजा से नाराज़ हो गया। फिर वहां से जसवंतराव दक्षिण लौट गया[1]।

इसके कुछ समय बाद ही महाराजा ने ड्योढ़ीदार आसायच नथकरण

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० २७-९। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६१-२।

को सवाईसिंह को लाने के लिए पोकरण भेजा, पर उसने आने से इन-कार कर दिया। नथकरण ने लौटकर सारी हक़ीक़त महाराजा से कही, परन्तु महाराजा ने मुंहणोत ज्ञानमल के बहकाने से नथमल को भी सवाईसिंह से मिला हुआ होने का सन्देह कर क़ैद करवा दिया। तदनंतर सावाईसिंह भी, जो भीमसिंह के पुत्र धोकलसिंह को जोधपुर का राजा बनाना चाहता था, प्रत्यक्षरूप से मानसिंह का विरोधी बनकर धोकलसिंह का सहायक बन गया और बड़लू का ठाकुर कूंपावत शार्दूलसिंह भी धोकलसिंह के पक्ष में हो गया। रास के ऊदावत ठाकुर जवानसिंह ने भी युद्ध के अवसर पर धोकलसिंह का पक्ष ग्रहण करने का निश्चय किया। शार्दूलसिंह का बीकानेर के महाराजा सूरतसिंह से मेल-जोल था। उसके-द्वारा बातचीत होने पर सूरतसिंह ने भी उस (धोकलसिंह) का ही पक्ष लेना स्वीकार कर लिया। गीजगढ़ के ठाकुर उम्मेदसिंह-द्वारा उदयपुर का टीका वापस जाने से उत्पन्न बदनामी की बात सुझाये जाने और सवाईसिंह के प्रतिज्ञा-बद्ध होने पर जयपुर का महाराजा जगतसिंह भी महाराजा मानसिंह से बदला लेने को तैयार हो गया[1]।

धोकलसिंह के पक्षपाती

उसी वर्ष आश्विन मास में महाराजा नांद से मेड़ते गया। जोधपुर

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ३०-१। दयालदास की ख्यात से पाया जाता है कि धोकलसिंह को सहायता देने के एवज़ में विरोधी दल ने महाराजा जगतसिंह को सांभर का इलाक़ा और फ़ौज-ख़र्च देना स्वीकार किया। बीकानेर की सहायता के बिना सफल होना असंभव देख जगतसिंह ने एक पत्र देकर सवाईसिंह को बीकानेर भेजा। सवाईसिंह ने महाराजा सूरतसिंह को सहायता देने के बदले में ८४ गांवों के साथ फलोधी का परगना, जो अजीतसिंह के समय जोधपुर राज्य में मिला लिया गया था, वापस दिये जाने के संबंध में तहरीर कर दी। उस समय मानसिंह ने भी सूरतसिंह से कहलाया कि फलोधी तो मैं ही आपको दे दूंगा, आप मेरे विरोधियों को सहायता न दें; परन्तु उसने मानसिंह का कथन स्वीकार न किया और मेहता ज्ञानजी, पुरोहित जवानजी आदि को आठ हज़ार फ़ौज के साथ भेजकर वि० सं० १८६३ फाल्गुन वदि ३ (ई० स० १८०७ ता० २५ फ़रवरी) को फलोधी पर अधिकार कर लिया। उधर जयपुर की सेना ने सांभर पर क़ब्ज़ा किया (जि० २, पत्र ९७-८)।

की विगत चढ़ाई में बहुत खर्च हुआ था, जिससे देश में दंड लगाया गया।

महाराजा का सेना भेजकर उपद्रवी सरदारों का दमन करना

उन्हीं दिनों घाणेराव, चाणोद और नारलाई के मेड़तियों ने, जो मेवाड़ में थे, पाली में जाकर उसको लूटा। इसपर मेहता साहबचंद उनपर भेजा गया, जिसके साथ केसरीसिंह (बगड़ी), बख़्शीराम (चंडावल), ज्ञानसिंह (पाली) आदि सरदार, दस हज़ार फ़ौज और नागों की सेना थी। उन्होंने वहां पहुंचकर सोजत, पाली और गोड़वाड़ का समुचित प्रबंध किया, जिसपर विद्रोही सरदार पहाड़ियों में चले गये[1]।

मुंहणोत ज्ञानमल तथा अखैचंद आदि जालोर के समय के कार्यकर्ताओं की सलाह से मेड़ता के मुक़ाम पर महाराजा ने सिंघवी इन्द्रराज,

मानसिंह और धोकलसिंह के पक्षपातियों के बीच लड़ाई होना

गुलराज, भंडारी गंगाराम, भंडारी मानमल आदि कतिपय व्यक्तियों को क़ैद करवा दिया। इंद्रराज और गंगाराम जोधपुर के सलेमकोट में, गुलराज की बीमारी के कारण वह अपने मकान में तथा अन्य लोग मेड़ता की कचहरी में रक्खे गये[2]। इस समाचार के ज्ञात होते ही चांदावत बहादुरसिंह (मेड़तिया, कुड़कीवालों का पूर्वज) जयपुर जाकर महाराजा के विरोधियों से मिल गया। सवाईसिंह ने यह ख़बर सुनकर हंसते हुए कहा कि दोनों बनियों ने मेरी सलाह के बिना मानसिंह को गद्दी पर बैठाया, जिसका फल

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ३१।

(२) इस घटना के कुछ समय बाद मानसिंह ने सिंघवी इंद्रराज और भंडारी गंगाराम को मेहता अखैचंद के समझाने पर मरवा देने की आज्ञा जोधपुर भिजवाई। इसके उत्तर में ठाकुर अनाड़सिंह (आहोर) ने मानसिंह के पास अर्ज़ी भिजवाई कि पारस्परिक शत्रुता के कारण झूठी शिकायतों पर आपने इन्हें कैद करवाया है और अब मारने का हुक्म निकाला है। ये दोनों नौकर वही हैं, जिन्होंने आपको जालोर से जोधपुर लाकर गद्दी बैठाया है। यदि ये दोनों सवाईसिंह के साथी होते तो आपको जोधपुर न लाते। इनको बंदी किया वहां तक तो ठीक, परन्तु मरवाने की मेरी सलाह नहीं है; क्योंकि ऐसे नौकर मिल न सकेंगे। इसपर महाराजा ने अपना पहले का हुक्म रद्द कर दिया (जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ३२)।

शीघ्र ही उन्हें मिल गया। फिर वह भी अपनी सेना के साथ जयपुर चला गया[1]। ठाकुर शार्दूलसिंह (बड़लू) के लिखने पर महाराजा सूरतसिंह ने भी ससैन्य बीकानेर से धोकलसिंह की सहायतार्थ प्रस्थान किया। खेतड़ी से शेखावत अभयसिंह भी पर्याप्त मनुष्यों के साथ जयपुर पहुंचा। महाराजा जगतसिंह ने भी अपने डेरे बाहर करवाये[2]। उन दिनों मानसिंह की तरफ़ से जयपुर में वकील के पद पर अमरचंद लल-वाणी नियुक्त था, परन्तु उसकी मृत्यु हो गई। तब उसके स्थान में मोदी दीनानाथ नियत हुआ। उसने सवाईसिंह के जयपुर पहुंचने और महाराजा जगतसिंह का डेरा बाहर होने का समाचार मानसिंह के पास भिजवाया, जिसपर उसने मेड़ता से परबतसर की तरफ़ कूच किया। वहां उसके आदेशानुसार उसके अधीनस्थ सरदार उपस्थित हो गये। उस समय बूंदी के महाराव राजा विशनसिंह तथा किशनगढ़ के महाराजा कल्याणसिंह की ओर से भी सेनाएं मानसिंह की सहायतार्थ पहुंचीं। साथ ही उसने जसवंतराव होल्कर को भी सहायता के लिए आने को लिखा। उधर विरोधी दल में बीकानेर का स्वामी सूरतसिंह[3] और शाहपुरा (मेवाड़) का राजा अमरसिंह अपनी-अपनी सेनाओं के साथ जाकर शरीक हो गये। उस समय पच्चीस लाख रुपये जगतसिंह ने इस मुहिम के लिए अपने ख़ज़ाने से निकलवाये। मानसिंह के सहायक सरदारों को भी सवाईसिंह ने अपने

---

(१) टॉड-कृत "राजस्थान" से पाया जाता है कि सवाईसिंह अपने साथ धोकलसिंह को भी जयपुर ले गया, जहां महाराजा जगतसिंह ने उसे अपने शामिल भोजन कराया (जि० २, पृ० १०८३)।

(२) मेजर जेनरल सर जॉन मालकम-कृत "रिपोर्ट ऑन् दि प्राविंस ऑव् मालवा एण्ड एड्ज्वाइनिंग डिस्ट्रिक्ट्स" (ई० स० १८२७ का संस्करण) से पाया जाता है कि चढ़ाई करने के पूर्व जयपुर के वकीलों ने अंग्रेज़ों को अपने पक्ष में करने का और उनकी सहायता प्राप्त करने का बहुत उद्योग किया, परन्तु वे इसमें कृतकार्य न हुए (पृ० १४९ और टि० ३)

(३) दयालदास की ख्यात के अनुसार वह खाटू तथा पलसाणा के बीच शरीक़ हुआ था (जि० २, पत्र ६८)।

की तरफ़ चला गया। जयपुर का महाराजा जगतसिंह एवं बीकानेर का महाराजा सूरतसिंह क़रीब एक लाख सेना के साथ मारोठ पहुंचे। उनके परदेशी सैनिकों की संख्या अधिक होने से जगतसिंह को अपनी विजय के संबंध में आशंका थी। सवाईसिंह ने उसकी शंका निर्मूल करने का भर-सक प्रयत्न किया, परन्तु जब वह उसमें सफल न हुआ तो वह अकेला ही मीरखां आदि की सेना-सहित महाराजा मानसिंह के मुक़ाबिले के लिए आगे बढ़ा और नाहरगढ़ के नाके होता हुआ गींगोली पहुंचा। यह समाचार मिलने पर महाराजा मानसिंह भी सेना-सहित लड़ने को सन्नद्ध हुआ, परंतु तोप की एक आवाज़ होते ही हरसोलाव, सेनणी, पूनलू, सथलाणा, चवां, सवराड़, पाली, गजसिंहपुरा, चंडावल, बगड़ी, खींवसर, बेराई, देवलिया, रीयां, मारोठ तथा बलूंदा के सरदार महाराजा की सेना से अलग होकर धोकलसिंह के सहायकों के शामिल हो गये। महाराजा मानसिंह के पक्ष में केवल आसोप का कूंपावत केसरीसिंह, आउवा का चांपावत बख़्तावरसिंह, नींबाज का ऊदावत सुरताणसिंह, रास का ऊदावत जवानसिंह, लांबिया का ऊदावत भानसिंह, कुचामण का मेड़तिया शिवनाथ-सिंह, बूड़सू का मेड़तिया प्रतापसिंह और खेजड़ला का भाटी जसवंतसिंह रह गये[1]। महाराजा ने आक्रमण करने की आज्ञा दी, परन्तु जवानसिंह (रास) ने यह कहकर उसे रोक दिया कि इतनी थोड़ी सेना के साथ शत्रु का सामना करने में लाभ नहीं होगा, अतएव पीछा जोधपुर चलना चाहिये। महाराजा ने फिर भी लड़ने का आग्रह किया, पर उक्त सरदार तथा धांधल उदयराम ने जबरन उसका घोड़ा फेर दिया। जो सामान आदि जोधपुर के सरदार अपने साथ ले जा सके वह तो वे ले गये, शेष सामान तोपख़ाना, ख़ज़ाना, फ़ीलख़ाना, फ़र्राशख़ाना आदि जयपुर की सेना ने लूट लिया। इस अवसर पर जयपुरवालों ने खोखर, अडाणी, श्यामपुरा और गींगोली गांवों को भी लूटा। मारोठ पहले ही लूटा जा चुका था।

(१) दयालदास की ख्यात में इस घटना का समय वि० सं० १८६३ फाल्गुन सुदि २ (ई० स० १८०७ ता० ११ मार्च) दिया है (जि० २, पत्र ९८)।

परबतसर के पड़िहार क़िलेदार ने वहां की चाभियां शत्रुओं को सौंप दीं। इस विजय का समाचार मिलने पर महाराजा जगतसिंह एवं सूरतसिंह मारोठ से कूचकर परबतसर पंहुंचे। फाल्गुन सुदि में महाराजा मानसिंह मेड़ता पहुंचा। वह जालोर जाना चाहता था, परन्तु कुचामण के ठाकुर शिवनाथसिंह तथा हिन्दालखां ने कहा कि यदि आप जालोर जायेंगे तो जोधपुर गंवा बैठेंगे, अतएव आप जोधपुर ही चलें। इसपर वह जोधपुर गया और वहां पहुंचकर नगर तथा क़िले की उसने मज़बूती की। इसी बीच मार्ग से रास का ठाकुर अपने परिवार को रास से निकालने के बहाने रुख़सत लेकर रवाना हो गया और शत्रु से जा मिला। अनन्तर सवाईसिंह के आदेशानुसार उसके पक्ष के एक दल ने अचानक नागोर पर चढ़ाई कर वि० सं० १८६३ फाल्गुन सुदि १५ (ई० स० १८०७ ता० २३ मार्च) को वहां क़ब्ज़ा कर लिया। उसी समय के आस-पास सोजत पर भी शत्रु पक्ष के लोगों ने अधिकार कर लिया। इस अवसर पर पाली का चांपावत ज्ञानसिंह, बगड़ी का जेतावत केसरीसिंह और चंडावल का कूंपावत बख़्शीराम, जो गोड़वाड़ में घाणेराव के ठाकुर को दंड देनेवाली सेना में मेहता साहबचंद के साथ थे, आकर सोजत पर शत्रुपक्ष का अधिकार कराने में सहायक हो गये थे।

परबतसर में रहते समय महाराजा जगतसिंह के दीवान रायचंद ने उससे कहा कि अब अपनी इज़्ज़त काफ़ी रह गई है, अतएव अब आप उदयपुर में विवाह कर जयपुर चलें। जब इस संबंध में महाराजा ने सवाईसिंह से कहा तो उसने उत्तर दिया कि पहले आप जोधपुर चलें। हमारे वहां पहुंचते ही मानसिंह अपने परिवार-सहित जालोर चला जायगा और इस प्रकार जोधपुर की गद्दी पर आप धोकलसिंह को बैठा सकेंगे, जिससे आपके यश में वृद्धि होगी। फिर आप भले ही उदयपुर में विवाह कर जयपुर चले जाना। जगतसिंह ने उसकी राय मान ली और सवाईसिंह को सेना-सहित जोधपुर की तरफ़ प्रस्थान करने की आज्ञा दी। मेड़ता तथा पीपाड़ होता हुआ तथा मार्ग में पड़नेवाले गांवों को लूटता हुआ वि० सं० १८६३

चैत्र वदि ७ (ता० ३० मार्च) को पर्याप्त फ़ौज के साथ सवाईसिंह जोधपुर पहुंचा। अपना डेरा मंडोवर में रखकर उसने वहां घेरा लगाया। पीछे से भखरी, रीयां, कालू एवं वलूंदा के मार्ग से होते हुए महाराजा जगतसिंह और सूरतसिंह भी वि० सं० १८६४ चैत्र सुदि (ई० स० १८०७ अप्रेल) में जोधपुर पहुंचे और नगर के चारों तरफ़ मोर्चे लगाये गये। ऐसी परिस्थिति में महाराजा मानसिंह ने पहले के क़ैद किये हुए व्यक्तियों को मुक्तकर उनसे अपनी सेवा दिखलाने के लिए कहा। उनमें से सिंघवी जोरावरमल के पुत्र जीतमल तथा धायभाई शंभूदान नगर की रक्षा करते हुए सात दिन तक शत्रु से लड़ने के बाद सवाईसिंह के शामिल हो गये। फिर इन्द्रराज और गंगाराम तथा नथकरण को, जो उपर्युक्त व्यक्तियों के साथ ही क़ैदकर सलेमकोट में रक्खे गये थे, महाराजा ने मुक्त कर दिया। इन्द्रराज और गंगाराम ने महाराजा की आज्ञानुसार सवाईसिंह से मिलकर संधि के विषय में बातचीत की, पर उसने उसपर विशेष ध्यान न दिया और कहा कि महाजनों का बनाया हुआ राजा नहीं हो सकता। मानसिंह से कहो कि जालोर चला जाय, जोधपुर पर भीमसिंह का पुत्र राज्य करेगा। इसपर इन्द्रराज और गंगाराम गढ़ तो नहीं, परन्तु नगर सौंप देने का वचन देकर लौट गये। मानसिंह के पास पहुंचकर उन्होंने उससे जोधपुर नगर विरोधियों को सौंप दुर्ग में स्थिर रहकर युद्ध का प्रबंध करने को कहा। तदनुसार इन्द्रराज के पुत्र फ़तहराज, भंडारी गंगाराम के पुत्र भानीराम, करणोत इन्द्रकरण (समदड़ी), महेचा जसवंतसिंह (जसोल), अनाड़सिंह राजसिंहोत (आहोर), चांपावत उदयराज (दासपां), आयस देवनाथ, सूरतनाथ तथा अन्य कितने ही व्यक्तियों के साथ महाराजा ने जोधपुर के दुर्ग में निवास रख उसकी रक्षा का प्रबंध कर युद्ध का आयोजन किया[1]। इन्द्रराज तथा गंगाराम वि० सं० १८६४ चैत्र सुदि ११ (ई० स० १८०७ ता० १८ अप्रेल) को नगर शत्रु के हवाले

(१) टॉड के अनुसार उस समय उसके पास पांच हज़ार सेना थी, जिसमें विशन (विश्नु) स्वामी, चौहान, भट्टी आदि शामिल थे (जि० २, पृ० १०८९)।

कर केसरीसिंह (आसोप), बख़्तावरसिंह (आउवा), सुरताणसिंह (नींबाज), शिवनाथसिंह (कुचामण), प्रतापसिंह (बूड़सू) और भानसिंह (लांबिया) तथा अन्य रिसाले के साथ बाहर निकल गये और नगर में धोकलसिंह के नाम की आन फिर गई[1]। महाराजा मानसिंह ने सवाईसिंह एवं रास के ठाकुर जवानसिंह के पास उस समय इस आशय के ख़ास रुक्के भेजे कि आप अपने घरानों की चाल पर ध्यान रक्खें और उसी समय इन्द्रराज ने सवाईसिंह को कहा कि नागोर तो तुम्हारे क़ब्ज़े में ही है, अब जो परगने कहो मैं धोकलसिंह को दिलाने को तैयार हूं। सवाईसिंह ने इसका उत्तर यह दिया कि महाराजा मानसिंह जोधपुर छोड़कर जालोर चले जायें तथा जगतसिंह का इस चढ़ाई में जो बाइस लाख रुपया ख़र्च हुआ है वह चुका दें तो सुलह हो सकती है। अनन्तर इन्द्रराज और गंगाराम—आउवा, आसोप और नींबाज के सरदारों-सहित—शेखावतों की सहायता से बावरा गये, जहां से उन्होंने लोढ़ा कल्याणमल को दौलतराव(सिंधिया)को सहायतार्थ लाने के लिए भेजा। इसी बीच मीरख़ां तथा सवाईसिंह के बीच ख़र्च की बाबत कहा-सुनी हो गई, जिससे मीरख़ां उसका साथ छोड़कर चला गया। इस बात का पता मिलने पर इन्द्रराज ने मीरख़ां से बातचीत की और सवाईसिंह के पक्ष के बलूंदा के ठाकुर शिवसिंहकी प्रजा से ३०००० रुपया वसूलकर मीरख़ां को दे उसे अपने पक्ष में किया। तब भंडारी पृथ्वीराज के साथ मीरख़ां ने ढूंढाड़ की तरफ़ जाकर वहां लूट-मार शुरू की। उन्हीं दिनों भंडारी चतुर्भुज, उपाध्याय रामबख़्श, ठाकुर प्रतापसिंह आदि ने कुछ सेना एकत्रित कर परबतसर और डीडवाणा में पुनः मानसिंह का अधिकार स्थापित किया और इंद्रराज आदि ने बावरा में

---

(१) उन्हीं दिनों उदयपुर के महाराणा भीमसिंह के नाम श्रावणादि वि० सं० १८६३ (चैत्रादि १८६४) वैशाख वदि ६ (ई० स० १८०७ ता० १ मई) शुक्रवार को धोकलसिंह की तरफ़ से इस आशय का एक पत्र भेजा गया कि गोड़वाड़ पर अधिकार कर लिया जावे, पर वहां भी उस समय कलह मच रहा था, इसलिए इस पत्र का कुछ भी परिणाम न निकला (वीरविनोद; भाग २, पृ० १६७४)।

रहते हुए कई सरदारों को पुनः महाराजा के पक्ष में कर लिया। उधर उसी समय जयपुर के दीवान रायचंद ने खर्च भेजना बंद कर दिया और महाराजा जगतसिंह को लिखा कि फ़ौज का खर्च सवाईसिंह को देना चाहिये। इसका परिणाम यह हुआ कि खर्च के अभाव में जयपुर की सेना में दिन-दिन तंगी होने लगी। इतना होने पर भी जोधपुर के घेरे में कमी नहीं हुई। सीकर के शेखावत राव लक्ष्मणसिंह ने दौलतपुरा जाकर वहां के गढ़ को घेर लिया। पड़िहार अमरदास और लाड़खानी दौलतपुर के गढ़ में चले गये तथा सामान इकट्ठा कर दो मास तक लड़ते रहे। तब लक्ष्मणसिंह वहां से लौट गया। उस समय जोधपुर, जालोर, सिवाणा, दौलतपुरा, वाली, शिव, उमरकोट आदि के गढ़ों पर महाराजा मानसिंह का अधिकार रहा और बाक़ी सारे मुल्क पर विपक्षियों का अधिकार हो गया तथा तहसील की आय वे लेने लगे। शत्रु-सेना ने लूट-मार कर राज्य का बहुत बिगाड़ किया[1]। उस समय जोधपुर नगर भी लूट-द्वारा बरबाद हो जाता, परंतु पंचोली गोपालदास ने सवाईसिंह को कहलाया कि नगर की क्यों बरबादी कराते हो। वाजिबी पैदाइश होगी, वह मैं देता ही रहूंगा। इसपर सवाईसिंह ने उसको वहां का कोतवाल बनाकर, हाकिम के पद का अधिकार और सायर का प्रबंध भी सौंप दिया।

वि० सं० १८६४ के श्रावण में शत्रुओं ने दुर्ग के फ़तहपोल दरवाज़े के पास सुरंग लगाई, जिसकी दुर्गवालों को सूचना मिलने पर उन्होंने जलता हुआ तेल शत्रु के सैनिकों पर डाला, जिससे कई आदमी जल गये और कई भाग गये। फ़तहपोल दरवाज़े की रक्षा का भार खेजड़ला के भाटी सरदार पर था। उसके सैनिकों ने दुर्ग के बाहिर निकलकर झगड़ा किया। राणीसर की बुर्ज की तरफ़ भी क़िले में सुरंग लगाई गई, जिससे वहां भी झगड़ा हुआ और तंवर बहादुरसिंह काम आया, जिसकी छत्री

(१) "वंशभास्कर" से पाया जाता है कि शत्रु-सेना ने लूट-मार करने के अतिरिक्त वहां की स्त्रियों को पकड़-पकड़कर दो-दो पैसे में बेचा (चतुर्थ भाग; पृ० ३६६७)। "वीरविनोद" से भी इसकी पुष्टि होती है (भाग २, पृ० ८६४)।

राणीसर में है। लखणपोल दरवाज़े के बाहर रासोलाई में जैपुर के दादू-पंथी साधुओं का मोरचा था। उनपर रात्रि के समय क़िले की खिड़की खोलकर जसोल के ठाकुर जसवंतसिंह आदि ने आक्रमण किया और वहां से उनका मोरचा उठा दिया। उस समय जसवंतसिंह का राजपूत लोढ़ा कीर्तिसिंह वीरतापूर्वक लड़कर काम आया। उसकी छत्री जयपोल के बाहर बनी हुई है। इसी प्रकार राखी का चौहान श्यामसिंह भी उसी समय वहां काम आया। उसकी भी स्मारक छत्री जोधपुर के क़िले के जयपोल द्वार के बाहर बनी हुई है। इस रीति से शत्रु से निरंतर युद्ध होता रहा।

लोढ़ा कल्याणमल दौलतराव सिंधिया के पास से सेना लेकर आया। उसमें आंबा इंग्लिया[1] और जान बेप्टिष्ट[2] (Jean Baptiste) प्रमुख थे। उस समय ठाकुर सवाईसिंह (पोकरण), केसरीसिंह (बगड़ी), शिवसिंह (बलूंदा), ज्ञानसिंह (पाली), बख़्शीराम (चंडावल) आदि सरदार दो हज़ार सेना के साथ वि० सं० १८६४ श्रावण वदि ११ (ई० स० १८०७ ता० ३० जुलाई) को सिंधिया की सेना का सामना करने के लिए रवाना हुए और मेड़ता के गांव देवरिया में पहुंचे। उन लोगों ने सिंघवी इंद्रराज के पास समाचार भेजा कि तुम आकर हमसे मिलो, ताकि कोई बात निश्चित की जाय। इसपर इंद्रराज ने भी कुड़की जाकर मुक़ाम किया। उस समय इंद्रराज ने नागोर, डीडवाणा, कोलिया, मेड़ता, परबतसर, मारोठ, सांभर और नांवा के परगने धोकलसिंह को देने और जोधपुर, जालोर, सोजत, जैतारण, सिवाणा, पचपद्रा, पाली, देसूरी, शिव, उमरकोट तथा फलोधी के परगने मानसिंह के लिये रखने का प्रस्ताव किया। सवाईसिंह ने नागोर आदि मानसिंह को

(१) यह माधवराव और दौलतराव सिंधिया का सेनापति तथा राजनैतिक सलाहकार था।

(२) यह माइकेल फिलोज़ का छोटा पुत्र था और देशी लोगों में "जान बतीसी" के नाम से प्रसिद्ध था। सिन्धिया की सेना में यह कप्तान था और इसने उसकी तरफ़ से कई बड़ी लड़ाइयां लड़ी थीं। यह सैंतालीस साल तक उसकी सेवा में रहा था।

और जोधपुर धोकलसिंह को दिलाने की बात कही, परन्तु कोई बात तय नहीं हुई और तीन-चार दिन तक बहस चलती रही[1]। इस बीच ठाकुर सवाईसिंह ने आंबा इंग्लिया और जान बेप्टिस्ट को अपनी तरफ़ मिला लिया। उन्होंने सवाईसिंह के शामिल जाकर मुक़ाम किया। इससे इंद्रराज के साथ की बातचीत रुक गई और सवाईसिंह ने सिंघवी चैनकरण को जान बेप्टिस्ट के साथ सोजत तथा जैतारण जाने का हुक्म दिया। उन्होंने लांबिया, नींबाज, आउवा आदि ठिकानों से रुपये वसूल किये और परबतसर, मारोठ, डीडवाणा आदि पर अधिकार कर लिया।

श्रावण सुदि ५ (ता० ८ अगस्त) को सवाईसिंह ने पुनः जोधपुर पहुंच वहां के घेरे को बढ़ाया। इंद्रराज उसके पास से रवाना होकर किशनगढ़ गया। वहां से उसकी तरफ़ से भंडारी पृथ्वीराज और कुचामण का

---

(१) दयालदास की ख्यात में इस संबंध में भिन्न वर्णन मिलता है। उसमें लिखा है—"सात मास तक जोधपुर के गढ़ पर तोपों की मार होने के पश्चात् गढ़ के भीतर से राणियों के कहलाने पर, सूरतसिंह ने सिंघोरिया की भाखरी से अपनी तोपें हटवा दीं। मानसिंह भी इस लड़ाई से तंग आकर गढ़ का परित्याग करने के विचार में था। उसने अपने कुछ सरदारों को इस संबंध में शर्तें तय करने के लिए भेजा। महाराजा सूरतसिंह-द्वारा छल न होने का आश्वासन मिलने पर माधोसिंह (आउवा), सुलतानसिंह (नींबाज), केसरीसिंह (आसोप), शिवनाथसिंह (कुचामण) तथा इन्द्रराज सूरतसिंह के पास गये और उन्होंने उससे कहा कि यदि आप गढ़ के भीतर का हमारा सामान आदमी भेजकर जालोर भिजवा देने तथा मारवाड़ और जोधपुर का जो भी प्रबंध हो उसमें मानसिंह को भी शरीक रखने का वचन दें तो एक मास में गढ़ खाली कर दिया जायगा। इसपर सवाईसिंह ने उत्तर दिया कि हमें यह शर्तें स्वीकार हैं, पर साथ ही आपको सारा फ़ौज ख़र्च देना होगा तथा जब तक धोकलसिंह नाबालिग़ है तब तक जोधपुर का प्रबंध जयपुर नरेश के हाथ में रहेगा। सवाईसिंह की दूसरी शर्त सन्धि के लिए गये हुए सरदारों को मंजूर न हुई। तब सवाईसिंह ने एकांत में सूरतसिंह से कहा कि यदि आपकी अभिलाषा धोकलसिंह को राज्य दिलाने की हो तो आप इन सरदारों को छल से मरवा दें; परन्तु वचनबद्ध होने से सूरतसिंह ने ऐसा कुत्सित कार्य करने से इन्कार कर दिया। अनन्तर उसने सिरोपाव आदि देकर आये हुए सरदारों को ससम्मान विदा किया (जि० २, पत्र ६८-९)।"

ठाकुर शिवनाथसिंह मीरखां के पास गये। शिवनाथसिंह ने चार-पांच लाख रुपये देने का मीरखां को इक़रार लिखकर कहा कि जयपुर से शिवलाल बख़्शी जोधपुर जाने के लिए रवाना हुआ है, उसको झगड़ाकर बिगाड़ने पर एक लाख रुपया दिया जायगा और बाक़ी रक़म हमारे शामिल रहने पर अदा कर दी जायगी। यदि इसके विपरीत होगा तो मैं तुम्हारे शामिल भोजन कर मुसलमान हो जाऊंगा। इस प्रकार का वचन हो जाने पर महाराजा मानसिंह ने जोधपुर से रत्न, आभूषण आदि उसके पास भेजे। सरदारों ने भी ज़ेवर और रुपये भेजे। बलूंदा के ठाकुर शिवसिंह ने भी देवरिया के मुक़ाम से एक हज़ार रुपये और अपनी जमीयत के घोड़े इन्द्रराज के पास भेजे। फिर रत्न और आभूषण बेच तथा इधर-उधर से रक़म वसूलकर एक लाख रुपया इकट्ठा कर इन्द्रराज ने मीरखां के पास भेज दिया। कुचामण के ठाकुर शिवनाथसिंह तथा बूडसू के प्रतापसिंह आदि को मिलाकर उस समय मानसिंह की अच्छी सेना बन गई और मीरखां को साथ लेकर इस सेना ने कूच किया। जयपुर के बख़्शी शिवलाल का मुक़ाम फागी में था। राठोड़ों ने वहां पहुंच उसका मुक़ाबला किया, जिसमें मानसिंह के सहायक राठोड़ों की विजय हुई और शिवलाल भाग गया। अनन्तर राठोड़ों ने उसके डेरे और माल-असबाब को लूट लिया[1]। उस समय भंडारी चतुर्भुज और उपाध्याय रामदान ने परबतसर, मारोठ, डीडवाणा आदि पर पुनः महाराजा मानसिंह का प्रभुत्व स्थापित किया। उस समय बड्डू के ठाकुर अजीतसिंह ने महाराजा के ५०० सैनिकों को दो मास तक अपने यहां रखकर उनका सारा ख़र्चा बर्दाश्त किया।

शिवलाल के साथ की सेना को नष्टकर मीरखां तथा शिवनाथसिंह ने जयपुर की सेना का पीछा कर ढूंढाड़ को लूटना आरंभ किया। उन्होंने जयपुर से तीन कोस दूर झुठवाड़ा गांव में अपने मुक़ाम रक्खे और वहां के

(१) मालकम-कृत "रिपोर्ट ऑन् दि प्राविन्स ऑव् मालवा एण्ड एड्ज्वाइनिंग डिस्ट्रिक्ट्स" से पाया जाता है कि अमीरखां के विरोधी हो जाने पर बख़्शी शिवलाल मानसिंह से लड़ाई करने के लिए भेजा गया (पृ० १४६), परन्तु यह कथन ठीक नहीं है।

बाग के सारे दरख़्त कटवा डाले। राठोड़ों की सेना के भय से जयपुर नगर के दरवाज़े बंद कर दिये गये। भंडारी पृथ्वीराज और शिवनाथसिंह ने जयपुर जाकर एक दिन गोलाबारी भी की[1]। तदनंतर मीरखां और शेरसिंह ने झुंझवाड़े से कूच किया और किशनगढ़ से सिंघवी इंद्रराज, ठाकुर बख़्तावरसिंह (आउवा), केसरीसिंह (आसोप), सुरताणसिंह (नींबाज), भानसिंह (लांबिया), थानसिंह (सुमेल), तथा भाटी आदि और परबतसर की तरफ़ से भंडारी चतुर्भुज, उपाध्याय रामदान, अजीतसिंह (बड़ू), मंगलसिंह (बोड़ावड़), मोहकमसिंह (खालड़), जुझारसिंह (मन्नाणा), रघुनाथसिंह (तोसीणा), फ़तहसिंह (सुरनावड़ा), प्रतापसिंह (कालियाटड़ा), बख़्तावरसिंह (पीह) आदि पांच हज़ार सेना के साथ जाकर इंद्रराज के शामिल हो गये। भाद्रपद महीने में मीरखां भी हरमाड़े में इंद्रराज के शामिल हुआ। वहीं ठाकुर शंभुसिंह (कंटालिया) और भारतसिंह (आलणियावास) भी उन लोगों के शामिल हुए। भंडारी पृथ्वीराज के साथवाले थांवले के ऊदावतों और गोविंददासोत मेड़तियों ने जयपुर के कई गांवों को लूटा[2]।

---

(१) टॉड-कृत "राजस्थान" में इससे भिन्न वर्णन मिलता है। उससे पाया जाता है कि अमीरख़ां के जयपुर पर चढ़ाई करने पर महाराजा जगतसिंह ने जयपुर में रक्खे हुए अपने सेनाध्यक्ष को उसे सज़ा देने को लिखा। इसपर शिवलाल ने उसका आगे बढ़ना रोककर उसे लूणी की तरफ़ भगा दिया और गोविंदगढ़ एवं हरसूरी नामक स्थानों पर उसपर अचानक आक्रमण कर उसे फगी (फागी) नामक स्थान तक पीछे हटने पर मजबूर किया। इस प्रकार उसे जयपुर की सीमा के बाहर निकालकर शिवलाल ने पीछा जयपुर की तरफ़ प्रस्थान किया। टोंक के निकट पीपला में पहुंचने पर जब अमीरख़ां को शिवलाल के वापस जाने का समाचार मिला तो उसने मुहम्मदशाहख़ां एवं राजाबहादुर को सहायतार्थ बुलाकर जयपुर की सेना पर हमला कर दिया और उसे हराकर वह जयपुर के द्वार तक जा पहुंचा (जि० २, पृ० १०८७)।

मालकम-कृत "रिपोर्ट ऑन् दि प्राविंस ऑव् मालवा एण्ड एड्ज्वाइनिंग डिस्ट्रिक्ट्स" में भी लगभग ऐसा ही वर्णन है (पृ० १४६)।

(२) मीरख़ां और इन्द्रराज के साथ उस समय काफ़ी सेना हो गई थी।

फिर मीरखां ने इंद्रराज से सेना-व्यय मांगा, तब इंद्रराज ने परबतसर के मेड़तियों से अस्सी हज़ार रुपये तलब किये। इसपर बडू के महाजन चतुर्भुज ने एक लाख रुपये का बराड़ (कर) प्रजा पर डाला। चंडवाणी जोशी श्रीकिशन तथा घड़िया राजाराम अजमेर में व्यापार करते थे, उनको इंद्रराज ने वोहरा बनाकर एक लाख रुपया मीरखां को देने की ज़मानत दिलाई। फिर मीरखां और इंद्रराज के सेना के साथ जयपुर की तरफ़ बढ़ने का समाचार महाराजा जगतसिंह को मिला। इसपर उसने बीकानेर के महाराजा सूरतसिंह और धोकलसिंह के पक्षपाती सवाईसिंह आदि को एकत्रित किया, परंतु एक दूसरे पर दोषारोपण करने के अतिरिक्त विशेष कुछ न हुआ। तब सवाईसिंह के बहुत कुछ रोकने पर भी महाराजा जगतसिंह ने कुछ ध्यान न दिया और भाद्रपद सुदि १३ (ता० १४ सितंबर) को उसने जोधपुर से कूच कर दिया[1]। इसी प्रकार महाराजा

उन्होंने भी ढूंढाड़ का मुल्क लूटा और वहां की औरतों को पकड़-पकड़ कर एक-एक छदाम में बेचा। इस लूट में उनके हाथ प्रचुर धन लगा (वंशभास्कर; चतुर्थ भाग; पृ० ३६७२)। "वीरविनोद" से भी इसकी पुष्टि होती है (भाग २, पृ० ८६४।

(१) टॉड के अनुसार जगतसिंह, सूरतसिंह के बाद गया था। वह लिखता है कि पहले तो सवाईसिंह आदि ने अमीरख़ां की विजय का समाचार उसके पास कई दिन तक पहुंचाया ही नहीं। पीछे से जब एक विशेष हरकारे ने यह समाचार उसे दिया, तो वह इतना घबरा गया कि उसने मरहटे सरदारों को बुलाकर सुरक्षित रूप से जयपुर पहुंचा देने के एवज़ में उन्हें १२ लाख रुपया देना ठहराया। यही नहीं उसने अमीरख़ां को भी नौ लाख रुपया देने का वायदा किया, ताकि वह मार्ग में उसे रोके नहीं (राजस्थान; जि० २, पृ० १०८७-८)। मालकम-कृत रिपोर्ट 'ऑन् दि प्रॉविंस ऑव् मालवा एण्ड एडज्वाइनिंग डिस्ट्रिक्ट्स" में भी जगतसिंह का अमीरख़ां आदि को रुपया देने का उल्लेख है (पृ० १४७)। दयालदास की ख्यात से भी पाया जाता है कि जगतसिंह सूरतसिंह के बाद गया था। घेरे के समय ही अचानक सूरतसिंह मोतीझिरा की बीमारी से ग्रस्त हुआ। तब उसने जगतसिंह से सलाहकर अपनी सेना वहीं छोड़ बीकानेर की तरफ़ प्रस्थान किया। वि० सं० १८६४ आश्विन वदि १२ (ई० स० १८०७ ता० २६ सितम्बर) को वह नाग तालाब होता हुआ भवाद पहुंचा, जहां कुछ दिन बाद ही जगतसिंह अपनी सारी सेना-सहित उससे मिल गया। महाराजा सूरतसिंह ने जब जयपुर नरेश से

बाग़ के सारे दरख़्त कटवा डाले। राठोड़ों की सेना के भय से जयपुर नगर के दरवाज़े बंद कर दिये गये। भंडारी पृथ्वीराज और शिवनाथसिंह ने जयपुर जाकर एक दिन गोलाबारी भी की[1]। तदनंतर मीरख़ां और शेरसिंह ने भुठवाड़े से कूच किया और किशनगढ़ से सिंघवी इंद्रराज, ठाकुर बख़्तावरसिंह (आउवा), केसरीसिंह (आसोप), सुरताणसिंह (नींबाज), भानसिंह (लांबिया), थानसिंह (सुमेल), तथा भाटी आदि और परवतसर की तरफ़ से भंडारी चतुर्भुज, उपाध्याय रामदान, अजीतसिंह (बडू), मंगलसिंह (बोड़ावड़), मोहकमसिंह (खालड़), जुझारसिंह (मन्नाणा), रघुनाथसिंह (तोसीणा), फ़तहसिंह (सरनावड़ा), प्रतापसिंह (कालियाटड़ा), बख़्तावरसिंह (पीह) आदि पांच हज़ार सेना के साथ जाकर इंद्रराज के शामिल हो गये। भाद्रपद महीने में मीरख़ां भी हरमाड़े में इंद्रराज के शामिल हुआ। वहीं ठाकुर शंभुसिंह (कंटालिया) और भारतसिंह (आलणियावास) भी उन लोगों के शामिल हुए। भंडारी पृथ्वीराज के साथवाले थांवले के ऊदावतों और गोविंददासोत मेड़तियों ने जयपुर के कई गांवों को लूटा[2]।

---

(१) टॉड-कृत "राजस्थान" में इससे भिन्न वर्णन मिलता है। उससे पाया जाता है कि अमीरख़ां के जयपुर पर चढ़ाई करने पर महाराजा जगतसिंह ने जयपुर में रक्खे हुए अपने सेनाध्यक्ष को उसे सज़ा देने को लिखा। इसपर शिवलाल ने उसका आगे बढ़ना रोककर उसे लूणी की तरफ़ भगा दिया और गोविंदगढ़ एवं हरसूरी नामक स्थानों पर उसपर अचानक आक्रमण कर उसे फग्गी (फागी) नामक स्थान तक पीछे हटने पर मजबूर किया। इस प्रकार उसे जयपुर की सीमा के बाहर निकालकर शिवलाल ने पीछा जयपुर की तरफ़ प्रस्थान किया। टोंक के निकट पीपला में पहुंचने पर जब अमीरख़ां को शिवलाल के वापस जाने का समाचार मिला तो उसने मुहम्मदशाहख़ां एवं राजाबहादुर को सहायतार्थ बुलाकर जयपुर की सेना पर हमला कर दिया और उसे हराकर वह जयपुर के द्वार तक जा पहुंचा (जि० २, पृ० १०८७)।

मालकम-कृत "रिपोर्ट ऑन् दि प्राविंस ऑव् मालवा एण्ड एड्ज्वाइनिंग डिस्ट्रिक्ट्स" में भी लगभग ऐसा ही वर्णन है (पृ० १४६)।

(२) मीरख़ां और इन्द्रराज के साथ उस समय काफ़ी सेना हो गई थी।

फिर मीरखां ने इंद्रराज से सेना-व्यय मांगा, तब इंद्रराज ने परवतसर के मेड़तियों से अस्सी हज़ार रुपये तलब किये। इसपर बडू के महाजन चतुर्भुज ने एक लाख रुपये का वराड़ (कर) प्रजा पर डाला। चंडवाणी जोशी श्रीकिशन तथा घड़िया राजाराम अजमेर में व्यापार करते थे, उनको इंद्रराज ने वोहरा बनाकर एक लाख रुपया मीरखां को देने की ज़मानत दिलाई। फिर मीरखां और इंद्रराज के सेना के साथ जयपुर की तरफ़ बढ़ने का समाचार महाराजा जगतसिंह को मिला। इसपर उसने बीकानेर के महाराजा सूरतसिंह और धोकलसिंह के पक्षपाती सवाईसिंह आदि को एकत्रित किया, परंतु एक दूसरे पर दोषारोपण करने के अतिरिक्त विशेष कुछ न हुआ। तब सवाईसिंह के बहुत कुछ रोकने पर भी महाराजा जगतसिंह ने कुछ ध्यान न दिया और भाद्रपद सुदि १२ (ता० १४ सितंबर) को उसने जोधपुर से कूच कर दिया[1]। इसी प्रकार महाराजा

उन्होंने भी ढूंढाड़ का मुल्क लूटा और वहां की औरतों को पकड़-पकड़ कर एक-एक छदाम में बेचा। इस लूट में उनके हाथ प्रचुर धन लगा (वंशभास्कर; चतुर्थ भाग; पृ० ३६७२)। "वीरविनोद" से भी इसकी पुष्टि होती है (भाग २, पृ० ८६४।

(१) टॉड के अनुसार जगतसिंह, सूरतसिंह के बाद गया था। वह लिखता है कि पहले तो सवाईसिंह आदि ने अमीरख़ां की विजय का समाचार उसके पास कई दिन तक पहुंचाया ही नहीं। पीछे से जब एक विशेष हरकारे ने यह समाचार उसे दिया तो वह इतना घबरा गया कि उसने मरहटे सरदारों को बुलाकर सुरक्षित रूप से जयपुर पहुंचा देने के एवज़ में उन्हें १२ लाख रुपया देना ठहराया। यही नहीं उसने अमीरख़ां को भी नौ लाख रुपया देने का वायदा किया, ताकि वह मार्ग में उसे रोके नहीं (राजस्थान; जि० २, पृ० १०८७-८)। मालकम-कृत रिपोर्ट "ऑन् दि प्रॉविंस ऑव् मालवा एण्ड एडज्वाइनिंग डिस्ट्रिक्ट्स" में भी जगतसिंह का अमीरख़ां आदि को रुपया देने का उल्लेख है (पृ० १४७)। दयालदास की ख्यात से भी पाया जाता है कि जगतसिंह सूरतसिंह के बाद गया था। घेरे के समय ही अचानक सूरतसिंह मोतीझिरा की बीमारी से ग्रस्त हुआ। तब उसने जगतसिंह से सलाहकर अपनी सेना वहीं छोड़ बीकानेर की तरफ़ प्रस्थान किया। वि० सं० १८६४ आश्विन वदि १३ (ई० स० १८०७ ता० २६ सितम्बर) को वह नाग तालाव होता हुआ भवाद पहुंचा; जहां कुछ दिन बाद ही जगतसिंह अपनी सारी सेना-सहित उससे मिल गया। महाराजा सूरतसिंह ने जब जयपुर नरेश से

सूरतसिंह भी बीकानेर की तरफ़ रवाना हुआ। सवाईसिंह आदि भी उसी रात्रि को अपने डेरे-डंडे उठाकर सेना-सहित चले गये[1]। जितना सामान वे साथ ले जा सके ले गये और बाक़ी जला दिया। अनंतर उन्होंने नागोर जाकर डेरे डाले।

भाद्रपद सुदि १४ (ता० १५ सितंबर) को प्रातःकाल महाराजा मानसिंह को जयपुर और बीकानेर के महाराजाओं के चले जाने तथा जोधपुर शत्रुओं से रहित होने का समाचार मिला। तब उसने नगर और दुर्ग के द्वार खुलवाये और स्वयं नगर में जाकर आयस देवनाथ को महामंदिर में ठहराया। नागरिकों ने महाराजा के पास उपस्थित होकर पंचोली गोपालदास की प्रशंसा की, जिसपर महाराजा ने उसकी तसल्ली की।

मीरख़ां और इंद्रराज को महाराजा जगतसिंह के जयपुर की तरफ़ लौटने का समाचार मिलने पर उन्होंने उस तरफ़ कूच किया। मार्ग में जयपुर की सेना के ऊंट और घोड़ों को गोविंददासोत मेड़तियों ने दो-तीन मुक़ामों पर लूटा। उन्होंने कई जयपुरी सैनिकों के नाक-कान भी काटे। महाराजा जगतसिंह का नोसल (दांता) में मुक़ाम होने पर मीरख़ां और इंद्रराज भी वहां जा पहुंचे। यद्यपि महाराजा जगतसिंह के पास पर्याप्त सेना विद्यमान थी, परंतु सफ़र के कारण सैनिकों के थके हुए होने से वे युद्ध के अयोग्य थे तथापि उनमें से दस हज़ार सैनिकों से मीरख़ां और इंद्रराज ने मुक़ाबला किया। जयपुरी सेना के पैर उखड़ गये। अंत में जयपुर के दीवान रायचंद्र ने एक लाख रुपया इंद्रराज के पास भेजकर कुशलतापूर्वक महाराजा जगतसिंह को जयपुर पहुंचा दिया।

इस प्रकार मीरख़ां और इंद्रराज के सम्मिलित प्रयत्न से जोधपुर का घेरा तो उठ गया; परंतु नागोर में ठाकुर सवाईसिंह के साथ ठाकुर बख़्शीराम (चंडावल), ज्ञानसिंह (पाली), केसरीसिंह (बगड़ी),

---

अचानक घेरा उठाने का कारण पूछा तो उसने उत्तर दिया कि आपके जाते ही मेरा चित्त भी चढ़ाई से हट गया, इसीलिए मैं घेरा उठाकर चला आया हूं (जि० २, पत्र ६६)।

(१) दयालदास की ख्यात (जि० २, पत्र ६६) से भी इसकी पुष्टि होती है।

ज़ालिमसिंह (हरसोलाव), प्रतापसिंह (खींवसर), भाटी उम्मेदसिंह (लवेरा) आदि के अतिरिक्त नागोर और जेतारण पट्टी के लाडणू, दुगोली, लोटोती आदि के सरदारों का गिरोह था, जिनसे महाराजा को सदा आतंक रहता था। महाराजा ने उपर्युक्त लड़ाई में उत्तम सेवा करने के एवज़ में अपने अनेक कर्मचारियों एवं सरदारों आदि को इनाम-इकराम और ओहदे आदि देकर सम्मानित किया[1]।

अमीरखां के जयपुर से जोधपुर लौटने पर महाराजा ने उसका बड़ा सम्मान किया और उसे अपना पगड़ी-बदल भाई बनाया तथा "नवाब" की उपाधि और बराबर बैठने का सम्मान दिया। गांव पाटवा तथा डांगावास का पट्टा और खर्च के एवज़ में दरीबा, नावां आदि गांव उसे दिये गये।

महाराजा का अमीरखां-द्वारा चूक करा सवाईसिंह आदि को मरवाना

अनन्तर एक दिवस महाराजा ने मीरखां से एकांत में कहा कि आपने मेरे राज्य की रक्षा की उसकी मैं प्रशंसा कहां तक करूं। अब सवाईसिंह ने जो मेरा अपमान किया है, उसका बदला किसी प्रकार लेना चाहिये। इसपर अमीरखां ने इस कार्य का भार अपने ऊपर लिया और थोड़े समय में ही उसे मार डालने का वायदा किया। इस संबंध में उसने सवाईसिंह तथा उसके साथियों को धोखा देने का एक कार्य-क्रम निश्चित किया। तदनुसार वि० सं० १८६४ के पौष तथा माघ मास में उसने जोधपुर से खर्च का तक़ाज़ा किया। उधर से पूर्व निश्चय के अनुसार कुछ हीला-हवाला किया गया तो वह जोधपुर का विरोधी बन आस-पास के गांवों में लूट-मार करने लगा। जोधपुर से कई व्यक्ति उसके पास सुलह करने के लिए भेजे गये, परंतु उसपर उनका कोई असर नहीं हुआ। यह समाचार जब नागोर में सवाईसिंह को मिला तो वह बड़ा प्रसन्न हुआ और उसने अमीरखां को कहलाया कि तुम धर्म-कर्मपूर्वक हमारी सहायता करने का क़रार कर हमारे शामिल हो जाओ तो तुम्हारा खर्चा हम दे देंगे।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ३१-४८। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६३-४। टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०८३-६।

अमीरखां तो यह चाहता ही था, उसने इस बात को स्वीकार कर मूंडवे में डेरा किया। ठाकुर सवाईसिंह ने उसको जोधपुर की तरफ़ बढ़ने के लिए कहलाया तो उसने उत्तर दिया कि एक बार मैं स्वयं ठाकुर साहब से मिलकर बातचीत करूंगा और खर्च की पूरी व्यवस्था हो जाने पर ही आगे कार्यवाही करूंगा। इसपर ठाकुर सवाईसिंह ने उसको नागोर बुलवाया, जिसपर वह मूंडवा से दो सौ आदमियों के साथ वहां गया। वि० सं० १८६४ चैत्र वदि १४ (ई० स०१८०८ ता० २५ मार्च) को तारकीन की दरगाह (मसजिद) में सवाईसिंह आदि से अमीरखां की मुलाक़ात हुई। उनकी परस्पर एकांत में दो घड़ी तक बातचीत होकर सब बातें तय हुईं। फिर सवाईसिंह, बख़्शीराम, ज्ञानसिंह, केसरीसिंह प्रभृति सरदारों ने एकत्रित रूप से बातचीत कर उसको विदा किया। अमीरखां ने कहा कि मेरी सेना के सैनिकों ने वेतन के लिए बड़ा तक़ाज़ा कर रखा है, इसलिए मैं मूंडवे जाता हूं। कल मेरे यहां आपकी मिहमाननवाज़ी की जावेगी, आप मूंडवे आवें, वहीं सब बातें पक्की कर ली जावेंगी। आप लोग जमाख़ातिर रखें, कुछ ही दिनों में हम जोधपुर मानसिंह से छुड़ा लेंगे। इस प्रकार क़ुरान बीच में रख अपना विश्वास दिलाने के अनन्तर अमीरखां पीछा मूंडवे गया[1]।

श्रावणादि वि० सं० १८६४ (चैत्रादि १८६५) चैत्र सुदि २ (ई० स० १८०८ ता० २९ मार्च) को उपर्युक्त चारों सरदार अपने दो सहस्र सैनिकों के साथ मूंडवा पहुंचे। वहां अमीरखां की तरफ़ से उनकी मेहमानी की गई और रात्रि को वे वहीं रहे। उस समय अमीरखां ने सवाईसिंह को कहलाया कि आप सिपाहियों की चढ़ी हुई तनख़्वाह चुका देने की तसल्ली कर दें तब वे जोधपुर को रवाना होंगे। इस बात पर विश्वास कर ठाकुर सवाईसिंह (पोकरण), बख़्शीराम (चंडावल), ज्ञानसिंह (पाली) और केसरीसिंह (बगड़ी) अमीरखां के डेरों में गये, जहां एक बड़ा शामियाना लगा हुआ था, जिसमें एक फ़र्श बिछा था। उसके चारों ओर

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० २३।

मुसलमान सैनिक तोपें लगाये बैठे थे। चारों सरदार उस शामियाने में बैठ गये और उनके साथ के एक सहस्र आदमी भी वहीं मौजूद रहे। सवाईसिंह आदि सरदारों ने मुहम्मदखां को, जो वहां सिपाहियों के साथ विद्यमान था, कहा कि तुम्हारी चढ़ी हुई तनख़्वाह हम चुका देंगे। इसपर मुहम्मदखां ने कहा कि मैं नवाब साहब को बुलाकर लाता हूं। फिर मुहम्मदखां, अमीरखां के पास गया। अमीरखां की पत्नी का भाई भी मुहम्मदखां के साथ सरदारों के पास से उठकर जाने लगा तो उसको सवाईसिंह ने बातचीत करने के निमित्त रोक लिया। सवाईसिंह आदि अमीरखां और मुहम्मदखां के आने की प्रतीक्षा में बैठे हुए थे। इतने में पूर्व निर्दिष्ट योजना के अनुसार उपर्युक्त चारों सरदारों का प्राणहरण करने के लिए अमीरखां की तरफ़ से संकेत पाते ही उसके सैनिकों ने शामियाने की रस्सियां काट डालीं, जिससे शामियाना गिर गया और वे चारों सरदार, जो शामियाने के भीतर बैठे हुए थे, दब गये। ऊपर से उन-पर अमीरखां के सैनिकों ने तोपों से गोलों की वर्षा की, जिससे सब वहां के वहां ही भुन गये। सवाईसिंह आदि के साथ के सैनिकों का, जो शामियाने के आस-पास खड़े थे, तलवारों और बंदूकों की गोलियों से संहार किया गया। डेरे के लोगों में से कुछ तो तोप के गोलों से मारे गये और कुछ भाग गये। तदनन्तर चारों सरदारों के सिर कटवाकर अमीरखां ने महाराजा के पास भिजवाये, जिसपर महाराजा को बड़ी प्रसन्नता हुई। नागोर में इस घटना की ख़बर पहुंचने पर वहां रहे हुए सरदारों को निराशा हो गई। ठाकुर ज़ालिमसिंह (हरसोलाव), प्रतापसिंह (खींव-सर), भाटी छत्रसिंह, तथा तंवर मदनसिंह बीकानेर चले गये। अन्य लोग जहां-जहां सुविधा हुई वहां गये और कई सरदार माफ़ी मांगकर पुनः महाराजा मानसिंह के पास उपस्थित हो गये। चैत्र सुदि ४ (ता० ३१ मार्च) को अमीरखां ने मूंडवे से नागोर पहुंच वहां महाराजा मानसिंह का प्रभुत्व स्थापित किया[1]।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ४६ तथा ५३-४। माल्कम;

सवाईसिंह के मारे जाने की ख़बर पोकरण पहुंचने पर उसका पुत्र सालिमसिंह सेना एकत्रकर फलोधी पहुंचा और उधर के गावों का

रिपोर्ट ऑन् दि प्राविंस ऑव् मालवा एंड एडज्वाइनिंग डिस्ट्रिक्ट्स; पृ० १४७-८। टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०८६-६०। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६४।

जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि सवाईसिंह आदि के मारे जाने की घटना चैत्र सुदि ३ (ता० २० मार्च) को हुई। उस समय सवाईसिंह आदि सरदारों के साथ के छः-सात सौ आदमी मारे गये। "वंशभास्कर" में लिखा है कि अमीरख़ां ने सरदारों के साथ मंत्रणा करने के लिए एक शिविर तनवाया था, जिसके फ़र्श के नीचे बारूद बिछाया गया था (भाग ४, पृ० ३६७८)। सवाईसिंह आदि के मारे जाने के विषय में नीचे लिखा पद्य प्रसिद्ध है, जिससे पाया जाता है कि यदि अमीरख़ां ने उनके साथ विश्वासघात न किया होता तो उसको उनके बाहुबल का परिचय मिलता—

मियां जो दीधी मीरख़ां, कमधां बीच क़ुरान।
रह्या भरोसे रामरे, (नहीं तो) पड़ती ख़बर पठान॥

ख्यातों आदि में ठाकुर सवाईसिंह को प्रत्येक स्थल पर महाराजा मानसिंह के समय होनेवाले उपद्रवों का मूल कारण बतलाया है। वस्तुतः भूतपूर्व महाराजा भीमसिंह की मृत्यु के बाद उसकी देरावरी राणी के उदर से पुत्र उत्पन्न होने के कारण प्रधान के पद का दायित्व निवाहते हुए वह नवजात शिशु (धोकलसिंह) के राज्य का वास्तविक अधिकारी होने से ही उसके स्वत्वों की रक्षा के लिए मानसिंह का विरोधी हुआ होगा। जैसा कि ऊपर बतलाया गया है। मानसिंह के गद्दी बैठने के पूर्व ही भीमसिंह की देरावरी राणी के गर्भ होने की बात प्रकट हो चुकी थी, जिसपर मानसिंह ने क़रार किया था कि देरावरी के उदर से पुत्र उत्पन्न होगा तो वही जोधपुर राज्य का स्वामी होगा और मैं जालोर चला जाऊंगा। राजपूत जाति के इतिहास में अपने स्वार्थों की हानि होने की अवस्था में इक़रार को तोड़ देने के अनेक उदाहरण मिलते हैं। ऐसी अवस्था में भीमसिंह की राणियों का मानसिंह पर, जिसके साथ पहले से ही उनकी शत्रुता थी, विश्वास होना कठिन था। इस प्रकार संदेह के वशीभूत होकर वे चांपासणी के गोस्वामी की शरण में चली गईं और जब वहां से सरदारों के आग्रह से लौटीं तो जोधपुर के दुर्ग में न जाकर नगर के महलों में ठहरीं, जहां मानसिंह की तरफ़ से कड़ा प्रबंध कर दिया गया। फिर माघ वदि में देरावरी राणी के पुत्र उत्पन्न हुआ, जो मानसिंह-द्वारा मरवाये जाने के भय से गुप्त रूप से भाटी छत्रसिंह के

मानसिंह का सवाईसिंह के उत्तराधिकारी सालिमसिंह को गांव आदि देकर संतुष्ट करना

बिगाड़ करने लगा। तब सिंघवी जसवंतराय तथा पंचोली राधाकिशन ने राजकीय सेना के साथ जाकर उससे झगड़ा किया, जिसमें दोनों तरफ़ के बहुत से आदमी मारे गये और कई घायल हुए। अनन्तर सिंघवी इंद्रराज ने उसको लिखा कि अपनी भलाई चाहते हो तो पोकरण चले जाओ, नहीं तो वह ठिकाना हाथ से चला जायगा। इसपर वह पोकरण चला गया और हरियाडाणा के चांपावत बुधसिंह को जोधपुर भेज उसने रेखबाब, जमीयत के घोड़े आदि भेजने की आयस देवनाथ-द्वारा बातचीत तय की, जिसपर महाराजा ने मजल, दुनाड़ा तथा उधर के कुछ अन्य गांव भी उस(सालिमसिंह)के नाम लिख दिये[1]।

जोधपुर की सेना की बीकानेर पर चढ़ाई

बीकानेर का महाराजा, सवाईसिंह का पक्षपाती था, अतएव उससे बदला लेने के लिए वि० सं० १८६५ (ई० स० १८०८) में जोधपुर की तरफ़ से सिंघवी इन्द्रराज ने एक विशाल सेना[2] के साथ बीकानेर पर चढ़ाई की। उन्हीं दिनों सिंध, जैसलमेर, सीकर, चूरू आदि से भी अलग-अलग सेनाओं ने जाकर बीकानेर में जगह-जगह फ़साद करना शुरू कर

साथ खेतड़ी भेज दिया गया। सवाईसिंह के क्रमानुयायियों का तो कथन है कि सवाईसिंह उस समय जोधपुर में न था और पोकरण में था। अनुमान होता है कि मानसिंह का अपने राज्याभिषेक के समय भीमसिंह का नाम चारणों की ओर से पढ़ी जानेवाली आशीष में से हटवाना, भीमसिंह के कृपापात्रों को पदों से हटाकर उन लोगों को, जिन्होंने भीमसिंह की आज्ञा से सांवतसिंह, शेरसिंह आदि को मारा था, निर्दयता से मरवाना तथा भंडारी गंगाराम तथा सिंघवी इंद्रराज को, जिन्होंने उसे गद्दी पर बिठलाया था, क़ैद करवाना ही इस विरोध का मूल कारण हो सकता है।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ५४-५।

(२) दयालदास की ख्यात में इस सेना की संख्या ८० हज़ार दी है (जि० २, पत्र ६६)। टॉड केवल बारह हज़ार सेना लिखता है (राजस्थान; जि० २, पृ० १०६१)।

दिया[1]। इस प्रकार बीकानेर चारों तरफ़ से शत्रुओं से घिर गया। फलोधी के निकट शत्रु सेना के पहुंचने पर पुरोहित जवानजी तथा मेहता ज्ञानजी ने वीरता-पूर्वक उसका सामना कर उसे पीछे हटा दिया। जिस समय जोधपुर की सेना की बीकानेर पर चढ़ाई हुई उस समय सांडवे का ठाकुर जैतसिंह, साह अमरचंद, डूसर दुर्जनसिंह आदि सीमाप्रान्त के प्रबंध के लिए नियुक्त थे। उन्होंने शत्रु सेना का सामना कर उसे रोकने का प्रबंध किया। अंत में जोधपुर का बहुत सा माल-असबाब अपने क़ब्ज़े में कर जैतसिंह, अमरचंद आदि बीकानेर चले गये[2]। दो मास तक जोधपुर की सेना गजनेर में पड़ी रही और रोज़ छोटी-मोटी लड़ाइयां होती रहीं, परन्तु नगर पर उसका अधिकार न हो सका[3]।

जोधपुर और बीकानेर में संधि होना

जब दो मास बीत जाने पर भी सिंघवी इन्द्रराज बीकानेर पर अधिकार करने में सफल न हुआ तो लोढ़ा कल्याणमल ने मानसिंह से निवेदन किया कि इतने समय में भी इन्द्रराज ने बीकानेर पर अधिकार नहीं किया है, इससे जान पड़ता है कि वह बीकानेरवालों से मिल गया है। यदि मुझे आज्ञा दी जाय तो मैं जाकर बीकानेर पर अधिकार करने का प्रयत्न करूं। मानसिंह के मन में भी उसकी बात जम गई और उसने तत्काल उसे जाने की आज्ञा दे दी तथा अपने हाथ का पत्र देकर ४००० फ़ौज के साथ उसे बीकानेर पर भेजा। मार्ग में देशणोक पहुंचने पर उसने करणीजी के सम्मुख जाकर कहा कि सुना जाता है कि तुम बीकानेर राज्य

---

(१) "वीरविनोद" में भी इस अवसर पर दाऊदपुत्रों एवं जोहियों आदि का बीकानेर में उत्पात करना लिखा है (भाग २, पृ० ५०८), परन्तु जोधपुर राज्य की ख्यात अथवा टॉड के ग्रन्थ में इसका उल्लेख नहीं है।

(२) टॉड लिखता है कि बीकानेर का राजा सूरतसिंह फ़ौज लेकर मुक़ाबले को गया, परन्तु बापड़ी के युद्ध में उसे हारकर भागना पड़ा (राजस्थान; जि० २, पृ० १०६१)।

(३) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ९९-१००।

की रक्षा करनेवाली हो; मैं बीकानेर खाली करा लूंगा, तुमसे जो हो सके सो कर लेना। जब उसके आने की सूचना इन्द्रराज को मिली तो उसने इस आशय का एक पत्र महाराजा सूरतसिंह के पास भेजा—

"मेरे लिए मानसिंह और आप समान हैं। आपने जो जोधपुर में संधिवार्ता के समय मेरे प्राणों की रक्षा की थी, वह उपकार मैं भूला नहीं हूं। अब लोढ़ा (कल्याणमल) मेरी शिकायत कर बीकानेर पर अधिकार करने की प्रतिज्ञा कर आया है। उसे सज़ा देनी चाहिये।"

उपर्युक्त पत्र पाने पर महाराजा सूरतसिंह ने बीकावतों, बीदावतों, कांधलोतों, भाटियों, मंडलावतों तथा रूपावतों में से चुने-चुने वीरों के साथ सुराणा अमरचन्द को चार हज़ार सवार देकर कल्याणमल के विरुद्ध भेजा। उधर कल्याणमल ने गजनेर-स्थित जोधपुर की सेना को शीघ्र आने के लिए लिखा; परन्तु फ़ौज के सैनिकों ने यह विचार किया कि लड़ाई तो हम लड़ेंगे और सारा श्रेय लोढ़ा को मिलेगा, इसलिए उन्होंने ऊपर से तत्परता तो बहुत दिखलाई, परन्तु कूच न किया। तब लोढ़ा कल्याणमल स्वयं गजनेर गया। उसी समय सुराणा अमरचन्द भी सेना-सहित जा पहुंचा। दोनों फ़ौजों का सामना होने पर मारवाड़ के बहुत से सरदार काम आये तथा कल्याणमल अपनी सेना-सहित भाग गया। अमरचन्द ने उसका पीछा कर एक कोस की दूरी पर उसे जा पकड़ा और युद्ध करने पर बाध्य किया। थोड़ी देर की लड़ाई में ही अमरचन्द ने उसे बन्दी कर लिया। उसका सारा सामान लूट लिया गया तथा ढड्ढा शार्दूलसिंह और सुलतानसिंह का भी दो लाख रुपये का माल बीकानेरवालों के हाथ लगा। बाद में लोढ़ा कल्याणमल को महाराजा सूरतसिंह ने मुक्त कर दिया, जो अपमानित होकर लौट गया। यह समाचार मानसिंह को मिलने पर उसने इस कार्य पर पुनः इन्द्रराज को ही नियुक्त कर दिया। अनन्तर महाराजा सूरतसिंह ने भविष्य के कार्यक्रम के सम्बन्ध में अपने सरदारों से सलाह की। उन दिनों भूकरका का ठाकुर अभयसिंह क़ैद में था और वहां का अधिकार उसके पुत्र प्रतापसिंह के हाथ में था। उसने कहा कि मैं बीस हज़ार

भाटियों एवं जोहियों को सहायतार्थ ला सकता हूं। वाय के ठाकुर प्रेमसिंह ने इसके विरुद्ध राय दी। उसने कहा कि भाटियों के देश में आने से राज्य खतरे में पड़ जायगा। सूरतसिंह को भी उसकी बात पसन्द आई, अतएव उसने जोधपुर के सरदारों के साथ मेल के लिए बात-चीत की। फलोधी तथा सिंध के जीते हुए छः गढ़ और तीन लाख रुपये फ़ौज खर्च देने की शर्त पर परस्पर सन्धि हो गई। उपर्युक्त स्थानों से बीकानेरी सेना के वापस आ जाने पर तथा रुपयों के ओल में कई प्रतिष्ठित सरदारों को साथ ले जोधपुर की सेना वापस लौट गई। पीछे से सुराणा अमरचन्द रुपया भरकर ओल में सौंपे हुए व्यक्तियों को पीछा ले गया[1]।

---

(१) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र १००-१। पाउलेट; गैज़ेटियर ऑव् दि बीकानेर स्टेट; पृ० ७६।

जोधपुर राज्य की ख्यात का कथन है कि वि० सं० १८६४ (ई० स० १८०७) में महाराजा मानसिंह ने सिंघवी इन्द्रराज के साथ बीकानेर पर सेना भेजी। उसमें कर्मचारियों में मेहता सूरजमल गया था। सरदारों में चांपावत ठाकुर बख़्तावरसिंह (आउवा), इन्द्रसिंह (रोयट), कूंपावत ठाकुर केसरीसिंह (आसोप), विशनसिंह (चंडावल), ऊदावत ठाकुर सुरताणसिंह (नींबाज), भानसिंह (लांबिया), अमरसिंह (छीपिया), मेड़तिया ठाकुर बिड़दसिंह (रीयां), शिवसिंह (वलूंदा), भाटी जसवंतसिंह (खेजड़ला) तथा ईडवा, चांदारूण, नोखा एवं नींबड़ी के मेड़तिया, भाद्राजूण के जोधा और जालोर की तरफ़ के छोटे-बड़े कई सरदार इस सेना में थे, जिसकी संख्या दस हज़ार हो गई थी। उनके अतिरिक्त वैतनिक सेना के लगभग दस हज़ार आदमी थे और कुल सैन्य-संख्या बीस हज़ार तक जा पहुंची थी। बीकानेर की सीमा में जोधपुर की सेना के प्रवेश करने पर वहां के मुसाहिब और सरदारों ने सात हज़ार सैनिकों के साथ ऊदासर में जोधपुर की सेना का मुक़ाबला किया। दुतरफ़ी तोपख़ानों की लड़ाई हुई। बीकानेरवालों की तोपों का गोला जोधपुर के सरदार हणवतसिंह (ईडवा) के लगा, जिससे वह मर गया। छापरी का चांदावत पहाड़सिंह भी इसी युद्ध में काम आया और भाद्राजूण के सैनिकों में से ऊदजी ऊदावत की आंख में गोली लगी। युद्ध का परिणाम बीकानेर के विपक्ष में रहा। बीकानेरवालों ने जोधपुर राज्य की सेना का आगमन होने के पूर्व ही मार्ग में पड़नेवाले कुओं और नाडियों में गधे तथा ऊंट मरवाकर डलवा दिये थे। इसलिए

श्रावणादि वि० सं० १८६५ (चैत्रादि १८६६) के आषाढ मास के आस-पास अमीरख़ां ने पुनः जयपुर जाकर उपद्रव करना शुरू किया।

जयपुर के साथ सन्धि होना

इसपर सन्धि करने के लिए महाराजा जगतसिंह ने अपना वकील जोधपुर भेजा। मानसिंह को भी इन्द्रराज एवं देवनाथ ने बीकानेर के समान जयपुर से संधि कर लेने की राय दी। तदनुसार परस्पर कई शर्तें तय होकर दोनों राज्यों के बीच सन्धि हो गई[1]।

इसी बीच अमीरख़ां ने महाराजा मानसिंह से निवेदन किया कि अबतक उदयपुर की राजकुंवरी कृष्णकुमारी जीवित है झगड़े की आशंका

जोधपुर के सेनाध्यक्ष इंद्रराज की सेना के जहां-जहां मुक़ाम होते, वहां सर्व-प्रथम कुओं और जलाशयों में से हड्डियां निकलवाकर गंगाजल से उन्हें शुद्ध कराना पड़ता। इसके बाद जब वह तथा अन्य प्रमुख सरदार उन कुओं तथा नाड़ियों का जल पी लेते, तब ही सैनिक लोग उस जल को ग्रहण करते थे। जोधपुर की सेना के साथ जल के प्रबंध के लिए ऊंटों पर एक हज़ार चमड़े की पखालें थीं। उस वर्ष बीकानेर में अच्छी वर्षा होने से फ़सल अच्छी पकी थी और मतीरों का बाहुल्य था, जिससे जोधपुरी सैनिक अपनी प्यास बुझाते थे। बीकानेरवालों ने किसी-किसी कुएं में सिंगीमोहरा नामक तेज़ ज़हर के गट्ठर बंधवाकर डलवा दिये थे। इससे पूरी जांचकर जल पीना पड़ता था। इंद्रराज के गजनेर तक पहुंच जाने पर बीकानेरवालों ने संधि की बात चलाई; जो स्वीकृत होकर तीन लाख रुपये सेना-व्यय के जोधपुरवालों को देना तय हुआ। इसके अतिरिक्त बीकानेर की तरफ़ से एक लाख रुपये इंद्रराज को और दो-दो हज़ार रुपये सरदारों को मिजमानी के दिये गये तथा पांचू गांव आयस देवनाथ को भेंट किया गया। गींगोली के युद्ध में हाथी आदि जो सामान बीकानेरवालों के हाथ लगा था, वह भी पीछा जोधपुर-वालों को दे दिया गया। उस समय लोढ़ा कल्याणमल और हीरासिंह सेना लेकर गजनेर जा रहे थे, जिनसे बीकानेर की सेना का मुक़ाबला हुआ, जिसमें कल्याणमल और हीरासिंह परास्त हुए। उनका सामान भी बीकानेरवाले ले गये थे। वह भी पीछा दे दिया गया और भविष्य में जोधपुर राज्य के किसी विरोधी को शरण न देने का इक़रार करा इंद्रराज और सूरजमल चैत्र मास में जोधपुर लौटे (जि० ४, पृ० ९६-७)।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ९७-८।

कृष्णाकुमारी का विष पीकर मरना

बनी रहेगी, अतएव जैसे भी हो उसे मरवा डालना ही ठीक है। महाराजा को भी उसकी बात पसंद आई और उसने उसे ही यह कार्य करने के लिए नियुक्त किया। अमीरख़ां ने उदयपुर जाकर अजीतसिंह चूंडावत के द्वारा, जो उसकी सेना में महाराणा की तरफ़ से वकील था, महाराणा से कहलाया—"या तो आप अपनी कन्या का विवाह महाराजा मानसिंह के साथ कर दें या उसे मरवा डालें, नहीं तो मैं आपके देश को बरबाद कर दूंगा।" मेवाड़ की दशा उस समय बड़ी निर्बल हो रही थी, जिससे उसे लाचार होकर अमीरख़ां की बात पर ध्यान देना पड़ा। उसने जवानदास (महाराणा अरिसिंह द्वितीय का पासवानिया पुत्र) को राजकुंवरी को मार डालने के लिए भेजा। ज़नानख़ाने के भीतर जाकर जब उसने राजकुमारी को देखा तो उससे यह कार्य न हो सका। अन्त में सारी बातें ज्ञात होने पर राजकुमारी स्वयं प्रसन्नतापूर्वक विष का प्याला पी गई। इस प्रकार वि० सं० १८६७ श्रावण वदि ५ (ई० स० १८१० ता० २१ जुलाई) को कृष्णाकुमारी के जीवन का अंत हो गया[१]।

---

(१) वीरविनोद; भाग २, पृ० १७३८-९। टॉड; राजस्थान; जि० १, पृ० ५३९-४१।

जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि जयपुर की बात स्थिर हो जाने के पीछे अमीरख़ां मेवाड़ गया। जोधपुर से उसके साथ पृथ्वीराज भंडारी और अनोपराम पंचोली वकील के रूप में गये। अमीरख़ां मेवाड़ के गांवों को नष्ट-भ्रष्ट करता हुआ उदयपुर के समीप जा पहुंचा। इसपर महाराणा ने अपने कर्मचारियों को अमरीख़ां आदि के पास भेजकर कहलाया कि मेरा मुल्क क्यों बरबाद करते हो? अमीरख़ां ने उत्तर दिया कि कृष्णाकुमारी मानसिंह से विवाह दी जावे। पृथ्वीराज और अनोपराम ने उत्तर दिया कि राणाजी की तरफ़ से मानसिंह के नाम ख़रीता भेजा जावे, उसकी जैसी इच्छा हो, वैसा करेंगे। इसपर मानसिंह के नाम ख़रीता भेजा गया। मानसिंह ने अमीरख़ां को लिखा कि भीमसिंह के साथ मंगनी की हुई कन्या को मैं नहीं व्याह सकता, तुम्हें जैसा ध्यान में आवे करो। यह समाचार अमीरख़ां ने उदयपुरवालों को सुनाया, तब उन्होंने विचार किया कि राजकुमारी के रहते फिर किसी दिन बखेड़ा हो

वि० सं० १८६७-८ (ई० स० १८१०-११) में जोधपुर राज्य में अकाल सा ही रहा, परन्तु वि० सं० १८६९ (ई० स० १८१२) में जोधपुर में वर्षा का पूर्ण अभाव हो जाने से अकाल की भयंकरता बहुत बढ़ गई और अनाज तीन सेर तक महंगा बिका[1]।

जोधपुर राज्य में भयंकर अकाल पड़ना

महाराजा मानसिंह सिरोही राज्य को अपने राज्य में मिलाना चाहता था। इस दृष्टि से उसने वि० सं० १८६९ (ई० स० १८१२) में अपनी फ़ौज सिरोही पर भेजी। वह सेना सिरोही तथा अन्य कई इलाक़ों को लूटने के बाद जोधपुर लौट गई[2]।

सिरोही पर सेना भेजना

उसी वर्ष जयपुर के महाराजा का ख़ास रुक़ा पहुंचने पर जोधपुर से सिंघवी इन्द्रराज और भंडारी शिवचंद जयपुर गये। इस अवसर पर आसोप का ठाकुर केसरीसिंह, आउवा का ठाकुर बख़्तावरसिंह तथा नींबाज का ठाकुर सुरताणसिंह और जोशी श्रीकिशन उनके साथ गये। वैशाख मास से लगाकर भाद्रपद मास तक वे वहां रहे। पहले के निश्चय के अनुसार जयपुर के महाराजा जगतसिंह की बहिन का विवाह मानसिंह के साथ और मानसिंह की कुंवरी का विवाह जगतसिंह के साथ होने के विषय में परस्पर सलाह होकर वि० सं० १८७० भाद्रपद सुदि ८ और ९ (ई० स०

जयपुर में महाराजा का विवाह होना

सकता है, इसलिए राजकुमारी को विष देकर मार डाला (जि० ४, पृ० ५८)।

कृष्णाकुमारी के सम्बन्ध के बखेड़ों को हम महाराजा मानसिंह की अविवेकता का ही परिणाम कहेंगे। मंगनी की हुई कन्या का भावी वर यदि विवाह के पूर्व ही मर जाय तो वह कन्या कुंआरी ही मानी जाती है और उसका विवाह उसके पिता माता की इच्छानुसार कहीं भी हो सकता है। यह शास्त्रोक्त और व्यावहारिक नियम है। ऐसी दशा में मानसिंह का तत्सम्बन्धी व्यर्थ का हठ उचित नहीं कहा जा सकता।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ६५।

(२) मेरा; सिरोही राज्य का इतिहास; पृ० २७६।

१८१३ ता० ३ और ४ सितंबर) को क्रमशः मानसिंह का विवाह जयपुर राज्य की सीमा पर के मरवा गांव तथा जगतसिंह का विवाह किशनगढ़ के रूपनगर क़स्बे में होना स्थिर हुआ। तदनंतर महाराजा मानसिंह नागोर पहुंच महाराजा सूरतसिंह से मिला और वहां से रूपनगर गया। वहां उसकी बरात में किशनगढ़ का महाराजा कल्याणसिंह और मसूदे का ठाकुर देवीसिंह आदि भी शरीक़ हुए। अनन्तर पहले दिन महाराजा मानसिंह का मरवा गांव और दूसरे दिन महाराजा जगतसिंह का रूपनगर में बड़ी धूमधाम से विवाह हुआ। इस अवसर पर जयपुर के महाराजा के आश्रित हिंदी भाषा के प्रसिद्ध कवि पद्माकर और जोधपुर के कविराजा बांकीदास के बीच काव्यचर्चा भी हुई[1]।

सिरोही के महाराव से धन वसूल करना

वि० सं० १८७० (ई० स० १८१३) में सिरोही का महाराव उदयभाण अपने छोटे भाई शिवसिंह, राज्य के कुछ अहलकारों एवं सिपाहियों के साथ सोरों की यात्रा को गया। वहां से लौटते समय वह कुछ दिनों के लिए पाली में ठहरा, जहां नाच-रंग, जिसका उसे बहुत शौक़ था, होने लगा। महाराजा मानसिंह सिरोही राज्य का कट्टर शत्रु था। पाली के हाकिम ने अपनी ख़ैरख़्वाही जतलाने के लिए महाराव के वहां ठहरने का हाल गुप्त रीति से महाराजा के पास भिजवा दिया। इसपर इसने तत्काल कुछ फ़ौज रवाना कर दी। उस सेना ने उस स्थान को, जहां महाराव ठहरा हुआ था, घेर लिया और महाराव के कुल साथियों सहित उसको गिरफ़्तार कर जोधपुर भिजवा दिया। महाराजा ने तीन मास तक उसे अपने यहां रक्खा और गुप्त रीति से उससे जोधपुर की अधीनता स्वीकार करने के संबंध में एक तहरीर लिखवा ली। अनन्तर एक लाख पचीस हज़ार रुपये देने की शर्त पर महाराजा ने सदा के व्यवहार के अनुसार उससे मुलाक़ात की, जिसके बाद महाराव अपने साथियों-सहित सिरोही

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ६७-८।

चला गया[1]।

उमरकोट पर पुनः टालपुरियों का अधिकार होना

उमरकोट पर जोधपुर राज्य का क़ब्ज़ा स्थापित होने का उल्लेख ऊपर आ गया है[2]। जोधपुर राज्य में वि० सं० १८६६ (ई० स० १८१२) में भीषण अकाल हो जाने से उमरकोट के प्रबंध के लिए धन न भेजा जा सका और वहां की व्यवस्था में शीथिलता आ गई। इसका पता पाते ही टालपुरियों ने सेना एकत्र कर उमरकोट पर आक्रमण कर दिया। उस समय वहां का हाकिम भंडारी शिवचंद शोभाचंदोत था और कर्मचारी मोदी अजबनाथ। जोधपुर की सेना टालपुरियों का मुक़ाबला न कर सकी और वहां उनका पुनः अधिकार स्थापित हो गया[3]।

नवाब की सेना का जोधपुर जाना

श्रावणादि वि० सं० १८७१ (चैत्रादि १८७२ = ई० स० १८१५) के वैशाख (मई) मास में नवाब मुहम्मदशाह[4] की फ़ौज रुपया वसूल करने के लिए जोधपुर गई और मेड़ते में ठहरी। उसने मेड़ते का बड़ा बिगाड़ किया, जिसपर वहां के हाकिम पंचोली गोपालदास का चाचा अभयमल, जो उस समय वहां था, भागकर जोधपुर चला गया। अनन्तर मुसलमान सेना जोधपुर की तरफ़ गई। तब सिंघवी इन्द्रराज ने तीन लाख रुपया देने का इक़रार कर उसे वापस लौटाया[5]।

उसी वर्ष भाद्रपद (सितंबर) मास में अमीरख़ां भी जोधपुर पहुंचा।

---

(१) मेरा; सिरोही राज्य का इतिहास; पृ० २७६-८०।

जोधपुर राज्य की ख्यात में भी इस घटना का संक्षिप्त वर्णन है, परन्तु उसमें ५०-६० हज़ार रुपयों का रुक़ा लिखा जाना दिया है। उसके अनुसार जोधपुर की फ़ौज के अध्यक्ष छोटेख़ां और कलंदरख़ां नामक परदेशी थे (जि० ४, पृ० ६६)।

(२) देखो ऊपर पृ० ७२८-३३।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० ११८।

(४) संभवतः यह अमीरख़ां का पुत्र रहा हो, जो वज़ीरमुहम्मदख़ां के नाम से प्रसिद्ध था।

(५) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ७०-१।

उसने मार्ग में पड़नेवाले स्थानों को लूटा तो नहीं, परन्तु जगह-जगह रुपया लेना अवश्य स्थिर किया। जोधपुर में उन दिनों सिंघवी इन्द्रराज तथा आयस देवनाथ की बहुत चलती थी और मानसिंह एक प्रकार से उन्हीं के कहने में था, जिससे अन्य सरदार उनसे अप्रसन्न रहते थे। अमीरखां के जोधपुर पहुंचने पर उन सरदारों ने उसकी मारफ़त दोनों को मरवाने का विचार किया। शेखावतजी के तालाब पर अमीरखां का डेरा होने पर अखैचंद तथा ज्ञानमल ने, जो इन्द्रराज के विरोधी थे, सरदारों की मारफ़त उसे इन्द्रराज के विरुद्ध भड़काया और उससे कहलाया कि यदि आप देवनाथ और इन्द्रराज को मरवा दें तो हम आपको खर्च दें। तब अमीरखां ने भी उन्हें मारने का निश्चय किया। उसने इन्द्रराज से अपनी रक़म की मांग की। इस बीच इन्द्रराज को इस गुप्त अभिसंधि का पता लग गया, जिससे उसने तलहटी में जाना ही छोड़ दिया। ऐसी दशा में अमीरखां ने अपने सरदारों से रायकर यह तय किया कि पांच-पचीस आदमी गढ़ में जाकर उन दोनों पर चूक करें। इसपर आश्विन सुदि ८[1] (ता० १० अक्टोबर) को प्रातःकाल के समय सत्ताइस आदमी गढ़ में गये और उन्होंने महाराजा के शयनागार में, जहां आयस देवनाथ, सिंघवी इन्द्रराज और मोदी मूलचंद सलाह कर रहे थे, प्रवेशकर कड़ाबीन से गोलियां चला देवनाथ और इन्द्रराज को मार डाला। मोदी मूलचंद तथा पुरोहित गुमानसिंह (तिंवरी) आदि कई व्यक्ति भी मारे गये। महाराजा मानसिंह उस समय निकट ही मोतीमहल में था। ज्योंही उसे सब हाल मालूम हुआ, उसने सब उपद्रवकारियों को मार डालने की आज्ञा दी, पर अमीरखां के साथ मिले हुए लोगों ने उसके-द्वारा नगर लूटे जाने का भय दिखलाकर महाराजा से पहले का हुक्म स्थगित कराया और उन्हें निकल जाने दिया। अन्त में साढ़े नौ लाख रुपये फ़ौज खर्च के अमीरखां

अमीरखां का देवनाथ और इन्द्रराज को मरवाना

(१) "वीरविनोद" में इस घटना का समय वि० सं० १८७३ चैत्र सुदि ८ (ई० स० १८१६ ता० ५ अप्रेल) दिया है (भाग २, पृ० ८६४)।

को देना तय हुआ, जिसमें से आधा मेहता अखैचंद और आधा सेठ राजाराम तथा जोशी श्रीकृष्ण ने देना स्वीकार कर उसका प्रबंध कर दिया। तब वहां से रुपये लेकर अमीरखां ने प्रस्थान किया[1]। आयस देवनाथ और इन्द्रराज के मारे जाने का महाराजा को इतना दुःख हुआ कि उसने राज्य-कार्य करना और बाहर आना-जाना तक छोड़ दिया[2]।

सिंघवी गुलराज का दीवान बनाया जाना

अनन्तर आसोप के ठाकुर केसरीसिंह, नींवाज के ठाकुर सुरताणसिंह, आउवा के ठाकुर बख़्तावरसिंह, चंडावल के ठाकुर विशनसिंह, कंटालिया के ठाकुर शंभूसिंह आदि की सलाह से राज्यकार्य-संचालन का भार मेहता अखैचंद को सौंपा गया एवं बख़्शीगीरी का कार्य भंडारी चतुर्भुज करता रहा। वे जो कुछ करते, महाराजा को उसका ज्ञान तो रहता, पर वह मुख से कुछ भी न कहता। सिंघवी गुलराज उस समय सोजत की तरफ़ था। वह यह खबर पाकर गांव कोट के ढाणा नामक स्थान में चला गया। वहां से उसने महाराजा के पास अर्ज़ी लिखी कि यह कार्य यदि आप की इच्छा के विरुद्ध हुआ हो तो मुझको आज्ञा दी जावे कि मैं दुश्मनों से बदला लूं। महाराजा ने इस विषय में गुलराज से गुप्तरूप से अपनी सहमति प्रकट की। तब उसने दो हज़ार आदमियों के साथ जोधपुर में प्रवेश किया और माघ सुदि ३ (ई० स० १८१९ ता० १ फ़रवरी) को वह राई का बाग़ में ठहरा। इसपर बख़्तावरसिंह, सुरताणसिंह, केसरीसिंह, विशनसिंह, शंभुसिंह आदि तथा भंडारी चतुर्भुज अपनी-अपनी हवेलियों से निकलकर

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ७०-४। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६५। टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०६१।

(२) टॉड लिखता है कि महाराजा को लोगों की तरफ़ से इतना सन्देह हो गया था कि वह केवल अपनी राणी के हाथ का बनाया हुआ भोजन ही खाता था। उसने सब कार्य करना छोड़ दिया था। लोगों ने उसे बहुत समझाया, परन्तु व्यर्थ। वह ईश्वर-प्रार्थना और देवनाथ की मृत्यु पर शोक करने के अतिरिक्त और कुछ न करता (था राजस्थान; जि० २, पृ० ८२६)।

चांदपोल पहुंचे और वहां से अखयराज के तालाब से होते हुए चोपासणी-(चांपासणी) चले गये। अखयचंद गढ़ में आत्माराम की समाधि में जा छिपा। दूसरे दिन गुलराज गढ़ पर गया तब दीवानगी की मोहर और बख़्शीगीरी का कार्य गुलराज को सौंपा गया। उपर्युक्त आसोप, नींबाज, आउवा आदि के सरदार चोपासणी से चंडावल गये। महाराजा की आज्ञानुसार सिंघवी चैनकरण उनके पीछे चंडावल गया, जिसके दबाव डालने पर वे (सरदार) अपनी-अपनी जागीरों में चले गये[1]।

जोधपुर की सेना का सिरोही इलाक़े में लूट-मार करना

सिरोही के महाराव के क़ैद किये जाने और उसके सवा लाख रुपये देने का शर्तनामा लिख देने का उल्लेख ऊपर आ गया है[2]। महाराव ने शर्तनामा तो लिख दिया था, परन्तु उसकी दिली मंशा रुपया चुकाने की न थी। इसीसे जब कुछ समय बाद जोधपुर की तरफ़ से रुपयों की मांग की गई तो सिरोही के मुसाहिबों ने उसपर कोई ध्यान न दिया। फलतः वि० सं० १८७३ (ई० स० १८१६) में महाराजा मानसिंह ने मेहता साहबचंद की अध्यक्षता में सिरोही पर सेना भेजी, जो भीतरोट परगने को लूट और दूसरे कई ठिकानों से रुपये वसूलकर जोधपुर लौटी[3]।

महाराजा मानसिंह का अपने कुंवर छत्रसिंह को राज्याधिकार देना

यह ऊपर लिखा जा चुका है कि महाराजा को आयस देवनाथ और सिंघवी इन्द्रराज के मारे जाने का इतना दुःख हुआ कि उसने राज्य-कार्य से हाथ खींच लिया, तो भी सिंघवी फ़तहराज और गुलराज निराश न हुए और राज्य-कार्य पूर्ववत् चलाते रहे। उस समय आत्माराम की समाधि की शरण में रहते हुए मेहता अखैचंद ने महामन्दिर के कार्य-कर्ता मेहता उत्तमचंद को अपनी तरफ़ मिलाकर आयस देवनाथ के भाई

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ७३-४। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६५-६।

(२) देखो ऊपर पृ० ८१५।

(३) मेरा; सिरोही राज्य का इतिहास; पृ० २८०।

भीमनाथ, कुंवर छत्रसिंह और उसकी माता को अपने पक्ष में कर लिया। उनके सिवाय उसने कई प्रमुख राजकर्मचारियों को भी अपने पक्ष में किया। अनन्तर भीमनाथ और उत्तमचंद गढ़ में गये। भीमनाथ ने महाराजा से कहा कि आप तो उदासीन रहते हैं, हमारी रक्षा कौन करेगा; अतएव अच्छा हो कि आप राज्य-कार्य अपने पुत्र छत्रसिंह को सौंप दें। महाराजा इसके विरुद्ध था, पर उसने उस समय सम्मति-सूचक उत्तर दे दिया। फिर श्रावणादि वि० सं० १८७३ (चैत्रादि १८७४) वैशाख वदि ३ (ई० स० १८१७ ता० ४ अप्रेल) को जब गुलराज महाराजा से मुलाक़ात करने के लिए क़िले पर गया तो अखैचंद के इशारे पर उसके आदमियों ने, जिन्होंने पहले से ही सारा प्रबंध कर रक्खा था, उस-(गुलराज)को महाराजा के पास से लौटते समय क़ैद कर लिया और रात्रि के समय मार डाला। फ़तहराज को यह समाचार मिलने पर जब वह क़िले पर जाने के लिए तैयार हुआ तो अमीरखां के आदमियों ने खर्च मांगने के बहाने उसको वहीं अटका दिया। मेड़ता के हाकिम पंडित गोपालदास ने पांच हज़ार रुपया देना ठहराकर जब उसको छुड़ाया तब वह अपने परिवार-सहित कुचामण चला गया। उधर इस घटना के तीसरे दिन अखैचंद के बुलाने पर भीमनाथ गढ़ पर गया। महाराजा ने यह देख-कर कि विरोध करने का समय अब नहीं रहा, छत्रसिंह को युवराज का पद देना स्वीकार कर लिया और वैशाख सुदि ३ (ता० १९ अप्रेल) को अपने हाथ से उसके तिलक कर दिया[1]।

राज्य में नये अधिकारियों की नियुक्ति

इसके दूसरे दिन बड़े समारोह के साथ छत्रसिंह को राज्याधिकार मिलने का उत्सव मनाया गया। सारा नगर सजाया गया और पूरे लवाज़मे के साथ छत्रसिंह की सवारी निकाली गई। भीमनाथ के करने का सारा कार्य वल्लभ संप्रदाय के गुसांई व्रजाधीश ने किया। अखैचंद कुल काम का

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ७९-८। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८९९। टॉड राजस्थान; जि० २, पृ० ८२९।

मुत्सद्दी और उसका पुत्र लक्ष्मीचंद दीवान बनाया गया, भंडारी शिवचंद का पुत्र अगरचंद बख़्शी एवं पोकरण का ठाकुर सालिमसिंह प्रधान मंत्री के पद पर नियत हुआ। आहोर का ठाकुर अनाड़सिंह, जो उ स समय कोटे में था, बुलाये जाने पर उपस्थित हो गया। इसी प्रकार अ न्य ओहदों पर भी अखैचंद की मर्ज़ी के मुताबिक़ दूसरे लोग नियुक्त कि ये गये[1]।

सिंघवी गुलराज पर चूक होने के पीछे सिंघवी चैनकरण काणाणा के ठाकुर श्यामकरण करणोत की हवेली में छिप रहा था। जालोर में रहते

सिंघवी चैनकरण का तोप से उड़ाया जाना

समय चैनकरण महाराजा भीमसिंह के पक्ष में रहा था। उसकी याद दिलाकर सरदारों ने छत्रसिंह को उसके विरुद्ध भड़काया। फिर उन्होंने श्यामकरण से इस विषय में राय पक्की की, जिसके अनुसार छत्रसिंह स्वयं जाकर चैनकरण को काणाणा की हवेली से ले आया और वह (चैनकरण) सिंवाची दरवाज़े पर तोप से उड़ा दिया गया[2]।

अनन्तर राजकीय सेना ने जाकर कुचामण के ठाकुर से चालीस हज़ार रुपये वसूल किये। इसी प्रकार मेड़ते का हाकिम गोपालदास क़ैद

कई व्यक्तियों से रुपये वसूल करना

किया जाकर उससे पैंतालीस हज़ार रुपये देने का क़रार कराया गया। व्यास चतुर्भुज वि० सं० १८७२ से ही क़ैद में था। उसपर दंड का एक लाख रुपया ठहराकर वह छोड़ दिया गया[3]।

उस समय महाराजा की तरफ़ से आसोप ... बिशनराम अंग्रेज़ों के पास वकील की हैसियत से रहता था। ... भारत के देशी राज्यों

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ७८-९। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६६।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ८०। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६६।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ८१-२

अंग्रेज़ सरकार के साथ संधि होना

को अपने संरक्षण में लेने की ईस्ट इंडिया कम्पनी और उसकी तरफ़ से भारत में रहनेवाले गवर्नर जेनरल लॉर्ड हेस्टिंग्ज़ ने नीति स्वीकार कर ली थी। तदनुसार जोधपुर राज्य की तरफ़ से भी ईस्ट इंडिया कम्पनी के साथ संधि की बात चलाई गई। उसके तय होते ही निम्नलिखित दस शर्तों का एक सन्धिपत्र लिखा गया[1]—

अंग्रेज़ी ईस्ट इंडिया कम्पनी की ओर से श्रीमान् गवर्नर जेनरल हेस्टिंग्स-द्वारा दिये हुए पूरे अधिकारों के अनुसार मि० चार्ल्स थिया-फ़िलास मेटकाफ़ के द्वारा तथा जोधपुर राज्य के महाराजा मानसिंह बहादुर-द्वारा अधिकार प्राप्त युवराज महाराजकुमार छत्रसिंह बहादुर, व्यास विशनराम एवं व्यास अभयराम-द्वारा किया हुआ अहदनामा।

शर्त पहली—ईस्ट इंडिया कम्पनी और महाराजा मानसिंह तथा उसके वंशजों के बीच मैत्री, सहकारिता तथा स्वार्थ की एकता सदा पुश्त दर पुश्त क़ायम रहेगी और एक के मित्र तथा शत्रु दोनों के मित्र एवं शत्रु होंगे।

शर्त दूसरी—अंग्रेज़ सरकार जोधपुर राज्य और मुल्क की रक्षा करने का ज़िम्मा लेती है।

शर्त तीसरी—महाराजा मानसिंह तथा उसके उत्तराधिकारी अंग्रेज़ सरकार का बड़प्पन स्वीकार करते हुए उसके अधीन रहकर उसका साथ देंगे और दूसरे राजाओं अथवा रियासतों से किसी प्रकार का संबंध न रक्खेंगे।

---

(१) एचिसन; ट्रीटीज़, एंगेजमेंट्स एण्ड सनद्ज़; जि० ३, पृ० १२८-३०। जोधपुर राज्य की ख्यात (जि० ४, पृ० ८२-४) तथा वीरविनोद (भाग २, पृ० ८८८-९१) में इस अहदनामे का अनुवाद छपा है।

इसके पूर्व वि० सं० १८६० (ई० स० १८०३) में भी एक अहदनामा तैयार हुआ था, परन्तु महाराजा के अस्वीकार करने के कारण वह रद्द कर दिया गया (देखो ऊपर पृ० ७७९-८०)।

शर्त चौथी—अंग्रेज़ सरकार को जतलाये बिना और उसकी स्वीकृति प्राप्त किये बिना महाराजा और उसके उत्तराधिकारी किसी राजा अथवा रियासत से कोई अहद-पैमान न करेंगे; परन्तु अपने मित्रों एवं संबंधियों के साथ उनका मित्रतापूर्ण पत्रव्यवहार पूर्ववत् जारी रहेगा।

शर्त पांचवीं—महाराजा और उसके उत्तराधिकारी किसी पर ज़्यादती न करेंगे। यदि दैवयोग से किसी से कोई झगड़ा खड़ा हो जायगा तो वह मध्यस्थता तथा निर्णय के लिए अंग्रेज़ सरकार के सम्मुख पेश किया जायगा।

शर्त छठी—जोधपुर राज्य की तरफ़ से अबतक सिंधिया को दिया जानेवाला ख़िराज, जिसका विस्तृत ब्योरा साथ में नत्थी है, अब सदा अंग्रेज़ सरकार को दिया जायगा और ख़िराज-सम्बन्धी जोधपुर राज्य का सिन्धिया के साथ का इक़रार ख़त्म हो जायगा।

शर्त सातवीं—चूंकि महाराजा का कथन है कि सिंधिया के अतिरिक्त और किसी राज्य को जोधपुर से ख़िराज नहीं दिया जाता और चूंकि उपरिलिखित ख़िराज अब वह अंग्रेज़ सरकार को देने का इक़रार करता है, इसलिए यदि अब सिंधिया अथवा अन्य कोई ख़िराज का दावा करेगा तो अंग्रेज़ सरकार उसके दावे का जवाब देगी।

शर्त आठवीं—मंगाये जाने पर अंग्रेज़ सरकार की सेवा के लिए जोधपुर राज्य को पन्द्रह सौ सवार देने पड़ेंगे और जब भी आवश्यकता पड़ेगी राज्य के भीतरी इन्तज़ाम के लिए सेना के कुछ भाग के अतिरिक्त शेष सब सेना महाराजा को अंग्रेज़ी सेना का साथ देने के लिए भेजनी होगी।

शर्त नवीं—महाराजा और उसके उत्तराधिकारी अपने राज्य के ख़ुदमुख़्तार रईस रहेंगे और उनके राज्य में अंग्रेज़ी हुकूमत का दख़ल न होगा।

शर्त दसवीं—दस शर्तों की यह संधि, जिसपर मि० चार्ल्स थियाफ़िलास मेटकाफ़ और व्यास विशनराम एवं व्यास अभयराम के हस्ताक्षर तथा मुहर हैं, दिल्ली में लिखी गई। श्रीमान् गवर्नर जेनरल तथा महाराजा मानसिंह और युवराज महाराजकुमार छत्रसिंह इसकी स्वीकृति कर आज

की तारीख से छः सप्ताह के भीतर एक दूसरे को सौंप देंगे।

दिल्ली ता० ६ जनवरी ई० स० १८१८ (पौष वदि अमावास्या वि० सं० १८७४)।

(हस्ताक्षर) सी० टी० मेटकाफ़.

,, व्यास विशनराम.

,, व्यास अभयराम.

,, युवराज महाराजकुमार छत्रसिंह वहादुर.

,, महाराजा मानसिंह वहादुर.

,, हेस्टिंग्स.

ता० १६ जनवरी ई० स० १८१८ (पौष सुदि १० वि० सं० १८७४) को ऊचार में श्रीमान् गवर्नर जेनरल ने इसकी तसदीक़ की।

(हस्ताक्षर) जे० एडम.

गवर्नर जेनरल का सेक्रेटरी.

खिराज सम्वन्धी इक़रारनामा

अजमेर के रुपये	१८००००)
वाद २० प्रतिशत के हिसाव से	३६०००)
जोधपुरी रुपये	१४४०००)
इसमें से आधा नक़द	७२०००)
आधे का माल	७२०००)
जोड़	१४४०००)
नुक़सानी	३६०००)
जोधपुरी रुपये	१०८०००)

(हस्ताक्षर) सी० टी०

(मुहर) वकील.

(हस्ताक्षर) जे० एडम.

गवर्नर जेनरल का सेक्रेटरी[1].

जोधपुर की सेना का सिरोही में लूट-मार करना

जोधपुर की सेना के सिरोही इलाक़े में लूट-मार करने से तंग आकर वहां के महाराव और उसके मुसाहिबों ने जोधपुर इलाक़े में लूट-मार करने का निश्चय किया। तदनुसार गुसांई रामदत्तपुरी और वोड़ा प्रेमा ने ससैन्य जाकर जालोर के काड़द्रा, वागरा, आकोली, धानपुरा, तातोली, सांड, नून, मांक, देलाद्री, बीलपुर, वुडतरा, सवरसा, सिपरवाड़ा, माडोली और भूतवा गांवों को लूटा और वहां से ३८५६ रुपये फ़ौजबाब (खर्च) के वसूल किये। इसी तरह उन्होंने गोड़वाड़ इलाक़े के कानपुरा, पालड़ी, कोरटा, सलोद्रिया, ऊंदरी, धनापुरा, पोमावा और शानपुरा गांवों को लूटा और वहां से १७८८ रुपये १४ आने फ़ौजबाब के लिये। जब इस लूट की ख़बर जोधपुर पहुंची तो सिरोही को बरबाद करने के लिए वहां से मेहता साहबचंद एक बड़ी सेना के साथ भेजा गया। इस फ़ौज ने सिरोही पहुंचकर वि० सं० १८७४ माघ वदि ८ (ई० स० १८१८ ता० २९ जनवरी) को सिरोही शहर

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि इस संधि के साथ-साथ जोधपुर की तरफ़ से और भी कई विषयों पर अंग्रेज़ सरकार से लिखा पढ़ी हुई थी, जिनमें गोड़वाड़ और उमरकोट के सम्बन्ध के दावे उल्लेखनीय हैं। गोड़वाड़ के सम्बन्ध में जोधपुर की तरफ़ से कहा गया कि यह इलाक़ा महाराणा अरिसिंह ने महाराजा विजयसिंह को सेना रखने के एवज़ में दिया था और इसको छत्रसिंह तक चार पीढ़ी हो गई है, अतएव महाराणा की तरफ़ से यदि इसके बारे में दावा किया जाय तो अंग्रेज़ सरकार उसकी सुनाई नहीं करेगी। इसके जवाब में अंग्रेज़ सरकार ने कहा कि जो मुल्क पीढ़ी-दर-पीढ़ी जोधपुर के क़ब्ज़े में है, वह उसी राज्य का समझा जायगा। उमरकोट के बारे में जोधपुर की तरफ़ से कहा गया कि यह इलाक़ा तीन साल हुए नौकरों की नमकहरामी की वजह से टालपुरियों के क़ब्ज़े में चला गया है, यदि वहां महाराजा अपनी सेना भेजे तो अंग्रेज़ सरकार किसी प्रकार का उज्र न करे। इसके उत्तर में अंग्रेज़ सरकार ने कहा कि यदि महाराजा अपनी तरफ़ से फ़ौज भेजेंगे तो अंग्रेज़ सरकार को कोई उज्र न होगा (जि० ४, पृ० ८४-५)।

पर आक्रमण कर दिया। महाराव ने इसपर शहर छोड़कर पहाड़ों में शरण ली। जोधपुर की सेना ने दस दिन तक शहर को लूटा और वहां से ढाई लाख रुपये का सामान लेकर वह लौटी। इसी सेना ने सिरोही राज्य का दफ़्तर भी जला दिया, जिससे वहां के सब पुराने पत्र आदि नष्ट हो गये। इस प्रकार मुल्क को बरबाद होता देखकर महाराव ने इधर-उधर से रुपया वसूल करना शुरू किया। इससे वहां और अव्यवस्था फैली। मीनों आदि के उपद्रव से पहले ही सिरोही निवासी तंग हो रहे थे, अब यह नई विपत्ति खड़ी हुई। ऐसी परिस्थिति देख सब सरदार महाराव उदयभाण के भाई शिवसिंह के पास गये और उन्होंने उससे राज्य के प्रबंध के विषय में बातचीत की। शिवसिंह ने उन्हें आश्वासन देकर विदा किया और स्वयं सिरोही जाकर महाराव (उदयभाण) को नज़रबन्द कर उसने राज्य-कार्य अपने हाथ में ले लिया। महाराजा मानसिंह ने महाराव को छुड़ाने के लिए अपनी सेना रवाना की, परन्तु उसे सफलता न मिली[1]।

महाराजकुमार छत्रसिंह की मृत्यु

अंग्रेज़ सरकार के साथ संधि स्थापित होने के बाद अधिक दिनों तक कुंवर छत्रसिंह जीवित न रहा और उपदंश रोग से वि० सं० १८७४ चैत्र वदि ४ (ई० स० १८१८ ता० २६ मार्च) को उसका देहांत हो गया। प्रथम दिन तो यह खबर छिपाई गई और यह प्रयत्न किया गया कि छत्रसिंह की शक्ल-सूरत का कोई व्यक्ति मिल जाय तो उसे ही राजा बना दें, पर यह युक्ति न चलने पर अगले दिन उसकी उत्तर क्रिया की गई। महाराजा को यह समाचार मिलने पर उसको रंज तो बहुत हुआ, परन्तु उसने ऊपर से अपना भाव पूर्ववत् रक्खा[2]।

---

(१) मेरा; सिरोही राज्य का इतिहास; पृ० २८०-१।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ८५-६। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६६। टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० १०६१। टॉड लिखता है कि छत्रसिंह की मृत्यु के कई कारण कहे जाते हैं। कुछ का कहना है कि वह बहुत दुराचारी था, जिससे शीघ्र ही शारीरिक शक्ति क्षीण हो जाने के कारण वह मर गया और कुछ का

तदनन्तर सरदारों ने यह प्रकट किया कि छत्रसिंह की चौहान राणी के गर्भ है, पर थोड़े समय बाद ही जब उसका भी देहांत हो गया तो उन्होंने ईडर से गोद लाने का विचार किया। इस संबंध में महाराजा से निवेदन किये जाने पर उसने उसपर कोई ध्यान नहीं दिया। अन्य लोगों ने भी परिस्थिति की गम्भीरता बतलाकर उसे बाहर आकर कार्य संभालने के लिए कहा, परन्तु उसे किसी व्यक्ति पर भी भरोसा न था, जिससे वह मौन ही साधे रहा। यह खबर जब दिल्ली पहुंची तो वहां के अंग्रेज़ अफ़सरों की तरफ़ से मुंशी बरकतअली[1] महाराजा से मिलने के लिए भेजा गया। आश्विन मास में बरकतअली जोधपुर पहुंचा। मुसाहब, कार्यकर्ता आदि उसे साथ लेकर महाराजा के पास गये, पर उस दिन महाराजा कुछ भी न बोला। दूसरे दिन जब बरकतअली अकेला महाराजा के पास गया तो उसने उससे कहा कि सरदारों की मनमानी और मुझे मारने के षड्यंत्र से घबराकर ही मैंने यह हालत बना रक्खी है। यदि अंग्रेज़ सरकार मेरी सहायता करे तो मैं राज्य-प्रबंध हाथ में लेने को प्रस्तुत हूं। इसपर बरकतअली ने उसकी पूरी-पूरी दिलजमई कर उससे कहा कि आप प्रसन्नता से राज्य करें और बदमाशों को सज़ा दें। यहां सरकारी खबर-नवीस रहा करेगा, आपको जो भी कहना हो उससे कहें। अनंतर सरकार में भी रिपोर्ट होकर वहां से इस संबंध में खरीता आ गया। तबतक राज्य-कार्य पूर्ववत् होता रहा। इस बीच सरदारों ने पोकरण के कार्यकर्ता बुद्धसिंह को महाराजा के पास भेजकर यह जानना

महाराजा से मिलने के लिए अंग्रेज़ सरकार का एक अधिकारी भेजना

कहना है कि एक राजपूत ने, जिसकी पुत्री का उसने सतीत्वहरण करने का प्रयत्न किया था, उसे मार डाला (राजस्थान; भाग २, पृ० ८२९-३०)।

(१) टॉड-कृत "राजस्थान" में मुन्शी बरकतअली का नाम नहीं है। उसमें मि० वाइल्डर नाम दिया है (जि० २, पृ० १०९३ टि० २)। संभव है दोनों को ही अंग्रेज़ सरकार ने महाराजा मानसिंह के पास भेजा हो। उसी पुस्तक से पाया जाता है कि उस समय अंग्रेज़ सरकार ने महाराजा को सैनिक-सहायता देनी चाही थी, परन्तु उसने अस्वीकार कर दिया।

चाहा कि महाराजा की वास्तविक दशा ही वैसी है अथवा वह बना हुआ है, परन्तु कुछ भी निर्णय न हो सका[1]।

जोधपुर की राजकुमारी का विवाह जयपुर होने पर व्यास फौज़ीराम उसके साथ जयपुर भेजा गया था। धीरे-धीरे उसपर महाराजा जगतसिंह की विशेष कृपा हो गई और वह वहां का मुसाहब हो गया। उससे बातचीतकर सिंघवी फ़तहराज कुचामण से जयपुर गया और वहां का शासन-प्रबन्ध अपने हाथ में लेने का प्रपंच करने लगा। इसपर जयपुरवालों को उसकी तरफ़ से शङ्का हो गई। उन्होंने इस सम्बन्ध में महाराजा जगतसिंह से कहा, जिसपर उसने फ़ौजीराम को क़ैद करवा दिया। इसपर फ़तहराज भागकर कुचामण गया और वहां से जोधपुर की अव्यवस्था से लाभ उठाने के लिए वह अपने सारे साथवालों और कुचामण के ठाकुर शिवनाथसिंह के साथ वि० सं० १८७५ (ई० स० १८१८) के श्रावण मास में जोधपुर जाकर बाल-समंद पर ठहरा[2]।

सिंघवी फ़तहराज का जयपुर और फिर वहां से जोधपुर जाना

जोधपुर के सरदार आदि बहुत पहले से ही महाराजा मानसिंह से एकांतवास छोड़कर राज्य-कार्य अपने हाथ में लेने का अनुरोध कर रहे थे। बहुत समय तक तो उसने उधर कोई ध्यान नहीं दिया, फिर वि० सं० १८७५ कार्तिक सुदि ५ (ई० स० १८१८ ता० ३ नवंबर) को उसने एकान्तवास का परित्याग करने के अनन्तर क्षौर-कर्म, स्नान आदि कर दरबार किया, जिसमें सरदारों ने उपस्थित होकर नज़रें आदि पेश कीं। फ़तहराज गढ़ में जाया करता था पर उसका कार्य सधा नहीं[3]।

महाराजा का एकान्तवास त्यागना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ८६-७। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६७।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ८७-८।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ८८-९। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६७।

उसी वर्ष माघ मास में महाराजा की अनुमति प्राप्तकर अखैराज ने राज्य के आय-व्यय का मीज़ान ठीक करने के लिए सरदारों से एक-एक गांव देने के लिए कहा। इसपर नींबाज, आउवा, चंडावल, आसोप, खेजड़ला, कुचामण, रायपुर, पोकरण, भाद्राजूण आदि के ठाकुरों ने एक-एक गांव देना स्वीकार कर लिया। इस प्रकार आमदनी में तीन लाख रुपयों की वृद्धि हुई। उन्हीं दिनों राजकीय सेना ने जाकर बूडसू पर अधिकार कर लिया, जिसपर वहां का स्वामी ढूंढाड़ चला गया। उसी समय के आस-पास पोकरण का ठाकुर सालिमसिंह राज्य का प्रधान नियत हुआ[1]।

राज्य की आय बढ़ाने के लिए सरदारों से एक-एक गांव लेना

जब प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता कर्नल टॉड पश्चिमी राजपूताने का पोलिटिकल एजेंट नियत हुआ तो उदयपुर, हाड़ोती, कोटा, बूंदी, सिरोही, जैसलमेर तथा जोधपुर आदि रियासतों का प्रबंध भी उसी के सुपुर्द किया गया। ई० स० १८१९ (वि० सं० १८७६) के अन्तिम दिनों में उसने जोधपुर का दौरा किया। ता० ११ अक्टोबर (कार्तिक वदि ८) को उदयपुर से प्रस्थान कर पलाणा, नाथद्वारा, केलवाड़ा, नाडोल, पाली, कांकाणी तथा झालामंड होता हुआ नवंबर मास में वह जोधपुर पहुंचा। ता० ४ नवंबर (मार्गशीर्ष वदि २) को महाराजा मानसिंह उससे मिला। महाराजा ने उसका बड़ी शानोशौकत के साथ स्वागत किया। टॉड लिखता है कि जोधपुर का स्वागत दिल्ली के शाही ढंग का था। महाराजा ने उसे एक हाथी, एक घोड़ा, आभूषण, ज़री का थान, दुशाला आदि भेंट में दिये। ता० ६ नवंबर (मार्गशीर्ष वदि ४) को वह पुनः महाराजा से मिला और उसने उससे राज्यशासन संबंधी बातचीत की[2]।

कर्नल टॉड का जोधपुर जाना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ८९-९०।

(२) टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० ८२२ तथा ८२४।

एकान्तवास का परित्याग करने के बाद महाराजा ने क्रमशः अपने पक्ष के लोगों की संख्या बढ़ाई। सिंघवी इन्द्रराज तथा आयस देवनाथ को मरवाने के षड्यन्त्र में शामिल रहने के कारण महाराजा अखैचंद तथा उसके साथियों से नाराज़ तो था ही, एक दिन उपयुक्त अवसर देख उसने मेहता लक्ष्मीचन्द, क़िलेदार नथकरण देवराजोत, व्यास विनोदीराम, मुन्शी पंचोली जीतमल, धांधल मूला, जीया, हरजी आदि ८४ आदमियों को क़ैद करवा दिया। यह घटना श्रावणादि वि० सं० १८७६ (चैत्रादि १८७७) वैशाख सुदि १४ (ई० स० १८२० ता० २७ अप्रेल) को हुई। उसी समय अखैचंद भी गिरफ़्तार हुआ[1]। इसके बाद द्वितीय ज्येष्ठ सुदि १३ (ता० २४ जून) को परिवार-सहित मेहता सूरजमल, व्यास चतुर्भुज के पुत्र शिवदास एवं लालचन्द, जोशी श्रीकिशन और पंचोली गोपालदास क़ैद किये गये। इस पकड़ा-धकड़ी से नींबाज का सुलतानसिंह बड़ा चिंतित हुआ और उसने द्वितीय ज्येष्ठ सुदि १५ (ता० २६ जून) को इस सम्बन्ध में पोकरण के ठाकुर सालिमसिंह से बातचीत की। उसी रात राजकीय सेना के नींबाज पर आक्रमण करने की खबर पाकर सुलतानसिंह वहां से पोकरण की हवेली जाने के लिए निकला, परन्तु मार्ग में ही मोतीचौक में उसका राजकीय सेना से सामना हुआ, जिससे वह पीछा अपनी हवेली में चला गया। इसपर राज्य की सेना ने हवेली को घेर लिया। भीतर प्रवेश करने के लिए सुरंग खोदी गई। यह देखकर सुलतानसिंह अपने छोटे भाई सूरसिंह और दूसरे १८ आदमियों-सहित बाहर निकला, परन्तु तोपों के छर्रों की मार से आषाढ वदि १ (ता० २७ जून) को अपने सब साथियों-सहित मारा

महाराजा का अपने विरोधियों को निर्दयतापूर्वक मरवाना

(१) टॉड लिखता है कि अखैचंद ने ४० लाख रुपये की जायदाद की सूची बनाकर दी, जिसमें से अधिकांश ले लेने के बाद महाराजा ने उसे मरवा डाला। उससे यह भी पाया जाता है कि महाराजा राज्य-कार्य हाथ में लेने के बाद से ही उससे नाराज़ था और उसे मरवा देने के लिए उपयुक्त अवसर की तलाश में था। साथ ही वह सारे राजकीय मामले अच्छी तरह समझ लेना चाहता था (राजस्थान; जि० २, पृ० ८३१-२)।

गया[1]। यह समाचार मिलने पर ठाकुर सालिमसिंह अपने अनेक आदमियों सहित महामंदिर होता हुआ पोकरण चला गया[2]। आसोप के ठाकुर केसरीसिंह को जब इस घटना की खबर मिली तो वह देशणोक (बीकानेर) में जा रहा और वहीं पौष मास में उसकी मृत्यु हुई। इसपर आसोप की सारी जागीर उस समय खालसा कर ली गई। इसी प्रकार पोकरण के कुछ गांव तथा रोहट, चंडावल, खेजड़ला, नींबाज आदि के पट्टे भी ज़ब्त कर लिये गये[3]।

उपरिलिखित क़ैद किये हुए व्यक्तियों के साथ, महाराजा ने बड़ा निर्दयतापूर्ण व्यवहार किया। वह मानो सिंघवी इन्द्रराज एवं आयस देवनाथ की मृत्यु का बदला लेने के लिए अन्धा हो रहा था। वह उन्हें केवल क़ैद करके ही सन्तुष्ट न हुआ, बल्कि नगजी क़िलेदार तथा धांधल मूला को विष का प्याला पीने पर मजबूर किया गया और उनके मृत शरीर फ़तहपोल के नीचे फेंक दिये गये[4]। जीवराज,

---

(१) टॉड-कृत "राजस्थान" में सुरताणसिंह के साथ मरनेवालों की संख्या ८० दी है (जि० २, पृ० १०९९)।

(२) टॉड के अनुसार पोकरण का सालिमसिंह अपनी रक्षा के लिए रेगिस्तान में चला गया (राजस्थान; जि० २, पृ० १०९९)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ९०-९५। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६७८। ख्यात के अनुसार उपर्युक्त स्थानों के सरदार पड़ोसी राज्यों में जा बसे। टॉड के अनुसार भी महाराजा के क्रूर व्यवहार से घबराकर उसके कितने ही प्रमुख सरदार पड़ोस के राज्यों में चले गये। (राजस्थान; जि० २, पृ० ११०१)।

(४) जोधपुर राज्य की ख्यात (जि० ४, पृ० ९२-३) में निम्नलिखित पांच व्यक्तियों को प्रथम ज्येष्ठ सुदि १४ (ता० २९ मई) को विष देकर मरवाने का उल्लेख है—

१. क़िलेदार नथकरण २. मेहता अखैचन्द ३. व्यास विनोदीराम ४. मुंशी पंचोली जीतमल और ५. जोशी फ़तहचन्द।

"वीरविनोद" (भाग २, पृ० ८६७) में भी ये पांच नाम ही दिये हैं, पर उसमें से किसी का मृत शरीर गढ़ से नीचे फेंके जाने का उल्लेख नहीं है।

बिहारीदास खीची[1] एवं एक दूसरे व्यक्ति को उनके सिर मुंडवाकर गढ़ के नीचे फिंकवाया गया। इससे मिलता-जुलता व्यवहार व्यास शिवदास तथा जोशी श्रीकिशन[2] के साथ भी हुआ[3]।

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार खीची बिहारीदास तलहटी में था। वह खेजड़ला के ठाकुर शार्दूलसिंह एवं साथीण के ठाकुर शक्तिदान के साथ खेजड़ला की हवेली में चला गया। महाराजा को मालूम होने पर उसने भाटियों से कहा, परन्तु बिहारीदास पकड़ा न गया। तब कलंदरखां भेजा गया, जिससे लड़ता हुआ बिहारीदास मारा गया (जि० ४, पृ० ६२)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार जोशी श्रीकिशन तथा मेहता सूरजमल विष देकर मारे गये (जि० ४, पृ० ६६)। उससे यह भी पाया जाता है कि महाराजा ने कुंवर छत्रसिंह की माता अर्थात् अपनी चावड़ी राणी को एकान्त महल में क़ैद करवा दिया, जहां अन्न-जल न मिलने से उसका देहांत हो गया। "वीरविनोद" में भी ऐसा ही लिखा है (भाग २, पृ० ८६८)।

(३) राजस्थान; जि० २, पृ० १०६७-८। एक दूसरे स्थल पर टॉड लिखता है कि नित्य कुछ आदमी मारे अथवा क़ैद किये जाते अथवा उनका धन अपहरण कर लिया जाता था। कहा जाता है कि इस प्रकार महाराजा ने एक करोड़ रुपया ज़ब्त किया (राजस्थान; जि० २, पृ० ८३२)।

जोधपुर राज्य की ख्यात में क़ैद किये हुए व्यक्तियों के साथ ऐसा निर्दयतापूर्ण व्यवहार करने का उल्लेख तो कहीं नहीं है, परन्तु उसमें भी कई व्यक्तियों की नाक काटकर उनका मुक्त किया जाना लिखा है (जि० ४, पृ० ६६)। जो भी हो महाराजा का इस प्रकार का आचरण अवश्य निंदनीय था। केवल कुछ व्यक्तियों के अपराध के कारण इतने आदमियों को बुरी तरह मरवाना किसी भी दशा में क्षम्य नहीं कहा जा सकता। अपने ई० स० १८२० ता० ७ जुलाई (वि० सं० १८७७ आषाढ वदि १२) के अंग्रेज़ सरकार के नाम के पत्र में टॉड ने लिखा था—

"भय तो यह है कि अपनी सफलता से उत्साहित होकर वह (मानसिंह) न्याय-पालन अथवा अपनी स्थिति दृढ़ करने के लिए सीमा से आगे न बढ़ जाय। यदि वह ई० स० १८०६ (वि० सं० १८६३) के षड्यन्त्र में भाग लेने और उसके पुत्र को राज्य का उत्तराधिकारी बनानेवाले पोकरण के सरदार अथवा एक दो दूसरे निम्न श्रेणी के सरदारों एवं राज्य के कुछ ओहदेदारों को सज़ा देकर ही बस कर दे तो लोगों के विचार उसके चरित्र के सम्बन्ध में ऊंचे ही बने रहेंगे, परन्तु यदि उसने आउवा के सर-

मेहता अखैचन्द का घर लूटने से एक लाख उनतीस हज़ार रुपयों का सामान राज्य के क़ब्ज़े में आया। उसके पुत्र और पौत्र (क्रमशः लक्ष्मीचन्द तथा मुकुन्दचन्द) से तीस हज़ार रुपये दंड के ठहराकर महाराजा ने वि० सं० १८७६ में उन्हें मुक्त कर दिया और उसके भतीजे फ़तहचन्द पर सत्ताइस हज़ार रुपये दंड के लगाये। अखैचंद की हवेली ज़ब्त कर वाभा (अनौरस पुत्र) लालसिंह को दे दी गई। इसी प्रकार मेहता सूरजमल के पुत्र बुद्धमल से ५५०००, व्यास विनोदीराम के पुत्र गुमानीराम से १५०००, क़िलेदार नथकरण के पुत्र अमलदार कंडीर से ४०००, पंचोली गोपालदास से २५००० तथा अन्य कई आदमियों से इसी हिसाब से रुपये ठहराये गये[1]।

महाराजा का अपने विरोधियों से रुपये वसूल करना

उन्हीं दिनों महाराजा ने नये सिरे से अपने ओहदेदारों की नियुक्ति की। सिंघवी फ़तहराज दीवान के पद पर नियुक्त हुआ और जालोर, पाली, परवतसर, मारोठ, नागोर, गोड़वाड़, फलोधी, डीडवाणा, नावां, पचपदरा आदि में नवीन हाकिम नियुक्त किये गये। जोधपुर का प्रबंध करने के लिए निम्नलिखित पांच व्यक्ति मुसाहब बनाये गये—

नये हाकिमों की नियुक्ति

१. दीवान फ़तहराज, २. भाटी गजसिंह, ३. छागाणी कचरदास, ४. धांधल गोरधन तथा ५. नाज़र इमरतराम[2]।

अनंतर नींबाज पर पुनः राज्य की तरफ़ से सेना भेजी गई। सुरताणसिंह के पुत्र ने वीरतापूर्वक गढ़ की रक्षा की। अन्त में महाराजा के

दार अथवा अन्य प्रमुख सरदारों को भी सजाएं दीं, तो ऐसे असन्तोष की उत्पत्ति होगी कि वह भी घबरा उठेगा। न्याय के लिए उसने अब तक जो किया वह काफ़ी है और प्रतिशोध की दृष्टि से भी, क्योंकि सुरताणसिंह की मृत्यु (जिसका मुझे आन्तरिक खेद है) एक निरर्थक बलि के समान है।"

राजस्थान; जि० २, पृ० १०६६ टि० १।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ६६-७।

(२) वही; जि० ४, पृ० ६७-८।

नींबाज पर पुनः राजकीय सेना जाना

हस्ताक्षर-सहित माफ़ी और जागीर बहाल होने का परवाना मिलने पर उसने आत्मसमर्पण कर दिया। उसके ऐसा करते ही महाराजा के अनुयायियों ने महाराजा का दूसरा परवाना दिखाकर उसे गिरफ़्तार करना चाहा। जोधपुर का सेनापति उनके इस आचरण से बहुत अप्रसन्न हुआ, क्योंकि उसके वचन देने पर ही उसने आत्मसमर्पण करना स्वीकार किया था; अतएव उसने उसे हिफ़ाज़त के साथ अर्वली की पहाड़ियों में भिजवा दिया, जहां से वह मेवाड़ में जा रहा[1]।

वि० सं० १८७४ (ई० स० १८१८) में जोधपुर की अंग्रेज़ सरकार के साथ जो संधि हुई थी, उसमें एक शर्त यह भी थी कि महाराजा पन्द्रह सौ सवार अंग्रेज़ सरकार की सेवा में भेजेगा[2]। तदनुसार वि० सं० १८७८ (ई० स० १८२१) में महाराजा ने बख़्शी सिंघवी मेघराज, धांधल गोरधन, ठाकुर बख़्तावरसिंह (भाद्राजूण) आदि के साथ १५०० सवार दिल्ली भेजे। वे लोग कई मास तक दिल्ली में रहने के बाद वि० सं० १८७९ (ई० स० १८२२) में वापस जोधपुर लौटे[3]।

सन्धि के अनुसार दिल्ली में सवार सेना भेजना

देवनाथ के मारे जाने के बाद महामन्दिर का अधिकार उसके भाई भीमनाथ ने अपने हाथ में ले लिया था और वह देवनाथ के पुत्र लाडूनाथ को बहुत तंग करता था। इसपर लाडूनाथ ने महाराजा के पास जाकर इस विषय में कहा तो उसने उसे महामन्दिर में रक्खा और भीमनाथ के लिए इमरतराम नाज़र के द्वारा उदयमन्दिर बनवाकर उसकी प्रतिष्ठा भी महामन्दिर के समान ही रक्खी[4]।

उदयमन्दिर की स्थापना

(१) टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० ११००।

(२) देखो ऊपर पृ० ८२४।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ६८। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६८।

(४) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ६८। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६८।

जोधपुर के प्रबन्ध के लिए नियुक्त मुसाहिबों ने कुछ दिनों तक तो एकत्र रहकर ठीक-ठीक कार्य किया, परन्तु पीछे से उनमें दो दल हो गये और वे महाराजा से एक दूसरे की शिकायत करने लगे। इसपर महाराजा ने उन सबसे अलग-अलग कई लाख रुपये वसूल किये[1]।

हाकिमों में परस्पर अनैक्य होने पर उनसे दंड वसूल करना

महाराजा के अत्याचारपूर्ण व्यवहार से तंग आकर उसके कितने ही सरदार दूसरे राज्यों—कोटा, मेवाड़, बीकानेर, जयपुर आदि—में जा रहे थे और वहाँ से अपने-अपने ठिकानों को पीछा प्राप्त करने के लिए अंग्रेज़ सरकार से लिखा-पढ़ी कर रहे थे[2]। वि० सं० १८८०

ठिकानों के सम्बन्ध में सरदारों की अंग्रेज़ सरकार से बातचीत

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ६८-९। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६८।

(२) टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० ११०१। टॉड ने एक स्थल पर मारवाड़ से भागे हुए सरदारों की अंग्रेज़ सरकार के पश्चिमीय राजपूत राज्यों के पोलिटिकल एजेंट के नाम लिखे हुए एक प्रार्थनापत्र का उल्लेख किया है, जो इस प्रकार है—

प्रणामोपरान्त [निवेदन]

हम लोगों ने आपकी सेवा में एक विश्वासपात्र मनुष्य भेजा है, जो आपसे हम लोगों के विषय में निवेदन करेगा। सरकार कम्पनी हिन्दुस्तान की बादशाह है और आप हम लोगों की दशा अच्छी तरह जानते हैं। यद्यपि हमारे देश के विषय में ऐसी कोई बात नहीं है, जो आपसे छिपी हुई हो, फिर भी हमारे सम्बन्ध की एक विशेष बात है, जिसका [आप पर] प्रकट करना आवश्यक है।

श्रीमहाराजा और हम लोग सब एक ही राठोड़ कुल के हैं। वे हम लोगों के मालिक और हम उनके सेवक हैं। परन्तु अब वे क्रोधवश हो गये हैं और हम लोग अपने देश से बेदख़ल कर दिये गये हैं। जागीर, हमारी पैतृक भूमि और हमारे घर-बार में से कई एक ख़ालसा कर लिये गये हैं। वे लोग भी, जो अलग रहने का यत्न करते हैं, अपनी वही दुर्दशा होने की बात देख रहे हैं। कुछ लोगों को, उनकी रक्षा की धर्मपूर्वक प्रतिज्ञा कर, धोका दिया और मार डाला तथा बहुतों को क़ैद कर दिया है। मुत्सद्दी, राजा के प्रधान कर्मचारी, देशी और विदेशी लोग पकड़े गये

(ई० स० १८२३) में आसोप का कार्यकर्ता कूंपावत हरिसिंह, आउवा का पंचोली कानकरण, चंडावल का कूंपावत दौलतसिंह और नींबाज का कार्य-

हैं, और उनके साथ ऐसे कठोरता एवं निर्दयता के व्यवहार किये गये हैं, जो कभी सुने तक नहीं गये थे तथा जिनको हम लोग लिख भी नहीं सकते हैं। महाराजा के हृदय में ऐसा भाव उत्पन्न हुआ है, जैसा जोधपुर के किसी महाराजा में पहले देखा नहीं गया। उनके पूर्वजों ने पीढ़ी-दर पीढ़ी राज्य किया है। हम लोगों के पूर्वज उनके मंत्री और सलाहकार रहे हैं एवं जो कुछ किया जाता था, हमारी सरदारों की सभा की सम्मति से होता था। उनके पूर्वजों ने एवं हमारे पूर्वजों ने औरों के प्राण लिये और अपने दिये हैं तथा बादशाहों की सेवा कर जोधपुर राज्य को, जैसा वह इस समय है, बनाया है। जहां कहीं मारवाड़ के विषय का कार्य पड़ा वहीं हमारे पूर्वज पहुंचे और उन्होंने अपनी जान देकर देश की रक्षा की। कभी-कभी हम लोगों के स्वामी नाबालिग़ भी रहे। उस समय भी हमारे पूर्वजों की बुद्धिमानी, और सेवा से देश हमारे पैरों तले दबा रहा तथा इसी प्रकार पीढ़ी दर पीढ़ी वह भूमि [हमारे अधिकार में] चली आई है। इन्हीं महाराजा की आंखों के आगे हम लोगों ने अच्छी-अच्छी चाकरी की है। उस ख़तरनाक समय में, जब कि जयपुर की सेना ने जोधपुर को घेर लिया था, हम लोगों ने चौड़े खेत में उनपर आक्रमण किया और अपने प्राण एवं धन जोखिम में डाले। ईश्वर ने हमको सफलता प्रदान की। इसका साक्षी सर्वशक्तिमान परमेश्वर है। अब छोटे-छोटे मनुष्य महाराजा की हाज़िरी में रहते हैं। इसका ही यह उलटा फल है। जब हमारी सेवा स्वीकार की जाय तो वे हमारे स्वामी हैं। ऐसा न हो तो फिर हम लोग उनके भाई और संबंधी हैं, दावेदार हैं तथा भूमि का दावा रखते हैं।

वह हम लोगों को [हमारी जायदाद से] बेदख़ल करना चाहते हैं, परन्तु क्या हम लोग अपने को बेदख़ल होने देंगे ? अंग्रेज़ सम्पूर्ण भारत के मालिक हैं।······के सरदार ने अजमेर में अपना एजेंट भेजा था, उसे दिल्ली जाने को कहा गया। इसलिए ठाकुर············वहां गया, परन्तु कोई भी रास्ता नहीं बताया गया। यदि अंग्रेज़ हाकिम हम लोगों की न सुनेंगे तो कौन सुनेगा ? अंग्रेज़ लोग किसी की भूमि को छीनने नहीं देते। हम लोगों की जन्मभूमि मारवाड़ है। मारवाड़ से ही हम लोगों को रोटी मिलनी चाहिये। एक लाख राठोड़ हैं, वे कहां जावें ? हम लोग केवल अंग्रेज़ों के अदब की दृष्टि से ही चुप हैं और यदि आपकी सरकार को हम अपने विचारों की सूचना न दें तो पीछे से आप [हमको] दोष लगावेंगे; अतएव हम लोग इसको प्रकाशित करते हैं और इस तरह आपके सामने निर्दोष हो जाते हैं। जो कुछ

जोधपुर के प्रबन्ध के लिए नियुक्त मुसाहिबों ने कुछ दिनों तक तो एकत्र रहकर ठीक-ठीक कार्य किया, परन्तु पीछे से उनमें दो दल हो गये और वे महाराजा से एक दूसरे की शिकायत करने लगे। इसपर महाराजा ने उन सबसे अलग-अलग कई लाख रुपये वसूल किये[1]।

हाकिमों में परस्पर अनैक्य होने पर उनसे दंड वसूल करना

महाराजा के अत्याचारपूर्ण व्यवहार से तंग आकर उसके कितने ही सरदार दूसरे राज्यों—कोटा, मेवाड़, बीकानेर, जयपुर आदि—में जा रहे थे और वहाँ से अपने-अपने ठिकानों को पीछा प्राप्त करने के लिए अंग्रेज़ सरकार से लिखा-पढ़ी कर रहे थे[2]। वि० सं० १८८०

ठिकानों के सम्बन्ध में सरदारों की अंग्रेज़ सरकार से बातचीत

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ६८-९। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६८।

(२) टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० ११०१। टॉड ने एक स्थल पर मारवाड़ से भागे हुए सरदारों की अंग्रेज़ सरकार के पश्चिमीय राजपूत राज्यों के पोलिटिकल एजेंट के नाम लिखे हुए एक प्रार्थनापत्र का उल्लेख किया है, जो इस प्रकार है—

प्रणामोपरान्त [निवेदन]

हम लोगों ने आपकी सेवा में एक विश्वासपात्र मनुष्य भेजा है, जो आपसे हम लोगों के विषय में निवेदन करेगा। सरकार कम्पनी हिन्दुस्तान की बादशाह है और आप हम लोगों की दशा अच्छी तरह जानते हैं। यद्यपि हमारे देश के विषय में ऐसी कोई बात नहीं है, जो आपसे छिपी हुई हो, फिर भी हमारे सम्बन्ध की एक विशेष बात है, जिसका [आप पर] प्रकट करना आवश्यक है।

श्रीमहाराजा और हम लोग सब एक ही राठोड़ कुल के हैं। वे हम लोगों के मालिक और हम उनके सेवक हैं। परन्तु अब वे क्रोधवश हो गये हैं और हम लोग अपने देश से बेदख़ल कर दिये गये हैं। जागीर, हमारी पैतृक भूमि और हमारे घर-बार में से कई एक ख़ालसा कर लिये गये हैं। वे लोग भी, जो अलग रहने का यत्न करते हैं, अपनी वही दुर्दशा होने की बात देख रहे हैं। कुछ लोगों को, उनकी रक्षा की धर्मपूर्वक प्रतिज्ञा कर, धोका दिया और मार डाला तथा बहुतों को क़ैद कर दिया है। मुत्सद्दी, राजा के प्रधान कर्मचारी, देशी और विदेशी लोग पकड़े गये

(ई० स० १८२३) में आसोप का कार्यकर्ता कूंपावत हरिसिंह, आउवा का पंचोली कानकरण, चंडावल का कूंपावत दौलतसिंह और नींबाज का कार्य-

हैं, और उनके साथ ऐसे कठोरता एवं निर्दयता के व्यवहार किये गये हैं, जो कभी सुने तक नहीं गये थे तथा जिनको हम लोग लिख भी नहीं सकते हैं। महाराजा के हृदय में ऐसा भाव उत्पन्न हुआ है, जैसा जोधपुर के किसी महाराजा में पहले देखा नहीं गया। उनके पूर्वजों ने पीढ़ी-दर पीढ़ी राज्य किया है। हम लोगों के पूर्वज उनके मंत्री और सलाहकार रहे हैं एवं जो कुछ किया जाता था, हमारी सरदारों की सभा की सम्मति से होता था। उनके पूर्वजों ने एवं हमारे पूर्वजों ने औरों के प्राण लिये और अपने दिये हैं तथा बादशाहों की सेवा कर जोधपुर राज्य को, जैसा वह इस समय है, बनाया है। जहां कहीं मारवाड़ के विषय का कार्य पड़ा वहीं हमारे पूर्वज पहुंचे और उन्होंने अपनी जान देकर देश की रक्षा की। कभी-कभी हम लोगों के स्वामी नाबालिग़ भी रहे। उस समय भी हमारे पूर्वजों की बुद्धिमानी, और सेवा से देश हमारे पैरों तले दबा रहा तथा इसी प्रकार पीढ़ी दर पीढ़ी वह भूमि [हमारे अधिकार में] चली आई है। इन्हीं महाराजा की आंखों के आगे हम लोगों ने अच्छी-अच्छी चाकरी की है। उस ख़तरनाक समय में, जब कि जयपुर की सेना ने जोधपुर को घेर लिया था, हम लोगों ने चौड़े खेत में उनपर आक्रमण किया और अपने प्राण एवं धन जोखिम में डाले। ईश्वर ने हमको सफलता प्रदान की। इसका साक्षी सर्वशक्तिमान् परमेश्वर है। अब छोटे-छोटे मनुष्य महाराजा की हाज़िरी में रहते हैं। इसका ही यह उलटा फल है। जब हमारी सेवा स्वीकार की जाय तो वे हमारे स्वामी हैं। ऐसा न हो तो फिर हम लोग उनके भाई और संबंधी हैं, दावेदार हैं तथा भूमि का दावा रखते हैं।

वह हम लोगों को [हमारी जायदाद से] बेदख़ल करना चाहते हैं, परन्तु क्या हम लोग अपने को बेदख़ल होने देंगे? अंग्रेज़ सम्पूर्ण भारत के मालिक हैं।······ ······के सरदार ने अजमेर में अपना एजेंट भेजा था, उसे दिल्ली जाने को कहा गया। इसलिए ठाकुर············वहां गया, परन्तु कोई भी रास्ता नहीं बताया गया। यदि अंग्रेज़ हाकिम हम लोगों की न सुनेंगे तो कौन सुनेगा? अंग्रेज़ लोग किसी की भूमि को छीनने नहीं देते। हम लोगों की जन्मभूमि मारवाड़ है। मारवाड़ से ही हम लोगों को रोटी मिलनी चाहिये। एक लाख राठोड़ हैं, वे कहां जावें? हम लोग केवल अंग्रेज़ों के अदब की दृष्टि से ही चुप हैं और यदि आपकी सरकार को हम अपने विचारों की सूचना न दें तो पीछे से आप [हमको] दोष लगावेंगे; अतएव हम लोग इसको प्रकाशित करते हैं और इस तरह आपके सामने निर्दोष हो जाते हैं। जो कुछ

कर्ता आदि अजमेर में बड़े साहब के पास गये और उन्होंने उससे ठिकानों को वापस दिला देने के सम्बन्ध में निवेदन किया। उसने उन्हें महाराजा के पास जाने के लिए कहा तो उन्होंने उत्तर दिया कि यदि हम महाराजा के पास जायंगे तो वह हमें निश्चय मार डालेगा। इसपर पोलिटिकल एजेंट ने उनको आश्वासन दिया कि हमारे भेजे हुए आदमियों के साथ वह ऐसा व्यवहार नहीं करेगा। तब वे जोधपुर की तरफ़ रवाना हुए। वहां इसकी खबर पहुंचने पर पंचोली छोगालाल २०० आदमियों के साथ उन्हें गिरफ़्तार करने के लिए भेजा गया। गांव चोपड़ा के तालाब पर जाकर उसने उन्हें घेर लिया। उस समय कूंपावत कानकरण बाहर गया हुआ था, जिससे वह तो भागकर अजमेर चला गया और शेष वहां गिरफ़्तार कर सलेम-कोट में रक्खे गये। जब यह समाचार अजमेर पहुंचा तो पोलिटिकल एजेंट ने इस सम्बन्ध में लिखा-पढ़ी की, जिसपर वे छोड़ दिये गये। अनन्तर महाराजा ने लाचार होकर सरदारों के ठिकाने वापस कर दिये[1]।

हम लोग मारवाड़ से लाये थे, खा चुके, जो कुछ उधार मिल सकता था वह भी ले चुके और अब जब भूखों ही मरना पड़ेगा तो हम सब कुछ करने को तैयार हैं और कर सकते हैं।

अंग्रेज़ हमारे शासक और स्वामी हैं। श्रीमानसिंह ने हमारी भूमि ज़बर्दस्ती छीन ली है। आपकी सरकार के बीच में पड़ने से ये विपत्तियां दूर हो सकती हैं। आपकी मध्यस्थता और बीचबचाव के बिना हम लोगों को कुछ भी विश्वास न होगा। हमको हमारी अर्ज़ी का उत्तर मिले। हम उसकी प्रतीक्षा धैर्य के साथ करेंगे; परन्तु यदि हमको कुछ भी उत्तर न मिला तो फिर हमारा कुछ दोष न होगा, क्योंकि हमने सर्वत्र सूचना दे दी है। भूख मनुष्य को उपाय ढूंढने पर मजबूर करेगी। इतना अधिक समय हुआ, हम केवल आपकी सरकार के गौरव के लिहाज़ से ही चुपचाप बैठे हैं। हमारी सरकार हम लोगों की पुकार नहीं सुनती, परन्तु कबतक हम आसरा देखते रहेंगे? हमारी आशाओं की ओर ध्यान दीजिये। संवत् १८७८ श्रावण सुदि २ (ई० स० १८२१ ता० ३१ जुलाई)।

राजस्थान; जि० १, पृ० २२८-३०।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ९९-१००। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६८-९। इस अवसर पर महाराजा के शासन में हस्तक्षेप न करने के सम्बन्ध में

वि० सं० १८७४ (ई० स० १८१७) में महाराव उदयभाण को नज़रक़ैद कर सिरोही राज्य का प्रवन्ध उसके छोटे भाई नांदिया के स्वामी शिवसिंह ने अपने हाथ में ले लिया था। उसके बाद उसने राज्य की भीतरी दशा का सुधार करने के लिए अंग्रेज़ सरकार से संधिवार्ता आरम्भ की। महाराजा मानसिंह सिरोही राज्य को अपने राज्य में मिलाना चाहता था, इसलिए उसने सिरोही राज्य के साथ अंग्रेज़ सरकार की संधि होने की जो कार्रवाई चल रही थी उसमें बाधा डालनी चाही। उसने गवर्नमेंट के साथ इस आशय की लिखा-पढ़ी की कि सिरोही का इलाक़ा पहले से ही जोधपुर के आधीन है, इसलिए सिरोही के साथ अलग अहदनामा न होना चाहिये। इसपर अहदनामा होने की बात रुक गई और जोधपुर के दावे की तहक़ीक़ात का काम कप्तान टॉड के सुपुर्द हुआ, जो उन दिनों जोधपुर का पोलिटिकल एजेंट भी था। टॉड महाराजा मानसिंह का मित्र था, जिससे उसे अपना कार्य पूरा होने की पूरी आशा थी और जोधपुर का वकील उसके लिए बड़ी कोशिश कर रहा था; परन्तु टॉड ने, जो बड़ा ही निष्पक्ष अफ़सर था, पूरे सबूत के बिना जोधपुर का दावा स्वीकार करना न चाहा। जोधपुर के वकील ने यह बतलाने की कोशिश की कि महाराजा अभयसिंह के समय से ही सिरोहीवाले जोधपुर की चाकरी करते और ख़िराज देते हैं, जिसपर टॉड ने, जो दोनों राज्यों के इतिहास से परिचित था, यही उत्तर दिया कि महाराजा अभयसिंह बादशाही फ़ौज का सेनापति था और सिरोही की सेना भी बादशाही झंडे के नीचे रहकर लड़ती थी। इसी प्रकार उसने ख़िराज की बात भी निर्मूल सिद्ध कर दी। तब जोधपुर की तरफ़ से सिरोही के महाराव उदयभाण के हस्ताक्षरवाली एक तहरीर पेश की गई, जिसमें उसने कितनी-एक शर्तों के साथ जोधपुर

जोधपुर की सेना का सिरोही में बिगाड़ करना

पोलिटिकल एजेंट ने अपनी तरफ़ से लिखा-पढ़ी कर दी (एचिसन; ट्रीटीज़, एंगेजमेंट्स एंड सनद्ज़; जि० १, पृ० १३०-१)।

की मातहती स्वीकार की थी, परन्तु वह तहरीर जबरन उक्त महाराव को क़ैद कर लिखाई गई थी, अतएव वह भी स्वीकार न की गई। इस प्रकार जोधपुरवालों के सब प्रमाणों को निर्मूल बतलाकर उसने उनका दावा ख़ारिज कर दिया। इससे महाराजा मानसिंह बड़ा अप्रसन्न हुआ, परन्तु उसकी परवाह न करते हुए ई० स० १८२३ ता० ११ सितम्बर (वि० सं० १८८० भाद्रपद सुदि ७) को सिरोही में अंग्रेज़ सरकार और सिरोही राज्य के साथ अहदनामा हो गया। यह अहदनामा मानसिंह की इच्छा के प्रतिकूल हुआ था, जिससे वि० सं० १८८० कार्तिक वदि ४ (ई० स० १८२३ ता० २३ अक्टोबर) को जालोर के हाकिम पृथ्वीराज भंडारी ने उसकी आज्ञा से सिरोही राज्य के खारल परगने के तलेटा गांव पर चढ़ाई कर दस गांवों को उजाड़ डाला और अनुमान ३१००० रुपये का नुक़सान किया। इसका दावा अंग्रेज़ सरकार में होने पर इसका फ़ैसला सिरोही के पक्ष में हुआ[1]।

उन दिनों मेरवाड़ा में मेर और मीने बहुत उपद्रव किया करते थे। उनका नियन्त्रण करना अत्यन्त आवश्यक था, अतएव महाराजा ने वि० सं० १८८० (ई० स० १८२४) में मेरवाड़ा के चांग और कोटकिराना परगनों के २१ गांव आठ वर्ष के लिए अंग्रेज़ सरकार को सौंप दिये। वहां के प्रबन्ध के लिए रक्खी जानेवाली सेना के ख़र्च के लिए महाराजा ने पन्द्रह हज़ार रुपया वार्षिक देना स्वीकार किया[2]।

महाराजा का प्रबन्ध के लिए मेरवाड़ा के गांव अंग्रेज़ सरकार को देना

इस घटना के दूसरे वर्ष महाराजा की छोटी पुत्री स्वरूपकुंवरी का विवाह बूंदी के रावराजा रामसिंह के साथ निश्चित हुआ। तदनुसार

(१) मेरा; सिरोही राज्य का इतिहास; पृ० २८२-८१।

(२) एचिसन; ट्रीटीज़, एंगेजमेंट्स एंड सनद्ज़; जि० ३, पृ० ११८।

उक्त पुस्तक में आगे चलकर (पृ० १३१-२ में) वह इक़रारनामा दिया है, जो इस सम्बन्ध में दोनों तरफ़ से लिखा गया था।

महाराजा की पुत्री का बूंदी के रावराजा से विवाह

वि० सं० १८८१ फाल्गुन वदि ७ (ई० स० १८२५ ता० ६ फ़रवरी) को वहां से बारात जोधपुर गई। इसके अगले दिन विवाह-कार्य सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर बीकानेर और किशनगढ़ से क्रमशः पांच हज़ार और दो हज़ार रुपये तथा हाथी दहेज में दिये जाने के लिए आये। विवाह के खर्च के लिए रावराजा रामसिंह ने कोटा से दो लाख रुपया लेकर उस सम्बन्ध में एक रुक़्क़ा लिख दिया था। वह रुक़्क़ा रुपये चुकाकर महाराजा मानसिंह ने कोटा से मंगवा लिया और विवाह के समय बूंदीवालों को हथलेवे में दे दिया। रावराजा रामसिंह की एक सगाई सूरजगढ़ बिसाऊ के शेखावतों के यहां भी हुई थी। दुबारा बारात ले जाने का व्यय बचाने के लिए रावराजा ने वहां विवाह करने के लिए जाने की शीघ्र आज्ञा चाही। महाराजा को यह बात बहुत बुरी लगी; परन्तु अन्त में उसने बारात को सीख दे दी। तद्नुसार चैत्र वदि ६ (ता० १३ मार्च) को बारात जोधपुर से विदा हुई। महाराजा स्वयं बारात को मेड़तिया दरवाज़े तक पहुंचाने गया। उसने नाज़िर इमरतराम तथा व्यास जेठमल को बहुत से आदमियों के साथ रावराजा के संग कर दिया, जिन्होंने उसके आदेशानुसार उसका विवाह बिसाऊ में उस समय न होने दिया[1]।

गत पांच वर्षों से सिंघवी फ़तहराज बड़ी अच्छी तरह राज्य-कार्य कर रहा था। इससे कई व्यक्ति उससे नाराज़ रहते थे। भंडारी गंगाराम

सिंघवी फ़तहराज का क़ैद किया जाना

के पुत्र भानीराम के कहने पर जालोर के महाजन वागा ने जो बड़ा जालसाज़ था, महाराजा के हस्ताक्षरयुक्त एक जाली चिट्ठी तैयार की और उसके सहारे कुचामण के फ़ौजराज से पांच हज़ार रुपये वसूल कर दोनों खा गये। अनन्तर उन्होंने फ़तहराज के हस्ताक्षर-सहित महाराजा के नाम इस आशय का पत्र बनाकर भेजा कि खर्च का रुपया भेजा है सो

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १००-१। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६६।

पर राजकीय सेना भेजी गई, पर उसका कोई विशेष नतीजा नहीं निकला। तब पंचोली कालूराम भेजा गया। उसने जाते ही आक्रमण किया, परन्तु इससे भी कोई खास फ़ायदा नहीं हुआ और जोधपुर की तरफ़ के कई व्यक्ति काम आये। इस चढ़ाई के कारण राज्य का खर्च बहुत बढ़ गया था, जिसकी पूर्त्ति करने के लिए महामंदिर के कार्यकर्ताओं ने प्रति घर चार रुपया कर (बाब) लगाया। उधर अपने गढ़ की मज़बूती कर आउवा का ठाकुर बख़्तावरसिंह नींबाज के ठाकुर सावंतसिंह के पास गया। तब उसने तथा रास के ठाकुर भीमसिंह आदि ने एकत्र होकर धोंकलसिंह को डीडवाणा बुलाया और वहां उसका अधिकार करा दिया। महाराजा को इसका समाचार मिलने पर उसने आउवा से सेना वापस बुला ली और नींबाज, रास आदि के ठाकुरों को अपने पक्ष में कर लिया। ऐसी परिस्थिति में धोंकलसिंह के पक्ष की सेना बिखर गई[1]।

नागपुर में बहुत पहले से ही उदयपुर के राजवंश से निकले हुए भोंसलों का राज्य था। ई० स० १८१६ (वि० सं० १८७३) में वहां के स्वामी राघोजी (दूसरा) का देहांत होने पर उसका पुत्र परसोजी (दूसरा) उसका उत्तराधिकारी हुआ। यह बहुत कमज़ोर था। उसको उसके चाचा व्यंकोजी का पुत्र आपा साहब (मुधोजी) मारकर स्वयं नागपुर का स्वामी हो गया। उसने अंग्रेज़ों से सुलह की। ई० स० १७९९ (वि० सं० १८५६) से ही नागपुर में अंग्रेज़ रेज़िडेंट रहने लगा था। ई० स० १८१७ (वि० सं० १८७४) में अंग्रेज़ों और पेशवा के बीच लड़ाई छिड़ जाने पर उस (भोंसला) ने पेशवा का पक्ष लेकर अंग्रेज़ी सेना पर आक्रमण किया, परन्तु सीताबल्दी और नागपुर की लड़ाइयों में उसकी हार हुई, जिससे बरार का शेष भाग एवं नर्मदा के दक्षिण का प्रदेश उसे अंग्रेज़ों को सौंपना पड़ा। फिर वह नागपुर की गद्दी पर बिठाया गया, परन्तु अंग्रेज़ों के विरुद्ध षड्यन्त्र

नागपुर के राजा का जोधपुर जाना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ३, पृ० १०३-४। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६९।

रचने के अपराध में वह गद्दी से हटाया जाकर इलाहाबाद भेजा जानेवाला था, किन्तु मार्ग से ही भागकर महादेव की पहाड़ियों में होता हुआ वह पंजाब की तरफ़ चला गया[1]। वहां से वि० सं० १८८४ (ई० स० १८२७) में वह दो-चार व्यक्तियों के साथ गुप्त रूप से जोधपुर पहुंचकर महामन्दिर में ठहरा। इसकी खबर मिलने पर महाराजा ने उसको अपनी शरण में ले लिया और महामन्दिर के महलों में उसका डेरा कराया। अंग्रेज़ सरकार को इस घटना की खबर मिलने पर उसकी तरफ़ से उसे सुपुर्द कर देने को महाराजा को लिखा गया, परन्तु उसने ऐसा नहीं किया। कई वर्ष बाद वहीं उसकी मृत्यु हो गई[2]।

धोंकलसिंह के सम्बन्ध में रेज़िडेंट का पड़ोसी राज्यों को लिखना

वि० सं० १८८५ ज्येष्ठ सुदि ३ (ई० स० १८२८ ता० १६ मई) को दिल्ली के रेज़िडेंट के पास से बीकानेर आदि राज्यों के पास इस आशय का खरीता भेजा गया कि वे जोधपुर राज्य में उत्पात करनेवाले धोंकलसिंह से किसी प्रकार का सम्पर्क न रक्खें। तदनुसार उन्होंने अपने-अपने सरदारों को उसे राज्य में प्रवेश न करने देने की हिदायत कर दी[3]।

आयस लाडूनाथ की मृत्यु

वि० सं० १८८५ (ई० स० १८२८) के आश्विन मास में आयस लाडूनाथ गिरनार की यात्रा करने के लिए गया। महाराजा की आज्ञानुसार इस अवसर पर उसके साथ कई सरकारी आदमी गये। वहां से लौटते समय गांव बामनवाड़ा में वह ज्वर से पीड़ित हुआ और उसी रोग से वहां

(१) मेरा; उदयपुर राज्य का इतिहास; जि० २, पृ० १०८३-४। प्रयागदत्त शुक्ल; मध्यप्रदेश का इतिहास और नागपुर के भोंसले; पृ० १६३-७२। इम्पीरियल गैज़ेटियर ऑव् इंडिया; जि० १८, पृ० ३०७-८।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १०४। प्रयागदत्त शुक्ल; मध्य-प्रदेश का इतिहास और नागपुर के भोंसले; पृ० १७२ और टिप्पण। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८६६।

(३) दयालदास की ख्यात; जि० २, पत्र ११४।

उसका देहांत हो गया। उसके बाद उसकी गद्दी का स्वामी उसका पुत्र भैरोंनाथ बनाया गया, जिसकी अवस्था उस समय केवल दो-तीन वर्ष की ही थी। लगभग छः मास बाद ही उसका भी देहांत हो गया। तब सूरतनाथ का पौत्र चन्नणनाथ गद्दी का वारिस क़रार दिया गया; परन्तु उसको हटाकर भीमनाथ ने अपने पुत्र लक्ष्मीनाथ की नियुक्ति कराई। फलस्वरूप उस समय से राज्य में भीमनाथ का हुक्म चलने लगा[1]।

वि० सं० १८८७ (ई० स० १८३०) के आश्विन मास में महामन्दिर के कार्यकर्ताओं की मारफ़त दीवान के पद पर पुनः सिंघवी फ़तहराज की नियुक्ति हुई। उसी समय परबतसर और मारोठ में भी नये हाकिम नियुक्त किये गये। उन्होंने बडू, बोरावड़ और आलणियावासवालों से क्रमशः बीस हज़ार, आठ हज़ार और सात हज़ार रुपये वसूल किये[2]।

कुछ सरदारों से रुपये वसूल करना

वि० सं० १८८८ (ई० स० १८३१) की शरद ऋतु में भारत का वाइसरॉय लॉर्ड विलियम बेंटिंक अजमेर गया। उस समय उसने मुलाक़ात करने की ग़रज़ से राजपूताना के नरेशों को अजमेर बुलाया। तदनुसार उदयपुर, जयपुर, भरतपुर, कोटा, बूंदी वग़ैरह के नरेश तो अजमेर में उपस्थित हुए; परन्तु महाराजा मानसिंह नहीं गया। उसके इस आचरण से अंग्रेज़ सरकार की उसपर अप्रसन्नता तो हुई, परन्तु स्पष्ट रूप से नाराज़गी प्रकट नहीं की गई[3]।

लॉर्ड विलियम बेंटिंक का अजमेर जाना

किशनगढ़ के महाराजा कल्याणसिंह की इच्छा फ़तहगढ़ को दबाने की बहुत दिनों से थी, क्योंकि किशनगढ़ से अलग माने जाने का अपना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १०४।

(२) वही; जि० ४, पृ० १०८।

(३) वही; जि० ४, पृ० १०८-६।

१०७

किशनगढ़ के महाराजा का जोधपुर जाना

दावा अंग्रेज़ सरकार-द्वारा ख़ारिज किये जाने के कारण वहां का स्वामी उपद्रव करने लग गया था। अन्य सरदार भी उक्त राज्य के ख़िलाफ़ हो रहे थे, जिनका दमन करना आवश्यक था। अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से कल्याणसिंह को शीघ्र उधर का प्रबंध करने को कहा गया। इसपर उसने दिल्ली से पांच-छः हज़ार विदेशियों की सेना साथ ले ली। राज्य के ज़मींदार तथा कार्यकर्ता किशनगढ़ में एकत्र हुए। अनन्तर दूसरे दिन वे रूपनगर चले गये। तब कल्याणसिंह ने रूपनगर पर फ़ौज भेजी और दुतरफ़ा गोलों की लड़ाई हुई। अनंतर कल्याणसिंह अजमेर गया। इस बीच विरोधियों का उपद्रव बढ़ गया। अंग्रेज़ सरकार ने उनका समुचित प्रबंध कर रूपनगर ख़ाली करा लिया। महाराजा और ज़मींदारों में कई दिन तक बातचीत होती रही, परन्तु अन्त में जब कुछ तय न हुआ और कल्याणसिंह ने अंग्रेज़ सरकार की बात नहीं मानी तो सरदारों को राज्य का प्रबंध करने को कहा गया, जिन्होंने राज्यकार्य अपने हाथ में ले लिया तथा कुंवर मोहकमसिंह को कर्ता-धर्ता नियत किया। ऐसी दशा में वि० सं० १८८५ (ई० स० १८२८) के भाद्रपद मास में महाराजा कल्याणसिंह, जिसका किशनगढ़ नगर एवं सरवाड़ के क़िले पर अधिकार रह गया था, जोधपुर चला गया और वहां वि० सं० १८८८ (ई० स० १८३१) तक रहा। महाराजा मानसिंह ने उसे उदयमन्दिर में रखकर उसके आतिथ्य का समुचित प्रबंध कर दिया। वि० सं० १८८८ में जब वाइसरॉय अजमेर गया तो जोधपुर से वहां जाकर कल्याणसिंह ने उसके सामने अपनी अर्ज़ी पेश की। तब किशनगढ़ राज्य की तरफ़ से उसका सौ रुपया रोज़ाना मुक़र्रर कर उसे उक्त राज्य से बाहर रहने को कहा गया। इसपर वह दिल्ली जा रहा और वहीं वि० सं० १८९६ (चैत्रादि १८९७ = ई० स० १८४०) के वैशाख मास में उसकी मृत्यु हुई[1]।

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १०६-७। "वीरविनोद" में महाराजा कल्याणसिंह के जोधपुर जाकर रहने का उल्लेख नहीं है, परन्तु उसमें भी

गये। रात्रि के समय चीवड़ा (मेवाड़ का) गांव में सिंघवी ने उनपर आक्रमण किया, जिसमें बगड़ी के और अखैसिंहोतों के बहुत से आदमी मारे गये। इस झगड़े में रायपुर का ठाकुर माधोसिंह राज्य की सेना के साथ था। आषाढ वदि ११ (ता० १४ जून) को राजकीय सेना विजयकर वापस केलवाद गई। इस विजय की खबर महाराजा के पास पहुंचने पर उसने कुशलराज के नाम कोसाणे का पट्टा लिख दिया[1]।

मारवाड़ में भयंकर अकाल पड़ना

उसी वर्ष सारे मारवाड़ में भयंकर अकाल पड़ा, जिसके कारण खाद्य पदार्थ बहुत महंगे हो गये और घास की कमी के कारण पशु मर गये। यह दशा लगभग एक वर्ष तक रही। वि० सं० १८९१ (ई० स० १८३४) में अच्छी वर्षा हो जाने से हालत बहुत-कुछ सुधर गई[2]।

अंग्रेज़ सरकार-द्वारा मंगवाये जाने पर पन्द्रह सौ सवार भेजना

उसी वर्ष अंग्रेज़ सरकार की मंशा के अनुसार आसोपा अनूपराम जोधपुर की तरफ़ से वकील मुक़र्रर हुआ। अनन्तर अंग्रेज़ सरकार द्वारा १५०० सवार सेवा के लिए बुलवाये जाने पर लोढ़ा रिधमल एवं मुहणोत राम[illegible]दास उन्हें लेकर अजमेर गये[3]।

बक़ाया ख़िराज और फ़ौज-ख़र्च के संबंध में ठहराव होना

आसोपा अनूपराम की मृत्यु होने पर उसका पुत्र सवाईराम उस[illegible] स्थान में वकील नियुक्त हुआ। अनूपराम के समय में ही अजमेर के [illegible] का जवाब राज्य से नहीं दिया जाता था। इस [illegible] कितने ही मामले अपूर्ण पड़े रह गये थे, जि[illegible] पो० एजेंट की पूरी नाराज़गी थी। [illegible] दिलजमई करने के लिए ज़ोधपुर से सिंघवी फ़ौजराज, भंडारी लच[illegible] जोशी शंभुदत्त, सिंघवी कुशलराज तथा धांधल केसर वि० सं० [illegible] भाद्रपद सुदि १४ (ई० स० १८३५ ता० १६ सितम्बर) को अज[illegible]

(१) ज़ोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १०९-१०।

(२) वहीं; जि० ४, पृ० ११०-११।

(३) वहीं; जि० ४, पृ० १११।

गये। महाराजा का खास रुक्का प्राप्त होने पर कुचामण का ठाकुर रणजीत-सिंह भी अजमेर गया। वह तथा अन्य जोधपुर के व्यक्ति पो० एजेंट से मिले। महाराजा के दरबार के समय उपस्थित न होने, खतों के जवाब बाक़ी रह जाने और नागपुर के राजा को जोधपुर में आश्रय दिये जाने के सम्बन्ध में उसने शिकायत की तो उन्होंने भरसक उसका समाधान कर दिया। अनन्तर खिराज एवं फ़ौज-खर्च की बक़ाया रकम के बारे में बातचीत होने पर उन्होंने पांच लाख रुपया देना ठहराया और भविष्य में महाराजा के ठीक आचरण करने के सम्बन्ध में भी उसे आश्वासन दिया। उक्त रक़म की पूर्ति तक के लिए सांभर और नावां की आमद अंग्रेज़ सरकार को मिलना तय हुआ। इस एक़रारनामे के विषय में पूरा वृत्त ज्ञात होने पर महाराजा को ज़रा भी प्रसन्नता न हुई[1]।

भाद्राजूण पर फ़ौजकशी करना

भीमनाथ ऊपर आये हुए पांचों कार्यकर्ताओं से नाराज़ था और वह उनकी शिकायतें महाराजा से किया करता था। जोशी शंभुदत्त, लक्ष्मीचन्द एवं केसर पर महाराजा की विशेष कृपा होने से वे तो बच गये, परन्तु फ़ौजराज, कुशलराज एवं सिंघवी सुमेरमल फाल्गुन सुदि ८ (ई० स० १८३५ ता० ७ मार्च) को गिरफ़्तार कर लिये गये। फ़ौजराज का कुचामण तथा भाद्राजूणवालों के साथ अच्छा सम्बन्ध था। फ़ौजराज की गिरफ़्तारी से भाद्राजूण के ठाकुर बख़्तावरसिंह के मन में सन्देह उत्पन्न हो गया और वह तलहटी के महलों में आयस लक्ष्मीनाथ (लक्ष्मीनाथ) की शरण में जा रहा। तब फ़तहराज के कहने से भाद्राजूण का पट्टा ज़ब्त कर वहां पंचोली छोगजी की अध्यक्षता में राज्य की सेना भेजी गई। ऐसी परिस्थिति में ठाकुर बख़्तावरसिंह भाद्राजूण चला गया। तब राज्य की सेना ने भाद्राजूण पर घेरा डाला तथा दोनों ओर से लड़ाई शुरू हुई। भाद्राजूणवालों ने बम्बई से आती हुई फ़तहपुरियों की क़तार को लूट लिया, जिससे डेढ़ लाख रुपये का माल उनके हाथ लगा। फ़तहपुरियों ने इसकी शिकायत अजमेर के पो० एजेंट

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १११-१२।

से की। भाद्राजूणवालों ने कहलाया कि भीमनाथ हमें बेकसूर निकाल रहा है, इसीलिए हमको ऐसा करना पड़ा है। इसपर अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से जोधपुरवालों को कहा गया कि या तो फ़तहपुरियों का रुपया जोधपुर के ख़ज़ाने से दिलाया जाय या भाद्राजूण से फ़ौज हटाई जाय, जिससे वहां-वाले लूटी हुई सम्पत्ति वापस कर दें। तब भाद्राजूण से सेना हटा ली गई और वहां का पट्टा वापस ठाकुर बख़्तावरसिंह के नाम कर दिया गया, जिसपर भाद्राजूणवालों ने लूटा हुआ सारा सामान फ़तहपुरियों को वापस दे दिया[1]।

मेरवाड़ा के गांवों के संबंध के अहदनामे की अवधि बढ़ना

वि० सं० १८८० (ई० स० १८२४) में मेरवाड़ा इलाक़े के चांग और कोटकिराना परगने आठ वर्ष के लिए अंग्रेज़ सरकार को सौंपे गये थे, जिसका उल्लेख ऊपर आ गया है[2]। वि० सं० १८९२ (ई० स० १८३५) में उक्त अहदनामे की अवधि नौ साल और बढ़ाकर सात दूसरे गांव अंग्रेज़ सरकार के मातहत कर दिये गये[3]।

अंग्रेज़ सरकार का मालानी का इलाक़ा अपने अधिकार में लेना

राठोड़ राव सलखा के चार पुत्र हुए, जिनमें मल्लीनाथ (माला) ज्येष्ठ था। उसने त्रिभुवनसी को मारकर महेवा का राज्य प्राप्त किया, जो पीछे से उसके नाम पर मालानी कहलाया। उसने अपने छोटे भाई वीरम को सात गांवों के साथ गुढ़ा की जागीर दी थी। राव मल्लीनाथ के पुत्रों के साथ वीरम की नहीं बनी, जिससे वह पीछे से जोहियावाटी में जा रहा। उसका पुत्र चूंडा हुआ, जिसने मंडोवर का राज्य प्राप्त किया। उसके वंश में जोधपुर के स्वामी हैं। राव जोधा के समय उक्त राज्य की राजधानी

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ११२-३। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८७०।

(२) देखो ऊपर पृ० ८४०।

(३) एचिसन; ट्रीटीज़ एंगेज्मेंट्स एण्ड सनद्ज़; जि० ३, पृ० ११६, १३२-३।

जोधपुर स्थिर हुई और वह राज्य जोधपुर राज्य कहलाने लगा। उसके वंशजों ने समय-समय पर उसकी वृद्धि की[1]।

मालानी का इलाक़ा स्वतन्त्र था, पर जोधपुरवालों का प्रभुत्व बढ़ने पर मालानी कभी उनके अधीन और कभी स्वतन्त्र रहा तथा वहां के स्वामी जोधपुर को खिराज भी देते रहे। विगत कई शताब्दियों से मालानी के इलाक़े में बड़ी अव्यवस्था हो रही थी और वहां के स्वामी मनमाना आचरण कर बाहर के पड़ोसी इलाक़ों में लूट-मार किया करते थे। जब जोधपुर-दरबार से अंग्रेज़ सरकार ने वहां का प्रबन्ध करने को कहा, तो वहां से इस सम्बन्ध में असमर्थता प्रकट की गई। ऐसी दशा में मालानी के निवासियों के विरुद्ध स्वयं अंग्रेज़ सरकार को अपनी सेना भेजनी पड़ी। उस सेना का सारा व्यय भी अंग्रेज़ सरकार को उठाना पड़ा, क्योंकि जोधपुर-दरबार ने जो थोड़ी-बहुत मदद पहुंचाने का वायदा किया था वह भी नहीं पहुंचाई। अंग्रेज़ सरकार ने मालानी इलाक़े पर क़ब्ज़ा करने के बाद वहां के प्रमुख सरदारों[2] को क़ैद कर कच्छ भिजवा दिया, जहां से पीछे से भविष्य में अच्छा आचरण करने की ज़मानत देने पर वे मुक्त कर दिये गये। बाड़मेर के सरदारों के साथ किए हुए एक़रार के अनुसार अंग्रेज़ सरकार ने सब सरदारों को आश्वासन दिया कि जब तक उनका आचरण ठीक रहेगा, वे अंग्रेज़ सरकार के विशेष संरक्षण में समझे जायेंगे। यद्यपि जोधपुर दरबार ने मालानी के उपद्रव करनेवालों का दमन करने में कोई सहायता नहीं पहुंचाई थी[3] तथापि अंग्रेज़ सरकार के मालानी

(१) मेरा जोधपुर राज्य का इतिहास; प्रथम खंड, पृ० १८४-२४१।

(२) मालानी इलाक़े के अन्तर्गत बाड़मेर, जसोल, नगर और सिन्दरी नामक चार प्रमुख ठिकाने हैं।

(३) इसके विपरीत जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि इस अवसर पर अंग्रेज़ सरकार-द्वारा जोधपुर से सेना बुलवाई जाने पर वहां से लाडणू के जोधा प्रतापसिंह तथा जालोर के हाकिम की अध्यक्षता में सेना भेजी गई (जि० ४, पृ० ११३); परन्तु ख्यात का यह कथन माननीय नहीं है, क्योंकि [illegible] की रिपोर्ट

पर अधिकार करते ही जोधपुर की तरफ़ से उस इलाके का दावा पेश किया गया। अंग्रेज़ सरकार ने वह दावा तो स्वीकार किया, परन्तु साथ ही यह स्पष्ट कर दिया कि जब तक सन्तोषजनक रीति से यह साबित न हो जायगा कि जोधपुर दरबार वहां का प्रबंध करने के योग्य है तब तक वहां से अंग्रेज़ सरकार का अधिकार हटाया न जायगा[1]।

इस प्रकार ई० स० १८३६ (वि० सं० १८९३) में मालानी पर क़ब्ज़ा करने के बाद, अंग्रेज़ सरकार ने वहां के प्रबन्ध के लिये एक सुपरिन्टेन्डेन्ट (कप्तान जैक्सन) नियुक्त किया, जिसके नीचे बम्बई और गायकवाड़ की पलटनें रक्खी गई। ई० स० १८४४ (वि० सं० १९०१) में उक्त सेनाएं वहां से हटाई जाकर वहां जोधपुर लिजियन (ऐरनपुरा) की पैदल सेना और मारवाड़ के सवार रक्खे गये। ई० स० १८४९ (वि० सं० १९०६) में कप्तान जैक्सन के विलायत चले जाने पर वहां का प्रबन्ध मुस्तक़िल तौर पर मारवाड़ के पोलिटिकल एजेंट के सुपुर्द कर दिया गया। ई० स० १८५४ (वि० सं० १९११) से वहां केवल दरबार की सेना ही रही[2]।

वि० सं० १८९२ (ई० स० १८३५) में लेफ़्टनेंट ट्राविलियन बाड़मेर से अजमेर लौटता हुआ जोधपुर में ठहरा। उसके वहां रहते समय सवारों के एवज़ में राज्य की तरफ़ से अंग्रेज़ सरकार को एक लाख पन्द्रह हज़ार रुपया सालाना देना निश्चित हुआ[3]।

सवारों के एवज़ में रुपया देना निश्चित होना

लिखा है कि जोधपुर से किसी प्रकार की सहायता नहीं मिली, जैसा कि ऊपर मूल में बतलाया गया है।

(१) राजपूताना गैज़ेटियर; जि० २, पृ० २६६-७ (लेफ़्टेनेंट कर्नल वाल्टर-संगृहीत "जोधपुर और मालानी" के अंश में दी हुई मेजर मालकम की ई० स० १८४९ की रिपोर्ट)।

(२) वही; जि० २, पृ० २६७-८ (लेफ़्टेनेंट कर्नल वाल्टर-संगृहीत "जोधपुर और मालानी" के अंश में दी हुई मेजर इम्पी की ई० स० १८६८ की रिपोर्ट)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ११३। मेरा सिरोही राज्य का इतिहास; पृ० २९६-७।

सिरोही, गोड़वाड़ और जालोर में चोरियां बहुत हुआ करती थीं। इस संबंध में अंग्रेज़ सरकार के निकट शिकायत होने पर नीमच की

ऐरनपुरा में अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से छावनी स्थापित होना

छावनी से कर्नल स्पीयर्स सरहद पर गया। उस समय सिरोही से दीवान मयाचंद, जालोर से भंडारी लालचंद तथा गोड़वाड़ से जोशी सावंतराम उसके पास उपस्थित हो गये। कर्नल स्पीयर्स ने चोरी का बन्दोवस्त करने के लिए जोधपुर एवं सिरोही की सरहद पर उक्त राज्यों की सेनाएं रखने को कहा। सेना-व्यय से बचने के लिए उदयमन्दिरवालों ने वहां सेना न रक्खी। तब ऐरनपुरा[1] में अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से छावनी रक्खी गई। वहां पर जो सेना रक्खी गई उसका नाम "जोधपुर लीजियन" रक्खा गया[2]।

वि० सं० १८६२ (ई० स० १८३५) की ग्रीष्म ऋतु में पाली में प्लेग की भयंकर बीमारी फैली, जिसका ज़ोर कई मास तक रहा। उससे

पाली में प्लेग का प्रकोप

वहां के हज़ारों नर-नारी अकाल ही काल-कवलित हो गये। उसके अगले साल ही जोधपुर में भी इस बीमारी का ज़ोर हुआ, जिससे वहां भी बहुत से आदमी मरे[3]।

जोशी शंभुदत्त आदि की गिरफ़्तारी के बाद दीवान और मुसाहब का कार्य मेहता उत्तमचंद हरखचंद करता था। श्रावणादि वि० सं० १८६२

---

(१) यह स्थान सिरोही राज्य में है। छावनी बनाने का निश्चय होने पर अंग्रेज़ सरकार ने सिरोही राज्य से उसके लिए जगह मांगी, जो निर्विरोध दी गई। वहां रक्खी जानेवाली सेना के अफ़सर मेजर डाउनिंग ने अपनी जन्मभूमि के टापू "एरन" के नाम पर उस जगह का नाम ऐरनपुरा रक्खा और क्रमशः वहां बड़ी बस्ती हो गई। अब वहां की छावनी उठ गई है।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ११३-४।

(३) वही; जि० ४, पृ० ११५।

भीमनाथ का दीवान उत्तमचंद को मरवाना

(चैत्रादि १८९३ = ई० स० १८३६) के वैशाख मास में एक दिन जब उत्तमचंद ख़्वाबगाह के महल की सीढ़ियों पर बैठा हुआ था, भीमनाथ ने फ़तह-महल से अपने सेवकों को भेजकर उसे क़ैद करवाया और उदयमन्दिर में रक्खा। उससे जब दो-तीन लाख रुपयों की मांग की गई तो उसने एक भी पैसा न दिया। तब कठोर यातना देकर वह मार डाला गया और भंगियों-द्वारा बाहर फेंकवाया गया। चार दिन पश्चात् नगर के महाजनों ने भीमनाथ की आज्ञा प्राप्तकर उसका अंतिम संस्कार किया[1]।

उसी वर्ष आषाढ मास में भीमनाथ की आज्ञा से कितने ही अधिकारियों एवं जागीरदारों से रुपये वसूल किये गये; परन्तु अधिक

भीमनाथ का सरदारों आदि से रुपये वसूल करना

रुपये वसूल न हो सके, क्योंकि भीमनाथ के जुल्मों से तंग आकर सरदार आदि दूसरे स्थानों में चले गये थे। श्रावणादि वि० सं० १८९३ (चैत्रादि १८९४) ज्येष्ठ वदि १० (ई० स० १८३७ ता० २९ मई) को सलेमकोट में जोशी शंभुदत्त का देहांत हो गया[2]।

इसके बाद आयस भीमनाथ भी अधिक समय तक जीवित न रहा। श्रावणादि वि० सं० १८९४ (चैत्रादि १८९५) आषाढ वदि अमावास्या

आयस भीमनाथ की मृत्यु

(ई० स० १८३८ ता० २२ जून) को उदयमन्दिर में उसका देहांत हो गया। तब उसका कार्यकर्ता मेहता हरखचन्द आहोर की हवेली में चला गया और आयस लक्ष्मीनाथ, जो बीकानेर के गांव पांचू में था, आकर महामन्दिर में रहने लगा। तब से राज्य में उसकी आज्ञा चलने लगी[3]।

आयस लक्ष्मीनाथ के हाथ में अधिकार जाते ही उसने नये सिरे से कार्यकर्ताओं की नियुक्ति की। भाद्रपद सुदि ६ (ता० २६ अगस्त) को

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ११४।

(२) वही; जि० ४, पृ० ११४-५।

(३) वही; जि० ४, पृ० ११४। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८७०।

आयस लक्ष्मीनाथ का राज्य के ओहदों पर अपने आदमी नियत करना

जब वह गढ़ में गया तो उसने सिंघवी मेघराज, कुशलराज एवं सुखराज को अपने पास बुलाकर उन्हें भाद्रपद सुदि १३ (ता० २ सितंबर) को परबतसर एवं मारोठ की हाकिमी प्रदान की। साथ ही उसने अपने विरोधियों (भीमनाथ के पक्षपातियों) में से खीची जुझारसिंह, धांधल पीरदान, आसोपा उत्तमराम, भानीराम, सवाईराम तथा व्यास गुमानीराम के पुत्रों आदि को क़ैद करवा दिया एवं उनके स्थान में अपने पक्ष के व्यक्तियों को नियुक्त किया[1]।

कुछ सरदारों का अजमेर जाना

महाराजा की आस्था नाथों पर विशेष रूप से होने के कारण राज्य-कार्य उन्हीं की देख-रेख में होता था। इसके फलस्वरूप राज्य के ख़ज़ाने में धन का अभाव तथा हर तरफ़ अव्यवस्था और अत्याचार का दौर-दौरा था। लोगों को तरह-तरह से सताकर ज़बर्दस्ती रुपये वसूल किये जाते थे। राज्य के कितने ही कर्मचारियों को वेतन तक नहीं मिलता था। फलस्वरूप लोग जहां-तहां लूट-मार करने लगे। इन घटनाओं की शिकायतें अजमेर में अंग्रेज़ अधिकारियों के पास होने पर वे जोधपुर लिखते, परन्तु कोई बन्दोबस्त न होता। स्वयं अंग्रेज़ सरकार को मिलनेवाली ख़िराज की रक़म भी कई वर्षों से बाक़ी रह गई थी। ऐसी दशा में साथीण के ठाकुर भाटी शक्तिदान ने अन्य सरदारों से सलाह-मशविरा किया कि आख़िर इस प्रकार कब तक चलेगा और हम लोग भूखे मरेंगे। अन्त में पोकरण आउवा, रास, नींबाज, चंडावल, हरसोलाव आदि के सरदारों के कार्यकर्ताओं को साथ लेकर वह अजमेर गया और वहां रहनेवाले बीकानेर के वकील हिन्दूमल मेहता से बातकर गवर्नर जेनरल के एजेंट कर्नल सदरलैंड और पोलिटिकल एजेंट कप्तान लडलो से मिला। उनकी शिकायतें सुनकर सदरलैंड ने कहा कि हम जोधपुर आते हैं, आप सब सर-

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ११४-५।

दारों को वहां पहुंचने के लिए लिखें[1]।

श्रावणादि वि० सं० १८९५ (चैत्रादि १८९६ = ई० स० १८३९) के प्रारम्भ में कर्नल सदरलैंड और कप्तान लडलो दो सौ सवारों एवं पांच सौ पैदल सिपाहियों के साथ जोधपुर गये। उनके साथ राजपूताने की प्रायः सब रियासतों के वकील थे। कई सरदार मार्ग में भी उनके शामिल हुए। उनका स्वागत करने के लिए दीवान सिंघवी गंभीरमल, बख़्शी सिंघवी फ़ौजराज तथा कुचामन, भाद्राजूण आदि के सरदार गांव डीगाडी तक गये। दोनों का डेरा राइ का बाग एवं सोजतिया दरवाज़े के बीच के मैदान में हुआ। उस अवसर पर पोकरण से बभूतसिंह भी जोधपुर जा पहुंचा। चैत्र सुदि ६ (ता० २० मार्च) को कर्नल सदरलैंड ने महाराजा से मुलाक़ात की। महाराजा लखणापोल तक उसका स्वागत करने के लिए गया। दूसरे दिन महाराजा सदरलैंड के डेरे पर जाकर उससे मिला। फिर राज्य का ठीक-ठीक प्रबंध करने, चोरी-धाड़ों का बन्दोबस्त करने, बक़ाया पड़े हुए मुक़दमों का फ़ैसला करने, नाथों का ज़ुल्म रोकने आदि के संबंध में उस (सदरलैंड) ने महाराजा से बातचीत की। अन्य बातें तो महाराजा ने स्वीकार कर लीं, परन्तु नाथों का प्रबंध करने की बात उसे पसंद न हुई, जिससे सदरलैंड अप्रसन्न होकर वापस लौट गया और ज्येष्ठ मास के प्रारम्भ में गांव झालामंड पहुंचा। महाराजा ने वहां जाकर उसे प्रसन्न करने की इच्छा प्रकट की, परन्तु मेहता जसरूप आदि के कहने से उसने वहां जाना स्थगित रक्खा और दूसरे कई कार्यकर्ताओं को कर्नल सदरलैंड के पास भेजा, परन्तु उसने उनकी बातों पर विशेष ध्यान न दिया[2]।

क्रनैल सदरलैंड का जोधपुर जाना

महाराजा की भटियाणी राणी से श्रावणादि वि० सं० १८९४ (चैत्रादि १८९५) वैशाख सुदि ७ (ई० स० १८३८ ता० १ मई) को

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ११६-७।

(२) वही; जि० ४, पृ० ११७-८।

महाराजा के कुंवर सिद्ध-दानसिंह की मृत्यु

एक पुत्र का जन्म हुआ था, जिसका नाम सिद्ध-दानसिंह रक्खा गया था, परन्तु वह अधिक समय तक जीवित न रहा और श्रावणादि वि० सं० १८९५ (चैत्रादि १८९६) वैशाख सुदि ७ (ई० स० १८३९ ता० २० अप्रेल) को उसका देहांत हो गया[1]।

आसोप के बखेड़े का निर्णय होना

कर्नल सदरलैंड पालासणी, कापरडा, बीलाड़ा और नींबाज होता हुआ अजमेर पहुंचा। इस बीच आसोप के ठाकुर बख़्तावरसिंह का देहांत हो गया। उसके कोई सन्तान नहीं थी, जिससे गांव वासणी के कूंपावत कर्णसिंह ने अपने भाई को सेना देकर वहां अधिकार करने के लिए भेजा। उसके आसोप पहुंचने पर दुतरफ़ा लड़ाई हुई। तब पोकरण के ठाकुर बभूतसिंह, आउवा के खुशहालसिंह और रास के भीमसिंह ने सदरलैंड को इसकी इत्तिला देकर उसके पास से सेना बुलवाई और उस सेना को अपनी सेनाओं के साथ आसोप का घेरा उठाने के लिए भेजा। महाराजा ने भी अपनी सेना भेजी। इन सब सेनाओं के वहां पहुंचते ही घेरा उठ गया और हींगोली के कूंपावत मोहब्बतसिंह के पुत्र शिवनाथसिंह का गोद लिया जाना तय होकर वहां का बखेड़ा मिट गया[2]।

महाराजा के विरुद्ध सरकारी विज्ञप्ति प्रकाशित होना

वि० सं० १८९६ श्रावण वदि २ (ई० स० १८३९ ता० २८ जुलाई) को कर्नल सदरलैंड ने अजमेर में दरबार किया। उसमें उसने जोधपुर के सरदारों से कहा कि सरकारी फ़ौज जोधपुर जाकर नाथों को पकड़ेगी और महाराजा से क़िला खाली करा उसे गद्दी से पृथक् करेगी। आप सब इस मौक़े पर किधर रहेंगे? इसपर भाटी शक्तिदान ने उत्तर दिया कि प्रथम तो ऐसी परिस्थिति उत्पन्न ही नहीं होगी, क्योंकि चढ़ाई होने पर महाराजा लड़ेगा नहीं और नाथ भाग जावेंगे; लेकिन कदाचित् जैसा आप

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० ११६ तथा ११८।

(२) वही; जि० ४, पृ० ११९।

कहते हैं वैसा ही हुआ और महाराजा पर संकट पड़ा, तो जो सच्चे राजपूत हैं वे अपने स्वामी के लिए ही प्राण देवेंगे। इस बातचीत की खबर जोधपुर पहुंचने पर महाराजा ने शक्तिदान की प्रशंसा की, किन्तु श्रावण वदि ११ (ता० ५ अगस्त) को शक्तिदान का अजमेर में ही देहांत हो गया[1]। महाराजा यह नहीं चाहता था कि जोधपुर राज्य पर अंग्रेज़ सरकार की सेना का नियंत्रण रहे। इसलिए उसने अंग्रेज़ अधिकारियों के पास निम्न-लिखित आशय का खरीता भेजा—

"आपके अकस्मात् प्रस्थान कर जाने से शासन-व्यवस्था के परिवर्तन संबंधी जो विचार थे वे अपूर्ण रह गये हैं। पांच वर्ष के अंग्रेज़ सरकार के खिराज के पांच लाख चालीस हज़ार रुपये आपके अजमेर पहुंचने पर चुकाना तय हुआ था और सेना-व्यय के तीन लाख पैंतालीस हज़ार रुपये इसके एक वर्ष पीछे; किन्तु आपकी रवानगी से महाजनों के दिल में संदेह हो गया, जिससे नक़द का प्रबंध न हो सका और समय समीप आ जाने से रत्न-जटित आभूषण कार्यकर्ताओं के साथ आपके पास मैंने भिजवाये, परन्तु आपने उन्हें स्वीकार न किया। अब प्रबंध कर रोकड़ रुपयों की हुंडियां बनवाली हैं, जो आपका उत्तर आने पर भेजी जावेंगी और भविष्य में दरीबा वग़ैरह की आमदनी खिराज आदि के अदा करने में लगा दी जायगी, ताकि फिर आपस में किसी प्रकार की खींचतान न हो। आपके कथनानुसार ठाकुरों को साढ़े पांच लाख रुपयों के पट्टे लिख दिये हैं और फिर जो कुछ इस मामले में करना मुनासिब हो वह भी लिखें। ठाकुरों में से कई आसामियों ने मारवाड़ के मुल्क में लूट-मार मचा दी है, उसका कारण मैं आपका दबाव न होना समझता हूं। मारवाड़ में अव्यवस्था होने और खिराज आदि के बाक़ी रह जाने का कारण मेरे शरीर की अस्वस्थता तथा अकाल आदि है। आपकी सहायता से इन सारे मामलों का बंदोबस्त होगा। मैंने तो पहले ही वि० सं० १८७४ में राज्य कार्य से हाथ खींच लिया था। अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से मुंशी

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १२०।

बरकतअली के आश्वासन देने पर ही मैंने पीछा राज्य-कार्य हाथ में लिया है। मैं तो केवल अंग्रेज़ सरकार के भरोसे निश्चिंत हूं। इस राज्य की प्रतिष्ठा और उन्नति अंग्रेज़ सरकार की कृपा और आपकी सहायता पर ही निर्भर है। अभी मुझे मालुम हुआ है कि मारवाड़ पर सेना भेजने की तैयारी हो रही है। इससे मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। फ़ौजकशी तो उस व्यक्ति पर होनी चाहिये जो मुक़ाबले का इरादा रखता हो। मैं तो सरकार का कदीमी मित्र हूं और किस की शक्ति है जो अंग्रेज़ सरकार का मुक़ाबला कर सके? इसलिए इतना व्यय और कष्ट अंग्रेज़ सरकार क्यों उठाती है? ऐसी ही इच्छा हो तो एक अंग्रेज़ अधिकारी दस-बीस आदमियों के साथ मय सनद के भेजु दें, ताकि मैं राज्य उन्हें सौंप दूं। इस बात की मुझको चिंता नहीं है। अंग्रेज़ सरकार से अलग रहकर मैं राज्य नहीं कर सकता। अंग्रेज़ सरकार की पूरी कृपा और आपकी सहायता रहेगी तभी मैं राज्य का तथा शिकायतों का बन्दोबस्त कर सकूंगा'।"

उसके इस पत्र का अंग्रेज़ अधिकारियों पर कोई असर न हुआ और श्रावण सुदि १५ (ता० २४ अगस्त) को सदरलैंड ने एक इश्तिहार जारी किया, जिसमें महाराजा के विरुद्ध निम्नलिखित शिकायतें दर्ज की गई थीं—

---

(१) इस पत्र में लिखे हुए आभूषणादि भिजवाये जाने की पुष्टि जोधपुर राज्य की ख्यात से भी होती है (जि० ४, पृ० ११६)। यह पत्र वि० सं० १८६६ श्रावण वदि १४ (ई० स० १८३६ ता० ८ अगस्त) का है और इसकी नक़ल मुझे अजमेर नगर के केसरीमल लोढ़ा के यहां से प्राप्त हुई है। इसका ऊपरी भाग नष्ट हो गया है फिर भी आशय स्पष्ट है। केसरीमल का पूर्वज कनकमल जुहारमल उस समय अजमेर का प्रतिष्ठित व्यापारी था, जिसके पूर्वजों को जोधपुर के महाराजाओं की तरफ़ से सायर का आधा महसूल माफ़ था। इस सम्बन्ध के महाराजा मानसिंह और तख़्तसिंह के परवाने और ख़ास रुक़्के केसरीमल के पास मैंने देखे। महाराजा मानसिंह के परवानों में बड़ी गोलाकार मुद्रिका लगी है, जिसमें "श्रीसिद्धेश्वर श्रीजलंधरनाथ चरणशरण राजराजेश्वर महाराजाधिराज महाराज श्रीमानसिंह कस्य मुद्रिका" लेख अंकित है। महाराजा तख़्तसिंह की मुद्रिका चौरस है। उसमें "श्रीसिद्धेश्वर श्रीजलंधरनाथ चरणशरण राजराजेश्वर महाराजाधिराज महाराज श्रीतख़्तसिंहजी कस्य मुद्रिका" लेख अंकित है।

(१) महाराजा मानसिंह ने क़रीब पांच वर्ष के अर्से से अपने वे अहद-एक़रार, जो अंग्रेज़ सरकार के साथ उसने किये थे, तोड़ दिये हैं और जोधपुर के सवाल-जवाब का तदारुक और बदला भी नहीं दिया है।

(२) अहदनामे की लिखावट के अनुसार सरकार के हक़ के दो लाख तेइस हज़ार रुपये वार्षिक मुक़र्रर हैं, जिसके आजतक के दस लाख उनतीस हज़ार एक सौ छियासी रुपये दो आने हुए। ये आज तक अदा नहीं हुए।

(३) मारवाड़ की अव्यवस्था के कारण दूसरे इलाक़ों में रहनेवालों का लाखों का नुक़सान हुआ, परन्तु उसका भी हरजाना वसूल नहीं हुआ।

(४) जो प्रजा को पसन्द हो, जिससे मारवाड़ में सुख और चैन हो और दूसरे इलाक़ों में प्रबन्धकर्ताओं-द्वारा व्यापारियों के माल एवं मुसाफ़िरों पर जो ज़ुल्म और ज़्यादती होती है उसका बचाव हो ऐसा प्रबन्ध करने के लिए महाराजा से कहा गया, पर वह नहीं हुआ। ऐसी दशा में गवर्नर जेनरल ने यह उचित समझा कि अपने हक़ों और दावों की रक्षा के लिए मारवाड़ में फ़ौज भेजी जाय। अतएव अंग्रेज़ सरकार की तीन फ़ौजें तीन तरफ़ से मारवाड़ में प्रवेश कर जोधपुर जायेंगी। अंग्रेज़ सरकार का झगड़ा महाराजा मानसिंह और उसके कार्यकर्ताओं से है, मारवाड़ की प्रजा से नहीं। मारवाड़ की प्रजा दिलजमई रक्खे। जब तक वहां की प्रजा अंग्रेज़ी फ़ौज से दुशमनी नहीं करेगी तब तक सरकार उसके ज़ान-माल की रक्षा करेगी और हर एक फ़ौज में सरकार की तरफ़ से ऐसा प्रबंध होगा कि प्रजा के सुख-चैन में उससे बाधा नहीं पड़ेगी।

इस चढ़ाई के समय लड़ाई का सामान आदि ले जाने के लिये अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से दो हज़ार ऊंट मांगे जाने पर एक हज़ार ऊंट तो बीकानेर के वकील हिंदूमल ने मंगवा दिये और शेष एक हज़ार मारवाड़ के सरदारों ने। अनन्तर अंग्रेज़ी सेना का अजमेर से कूच हुआ। कुचामण का ठाकुर रणजीतसिंह तथा भाद्राजूण का ठाकुर बख़्तावरसिंह

भी, जो जोधपुर से सदरलैंड के साथ गये थे, अंग्रेज़ी फ़ौज के साथ थे, परन्तु उनका डेरा दूर ही दूर रहता था। उन्हीं दिनों जोधपुर में कई परदेशी मार डाले गये, जिसकी सूचना यथासमय एजेंट गवर्नर जेनरल के लश्कर में पहुंच गई। पुष्कर, मेड़ता तथा पीपाड़ होती हुई अंग्रेज़ी सेना दांतीवाड़ा पहुंची। इसपर महाराजा ने भी गांव वणाड जाकर उसके सामने डेरा किया। सदरलैंड के पास अपना वकील भेजने के बाद महाराजा स्वयं जाकर उससे तथा कप्तान लडलो से मिला। अनंतर सदरलैंड के उसके पास जाने पर महाराजा जोधपुर का गढ़ ख़ाली करने तथा वहां अंग्रेज़ी थाना रखने को राज़ी हो गया। तदनुसार गढ़ में से राणियां आदि हटाई जाकर अन्य स्थानों में भेज दी गईं तथा ख़ज़ाना एवं अन्य सामान आदि कोठार में रखा जाकर मोहरें लगा दी गईं। महाराजा ने रायपुर के ठाकुर माधोसिंह को गढ़ के प्रबंध के लिए नियुक्त किया था। उसने महाराजा के गढ़ में गये बिना वहां से हटने से इनकार कर दिया। तब महाराजा ने स्वयं जाकर उसे समझाया और उसे उसके आदमियों सहित गढ़ से नीचे हटाया। क़िला ख़ाली हो जाने की सूचना मिलने पर सदरलैंड तथा कप्तान लडलो पांच-सात सौ फ़ौज के साथ गढ़ में गये। महाराजा ने स्वयं साथ जाकर अंग्रेज़ों के आदमियों को जगह-जगह नियुक्त करने के साथ उनका अपने आदमियों से परिचय कराया। इसके बाद सदरलैंड और महाराजा गढ़ से नीचे गये तथा कप्तान लडलो ३०० सैनिकों के साथ प्रबंध के लिए वहीं रहा। उस समय जोधपुर के गढ़ के एक कार्यकर्ता—गांव भटनोया के करमसोत राठोड़ भोमजी—ने अपने मन में विचार किया कि आज गढ़ का प्रबंध बदल रहा है, अतएव मरना लाज़िम है। ऐसा निश्चय कर सूरजपोल के सामने उसने कप्तान लडलो पर तलवार का वार किया, जो मामूली ही लगा। इसपर कप्तान लडलो और उसके आदमियों ने हमलाकर आक्रमणकारी को घायल कर दिया, जिससे चार-पांच दिन बाद उसकी मृत्यु हो गई। इस घटना के संबंध में महाराजा ने अपने वकील की मारफ़त कर्नल सदरलैंड से खेद प्रकट किया।

अनंतर अंग्रेज़ सरकार और महाराजा मानसिंह के बीच निम्नलिखित शर्तों का नया अहदनामा हुआ—

अंग्रेज़ सरकार और जोधपुर की सरकार के बीच मुद्दत से मैत्री चली आती है और वि० सं० १८७५ (ई० स० १८१८) का अहदनामा हो जाने से वह मैत्री और भी दृढ़ हो गई है तथा भविष्य में भी रहेगी।

अब अहदनामे की नीचे लिखी शर्तें अंग्रेज़ सरकार और जोधपुर के महाराजा मानसिंह के बीच कर्नल सदरलैंड की मारफ़त तय पाई गई हैं—

शर्त पहली—अब मारवाड़ के प्रबंध के बारे में आपस में विचार कर यह निश्चय किया गया है कि महाराजा, कर्नल सदरलैंड, राज्य के सरदार, अहलकार, खवास और पासवान एकत्र होकर देश के प्रबंध के लिए नियम बनावेंगे, जिनका पालन अब और भविष्य में हुआ करेगा। राज्य के जागीरदारों, सरकारी अफ़सरों और अन्य राज्याश्रित व्यक्तियों के हक़ प्राचीन नियमानुसार वे ही निर्धारित करेंगे।

शर्त दूसरी—पोलिटिकल एजेंट और जोधपुर राज्य के अहलकार आपस में मशविरा कर उक्त नियमों के अनुसार महाराजा से परामर्श लेकर राज्य का प्रबंध करेंगे।

शर्त तीसरी—उक्त पंचायत सारा राज्य-कार्य प्राचीन प्रथा के अनुसार करेगी।

शर्त चौथी—कर्नल (सदरलैंड) के कथनानुसार महाराजा ने भी स्वीकार कर लिया है कि जोधपुर के क़िले में एक अंग्रेज़ी फ़ौज रहेगी। राजस्थान की दूसरी रियासतों में जहां पोलिटिकल एजेंट रहते हैं, फ़ौजें शहर के बाहर रहती हैं। क़िले के भीतर केवल रहने योग्य मकान बने हैं और जगह की कमी है। इस सबब से कठिनाई है, परन्तु अंग्रेज़ सरकार को खुश रखने के निमित्त क़िले में फ़ौज रक्खी जाने की बात तय कर ली गई है और एक उपयुक्त जगह निर्धारित होते ही फ़ौज वहां रख दी

जायगी । महाराजा को अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से किसी प्रकार का अंदेशा नहीं है ।

शर्त पांचवीं—श्रीजी का मंदिर[1], स्वरूप[2] और जोगेश्वर[3] चाहे वे इस देश के हों चाहे विदेशी, उनके अनुगामी तथा साथी, उमरावों[4], कीकों[5], मुत्सद्दियों[6], खवासों, पासवानों तथा दूसरे व्यक्तियों के सम्मान, इज़्ज़त और रुतबे में किसी प्रकार की कमी न होगी । वह जैसी अब है वैसी ही क़ायम रहेगी ।

शर्त छठी—कार्यकर्ता अपना-अपना कार्य नव-निर्धारित नियमों के अनुसार करते रहेंगे, परन्तु यदि उनके कार्य में किसी प्रकार की असावधानी अथवा सुस्ती पाई जायगी तो महाराजा से मशविरा करने के बाद वे निकाल दिये जायेंगे तथा उनके स्थान में दूसरे योग्य व्यक्ति रख लिये जायेंगे ।

शर्त सातवीं—जिनके हक़ छीन लिये गये हैं, उनके हक़ न्यायानुसार बहाल कर दिये जायेंगे और वे दरबार की चाकरी करेंगे ।

शर्त आठवीं—अंग्रेज़ सरकार की दृष्टि इस बात की तरफ़ है कि मारवाड़ का स्वार्थ और महाराजा का हक़, मान तथा ख्याति पूर्ववत् स्थिर रहे; अतएव उक्त सरकार की तरफ़ से उनमें कमी न होगी और न दूसरों के हाथ से ही ऐसा होने पायगा । उक्त सरकार इस बात का ज़िम्मा लेती है ।

शर्त नवीं—अंग्रेज़ सरकार का एजेंट और मारवाड़ के अहलकार आपस में राय कर महाराजा के परामर्शानुसार, उन नये क़ानूनों के

---

(१) अर्थात् नाथों के मन्दिर ।

(२) अर्थात् लक्ष्मीनाथ, प्रयागनाथ तथा उनके सम्बन्धी ।

(३) अर्थात् नाथ ।

(४) अर्थात् राज्य के ठाकुर ।

(५) अर्थात् महाराजा के अनौरस पुत्र ।

(६) अर्थात् कुशलराज, फ़ौजराज आदि ।

अनुसार, जो अब बनेंगे, अंग्रेज़ सरकार के बक़ाया ख़िराज तथा सवार-खर्च की नियमित अदायगी के लिए उपयुक्त प्रबंध करेंगे। नुक़सान की भरपाई उस पक्ष को करनी होगी, जिसपर कि वह साबित होगा और दूसरे राज्यों से मारवाड़ को जो कुछ लेना है, वह भी तभी वसूल होगा, जब कि पूरा-पूरा साबित हो जायगा।

शर्त दसवीं—महाराजा ने जिन सरदारों को जागीरें देकर उनसे चाकरी का वायदा कराया है और उन्हें पिछले अपराधों के लिए माफ़ कर दिया है, अंग्रेज़ सरकार भी उन्हें अपनी तरफ़ से क्षमा प्रदान करती है, यथा स्वरूप, जोगेश्वर, उमराव तथा अहलकार।

शर्त ग्यारहवीं—राजधानी में अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से पो० एजेंट की नियुक्ति हो जाने के कारण अब किसी भी व्यक्ति के प्रति अन्याय और अत्याचारपूर्ण व्यवहार न किया जायगा तथा धर्म के षट् दर्शनों में बाधा डालने का कोई कार्य न किया जायगा और न मारवाड़ के अन्तर्गत पवित्र माने जानेवाले पशुओं की हत्या ही की जायगी।

शर्त बारहवीं—महाराजा के राज्यशासन का सुप्रबंध यदि छः मास, एक वर्ष अथवा डेढ़ वर्ष में हो गया तो एजेंट तथा अंग्रेज़ी फ़ौज जोधपुर के गढ़ से हटा ली जायगी। यदि यह कार्य इससे भी जल्दी हो गया तो अंग्रेज़ सरकार को बड़ी ख़ुशी होगी, क्योंकि इससे उसका सम्मान बढ़ेगा।

शर्त तेरहवीं—ऊपरिलिखित अहदनामा, जैसा कि ऊपर कहा गया है, जोधपुर में ता० २४ सितंबर ई० स० १८३६ (आश्विन वदि १ वि० सं० १८९६) को तय होकर लेफ़्टनेंट कर्नल सदरलैंड-द्वारा माननीय गवर्नर जेनरल ऑव् इंडिया के पास स्वीकृति के लिए पेश किया जायगा और इस अहदनामे के संबंध का महाराजा के नाम का खरीता श्रीमान् गवर्नर जेनरल से प्राप्त किया जायगा।

उपर्युक्त अहदनामा भारत के गवर्नर जेनरल श्रीमान् लॉर्ड जॉर्ज ऑकलैंड, जी० सी० बी० से अधिकार प्राप्त कर्नल जॉन् सदरलैंड ने

क़रार पाया[1]।

रिधमल का हस्ताक्षर और मुहर | फ़ौजमल का हस्ताक्षर और मुहर

उपर्युक्त अहदनामा हो जाने के बाद राज्यकार्य सुचारु रूप से चलाने के लिए सदरलैंड के कथनानुसार राज्य के जागीरदारों और ओहदेदारों की एक सूची तथा अन्य आवश्यक कार्यों के संबंध में ख़ास-ख़ास बातों की लिखावट गढ़ के भीतर रक्खे जानेवाले अंग्रेज़ अधिकारी के सुपुर्द की गई। साथ ही राज्यकार्य करने के लिए निम्नलिखित व्यक्तियों की एक पंचायत मुक़र्रर की गई—

राज्य-प्रबन्ध के लिए पंचायत मुक़र्रर होना

१. ठाकुर बभूतसिंह चांपावत — पोकरण का
२. ठाकुर कुशालसिंह चांपावत — आउवा का
३. ठाकुर सवाईसिंह ऊदावत — नींबाज का
४. ठाकुर शिवनाथसिंह मेड़तिया — रीयां का
५. ठाकुर बख़्तावरसिंह जोधा — भाद्राजूण का
६. ठाकुर जीतसिंह मेड़तिया — कुचामण का
७. ठाकुर भीमसिंह ऊदावत — रास का
८. आसोप के ठाकुर शिवनाथसिंह की नाबालिग़ अवस्था के कारण उसकी तरफ़ से कंटालिया का ठाकुर शंभुसिंह कूंपावत

उनके अतिरिक्त क़िलेदार, दीवान आदि पदों के लिए पांच अहलकार भी चुने गये। इस प्रकार सारा प्रबंध ठीक हो जाने पर वि० सं० १८९६ पौष सुदि १४ (ई० स० १८४० ता० १७ जनवरी) को सदरलैंड

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १२०-२८। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८७१-२ तथा ८९६-८। एचिसन; ट्रीटीज़ एंगेज्मेंट्स एण्ड सनद्ज़; जि० ३, पृ० ११६ तथा १३५-७।

अजमेर के लिए रवाना हुआ। उस समय उसने महाराजा को विश्वास दिलाया कि मैं कलकत्ते पहुंचकर लाट साहब से आपको शीघ्र गढ़ वापस दिलाने के संबंध में सिफ़ारिश करूंगा[1]।

राज्य का यह प्रबंध केवल कुछ मास तक ही रहा। उसी वर्ष फाल्गुन वदि १२ (ई० स० १८४० ता० २६ फ़रवरी) को गढ़ वापस दिये जाने के संबंध में लाट साहब का आज्ञापत्र लेकर सदरलैंड जोधपुर पहुंचा। फाल्गुन सुदि ५ (ता० ८ मार्च) को गढ़ से अंग्रेज़ी थाना हटा लिया गया और अंग्रेज़ अधिकारियों के साथ महाराजा ने गढ़ में प्रवेश किया। महाराजा ने दरबार के अवसर पर वकील रिधमल को आभूषण आदि देने के साथ ही "रावराजा बहादुर" के ख़िताब से विभूषित किया। अनन्तर सदरलैंड तो वापस अजमेर गया और अपने अहलकारों के साथ महाराजा राज्यकार्य करने लगा[2]।

महाराजा को पीछा राज्याधिकार मिलना

इतना होने पर भी राज्य से नाथों का प्रभुत्व हटा नहीं। उनकी तथा कुचामण, रायपुर और भाद्राजूण के ठाकुरों की जागीरों में कमी करने के संबंध में अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से लिखावट आने पर महाराजा ने उनमें कमी की। नाथ इस बात के लिए राज़ी न हुए और उनके ज़ुल्मों में भी किसी प्रकार की कमी न हुई। इस संबंध में अंग्रेज़ सरकार के पास शिकायतें होने पर वहां से इसका प्रबंध करने के लिए कई बार ताकीद की गई। वि० सं० १८९७ (ई० स० १८४०) के आश्विन मास में उपद्रवी सरदार आदि सिवाणा परगने की भींखा की पहाड़ी में एकत्र हुए और उन्होंने धोकलसिंह का पक्ष लेकर उपद्रव करने का प्रयत्न किया; परन्तु ठीक समय

नाथों आदि का राज्य में उपद्रव करना

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० १२८-२०७। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८७२।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० २०७-८। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८७२।

पर सिंघवी फ़ौजराज सेना-सहित पहुंच गया, जिससे वे भाग गये[1]।

उसी वर्ष नाथों के प्रबंध में महाराजा और कर्नल सदरलैंड के बीच पत्रव्यवहार हुआ, जो कई मास तक जारी रहा, परन्तु कोई परिणाम न निकला। अगले वर्ष भाद्रपद मास में कर्नल सदरलैंड आबू से पाली होता हुआ जोधपुर गया, जहां केवल कुछ समय तक रहकर ही वह अजमेर लौट गया[2]।

कर्नल सदरलैंड का दुबारा जोधपुर जाना

उसी वर्ष पौष मास में जोगेश्वरों के पट्टे के गांव ज़ब्त किये गये तथा अंग्रेज़ अधिकारियों के आदेशानुसार आयस लक्ष्मीनाथ, आयस प्रयागनाथ, आयस रघुनाथ आदि राज्य के विभिन्न पदों से हटाये गये। इसके एक मास बाद पोकरण का ठाकुर बभूतसिंह राज्य का प्रधान नियुक्त हुआ और नींबाज के ठाकुर के चाचा तथा कूंपावत कर्णसिंह (वासणी) को जागीर में गांव मिले। उन्हीं दिनों कर्नल सदरलैंड ने तीन लाख की जागीर जोगेश्वरों को दिलाने के लिए प्रस्ताव किया, पर उन्होंने उसे स्वीकार न किया। सिंघवी कुशलराज कंटालिया में था। वहां से लौटने पर उसने ठाकुर कुशालसिंह (आउवा), भीमसिंह (रास), हिम्मतसिंह (खेजड़ला) आदि से महाराजा की मर्ज़ी के मुताबिक़ आचरण करने का वचन ले उन्हें वापस लौटाया[3]।

नाथों और कतिपय विरोधी सरदारों का प्रबंध होना

वि० सं० १८९९ भाद्रपद वदि १२ (ई० स० १८४२ ता० २ सितंबर) को पोलिटिकल एजेंट की सिफ़ारिश पर सिंघवी सुखराज राज्य का दीवान बनाया गया, जो मार्गशीर्ष मास तक उस पद पर रहा। उससे भी नाथों का प्रबन्ध न हो सका और नाथों को राज्य-कोष से पूर्ववत् धन

अंग्रेज सरकार की आज्ञा से कई नाथों का गिरफ़्तार होना

---

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० २०८।

(२) वही; जि० ४, पृ० २०९-१०।

(३) वही; जि० ४, पृ० २११।

मिलता रहा, जिसकी शिकायत पो० एजेंट के पास होने पर उसने महाराजा को सुखराज को दीवान के पद से अलग करने के लिये कहलाया। इसपर मार्गशीर्ष वदि ८ (ता० २५ नवंबर) को सुखराज ने दीवानगी की मोहर महाराजा को सौंप दी। अनन्तर महाराजा धन ले-लेकर लोगों को ओहदे देने लगा। उस समय बड़े-बड़े नाथ—लक्ष्मीनाथ, प्रयागनाथ आदि—तो बाहर थे, परन्तु छोटे-छोटे नाथों का, जो जोधपुर में थे, जुल्म[1] बहुत बढ़ा हुआ था। प्रतिदिन नये-नये व्यक्ति कानफड़ाकर नाथ बनते थे, जिनके भोजनादि का सब प्रबंध राज्य की तरफ़ से होता था। इससे राज्य में खर्च की बड़ी तंगी रहती थी और धन संग्रह करने के लिए प्रजा पर कर लगाया जाता था। इससे अंग्रेज़ अधिकारियों की महाराजा पर नाराज़गी थी। पो० एजेंट उन दिनों सिरोही की तरफ़ गया हुआ था। फाल्गुन मास में वहां से लौटने पर उसने ख़ज़ाने का चार लाख रुपया नाथों को दे-देने आदि के संबंध में महाराजा से शिकायत की। अनन्तर अजमेर से डेढ़ सौ सवार बुलाकर उसने वैशाख वदि में सोजतिया दरवाज़े के बाहर नवनाथ, चौरासी सिद्धों के मन्दिर में गोरखमंडी के मेहरनाथ तथा चांदपोल दरवाज़े के बाहर होशियारनाथ के चेले शीलनाथ को गिरफ़्तार कर अजमेर भिजवा दिया[2]।

---

(१) नाथों के जुल्मों के सम्बन्ध में "वीरविनोद" का कर्त्ता कविराजा श्यामलदास लिखता है कि नाथ लोग ज़बर्दस्ती भले आदमियों के लड़कों को पकड़ लेते और चेला बनाते, अच्छे घराने की बहू-बेटियों को पकड़कर घरों में डाल लेते तथा लोगों का माल छीन लेते, जिनकी पुकार कोई नहीं सुनता था। जब वे लोग रुपये की मांग करते और देने में देर होती तो वे ज़मीन में ज़िन्दा गड़ने को तैयार हो जाते। तब महाराजा रुपये देकर उन्हें खुश करता। वि० सं० १९०० (ई० स० १८४३) में दो नाथों ने एक ब्राह्मण की लड़की को पकड़ लिया और कहा कि रुपया दो तो छोड़ें। यह ख़बर कप्तान लडलो को मिलने पर उसने उन दोनों को गिरफ़्तार करा अजमेर भिजवा दिया (भाग २, पृ० ८७३-४)।

(२) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० २१२-३।

इसपर महाराजा ने अपने वकील रिधमल को एजेंट के पास भेजा, परंतु वह बहुत नाराज़ था, जिससे कोई परिणाम न निकला और वकील भी महाराजा के पास वापस न गया। तब महाराजा ने, लाडणू के जोधा प्रतापसिंह को बुलाकर उससे स्वरूपों को छुड़ा लाने को कहा, परन्तु रिधमल ने इस कार्य की विफलता बतलाकर उसे रोक दिया। नाथों की गिरफ़्तारी से महाराजा को इतना दुःख हुआ कि उसने राज्य-कार्य में भाग लेना छोड़ दिया। यही नहीं गेरुआ वस्त्र धारणकर और शरीर में भभूत (भस्मी) लगाकर वह स्वयं भी साधुओं की तरह बन गया और मेड़तिया दरवाज़े के बाहर की बावड़ी के निकट जा बैठा। एक रात वहां रहकर वह शेखावत राणी के बनवाये हुए तालाब पर गया। इस बीच उसके कई कार्यकर्ताओं ने भी भगवे वस्त्र पहन लिये, परन्तु रिधमल ने अंग्रेज़ सरकार का भय दिखलाकर उन्हें उनके निश्चय से हटाया। उस समय पोकरण, नींबाज, खींवसर आदि के ठाकुरों के कार्य-कर्ताओं ने महाराजा को समझाकर गढ़ में ले जाने का ज़िम्मा अपने ऊपर लिया, परन्तु उसने उनकी न सुनी और श्रावणादि वि० सं० १८९९ (चैत्रादि १९००) वैशाख सुदि १३ (ई० स० १८४३ ता० १२ मई) को जालंधरनाथ का दर्शन करने के लिए वह पाल गांव गया। जिस दिन से महाराजा ने साधु-वेष धारण किया उसी दिन से उसने एक प्रकार से खाना-पीना त्याग दिया था। वह केवल एक पेड़ा और दो पैसे भर दही खाता था[1]।

महाराजा का साधू का वेष धारण करना

उसके पाल गांव में रहते समय ही वहां हैज़े की भयंकर बीमारी फैली, जिससे प्रतिदिन अनेक व्यक्ति अकाल में ही काल-कवलित होने लगे। भाद्राजूण के ठाकुर बख़्तावरसिंह का उसी रोग से वहीं देहांत हुआ। महाराजा का इरादा आबू जाने का था, परन्तु एजेंट के समझाने-बुझाने पर उसने

पाल गांव में हैज़े का प्रकोप होना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० २१३-४। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८७३-४।

अपना वह इरादा छोड़ दिया और वह पाल गांव से आगे न गया[1]।

उसी वर्ष आषाढ वदि ४ (ता० १६ जून) को महाराजा पाल गांव से जोधपुर जाकर राइका बाग़ में ठहरा। महाराजा की दशा दिन-दिन बिगड़ती जा रही थी। ऐसी अवस्था देखकर पो० एजेंट ने उससे अपना उत्तराधिकारी नियत करने को कहा। इसपर महाराजा ने उत्तर दिया कि अहमदनगर के राजा कर्णसिंह के दो पुत्रों—पृथ्वीसिंह एवं तख़्तसिंह—में से पृथ्वीसिंह तो मर गया और तख़्तसिंह अभी जीवित है। मेरी मर्ज़ी तख़्तसिंह को अपना उत्तराधिकारी बनाने की है और मैं चाहता हूं कि मेरे बाद वही जोधपुर का स्वामी हो। पो० एजेंट ने महाराजा को आश्वासन दिया कि आप जैसा चाहते हैं वैसा ही होगा। ईडर और मोड़ासावालों से नाराज़गी होने के कारण ही महाराजा ने उक्त दोनों घरानों से अपने लिए उत्तराधिकारी न चुना[2]।

उत्तराधिकारी के विषय में महाराजा का एजेंट से कहना

(१) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० २१४।

(२) वही; जि० ४, पृ० २१४-५।

नीचे अहमदनगरवालों का वंशवृक्ष दिया जाता है, जिससे महाराजा मानसिंह का उनके साथ क्या सम्बन्ध था यह स्पष्ट हो जायगा।
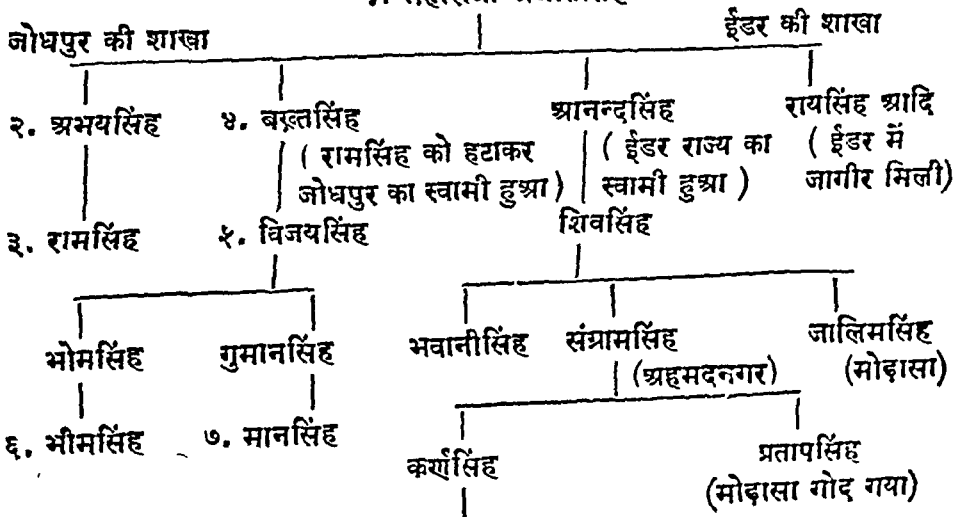
श्रावण सुदि ३ (ता० २६ जुलाई) को महाराजा पीनस में बैठकर सूरसागर के पास से होता हुआ मंडोवर में दाखिल हुआ। वहां से आज्ञा प्राप्तकर ठाकुर बभूतसिंह पोकरण गया। मंडोवर पहुंचने के कुछ समय बाद ही भाद्रपद वदि ३० (ता० २५ अगस्त) को महाराजा को एकांतरा ज्वर आने लगा[1] और उसी बीमारी से भाद्रपद सुदि ११ (ता० ४ सितंबर) सोमवार को पिछली रात के समय उसका देहांत हो गया। उसके साथ उसकी देवड़ी राणी[2] सती हुई[3]।

महाराजा की मृत्यु

महाराजा मानसिंह के तेरह राणियां थीं, जिनसे उसके आठ पुत्र और तीन पुत्रियां हुईं। पुत्रों में से सभी उसके जीवन-काल में मर गये। पुत्रियों में से एक जयपुर के महाराजा और दूसरी बूंदी के महाराव को ब्याही गई[4]।

राणियां तथा संतति

---
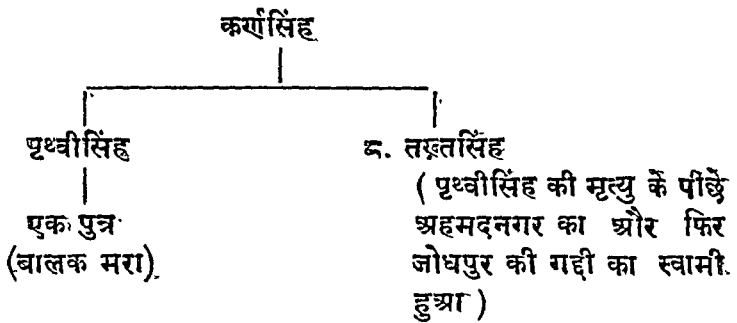
(१) "वीरविनोद" से पाया जाता है कि अपनी बीमारी के समय महाराजा ने सब आदमियों को अपने पास से हटाकर केवल सुबह के समय ब्राह्मणों को आकर संभालने की आज्ञा दी थी, जिसका उसके अन्तकाल तक पालन हुआ (भाग २, पृ० ८७४)।

(२) देवड़ी राणी सेलवारा गांव के जवानसिंह अखैसिंहोत की पुत्री ऐजनकुंवरी थी। उसके विषय में जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है कि वह भी महाराजा के समान ही आहार रखती थी (जि० ४, पृ० २१६-२२३)।

(३) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० २१५। वीरविनोद; भाग २, पृ० ८७४।

(४) जोधपुर राज्य की ख्यात; जि० ४, पृ० २२२-३१। मुंशी देवीप्रसाद-द्वारा संगृहीत जोधपुर के राजाओं, राणियों, कुंवरों, कुंवरियों आदि की नामावली; पृ० ७०-१।

महाराजा मानसिंह का राज्यकाल आन्तरिक कलह से परिपूर्ण रहा और उसे निरन्तर बखेड़ों में फंसा रहना पड़ता था, परन्तु इतना होने पर भी वह साहित्यिकों का सम्मान करने में सदा तत्पर रहता था। वह कवियों, विद्वानों और गुणीजनों का पूरा-पूरा आदर करता था। यही कारण था कि उसके दरबार में उच्च-कोटि के विद्वान् और कवि बने रहते थे। वह स्वयं भी विद्याव्यसनी और ऊंचे दर्जे का कवि था। उसका रचा हुआ "कृष्णविलास" नामक काव्य-ग्रंथ राज्य की तरफ़ से प्रकाशित हो गया है। "मान-पद्य-संग्रह[1]" नामक एक दूसरा काव्यग्रन्थ भी छप गया है, जो उसी का बनाया हुआ माना जाता है। महाराजा के रचे हुए कितने ही पद्यों का उल्लेख "जोधपुर राज्य की ख्यात" तथा अन्यत्र भी मिलता है। महाराजा की नाथों पर विशेष आस्था थी, जिससे उसने उक्त सम्प्रदाय से संबंध रखनेवाले कई ग्रन्थों का निर्माण किया था। उनमें "जलंधरनाथजी रो चरित्र", "नाथचरित्र", "श्रीनाथजी रा दुहा", "श्रीनाथजी", "नाथप्रशंसा", "नाथजी की वाणी", "नाथकीर्तन", "नाथमहिमा", "नाथपुराण", "नाथसंहिता" आदि उल्लेख-नीय हैं। इनके अतिरिक्त उसने "रागां रो जीलो", "बिहारी सतसई टीका", "रागसार", "कृष्णविलास", "महाराजा मानसिंह की वंशावली", "राम-विलास", "संयोग शृंगार का दोहा", "कवित्त सवैया दोहा", "सिद्धकाल" आदि विभिन्न विषयों की कितनी ही पुस्तकें रची थीं[2]। उसे इतिहास से भी बड़ा अनुराग था। उस समय मिलनेवाली प्राचीन बहियों, राजकीय पत्र-व्यवहारों, ख्यातों, सनदों आदि के आधार पर उसने अपने राज्य का एक बृहत्

महाराजा का विद्याप्रेम

(१) इस ग्रन्थ को प्रकाश में लाने का श्रेय बीकानेर के परम साहित्यानुरागी, दानवीर सेठ रामगोपाल मोहता को है। इसमें संगृहीत पद्य एक साधु को कंठस्थ थे, जिससे सुनकर ये प्रकाशित किये गये हैं। इसके अधिकांश छन्द नाथ सम्प्रदाय से सम्बन्ध रखते हैं और कितने ही बड़े सुन्दर हैं।

(२) रायबहादुर श्यामसुन्दरदास; हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण; पहला भाग; पृ० १२१। मिश्रबन्धु विनोद; भाग २, पृ० ६२१-२।

इतिहास तैयार कराया था, जिसका "जोधपुर राज्य की ख्यात[1]" के नाम से मैंने इस ग्रन्थ में उल्लेख किया है। सुप्रसिद्ध इतिहास लेखक कविराजा बांकीदास उसका कृपापात्र था। वि० सं० १८७७ (ई० स० १८२०) में जब टॉड जोधपुर गया, उस समय वह महाराजा के इतिहास-प्रेम से बड़ा प्रभावित हुआ था। महाराजा न केवल अपने देश के बल्कि सारे भारतवर्ष के इतिहास की अच्छी जानकारी रखता था। उसका अध्ययन विशाल था। उसने कर्नल टॉड को अपने वंश के इतिहास की छः कविता-बद्ध पुस्तकों की नक़लें करवाकर दी थीं, जिनके आधार पर उसने जोधपुर राज्य का इतिहास लिखा था और जो उसने पीछे से रायल एशियाटिक सोसाइटी को प्रदान कर दीं। महाराजा का हिन्दी और अपने देश की भाषा का ज्ञान तो बढ़ा-चढ़ा था ही, साथ ही उसको फ़ारसी भाषा का भी अच्छा ज्ञान था। ऊपर कही हुई छः पुस्तकों के एवज़ में कर्नल टॉड ने "तारीख़ फ़रिश्ता" और "खुलासतुत्तवारीख़" की नक़लें कराकर महाराजा को

---

(१) यह इतिहास चार बड़ी-बड़ी जिल्दों में है। इसमें दिया हुआ वि० सं० १६०० से पूर्व का वृत्तान्त अधिकांश विश्वास के योग्य नहीं है, क्योंकि कितनी ही घटनाओं के साथ-साथ उसमें दिये हुए संवत् आदि बहुधा कल्पित हैं। राव जोधा की पुत्री शृङ्गारदेवी का विवाह मेवाड़ के महाराणा कुंभकर्ण (कुंभा) के पुत्र रायमल के साथ हुआ था, ऐसा शृङ्गार देवी की बनवाई हुई घोसूंडी गांव की बावड़ी की प्रशस्ति से पाया जाता है, परन्तु इस ख्यात में अथवा अन्य किसी ख्यात में उस (शृङ्गारदेवी)-का नाम तक नहीं है। इसी प्रकार कोड़मदेसर तालाब बनवानेवाली राव जोधा की माता कोड़मदे का नाम भी इस ख्यात में नहीं है। उसका पता कोड़मदेसर तालाब की प्रशस्ति से मिलता है। इससे स्पष्ट है कि वि० सं० १६०० से पूर्व का वृत्तान्त इसमें केवल जनश्रुति के आधार पर लिखा गया है। आगे का वृत्तान्त किसी क़दर ठीक है, परन्तु वह भी अतिशयोक्ति से ख़ाली नहीं है। कहते हैं कि लोगों ने मारवाड़-नरेशों-द्वारा मुसलमानों को बेटियां दी जाने की बात इसमें से हटा देने के लिए महाराजा मानसिंह से निवेदन किया तो उसने इसके उत्तर में कहा कि छोटी-मोटी शादियों का ज़िक्र तो निकाल दिया जाय, परन्तु जो विवाह सम्बन्ध शाही घराने के साथ हुए उनका उल्लेख अवश्य रहे; क्योंकि उससे हमारे वंश का गौरव प्रकट होता है। साथ ही उससे हमारे वंशजों को यह मालूम होगा कि हमें भूमि रखने के लिए क्या-क्या करना पड़ा है।

दी थीं[1]।

उसके आश्रित कवियों में बागीराम और गाडूराम-कृत "जसभूषण" तथा "जससरूप[2]"; मनोहरदास-कृत "जसआभूषण चंद्रिका" तथा "फूल-चरित्र[3]"; उत्तमचंद-कृत "अलंकार आशय", "नाथचंद्रिका" तथा "तारकनाथ पंथियों की महिमा[4]"; शंभुदत्त-कृत "राजकुमार प्रवोध" तथा "राजनीति-उपदेश[5]" और सेवग दौलतराम-कृत "जलंधरनाथजी रो गुण" तथा "परि-चयप्रकाश[6]" के नाम मिलते हैं। उनके अतिरिक्त अन्य कई विद्वानों, पंडितों, कवियों आदि ने भी कितने ही संस्कृत और भाषा के ग्रन्थों की रचना की थी। उसके आश्रय में कई उच्च कोटि के संगीताचार्य भी रहते थे। उसकी भटियाणी राणी विदुषी होने के साथ ही उच्च कोटि की कवियित्री थी। उसके बनाये हुए "ज्ञानसागर", "ज्ञानप्रकाश", "प्रताप-पचीसी", "प्रेमसागर", "रामचंद्रनाम महिमा", "रामगुणसागर", "रघुबर स्नेहलीला", "रामप्रेम सुखसागर", "रामसुजस पचीसी", "रघुनाथजी के कवित्त", और "भजन पद हरजस" ग्रन्थ मिलते हैं[7], जो अब

---

(१) टॉड; राजस्थान; जि० २, पृ० ८२४-५ तथा ८३३।

(२) ये दोनों भाई एक साथ कविता करते थे। हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण; पहला भाग पृ० ६८ तथा ३४। मिश्रबंधु विनोद; भाग २, पृ० ६१५ तथा १००४।

(३) हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण; पहला भाग, पृ० ११६। मिश्रबंधु विनोद; भाग २, पृ० ६४७।

(४) हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण; पहला भाग; पृ० १४। मिश्रबंधु विनोद; भाग २, पृ० ६२१।

(५) हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण; पहला भाग; पृ १६४। मिश्रबंधु विनोद; भाग २, पृ० ६५२।

(६) हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का संक्षित विवरण; पहला भाग; पृ० ७०। मिश्रबंधु विनोद; भाग २, पृ० ६४६।

(७) मिश्रबंधु विनोद; भाग ३, पृ० ११०५-६।

पुस्तकाकार एक संग्रह के रूप में प्रकाशित हो गये हैं। उसकी एक उप-पत्नी तुलछराय[1] के रचे हुए भगवद्भक्तिपूर्ण पद भी मिलते हैं।

महाराजा को पुस्तकों, चित्रों आदि के संग्रह करने का भी बड़ा शौक़ था। उसके समय की संगृहीत पुस्तकें और चित्र राज्य में अबतक मौजूद हैं, जो उसके साहित्य और कला-प्रेम का परिचय देते हैं।

महाराजा मानसिंह ने चालीस वर्ष तक राज्य किया था, परन्तु इतनी लम्बी अवधि में भी राज्य के भीतरी झगड़ों और अव्यवस्था के कारण वहां कोई विशेष उन्नति न हो सकी। उसके राज्य-काल में राज्य-कोष में धन का अभाव रहा।

महाराजा का व्यक्तित्व

इसका कारण राज्य में नाथों का प्रभुत्व था, जिससे प्रायः उन्हीं के कृपा-पात्र राज्य के उच्च पदों पर रहते थे। नाथों के भी दो फ़िर्क़े थे—एक महा-मंदिर का और दूसरा उदयमन्दिर का। इससे भी राज्य-प्रबंध में हमेशा गड़बड़ी रहती थी। जब कभी आवश्यकता होती तो प्रजा अथवा सम्पन्न अधिकारियों से ज़बर्दस्ती रुपये वसूल किये जाते थे। इस कार्य के लिए लोगों को तरह-तरह से कष्ट दिये जाते थे। राज्य का अधिकांश धन राज्य-कार्य में व्यय न होकर नाथों को दे दिया जाता था।

राज्य के कितने ही सरदारों और कर्मचारियों के साथ उसका अंत तक विरोध बना रहा। उनमें से कितनों की ही उसने जागीरें ज़ब्त कर लीं। यही नहीं, जिन लोगों ने उसे जालोर से लाकर जोधपुर की गद्दी पर बैठाया उनकी उस सेवा को भुलाकर उसने उन्हें मरवाने की आज्ञा निकाली, जो पीछे से अखैसिंह के समझाने पर उसने रद्द की। महाराजा अपने विरोधियों से बड़ी बुरी तरह बदला लेता था। उसने कई व्यक्तियों को बड़ी सख़्तियां देकर मरवाया। इससे उसके क्रूर[2] स्वभाव का परिचय

(१) मिश्रबन्धु विनोद; भाग २, पृ० १०३९।

(२) महाराजा की क्रूरता के संबंध में एक कथा प्रसिद्ध है। उसने ऐसी आज्ञा दे रक्खी थी कि क़िले के भीतर कोई पुरुष किसी स्त्री से बात न करे। एक बार जब उसने एक पुरुष को एक स्त्री से बातें करते देखा, तो उसने उसी समय उस

मिलता है। वह ज़िद्दी, कान का कच्चा, कृतघ्न और अविवेकी नरेश था। अपनी अविवेकता के कारण ही उसने जयपुर से विरोध खड़ा कर लिया, जिसका परिणाम दोनों राज्यों के लिए हानिकर ही हुआ। इन सब बखेड़ों का फल यह हुआ कि पीछे से सरदारों आदि की तरफ़ से विशेष दवाव पड़ने पर उसे राज्य-कार्य अपने पुत्र छत्रसिंह को सौंपना पड़ा।

नाथों पर महाराजा की विशेष आस्था होने से उसने उन्हें लाखों रुपयों की जागीरें दे रक्खी थीं। वे भी मन-माना आचरण किया करते थे। बड़े-बड़े सम्पन्न घरानों के बालकों को चेला बना लेने तथा भले घर की बहू-बेटियों को अपने घर में डाल लेने से भी वे नहीं चूकते थे। महाराजा को नाथों के इस आचरण का पता था, पर उनको अपना गुरु मान लेने के कारण वह उनके विरुद्ध कोई कार्रवाई नहीं करता था। नाथों के प्रति उसकी अन्ध-भक्ति कितनी बढ़ी हुई थी, यह इसीसे स्पष्ट है कि आयस देवनाथ के मारे जाने पर उसने राज्य-कार्य से पूर्ण उदासीनता ग्रहण कर ली।

मानसिंह के समय उसके कुंवर छत्रसिंह के उद्योग से जोधपुर राज्य और अंग्रेज़ सरकार के बीच संधि स्थापित हुई, जो राज्य के लिए बड़ी हितकर सिद्ध हुई, क्योंकि आगे चलकर अंग्रेज़ सरकार के हस्तक्षेप करने पर नाथों एवं उपद्रवी सरदारों का दमन होकर राज्य में सुप्रबंध, शान्ति और सुख का प्रादुर्भाव हुआ। महाराजा अंग्रेज़ों के साथ की मैत्री का बड़ा महत्व समझता था और उसने कभी अंग्रेज़ सरकार को नाराज़ करने का कोई कार्य नहीं किया। नाथों का प्रबंध

पुरुष को तोप से उड़ाने की आज्ञा दी। दीवान को जब इस का पता चला तो उसने तुरन्त महाराजा के पास जाकर उससे निवेदन किया कि आपने जो आज्ञा दी वह ठीक है; परन्तु यदि ऐसा हुआ तो इसका परिणाम ठीक न होगा क्योंकि बाहरी राज्य-वाले यही समझेंगे कि ज़नाने में कुछ गड़बड़ी हुई होगी। यह बात महाराजा की समझ में आगई और उसने अपनी आज्ञा रद्द कर दी।

यह बात मैंने कविराजा मुरारीदान से सुनी थी।

करने के लिए जब अंग्रेज़ सरकार की तरफ़ से राज्य में सेना भेजी गई तो उसने अविलंब गढ़ खाली कर दिया।

इन सब बातों के होते हुए भी महाराजा में कई प्रशंसनीय गुण थे। वह वीर, स्वाभिमानी, विद्वान्, दानी[1], गुणग्राहक[2] और उदार नरेश था।

---

(१) महाराजा की दानशीलता के संबंध में एक बात मुझे "राजस्थान"-सम्पादक मुंशी समर्थदान ने सुनाई थी, जो इस प्रकार है—

महाराजा का अपने सरदारों के साथ बहुधा विरोध ही रहता था। उसके समान ही उसके कितने ही विरोधी सरदारों के यहां भी चारण, कवि आदि रहा करते थे। एक दिन जब एक विरोधी सरदार के यहां महाराजा की दानशीलता के संबंध में बातें चल रही थीं, उस समय वहां उपस्थित किसी कवि ने महाराजा के जालोर में रहते समय उसके पास रहनेवाले कवि केसर की, जिसने उस समय महाराजा की अच्छी सेवा की थी, चर्चा करते हुए निम्नलिखित पद्य कहा—

केसरो हुतो मोटो कवि, गाम गाम करतो मुश्रो।

महाराजा को जब यह बात ज्ञात हुई तो उसे केसर की सेवा का स्मरण आया और उसने उसी समय उसके पुत्र की तलाश में अपने आदमी भिजवाये। पुत्र का पता चलते ही महाराजा ने उसे अपने पास बुलवाया और दरबार कर दो गांव दिये। दो गांव देने के बारे में महाराजा ने कहा कि मेरे शत्रु के कवि ने अपने पद्य में दो बार गांव शब्द का व्यवहार किया, इसलिए मैंने दो गांव दिये।

(२) महाराजा की गुणग्राहकता के विषय में एक बात यह भी सुनी है कि एक बार काशी का एक बड़ा पंडित उसके दरबार में गया और एक महाजन की हवेली के नीचे के भाग में ठहरा। उसका छः वर्ष का पुत्र भी उसके साथ था। महाजन के भी उतनी ही अवस्था का पुत्र था; परन्तु अंधा। जब पंडित अपने पुत्र को पढ़ाने बैठता तो महाजन का अंधा लड़का भी पास जा बैठता। तीन-चार वर्ष बाद पंडित को यह अनुभव हुआ कि जहां उसके पुत्र को सब पाठ याद नहीं हुए थे वहां उस अन्धे बालक को सब कुछ याद हो गया था। उसने जब परीक्षा ली तो उसे मालूम हुआ कि महाजन का पुत्र एक बार सुनकर ४०० अनुष्टुप् छन्दों के बराबर अंश याद कर लेता है। उसे यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई और प्रसंगवशात् उसने महाराजा से उस बालक की आश्चर्यजनक प्रतिभा के बारे में ज़िक्र किया। महाराजा ने परीक्षा लेने के लिए उस बालक को दरबार में बुलवाया। उन दिनों महाराजा भाषा का एक ग्रंथ लिख रहा था। उसने ४०० अनुष्टुप् छन्दों के बराबर अंश उसमें निशान कर अपने एक दरबारी को दे

कई अवसरों पर उसने चारणों तथा अन्य व्यक्तियों को लाख पसाव दिये थे। उसकी देखा-देखी महामन्दिर के नाथ भी लाख-पसाव दिया करते थे। महाराजा की विद्वत्ता और साहित्यानुराग का उल्लेख ऊपर आ गया है। शरणागत की रक्षा करना राजपूतों का अटल नियम है। नागपुर के राजा को, उसके अंग्रेज़ सरकार का विरोधी होते हुए भी, उसने अपने यहां शरण देकर साहस का कार्य करने के साथ ही यह दिखा दिया कि राजपूत अपने धर्म और कर्तव्य का पालन करने में कितने तत्पर रहते हैं।

वि० सं० १८७६ (ई० स० १८१६) में कर्नल टॉड स्वयं जोधपुर जाकर महाराजा से मिला था। वह उसके संबंध में लिखता है—

"महाराजा साधारण व्यक्ति से क़द में लम्बा है। उसके आचरण में शिष्टता है, परन्तु उसमें रूखापन विशेष रूप से है। उसकी चाल-ढाल प्रभावोत्पादक तथा राजसी है, पर उसमें उस स्वाभाविक गौरव और प्रभुता का अभाव है, जो उदयपुर के महाराणा में पाई जाती है। उसकी शक्ल-सूरत अच्छी है और उसकी आंखों से बुद्धिमानी टपकती है। उसकी मुखाकृति से उदारता का संदिग्ध भाव प्रकट होता है। उसके मस्तक की बनावट विचित्र है, जो उसकी द्वेष-भावना सूचित करती है। मानसिंह की जीवनी के अध्ययन से उसकी सहनशीलता, दृढ़ता और धैर्य का अभूतपूर्व परिचय मिलता है। वह बड़ा अत्याचारी है और अपने मनोभावों को छिपाना खूब जानता है। उसमें बाघ जैसी भयंकरता तो नहीं है, परन्तु उसका सबसे बड़ा अवगुण धूर्तता उसमें विद्यमान है[1]।"

सुनाने के लिए दिया। महाजन के अन्धे बालक ने सारा अंश सुनने के बाद ज्यों का त्यों सुना दिया। इससे महाराजा उसपर बड़ा प्रसन्न हुआ और उसने उससे कहा कि जो तुम्हारी इच्छा हो मांगो। उस बालक ने उत्तर में निवेदन किया कि मुझे पंडितों की सभा के समय एक कोने में बैठने की आज्ञा प्रदान की जाय। महाराजा ने उसकी यह प्रार्थना स्वीकार करने के साथ ही उसके विदा होने पर ४००० रुपये उसके घर भिजवाये।

यह बात मैंने कविराजा मुरारीदान से सुनी थी।

(१) राजस्थान; जि० [illegible]